तुलसी-रचनावली

[श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी के ग्यारह ग्रन्थ]

सम्पादक

[illegible] 'विशारद'

श्रीसीताराम प्रेस

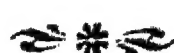
जालिपादेवी, बनारस

प्रथम संस्करण

अजिल्द २।।)
सजिल्द ३)

मुद्रक—बजरंगबली 'विशारद'
श्रीसीताराम प्रेस, जालिपादेवी, बनारस सिटी ।

गीतावली



राग आसावरी

आजु सुदिन सुभ घरी सुहाई ।
रूपसील-गुनधाम राम नृप-भवन प्रगट भए आई । १
अति पुनीत मधुमास, लगन ग्रह बार जोग समुदाई ।
हरषवंत चर-अचर भूमिसुर तनरुह पुलक जनाई । २ ।
बरषहिं बिबुध-निकर कुसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई ।
कौसल्यादि मातु मन हरषित, यह सुख बरनि न जाई । ३ ।
सुनि दसरथ सुत-जन्म लिए सब गुरुजन बिप्र बोलाई ।
बेद-बिहित करि क्रिया परम सुचि, आनँद उर न समाई । ४ ।
सदन बेद-धुनि करत मधुर मुनि, बहु बिधि बाज बधाई ।
पुरबासिन्ह प्रिय नाथ हेतु निज-निज संपदा लुटाई । ५ ।
मनि, तोरन, बहु केतु पताकनि पुरी रुचिर करि छाई ।
मागध सूत द्वार बंदीजन जहँ तहँ करत बड़ाई । ६ ।
सहज सिँगार किए बनिता चलीं मंगल बिपुल बनाई ।
गावहिं देहिं असीस मुदित चिरजिवौ तनय सुखदाई । ७ ।
बीथिन्ह कुंकुम कीच, अरगजा अगर अबीर उड़ाई ।
नाचहिं पुर नर-नारि प्रेम भरि देहदसा बिसराई । ८ ।

अमित धेनु गज तुरग बसन मनि जातरूप अधिकाई ।
देत भूप अनुरूप जाहि जोइ, सकल सिद्धि गृह आई । ९ ।
सुखी भए सुर, संत, भूमिसुर, खलगन-मन मलिनाई ।
सबइ सुमन बिकसत रबि निकसत, कुमुद-बिपिन बिलखाई ।१०।
जो सुख-सिंधु-सकृत-सीकर तें सिव-बिरंचि प्रभुताई ।
सोइ सुख अवध उमँगि रह्यो दस दिसि कौन जतन कहौं गाई ।११।
जे रघुबीर-चरन चिंतक तिन्हकी गति प्रगट दिखाई ।
अबिरल अमल अनूप भगति दृढ़ तुलसीदास तब पाई ।१२।।१

राग जैतश्री

सहेली सुनु सोहिलो रे !
सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो, सोहिलो सब ,जग आज ।
पूत सपूत कौसिला जायो, अचल भयो कुलराज । १ ।
चैत चारु नौमी तिथि सितपख मध्य-गगन-गत भानु ।
नखत जोग ग्रह लगन भले दिन मंगल-मोद-निधानु । २ ।
व्योम, पवन, पावक, जल-थल, दिसि दसहु सुमंगल-मूल ।
सुर दुंदुभी बजावहिं गावहिं, हरषहिं, बरषहिं फूल । ३ ।
भूपति सदन सोहिलो सुनि बाजैं गहगहे निसान ।
जहँ तहँ सजहिं कलस धुज चामर तोरन केतु बितान । ४ ।
सींचि सुगंध रचैं चौके गृह आँगन गली बजार ।
दल फल फूल दूब दधि रोचन घर घर मंगलचार । ५ ।
सुनि सानंद उठे दसस्यंदन सकल समाज समेत ।
लिए बोलि गुरु सचिव भूमिसुर प्रमुदित चले निकेत । ६ ।

जातकर्म करि, पूजि पितर सुर दिए महिदेवन दान ।
तेहि औसर सुत तीनि प्रगट भए मंगल, मुद, कल्यान ।७।
आनँद महँ आनंद अवध, आनंद बधावन होइ ।
उपमा कहौं चारि फल की, मोहि भलो न कहै क्यों कोइ ।८।
सजि आरती बिचित्र थार कर जूथ-जूथ बरनारि ।
गावत चलीं बधावन लै लै निज-निज कुल अनुहारि ।९।
असही दुसही मरहु मनहिं मन, बैरिन बढ़हु बिषाद ।
नृपसुत चारि चारु चिरजीवहु संकर-गौरि-प्रसाद ।१०।
लै लै ढोव प्रजा प्रमुदित चले भाँति भाँति भरि भार ।
करहिं गान करि आन राय की, नाचहिं राजदुवार ।११।
गज, रथ, बाजि, बाहिनी, बाहन सबनि सँवारे साज ।
जनु रतिपति ऋतुपति कोसलपुर बिहरत सहित समाज ।१२।
घंटा घंटि पखाउज आउज झाँझ बेनु डफ तार ।
नूपुर धुनि, मंजीर मनोहर, कर कंकन-झनकार ।१३।
नृत्य करहिं नट-नटी, नारि-नर अपने अपने रंग ।
मनहुँ मदनरति बिबिध बेष धरि नटत सुदेस सुढंग ।१४।
उघटहिं छंद प्रबंध गीत पद राग तान बंधान ।
सुनि किन्नर गंधर्व सराहत, बिथके हैं बिबुध-बिमान ।१५।
कुंकुम अगर अरगजा छिरकहिं भरहिं गुलाल अबीर ।
नभ प्रसून झरि, पुरी कोलाहल, भइ मनभावति भीर ।१६।
बड़ी बयस बिधि भयो दाहिनो सुरगुरु आसिरबाद ।
दसरथ-सुकृत-सुधासागर सब उमगे हैं तजि मरजाद ।१७।

ब्राह्मण बेद, बंदि बिरदावलि, जय धुनि मंगल गान ।
निकसत पैठत लोग परसपर बोलत लगि लगि कान ।
बारहिं मुकुता रतन राजमहिषी पुर-सुमुखि समान ।
बगरे नगर निछावरि मनिगन जनु जुवारि-जव-धान ।
कीन्हि बेदबिधि लोकरीति नृप, मंदिर परम हुलास ।
कौसल्या कैकयी सुमित्रा रहस-बिबस रनिवास ।
रानिन्ह दिए बसन मनि भूषन, राजा सहन-भँडार ।
मागध सूत भाट नट जाचक जहँ तहँ करहिं कबार ।
बिप्रबधू सनमानि सुआसिनि, जन पुरजन पहिराइ ।
सनमाने अवनीस, असीसत ईस रमेस मनाइ ।
अष्टसिद्धि नवनिद्धि भूति सब भूपति भवन कमाहिं ।
समउ समाज राज दसरथ को लोकप सकल सिहाहिं ।
को कहि सकै अवधबासिन को प्रेम प्रमोद उछाह ।
सारद सेस गनेस गिरीसहि अगम निगम अवगाह ।
सिव बिरंचि मुनि सिद्ध प्रसंसत, बड़े भूप के भाग ।
तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमगि उमगि अनुराग ।४

राग बिलावल

आजु महामंगल कोसलपुर सुनि नृप के सुत चारि भए ।
सदन सदन सोहिलो सोहावनो नभ अरु नगर निसान हए ।
सजि सजि जान अमर किन्नर मुनि जानि समय सम गान ठए ।
नाचहिं नभ अपसरा मुदित मन पुनि पुनि बरषहिं सुमन चए ।
अति सुख बेगि बोलि गुरु भूसुर भूपति भीतर भवन गए ।

जातकरम करि कनक बसन, मनिभूषित सुरभि समूह दए । ३ ।
दल फल फूल दूब दधि रोचन जुवतिन्ह भरि भरि थार लए ।
गावत चलीं भीर भइ बीथिन्ह, बंदिन्ह बाँकुरे बिरद बए । ४ ।
कनक-कलस चामर पताक धुज जहँ तहँ बंदनवार नए ।
भरहिं अबीर, अरगजा छिरकहिं, सकल लोक एक रंग रए । ५ ।
उमँगि चल्यो आनंद लोक तिहुँ, देत सबनि मंदिर रितए ।
तुलसिदास पुनि भरेइ देखियत, रामकृपा चितवनि चितए ।६।३।

राग जयतश्री

गावैं बिबुध बिमल बरबानी ।
भुवन कोटि कल्यान-कंद जो जायो पूत कौसिला रानी । १ ।
मास पाख तिथि बार नखत ग्रह जोग लगन सुभ ठानी ।
जल थल गगन प्रसन्न साधु मन, दसदिसि हिय हुलसानी । २ ।
बरषत सुमन, बधाव नगर नभ, हरष न जात बखानी ।
ज्यों हुलास रनिवास नरेसहिं त्यों जनपद रजधानी । ३ ।
अमर नाग मुनि मनुज सपरिजन बिगतबिषाद-गलानी ।
मिलेहि माँझ रावन रजधानी लंक संक अकुलानी । ४ ।
देव पितर गुरु बिप्र पूजि नृप दिए दान रुचि जानी ।
मुनि-बनिता, पुरनारि सुआसिनि सहस भाँति सनमानी । ५ ।
पाइ अघाइ असीसत निकसत जाचक जन भए दानी ।
'यों प्रसन्न कैकयी सुमित्रहि होहु महेस-भवानी' । ६ ।
दिन दूसरे भूप-भामिनि दोउ भईं सुमंगल-खानी ।
भयो सोहिलो सोहिले मो जनु सृष्टि सोहिले-सानी । ७ ।

गावत नाचत, मो मन भावत सुख सो अवध अधिकानी।
देत-लेत-पहिरत-पहिरावत प्रजा प्रमोद-अघानी।८।
गान निसान कुलाहल कौतुक देखत दुनी सिहानी।
हरि-बिरंचि हरपुर सोभा कुलि कोसलपुरी लोभानी।९।
आनँद अवनि, राजरानी सब माँगहु कोखि जुड़ानी।
आसिष दै-दै सराहहिं सादर उमा-रमा ब्रह्मानी।१०।
बिभव-बिलास बाढ़ि दसरथ की देखि न जिनहिं सोहानी।
कीरति, कुसल, भूति, जय, रिधि-सिधि तिन्ह पर सबै कोहानी।११।
छठी बारहौं-लोक-बेद बिधि करि सुबिधान बिधानी।
राम लखन रिपुदवन भरत धरे नाम ललित गुरु ज्ञानी।१२।
सुकृत-सुमन तिल-मोद बासि बिधि जतन-जंत्र भरि घानी।
सुख सनेह सब दियो दसरथहि खरि खलेल थिरथानी।१३।
अनुदिन उदय उछाह उमग जग, घर-घर अवध कहानी।
तुलसी राम-जनम-जस गावत सो समाज उर आनी।१४-४

राग केदारा

घर-घर अवध बधावने मंगल साज समाज।
सगुन सोहावने मुदित मन कर सब निज-निज-काज।
निज काज सजत सँवारि पुर-नर-नारि रचना अनगनी।
गृह, अजिर, अटनि, बजार, बीथिन्ह, चारु चौकैं बिधि घनी।
चामर, पताक, बितान, तोरन, कलस, दीपावलि बनी।
सुख-सुकृत-सोभामय पुरी बिधि सुमति-जननी जनु जनी।१।
चैत चतुरदसि चाँदनी, अमल उदित निसिराज।

उडुगन अवलि प्रकासहीं, उमगत आनँद आज।
आनंद उमगत आजु, बिबुध बिमान बिपुल बनाइकै।
गावत, बजावत, नटत, हरषत, सुमन बरषत आइकै।
नर निरखि नभ, सुरपेखि पुरछबि परसपर सचु पाइकै।
रघुराज-साज सराहि लोचन-लाहु लेत अघाइकै। २।
जागिय राम छठी सजनि रजनी रुचिर निहारि।
मंगल मोदमढ़ी मुरति नृप के बालक चारि।
मूरति मनोहर चारि बिरचि बिरंचि परमारथ मई।
अनुरूप भूपति जानि पूजन-जोग बिधि संकर दई।
तिन्हकी छठी, मंजुलमठी, जग सरस जिन्हकी सरसई।
किए नींद भामिनि जागरन, अभिरामिनी जामिनि भई। ३।
सेवक सजग भए समय, साधन सचिव सुजान।
मुनिवर सिखए लौकिकौ बैदिक बिबिध बिधान।
बैदिक-बिधान अनेक लौकिक आचरत सुनि जानिकै।
बलिदान पूजा मूलिकामनि साधि राखी आनिकै।
जे देव-देवी सेइयत हित लागि चित सनमानिकै।
ते जंत्र-मंत्र सिखाइ राखत सबनि सों पहिचानिकै। ४।
सकल सुआसिनि गुरुजन पुरजन पाहुनलोग।
बिबुध बिलासिनि सुर-मुनि जाचक जो जेहि जोग।
जेहि जोग जे तेहि भाँति ते पहिराइ परिपूरन किए।
जय कहत देत असीस तुलसीदास ज्यों हुलसत हिए।
ज्यों आजु कालिहु परहुँ जागन होहिंगे नेवते दिए।

ते धन्य पुन्य-पयोधि जे तेहि समै सुख-जीवन जिए । ५ ।
भूपति भागबली सुरवर नाग सराहि सिहाहिं ।
तिय-बरबेष अली रमा सिधि अनिमादि कमाहिं ।
अनिमादि, सारद, सैलनंदिनि बाल लालहिं पालहीं ।
भरि जनम जे पाए न ते परितोष उमा रमा लहीं ।
निज लोक बिसरे लोकपति, घर की न चरचा चालहीं ।
तुलसी तपत तिहुँ ताप जग, जनु प्रभुछठी छाया लही ।६।५।

राग जयतश्री

बाजत अवध गहागहे आनंद-बधाए ।
नामकरन रघुबरनि के नृप सुदिन सोधाए ।
पाय रजायसु राय को ऋषिराज बोलाए ।
सिष्य सचिव सेवक सखा सादर सिर नाए ।
साधु सुमति समरथ सबै सानंद सिखाए ।
जल दल फल मनि-मूलिका कुलि काज लिखाए । १ ।
गनप गौरि हर पूजिकै गोबृंद दुहाए ।
घर घर मुद मंगल महा गुन-गान सुहाए ।
तुरत मुदित जहँ तहँ चले मन के भए भाए ।
सुरपति-सासनु घन मनो मारुत मिलि धाए । २ ।
गृह आँगन चौहट गली बाजार बनाए ।
कलस चँवर तोरन धुजा सुबितान तनाए ।
चित्र चारु चौकैं रचीं लिखि नाम जनाए ।
भरिभरि सरवर बापिका अरगजा सनाए । ३ ।

नर-नारिन्ह पल चारि में सब साज सजाए।
दसरथ-पुर छवि आपनी सुरनगर लजाए।
बिबुध बिमान बनाइ कै आनंदित आए।
हरषि सुमन बरषन लगे गए धन जनु पाए।४।
बरे बिप्र चहुँ बेद के रबिकुल-गुरु ज्ञानी।
आपु बसिष्ठ अथर्वणी, महिमा जग जानी।
लोक-रीति बिधि बेद की करि कह्यो सुबानी—
'सिसु समेत बेगि बोलिए कौसल्या रानी'।५।
सुनत सुआसिनि लै चलीं गावत बड़भागीं।
उमा रमा सारद सची लखि सुनि अनुरागीं।
निज निज रुचि बेष बिरचि कै हिलिमिलि सँग लागीं।
तेहि अवसर तिहुँ लोक की सुदसा जनु जागीं।६।
चारु चौक बैठत भईं भूप-भामिनी सोहैं।
गोद मोद-मूरति लिए, सुकृती जन जोहैं।
सुख सुखमा कौतुक कला देखि सुनि मुनि मोहैं।
सो समाज कहैं बरनिकै ऐसे कबि को हैं?।७।
लगे पढ़न रच्छा ऋचा ऋषिराज बिराजे।
गगन सुमन-झरि, जयजय, बहु बाजन बाजे।
भए अमंगल लंक में, संक संकट गाजे।
भुवन-चारिदस के बड़े दुख-दारिद भाजे।८।
बाल बिलोकि अथर्वणी हँसि हरहि जनायो।
सुभ को सुभ, मोद मोद को 'राम' नाम सुनायो।

आलबाल कल कौसिला, दल बरन सोहायो।
कंद सकल आनंद को जनु अंकुर आयो। ९।
जोहि जानि जपि जोरि कै करपुट सिर राखे।
'जय जय जय करुनानिधे!' सादर सुर भाषे।
सत्यसंध साँचे सदा जे आखर आषे।
प्रनतपाल पाए सही जे फल अभिलाषे। १०।
भूमिदेव देव देखिकै नरदेव सुखारी।
बोलि सचिव सेवक सखा पट धारि भँडारी।
देहु जाहि जोइ चाहिए सनमानि सँभारी।
लगे देन हिय हरषि कै हेरि हेरि हँकारी। ११।
राम-निछावरि लेन को हठि होत भिखारी।
बहुरि देत तेहि देखिए मानहुँ धन-धारी।
भरत लषन रिपुदवनहूँ धरे नाम बिचारी।
फलदायक फल चारि के दसरथ-सुत चारी। १२।
भए भूप बालकनि के नाम निरूपम नीके।
सबै सोच संकट मिटे तब तें पुर-ती के।
सुफल मनोरथ बिधि किए सब बिधि सबही के।
अब होइहै गाए सुने सबके तुलसी के। १३। ६

राग बिलावल

सुभगसेज सोभित कौसल्या रुचिर राम-सिसु गोद लिये।
बार बार बिधुबदन बिलोकति लोचन चारु चकोर किये। १।
कबहुँ पौढ़ि पयपान करावति, कबहूँ राखति लाइ हिये।

बालकेलि गावति हलरावति, पुलकति प्रेम-पियूष पिये । २ ।
बिधि महेस मुनि सुर सिहात सब, देखत अंबुद ओट दिये ।
तुलसिदास ऐसो सुख रघुपति पै काहू तो पायो न बिये । ३ ॥७

राग सोरठ

हैहौ लाल कबहिं बड़े बलि मैया ।
राम लषन भावते भरत रिपुदवन चारु चारयो भैया । १ ।
बाल-बिभूषन-बसन मनोहर अंगनि बिरचि बनैहौं ।
सोभा निरखि निछावरि करि उर लाइ बारने जैहौं । २ ।
छगन-मगन अँगना खेलिहौ मिलि ठुमुकु ठुमुकु कब धैहौ ।
कलबल बचन तोतरे मंजुल कहि "माँ" मोहिं बुलैहौ । ३ ।
पुरजन सचिव राउ रानी सब सेवक सखा सहेली ।
लैहैं लोचन-लाहु सुफल लखि ललित मनोरथ-बेली । ४ ।
जा सुख की लालसा लटू सिव, सुक सनकादि उदासी ।
तुलसी तेहि सुखसिंधु कौसिला मगन, पै प्रेम-पियासी । ५ ॥८

पगनि कब चलिहौ चारौ भैया ?
प्रेम-पुलकि उर लाइ सुवन सब कहति सुमित्रा मैया । १ ।
सुंदर तनु सिसु-बसन-बिभूषन नखसिख निरखि निकैया ।
दलि तृन, प्रान निछावरि करि करि लैहैं मातु बलैया । २ ।
किलकनि नटनि चलनि चितवनि भजि मिलनि मनोहरतैया ।
मनि-खंभनि प्रतिबिंब-झलक, छबि छलकिहै भरि अँगनैया । ३ ।
बालबिनोद, मोद मंजुल बिधु, लीला ललित जुन्हैया ।
भूपति पुन्य-पयोधि उमँग, घर घर आनंद बधैया । ४ ।

ह्वैहैं सकल सुकृत-सुख-भाजन, लोचन - लाहु लुटैया ।
अनायास पाइहैं जनमफल तोतरे बचन सुनैया ।५।
भरत, राम, रिपुदवन, लषन के चरित-सरित अन्हवैया ।
तुलसी तब के से अजहुँ जानिबे रघुबर-नगर-बसैया ।६।९।

राग केदारा

चुपरि उबटि अन्हवाइकै नयन आँजे,
चिर रुचि तिलक गोरोचन को कियो है ।
भ्रूपर अनूप मसिबिंदु, बारे बारे बार,
बिलसत सीस पर हेरि हरै हियो है ।
मोद-भरी गोद लिये लालति सुमित्रा देखि
देव कहैं सबको सुकृत उपवियो है ।
मातु, पितु, प्रिय, परिजन, पुरजन धन्य,
पुन्यपुंज पेखि पेखि प्रेमरस पियो है ।
लोहित ललित लघु चरन-कमल चारु,
चाल चाहि सो छबि सुकबि जिय जियो है ।
बालकेलि बातबस झलकि झलमलत
सोभा की दीयटि मानो रूप दीप दियो है ।
राम-सिसु सानुज चरित चारु गाइ सुनि
सुजनन सादर जनम-लाहु लियो है ।
तुलसी बिहाइ दसरथ दसचारिपुर
ऐसे सुखजोग बिधि बिरच्यो न बियो है ॥१०॥

राम-सिसु गोद महामोद भरे दसरथ,
कौसिलाहु ललकि लषन लाल लए हैं ।
भरत सुमित्रा लए, कैकयी सत्रुसमन,
तन प्रेम-पुलक, मगन मन भए हैं ।
मेढ़ी लटकन मनि-कनक-रचित, बाल-
भूषन बनाइ आछे अंग-अंग ठए हैं ।
चाहि चुचुकारि चूमि लालत लावत उर,
तैसे फल पावत जैसे सुबीज बए हैं ।
घनओट बिबुध बिलोकि बरषत फूल,
अनुकूल बचन कहत नेह नए हैं ।
ऐसे पितु, मातु, पूत, प्रिय, परिजन बिधि
जानियत आयु भरि येई निरमए हैं ।
'अजर अमर होहु' 'करौ हरि-हर छोहु'
जरठ जठेरिन्ह आसिरबाद दए हैं ।
तुलसी सराहैं भाग तिन्हके जिन्हके हिये
डिंभ-रामरूप-अनुराग-रंग रए हैं ॥११॥

राग आसावरी

आजु अनरसे हैं भोर के, पय पियत न नीके ।
रहत न बैठे ठाढ़े, पालने झुलावतहू, रोवत राम मेरो सो सोच सबही के
देव, पितर, ग्रह पूजिये तुला तौलिए घी के ।
तदपि कबहुँ कबहुँक सखी ऐसेहि अरत जब परत दृष्टि दुष्ट ती के
बेगि बोलि कुलगुरु छुयो माथे हाथ अमी के ।

सुनत आइ ऋषि कुस हरे नरसिंह मंत्र पढ़े जो सुमिरत भय भी के
जासु नाम सर्बस सदासिव पार्वती के ।
ताहि झरावति कौसिला, यह रीति प्रीति की हिय हुलसति तुलसी के
माथे हाथ ऋषि जब दियो राम किलकन लागे ।
महिमा समुझि, लीला बिलोकि गुरु सजल नयन, तनु पुलक, रोमरोम जागे
लिए गोद, धाए गोद तें मोद मुनि मन अनुरागे ।
निरखि मातु हरषी हिये आली ओट कहति मृदु बचन प्रेम के से पागे ॥
तुम्ह सुरतरु रघुबंस के, देत अभिमत माँगे ।
मेरे बिसेषि गति रावरी तुलसी प्रसाद जाके सकल अमंगल भागे ॥
अमिय-बिलोकनि करि कृपा मुनिवर जब जोए ।
तबतें राम अरु भरत लषन रिपुदवन, सुमुख सखि! सकल सुवन सुख सोए
सुमित्रा लाय हिये फनि मनि ज्यों गोए ।
तुलसी नेवछावरि करति मातु अति प्रेम-मगन मन, सजल सुलोचन कोये
मातु सकल, कुलगुरु-बधू, प्रिय सखी सुहाई ।
सादर सब मंगल किए महि-मनि-महेस पर सबनि सुधेनु दुहाई ॥
बोलि भूप भूसुर लिये अति बिनय बड़ाई ।
पूजि पायँ सनमानि दान दिये लहि असीस मुनि बरषैं सुमन सुरसाईं ॥
घर घर पुर बाजन लगीं आनंद बधाई ।
सुख सनेह तेहि समय को तुलसी जानै जाको चोख्यो है चित चहुँ भाई ॥

राग धनाश्री

या सिसु के गुन नाम बड़ाई ।
को कहि सकै सुनहु नरपति श्रीपति समान प्रभुताई ॥

जद्यपि बुधि, बय, रूप, सील, गुन समय चारु चार्‍यो भाई।
तदपि लोक-लोचन-चकोर-ससि राम भगत-सुखदाई॥
सुर, नर, मुनि करि अभय दनुज हति हरिहि धरनि गरुआई।
कीरति बिमल बिस्व-अघमोचनि रहिहि सकल जग छाई॥
याके चरन-सरोज कपट तजि जे भजिहैं मन लाई।
ते कुल जुगल सहित तरिहैं भव, यह न कछू अधिकाई॥
सुनि गुरुबचन पुलक तन दंपति, हरष न हृदय समाई।
तुलसिदास अवलोकि मातु-मुख प्रभु मन में मुसुकाई॥१३॥

राग बिलावल

अवध आजु आगमी एकु आयो।
करतल निरखि कहत सब गुनगन, बहुतन परिचौ पायो॥
बूढ़ो बड़ो प्रमानिक ब्राह्मन संकर नाम सुहायो।
सँग सिसुसिष्य, सुनत कौसल्या भीतर भवन बुलायो॥
पाँय पखारि पूजि दियो आसन, असन बसन पहिरायो।
मेले चरन चारु चार्‍यो सुत, माथे हाथ दिवायो॥
नखसिख बाल बिलोकि बिप्रतनु पुलक, नयन जल छायो।
लै लै गोद कमल-कर निरखत, उर प्रमोद न अमायो॥
जनम-प्रसंग कह्यो कौसिक मिसि सीय-स्वयंबर गायो।
राम, भरत, रिपुदवन लखन को जय सुख सुजस सुनायो॥
तुलसिदास रनिवास रहसबस, भयो सबको मन भायो।
सनमान्यो महिदेव असीसत सानँद सदन सिधायो॥१४॥

राग केदारा

पौढ़िये लालन, पालने हौं झुलावौं ।
कर, पद, मुख, चख कमल लसत लखि लोचन-भँवर भुलावौं ॥
बाल-बिनोद-मोद-मंजुलमनि किलकनि खानि खुलावौं ।
तेइ अनुराग ताग गुहिबे कहँ मति मृगनयनि बुलावौं ॥
तुलसी भनित भली भामिनि उर सो पहिराइ फुलावौं ।
चारु चरित रघुबर तेरे तेहि मिलि गाइ चरन चितु लावौं ॥१५॥

सोइये लाल लाडिले रघुराई ।
मगन मोद लिये गोद सुमित्रा बार बार बलि जाई ॥
हँसे हँसत, अनरसे अनरसत प्रतिबिंबनि ज्यों झाँई ।
तुम सबके जीवन के जीवन, सकल सुमंगलदाई ॥
मूल मूल सुरबीथि बेलि, तम-तोम-सुदल अधिकाई ।
नखत-सुमन, नभ-बिटप बौंडि मानो छपा छिटकि छबि छाई ॥
हौ जँभात अलसात, तात ! तेरी बानि जानि मैं पाई ।
गाइ गाइ हलराइ बोलिहौं सुख नींदरी सुहाई ॥
बछरु छबीलो छगनमगन मेरे कहति मल्हाइ मल्हाई ।
सानुज हिय हुलसति तुलसी के प्रभु की ललित लरिकाई ॥१६॥

ललन लोने लेरुआ, बलि मैया ।
सुख सोइए नींद-बेरिया भई चारु-चरित चार्‌यो भैया ॥
कहति मल्हाइ लाइ उर छिन छिन छगन छबीले छोटे छैया ।
मोद-कंद कुल-कुमुद-चंद्र मेरे रामचंद्र रघुरैया ।
रघुबर बालकेलि संतन की सुभग सुभद सुरगैया ।
तुलसी दुहि पीवत सुख जीवत पय सप्रेम घनी घैया ॥१७॥

सुखनींद कहति आलि आइहौं।
राम, लखन, रिपुदवन, भरत सिसु करि सब सुमुख सोआइहौं ॥
रोवनि, धोवनि, अनखानि, अनरसनि, डिठि-मुठि निठुर नसाइहौं।
हँसनि, खेलनि, किलकनि, आनंदनि भूपति-भवन बसाइहौं ॥
गोद बिनोद मोदमय मूरति हरषि हरषि हलराइहौं।
तनु तिल तिल करि बारि राम पर लेहौं रोग बलाइ हौं ॥
रानी राउ सहित सुत परिजन निरखि नयन-फल पाइहौं।
चारु चरित रघुबंस-तिलक के तहँ तुलसी मिलि गाइहौं ॥१८॥

राग आसावरी

कनक-रतनमय पालनो रच्यो मनहुँ मार सुतहार।
बिबिध खेलौना किंकिनी लागे मंजुल मुकुताहार ॥
रघुकुल-मंडन राम लला ॥ १ ॥
जननि उबटि अन्हवाइकै मनिभूषन सजि लिये गोद।
पौढ़ाए पटु पालने, सिसु निरखि मगन मन मोद ॥
दसरथनंदन राम लला ॥ २ ॥
मदन, मोर कै चंद की झलकनि निदरति तनु-जोति।
नील कमल, मनि, जलद की उपमा कहे लघु मति होति ॥
मातु-सुकृत-फल राम लला ॥ ३ ॥
लघु लघु लोहित ललित हैं पद, पानि, अधर एक रंग।
को कबि जो छबि कहि सकै, नखसिख सुंदर सब अंग ॥
परिजन-रंजन राम लला ॥ ४ ॥

पग नूपुर, कटि किंकनी, कर-कंजनि पहुँची मंजु।
हिय हरिनख अद्भुत बन्यो मानो मनसिज मनि-गन-गंजु॥
पुरजन-सिरमनि राम लला॥ ५॥
लोयन नील सरोज-से, भ्रूपर मसि-बिंद बिराज।
जनु बिधु-मुख-छबि-अमिय को रच्छक राखे रसराज॥
सोभासागर राम लला॥ ६॥
गभुआरी अलकावली लसै, लटकन ललित ललाट।
जनु उडुगन बिधु मिलन को चले तम बिदारि करि बाट॥
सहज सोहावनो राम लला॥ ७॥
देखि खेलौना किलकहीं पद पानि बिलोचन लोल।
बिचित्र बिहँग अलि जलज ज्यौं सुखमा-सर करत कलोल॥
भगत-कलपतरु राम लला॥ ८॥
बाल-बोल बिनु अरथ के सुनि देत पदारथ चारि।
जनु इन्ह बचनन्हि तें भए सुरतरु तापस त्रिपुरारि॥
नाम-कामधुक राम लला॥ ९॥
सखी सुमित्रा वारहीं मनि भूषन बसन बिभाग।
मधुर झुलाइ मल्हावहीं गावैं उमँगि उमँगि अनुराग॥
हैं जग-मंगल राम लला॥१०॥
मोती जायो सीप में अरु अदिति जन्यो जग-भानु।
रघुपति जायो कौसिला गुन-मंगल-रूप-निधानु॥
भुवन-बिभूषन राम लला॥११॥
राम प्रगट जब तें भए गए सकल अमंगल मूल।

मीत मुदित, हित उदित हैं, नित बैरिन के चित सूल ॥
भव-भय-भंजन राम लला ॥१२॥
अनुज सखा सिसु संग लै खेलन जैहैं चौगान ।
लंका खरभर परैगी, सुरपुर बाजिहैं निसान ॥
रिपुगन-गंजन राम लला ॥१३॥
राम अहेरे चलहिंगे जब गज रथ बाजि सँवारि ।
दसकंधर उर धकधकी अब जनि धावै धनु धारि ॥
अरि-करि-केहरि राम लला ॥१४॥
गीत सुमित्रा सखिन्ह कै सुनि सुनि सुर मुनि अनुकूल ।
दै असीस जय जय कहैं हरषैं बरषैं फूल ॥
सुर-सुखदायक राम लला ॥१५॥
बालचरित-मय चंद्रमा यह सोरह-कला-निधान ।
चित चकोर तुलसी कियो कर प्रेम-अमिय-रस पान ॥
तुलसी को जीवन राम लला ॥१६॥१६॥

राग कान्हरा

पालने रघुपति झुलावै ।
लै लै नाम सप्रेम सरस स्वर कौसल्या कल कीरति गावै ।
केकिकंठ दुति, स्यामबरन बपु, बाल-बिभूषन बिरचि बनाए ।
अलकैं कुटिल, ललित लटकन भ्रू, नील नलिन दोउ नयन सुहाए ॥
सिसु सुभाय सोहत जब कर गहि बदन निकट पदपल्लव लाए ।
मनहुँ सुभग जुग भुजग जलज भरि लेत सुधा ससि सों सचु पाए ॥
उपर अनूप बिलोकि खेलौना किलकत पुनि पुनि पानि पसारत ।

मनहुँ उभय अंभोज अरुन सों बिधु-भय बिनय करत अति आरत ॥
तुलसिदास बहु-बास-बिबस अलि गुंजत सुछबि न जाति बखानी ।
मनहुँ सकल स्रुति ऋचा मधुप ह्वै बिसद सुजस बरनत बर बानी ॥२०

राग बिलावल

झूलत राम पालने सोहैं, भूरि-भाग जननी जन जोहैं ।
तन मृदु मंजुल मेचकताई, झलकति बाल बिभूषन झाँई ।
अधर पानि पद लोहित लोने, सर-सिँगार-भवसारस सोने ।
किलकत निरखि बिलोल खेलौना, मनहुँ बिनोद लरत छबि छौना ।
रंजित अंजन कंज-बिलोचन, भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ।
लस मसिबिंदु बदन-बिधु नीको चितवत चितचकोर तुलसी को ।२१

राग कल्याण

राजन सिसुरूप राम सकल गुन निकाय धाम,
कौतुकी कृपालु ब्रह्म जानु-पानि-चारी ।
नीलकंज जलदपुंज मरकतमनि सरिस स्याम,
काम कोटि सोभा अंग अँग उपर वारी ॥
हाटक-मनि-रत्न-खचित रचित इंद्र-मंदिराभ,
इंदिरानिवास सदन बिधि रच्यो सँवारी ।
बिहरत नृप-अंजिर अनुज सहित बालकेलि-कुसल,
नील-जलज-लोचन हरि मोचन-भयभारी ॥
अरुन चरन अंकुस धुज कंज कुलिस चिन्ह रुचिर,
भ्राजत अति नूपुर बर मधुर मुखरकारी ।
किंकिनी बिचित्र जाल, कंबुकंठ ललित माल,

उर बिसाल केहरिनख, कंकन कर धारी ॥
चारु चिबुक नासिका कपोल, भाल तिलक, भ्रुकुटि,
स्रवन अधर सुंदर, द्विज-छबि अनूप न्यारी।
मनहुँ अरुन कंज-कोस मंजुल जुगपाँति प्रसव,
कुंदकली जुगल जुगल परम सुभ्रवारी ॥
चिक्कन चिकुरावली मनो षडंघ्रि-मंडली,
बनी, बिसेषि गुंजत जनु बालक किलकारी।
इकटक प्रतिबिंब निरखि पुलकत हरि हरषि हरषि,
लै उछंग जननी रसभंग जिय बिचारी ॥
जा कहँ सनकादि संभु नारदादि सुक मुनींद्र
करत बिबिध जोग काम क्रोध लोभ जारी।
दसरथ गृह सोइ उदार, भंजन संसार-भार,
लीला अवतार तुलसिदास त्रासहारी ॥ २२ ॥

राग कान्हरा

आँगन फिरत घुटुरुवनि धाए।
नील-जलद-तनु-स्याम राम-सिसु जननि निरखि मुख निकट बोलाए
बंधुक-सुमन-अरुन पदपंकज अंकुस प्रमुख चिन्ह बनि आए।
नूपुर जनु मुनिवर-कलहंसनि रचे नीड़, दै बाँह बसाए।२।
कटि मेखल, बर हार, ग्रीव दर, रुचिर बाँह भूषन पहिराए।
उर श्रीवत्स मनोहर हरिनख हेम मध्य मनिगन बहु लाए।३।
सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका स्रवन कपोल मोहिं अति भाए।
भ्रू सुंदर करुनारस-पूरन, लोचन मनहुँ जुगल जलजाए ॥४॥

भाल बिसाल ललित लटकन बर, बालदसा के चिकुर सोहाए।
मनु दोउ गुरु सनि कुज आगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए। ५।
उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत ओढ़ाए।
नील जलद पर उडुगन निरखत तजि सुभाव मनों तड़ित छपाए। ६।
अंग अंग पर मार निकर मिलि छबिसमूह लैलै जनु छाए।
तुलसिदास रघुनाथ-रूप-गुन तौ कहौं जो बिधि होहिं बनाए। ७।२३

राग केदारा

रघुबर-बाल-छबि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव, कोटि-मनोज-सोभाहरनि। १।
बसी मानहुँ चरन-कमलनि अरुनता तजि तरनि।
रुचिर नूपुर किंकिनी मन हरति रुनझुनु करनि। २।
मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि।
जनु सुभग सिंगार-सिसु-तरु फर्यो है अद्भुत फरनि। ३।
भुजनि भुजग, सरोज नयननि, बदन बिधु जित्यो लरनि।
रहे कुहरनि, सलिल नभ उपमा अपर दुरि डरनि। ४।
लसत कर प्रतिबिंब मनि-आँगन घुटुरुवनि चरनि।
जनु जलज-संपुट सुछबि भरि भरि धरति उर धरनि। ५।
पुन्यफल अनुभवति सुतहि बिलोकि दसरथ-घरनि।
बसति तुलसी-हृदय प्रभु किलकनि ललित लरखरनि। ६।२४।

नेकु बिलोकि धौं रघुबरनि।
चारि फल त्रिपुरारि तोको दिये कर नृप-घरनि। १।
बाल-भूषन-बसन, तन सुंदर रुचिर रजभरनि।

परसपर खेलनि अजिर, उठि चलनि गिरिगिरि परनि ।२।
झुकनि झाँकनि, छाँह सों किलकनि, नटनि, हठि लरनि ।
तोतरि बोलनि, बिलोकनि मोहनी मनहरनि ।३।
सखि बचन सुनि कौसिला लखि सुढर पासे ढरनि ।
लेति भरि भरि अंक सैंतति पैंत जनु दुहुँ करनि ।४।
चरित निरखत बिबुध तुलसी ओट दै जलधरनि ।
चहत सुर सुरपति भयो सुरपति भयो चहै तरनि ।५।२५।

राग जयतश्री

भूमितल भूप के बड़े भाग ।
राम लषन रिपुदमन भरत सिसु निरखत अति अनुराग ।१।
बाल-बिभूषन लसत पायँ मृदु मंजुल अंग-बिभाग ।
दसरथ सुकृत-मनोहर-बिरवनि रूप-करह जनु लाग ।२।
राजमराल बिराजत बिहरत जे हर हृदय-तड़ाग ।
ते नृप-अजिर जानुकर धावत धरन चटक चल काग ।३।
सिद्ध सिहात, सराहत मुनिगन कहैं सुर किन्नर नाग ।
"है बरु बिहँग बिलोकिय बालक बसि पुर उपबन बाग ।४।"
परिजन सहित राय रानिन्ह कियो मज्जन प्रेम-प्रयाग ।
तुलसी फल ताके चार्‌यो मनि मरकत पंकजराग ।५।२६।

राग आसावरी

छँगन-मँगन अँगना खेलत चारु चार्‌यो भाई ।
सानुज भरत लाल लषन राम लोने लोने,
लरिका लखि मुदित मातुसमुदाई ।१।

बाल-बसन-भूषन धरे नखसिख छबि छाई ।
नील पीत मनसिज-सरसिज मंजुल,
मालनि मानो है देहनि तें दुति पाई ।२।
ठुमुकु ठुमुकु पग धरनि, नटनि, लरखरनि सुहाई ।
भजनि मिलनि रूठनि टूठनि किलकनि,
अवलोकनि बोलनि बरनि न जाई ।३।
जननि सकल चहुँ ओर आलबाल मनि-अँगनाई ।
दसरथ सुकृत-बिबुध-बिरवा बिलसत,
बिलोकि जनु बिधि बर बारि बनाई ।४।
हरि बिरंचि हर हेरि राम प्रेम-परबसताई ।
सुख-समाज रघुराज के बरनत,
बिसुद्ध मन सुरनि सुमन झरि लाई ।५।
सुमिरत श्रीरघुबरन की लीला लरिकाई ।
तुलसिदास अनुराग अवध आनँद,
अनुभवत तब को सो अजहुँ अघाई ।६।२७।

राग बिलावल

आँगन खेलत आनँदकंद ।
रघुकुल कुमुद सुखद चारु चंद ।
सानुज भरत लषन सँग सोहैं ।
सिसु-भूषन भूषित मन मोहैं ।
तन दुति मोरचंद जिमि झलकैं ।
मनहुँ उमँगि अँग-अँग छबि छलकैं ।१।

कटि किंकिनि, पग पैंजनि बाजैं ।
पंकज-पानि पहुँचियाँ राजैं ।
कठुला कंठ बघनहा नीके ।
नयन-सरोज मयन-सरसी के ।२।
लटकन लसत ललाट लटूरीं ।
दमकति द्वै द्वै दँतुरियाँ रूरीं ।
मुनि-मन हरत मंजु मसि-बुंदा ।
ललित बदन, बलि, बालमुकुंदा । ३ ।
कुलही चित्र-बिचित्र झँगूली ।
निरखत मातु मुदित मन फूली ।
गहि मनि-खंभ डिंभ डगि डोलत ।
कलबल बचन तोतरे बोलत । ४ ।
किलकत झुकि झाँकत प्रतिबिंबनि ।
देत परम सुख पितु अरु अंबनि ।
सुमिरत सुखमा हिय हुलसी है ।
गावत प्रेम पुलकि तुलसी है । ५ ।

राग कान्हरा

ललित सुतहि-लालति सचु पाए ।
कौसल्या कल कनक अजिर महँ सिखवति चलन अँगुरियाँ लाए । १ ।
कटि किंकिनी, पैंजनी पाँयनि बाजति रुनझुनु मधुर रेंगाए ।
पहुँची करनि, कंठ कठुला बन्यो केहरिनख-मनि-जरित जराए ।२।
पीत पुनीत बिचित्र झँगुलिया सोहति स्याम सरीर सोहाए ।

दँतियाँ द्वै द्वै मनोहर मुखछबि, अरुन अधर चित लेत चोराए ।३।
चिबुक कपोल नासिका सुंदर, भाल तिलक मसिबिंदु बनाए ।
राजत नयन मंजु अंजनजुत खंजन कंज मीन मद नाए ।४।
लटकन चारु भ्रुकुटिया टेढ़ी, मेढ़ी सुभग सुदेस सुभाए ।
किलकि किलकि नाचत चुटकी सुनि, डरपति जननि पानि छुटकाए ।
गिरि घुटुरुवनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पूप देखाए ।
बाल-केलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनँद न अमाए ।६।
देखत नभ घन-ओट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिसराए ।
तुलसिदास जे रसिक न एहि रस ते नर जड़ जीवत जग जाए ।७।

राग ललित

छोटी छोटी गोड़ियाँ अँगुरियाँ छबीलीं छोटी,
नख-जोति मोती मानो कमल-दलनि पर ।
ललित आँगन खेलैं, ठुमुकु ठुमुकु चलैं,
झुँझुनु झुँझुनु पाँय पैंजनी मृदु मुखर ।
किंकिनी कलित कटि हाटक-जटित मनि,
मंजु कर-कंजनि पहुँचियाँ रुचिरतर ।
पियरी झीनी झँगुली साँवरे सरीर खुली,
बालक दामिनि ओढ़ी मानो बारे बारिधर ।१।
उर बघनहा, कंठ कठुला, झँडूले केस,
मेढ़ी लटकन मसिबिंदु मुनि मन-हर ।
अंजन-रंजित नैन, चित चोरै चितवनि,
मुख-सोभा पर वारौं अमित असमसर ।

चुटकी बजावती नचावती कौसल्या माता,
बालकेलि गावति मल्हावति सुप्रेम-भर ।
किलकि किलकि हँसैं, द्वै द्वै दँतुरियाँ लसैं,
तुलसी के मन बसैं तोतरे बचन बर ।२।३०।

सादर सुमुखि बिलोकि राम-सिसुरूप, अनूप भूप लिए कनियाँ।
सुंदर स्याम-सरोज-बरन तनु, नखसिख सुभग सकल सुखदनियाँ
अरुन चरन नखजोति जगमगति, रुनझुनु करति पाँय पैंजनियाँ।
कनक-रतन-मनि-जटित रटति कटि किंकिनि, कलित पीतपट-तनियाँ
पहुँची करनि, पदिक हरिनख उर, कठुला कंठ, मंजु गजमनियाँ।
रुचिर चिबुक, रद अधर मनोहर, ललित नासिका लसति नथुनियाँ
बिकट भ्रुकुटि सुखमानिधि आनन कल कपोल काननि नगफनियाँ
भाल तिलक मसिबिंदु बिराजत, सोहति सीस लाल चौतनियाँ ।४।
मनमोहनी तोतरी बोलनि, मुनिमनहरनि हँसनि किलकनियाँ ।
बाल सुभाय बिलोल बिलोचन, चोरति चितहि चारु चितवनियाँ ।५।
सुनि कुलबधू झरोखनि झाँकति रामचंद्र-छबि चंदबदनियाँ ।
तुलसिदास प्रभु देखि मगन भईं प्रेमबिबस कछु सुधि न अपनियाँ ६।३१

राग बिलावल

सोहत सहज सुहाए नैन ।
खंजन मीन कमल सकुचत तब जब उपमा चाहत कबि दैन ।१।
सुंदर सब अंगनि सिसु-भूषन राजत जनु सोभा आए लैन ।
बड़ो लोभ, लालची लोभ बस रहि गए लखि सुखमा बहु मैन ।२।
भोर भूप लिए गोद मोद भरे, निरखत बदन, सुनत कल बैन ।

बालक-रूप अनूप राम-छबि निवसति तुलसिदास-उर-ऐन ।३।३२।

राग बिभास

भोर भयो जागहु, रघुनंदन ! गत-ब्यलीक, भगतनि-उर-चंदन ।
ससि करहीन, छीनदुति तारे। तमचुर मुखर, सुनहु मेरे प्यारे ! ।
बिकसित कंज, कुमुद बिलखाने । लै पराग रस मधुप उड़ाने ।
अनुजसखा सब बोलनि आए। बंदिन्ह अति पुनीत गुन गाए ।
मनभावतो कलेऊ कीजै । तुलसिदास कहँ जूँठनि दीजै ।३३

प्रात भयो तात, बलि,मातु, बिधु-बदन पर
मदन वारौं कोटि, उठौ प्रानप्यारे ! ।
सूत मागध बंदि बदत बिरुदावली,
द्वार सिसु-अनुज प्रियतम तिहारे ।
कोक गतसोक अवलोकि ससि छीनछबि,
अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे ।
मनहुँ रबिबाल-मृगराज तमनिकर-करि
दलित, अति ललित मनिगन बिथारे ।
सुनहु तमचुर मुखर, कीर कलहंस पिक
केकि रव कलित, बोलत बिहँग बारे ।३४।
मनहुँ मुनिबृंद, रघुबंसमनि ! रावरे
गुनत गुन आस्रमनि सपरिवारे ।
सरनि बिकसित कंजपुंज मकरंद बर,
मंजुतर मधुर मधुकर गुंजारे ।
मनहुँ प्रभुजन्म सुनि चैन अमरावती,

इंदिरानंद मंदिर सँवारे।
प्रेम-संमिलित बर बचन-रचना अकनि
राम राजीव - लोचन उघारे।
दास तुलसी मुदित, जननि करै आरती,
सहज सुंदर अजिर पाँव धारे। ३५।
जागिए कृपानिधान जानराय रामचंद्र!
जननी कहै बार बार भोर भयो प्यारे।
राजिवलोचन बिसाल, प्रीति-बापिका मराल,
ललित कमल-बदन ऊपर मदन कोटि वारे।
अरुन उदित, बिगत सर्वरी, ससांक किरनहीन,
दीन दीपजोति, मलिन-दुति समूह तारे।
मनहुँ ज्ञान घन प्रकास, बीते सब भव-बिलास
आसत्रास-तिमिर तोष-तरनि-तेज जारे।
बोलत खगनिकर मुखर मधुर-करि प्रतीत सुनहु
स्रवन, प्रानजीवन धन, मेरे तुम बारे।
मनहुँ बेद बंदी मुनिबृंद सूत मागधादि
बिरुद बदत 'जय जय जय जयति कैटभारे'।
बिकसित कमलावली, चले प्रपुंज चंचरीक
गुंजत कल कोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे।
जनु बिराग पाइ सकल-सोक-कूप-गृह बिहाइ
भृत्य प्रेममत्त फिरत गुनत गुन तिहारे।
सुनत बचन प्रिय रसाल जागे अतिसय दयाल,

भागे जंजाल बिपुल, दुख-कदंब दारे ।
तुलसिदास अति अनंद, देखिकै मुखारबिंद,
छूटे भ्रमफंद परम मंद द्वंद भारे ।३६।

बोलत अवनिप-कुमार ठाढ़े नृपभवन-द्वार,
रूपसील-गुन उदार जागहु मेरे प्यारे ।
बिलखित कुमुदिनि, चकोर, चक्रवाक हरष भोर,
करत सोर तमचुर खग, गुंजत अलि न्यारे ।
रुचिर मधुर भोजन करि, भूषन सजि सकल अंग,
संग अनुज बालक सब बिबिध बिधि सँवारे ।
करतल गहि ललित चाप भंजन रिपु-निकर-दाप,
कटितट पटपीत, तून सायक अनियारे ।
उपबन मृगया-बिहार-कारन गवने कृपाल,
जननी मुख निरखि पुन्यपुंज निज बिचारे ।
तुलसिदास संग लीजै, जानि दीन अभय कीजै
दीजै मति बिमल गावै चरित बर तिहारे ।३७।

राग नट

खेलन चलिए आनँदकंद ।
सखा प्रिय नृपद्वार ठाढ़े बिपुल बालक-बृंद ।१।
तृषित तुम्हरे दरस कारन चतुर चातक-दास ।
बपुष-बारिद बरषि छबि-जल हरहु लोचन-प्यास ।२।
बंधु-बचन बिनीत सुनि उठे मनहुँ केहरि-बाल ।
ललित लघु सर चाप कर, उर नयन बाहु बिसाल ।३।

चलत पद प्रतिबिंब राजत अजिर सुखमा-पुंज ।
प्रेमबस प्रति चरन महि मानो देति आसन कंज । ४ ।
निरखि परम बिचित्र सोभा चकित चितवहिं मात ।
हरष-बिबस न जात कहि, 'निज भवन बिहरहु, तात' । ५ ।
देखि तुलसीदास प्रभु-छबि रहे सब पल रोकि ।
थकित निकर-चकोर मानहुँ सरदइंदु बिलोकि । ६ । ३८

बिहरत अवध-बीथिन राम ।
संग अनुज अनेक सिसु, नव-नील-नीरद-स्याम । १ ।
तरुन अरुन-सरोज-पद बनी कनकमय पदत्रान ।
पीत पट कटि तून बर, कर ललित लघु धनु बान । २ ।
लोचननि को लहत फल छबि निरखि पुर-नर-नारि ।
बसत तुलसीदास उर अवधेस के सुत चारि । ३ । ३९

जैसे राम ललित तैसे लोने लषन लालु ।
तैसेई भरत सील-सुखमा-सनेह-निधि, तैसेई सुभग सँग सत्रुसालु ।१।
धरे धनु सर कर, कसे कटि तरकसी, पीरे पट ओढ़े चले चारु चालु
अंग अंग भूषन जराय के जगमगत, हरत जन के जी को तिमिरजालु
खेलत चौहट घाट बीथी बाटिकनि प्रभु सिव सुप्रेम-मानस-मरालु ।
सोभा-दान दै दै सनमानत जाचकजन करत लोक-लोचन निहालु ।३।
रावन-दुरित-दुख दलैं सुर कहैं आजु 'अवध सकल सुख को सुकालु'।
तुलसी सराहैं सिद्ध सुकृत कौसल्याजू के, भूरि-भाग-भाजन सुवालु । ४०

राग ललित

ललित ललित लघु लघु धनु सर कर,

तैसी तरकसी, कटि कसे पट पियरे।
ललित पनही पाँय पैंजनी-किंकिनि-धुनि,
सुनि सुख लहै मनु रहै नित नियरे।
पहुँची अंगद चारु, हृदय पदिक हारु,
कुंडल-तिलक-छबि गड़ी कबि जियरे।
सिरसि टिपारो लाल, नीरज-नयन बिसाल,
सुंदर बदन ठाढ़े सुरतरु सियरे।
सुभग सकल अंग, अनुज बालक संग,
देखि नर-नारि रहैं ज्यों कुरंग दियरे।
खेलत अवध खोरि, गोली भौंरा चक डोरि,
मूरति मधुर बसै तुलसी के हियरे।४१।
छोटिऐ धनुहियाँ, पनहियाँ पगनि छोटी,
छोटिऐ कछौटी कटि, छोटिऐ तरकसी।
लसत झँगूली झीनी, दामिनि की छबि छीनी,
सुंदर बदन, सिर पगिया जरकसी।
बय-अनुहरत बिभूषन बिचित्र अँग,
जोहे जिय आवति सनेह की सरक सी।
मूरति की सूरति कही न परै तुलसी पै,
जानै सोई जाके उर कसकै करक सी।४२।

राग टोड़ी

राम लषन इक ओर, भरत रिपुदवन लाल इक ओर भये।
सरजुतीर सम सुखद भूमि-थल, गनि गनि गोइयाँ बाँटि लये।

कंदुक-केलि-कुसल हय चढ़ि चढ़ि, मन कसि कसि, ठोंकि ठोंकि खये।
कर-कमलनि बिचित्र चौगानैं, खेलन लगे खेल रिझये।
ब्योम बिमाननि बिबुध बिलोकत खेलक पेखक छाँह छये।
सहित समाज सराहि दसरथहि बरषत निज तरु-कुसुम चये।
एक लै बढ़त, एक फेरत, सब प्रेम-प्रमोद-बिनोद-मये।
एक कहत भइ हारि राम जू की, एक कहत भइया भरत जये।
प्रभु बकसत गज बाजि बसन मनि, जय-धुनि गगन निसान हये।
पाइ सखा सेवक जाचक भरि जनम न दुसरे द्वार गए।
नभ-पुर परति निछावरि जहँ तहँ, सुर सिद्धनि बरदान दये।
भूरि-भाग अनुराग उमँगि जे गावत सुनत चरित नित ये।
हारे हरष होत हिय भरतहि, जिते सकुच सिर नयन नए।
तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृती तेइ जे एहि रंग-रए।४३।

खेलि खेल सुखेलनिहारे।
उतरि उतरि चुचुकारि तुरंगनि सादर जाइ जोहारे।१।
बंधु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह सँभारे।
दिए बसन गज बाजि साजि सुभ साज सुभाँति सँवारे।२।
मुदित नयन-फल पाइ, गाइ गुन सुर सानंद सिधारे।
सहित समाज राजमंदिर कहँ राम राउ पगु धारे।३।
भूप-भवन घरघर घमंड, कल्यान कोलाहल भारे।
निरखि हरषि आरती निछावरि करत सरीर बिसारे।४।
नित नए मंगल मोद अवध सब, सब बिधि लोग सुखारे।
तुलसी तिन्ह सम तेउ जिन्हके प्रभु तें प्रभु-चरित पियारे।५।४४।

राग सारंग

चहत महामुनि जाग जयो ।
नीच निसाचर देत दुसह दुख, कृस तनु ताप-तयो । १ ।
सापे पाप, नये निदरत खल, तब यह मंत्र ठयो ।
बिप्र-साधु-सुर-धेनु-धरनि-हित हरि अवतार लयो । २ ।
सुमिरत श्रीसारंगपानि छन में सब सोच गयो ।
चले मुदित कौसिक कोसलपुर, सगुननि साथ दयो । ३ ।
करत मनोरथ जात पुलकि, प्रगटत आनंद नयो ।
तुलसी प्रभु अनुराग उमगि मग मंगल-मूल भयो । ४ ।४५।

आजु सकल सुकृत फलु पाइहौं ।
सुख की सींव, अवधि आनँद की, अवध बिलोकि हौं पाइहौं । १ ।
सुतनि सहित दसरथहि देखिहौं, प्रेम पुलकि उर लाइहौं ।
रामचंद्र-मुखचंद्र-सुधा-छबि नयन-चकोरनि प्याइहौं । २ ।
सादर समाचार नृप बूझिहैं, हौं सब कथा सुनाइहौं ।
तुलसी ह्वै कृतकृत्य आस्रमहिं राम-लषन लै आइहौं । ३ ।४६।

राग नट

देखि मुनि ! रावरे पद आज ।
भयो प्रथम गनती में अब तें हौं जहँ लौं साधु-समाज । १ ।
चरन बंदि कर जोरि निहोरत, "कहिय कृपा करि काज ।
मेरे कछु न अदेय राम बिनु, देह गेह सब राज" । २ ।
भली कही भूपति-त्रिभुवन में को सुकृती सिरताज ?
तुलसि राम-जनमहि तें जनियत सकल सुकृत को साज । ३ ।४७

राजन् ! राम लषन जौं दीजै ।
जस रावरो, लाभ ढोटनिहूँ, मुनि सनाथ सब कीजै ।१।
डरपत हौ साँचे सनेह-बस सुत-प्रभाव बिनु जाने ।
बूझिय बामदेव अरु कुलगुरु, तुम पुनि परम सयाने ।२।
रिपु रन दलि, मख राखि, कुसल अति अलप दिननि घर ऐहैं ।
तुलसिदास रघुबंस-तिलक की कबिकुल कीरति गैहैं ।३।४८।

रहे ठगि-से नृपति सुनि मुनिबर के बयन ।
कहि न सकत कछु, राम-प्रेमबस, पुलक गात, भरे नीर नयन ।१।
गुरु बसिष्ठ समुझाय कह्यो तब हिय हरषाने जाने सेष-सयन ।
सौंपे सुत गहि पानि पाँय परि, भूसुर उर चले उमगि चयन ।२।
तुलसी प्रभु जोहत पोहत चित, सोहत मोहत कोटि मयन ।
मधु माधव मूरति दोउ सँग मानो
दिनमनि गवन कियो उतर अयन ।३।४९।

राग सारंग

ऋषि सँग हरषि चले दोउ भाई ।
पितु-पद बंदि सीस लियो आयसु सुनि सिष आसिष पाई ।१।
नील पीत पाथोज-बरन बपु, बय किसोर बनि आई ।
सर धनु पानि, पीत-पट कटितट, कसे निखंग बनाई ।२।
कलित कंठ मनि-माल, कलेवर चंदन खौरि सुहाई ।
सुंदर बदन, सरोरुह-लोचन, मुखछबि बरनि न जाई ।३।
पल्लव पंख सुमन सिर सोहत, क्यों कहौं बेष लुनाई ।
मनु मूरति धरि उभय भाग भइ त्रिभुवन सुंदरताई ।४।

पैठत सरनि, सिलनि चढ़ि चितवत खग-मृग-बन-रुचिराई ।
सादर सभय सप्रेम पुलकि मुनि पुनि पुनि लेत बुलाई ।५।
एक तीर तकि हती ताड़का विद्या बिप्र पढ़ाई ।
राख्यो जज्ञ जीति रजनीचर, भइ जग बिदित बड़ाई ।६।
चरन-कमल-रज-परस अहल्या निज पति-लोक पठाई ।
तुलसिदास प्रभु के बूझे मुनि सुरसरि कथा सुनाई ।७।५०।

राग नट

दोउ राजसुवन राजत मुनि के संग ।
नखसिख लोने,लोने बदन,लोने लोयन दामिनि-बारिद-बरबरन अंग ।
सिरनि सिखा सुहाइ, उपवीत पीतपट, धनु सर कर, कसे कटि निखंग
मानो मख-रुज-निसिचर हरिबे को सुत पावक के साथ पठए पतंग।
करत छाँह घन, बरषैं सुमन सुर, छबि बरनत अतुलित अनंग ।
तुलसी प्रभु बिलोकि मग-लोग, खग-मृग प्रेममगन रँगे रूप-रंग ।३।५१

राग कल्याण

मुनि के संग बिराजत बीर ।
काकपच्छ, धर, कर कोदंड सर, सुभग पीतपट कटि तूनीर ।१।
बदन इंदु, अंभोरुह लोचन, स्याम गौर सोभा-सदन सरीर ।
पुलकत ऋषि अवलोकि अमित छबि,उर न समाति प्रेम की भीर ।२।
खेलत चलत करत मग कौतुक बिलँबत सरित-सरोवर-तीर ।
तोरत लता सुमन सरसीरुह, पियत सुधा-सम सीतल नीर ।३।
बैठत बिमल सिलनि बिटपनि तर, पुनि पुनि बरनत छाँह समीर ।
देखत नटत केकि, कल गावत मधुप मराल कोकिला कीर ।४।

नयननि को फल लेत निरखि खग मृग सुरभी ब्रजबधू अहीर।
तुलसी प्रभुहि देत सब आसन निज निज मन-मृदु-कमल-कुटीर।५।५२

राग कान्हरा

सोहत मग मुनि सँग दोउ भाई।
तरुन तमाल चारु चंपक-छबि कबि सुभाय कहि जाई।१।
भूषन बसन अनुहरत अंगनि, उमगति सुंदरताई।
बदन-मनोज सरोज-लोचननि रही है लुभाई लुनाई।२।
अंसनि धनु, सर कर-कमलनि, कटि कसे हैं निखंग बनाई।
सकल-भुवन-सोभा-सरबसु लघु लागति निरखि निकाई।३।
महि मृदु पथ, घन छाँह, सुमन सुर बरष, पवन सुखदाई।
जल-थल-रुह फल फूल सलिल सब करत प्रेम पहुनाई।४।
सकुच सभीत बिनीत साथ गुरु बोलनि चलनि सुहाई।
खग मृग चित्र बिलोकत बिच बिच, लसति ललित लरिकाई।५।
बिद्या दई जानि बिद्यानिधि, बिद्यहु लही बड़ाई।
ख्याल दली ताड़का, देखि ऋषि देत असीस अघाई।६।
बूझत प्रभु सुरसरि प्रसंग कहि निज-कुल-कथा सुनाई।
गाधिसुवन-सनेह-सुख-संपति उर-आस्रम न समाई।७।
बनबासी बटु जती जोगि-जन साधु-सिद्ध-समुदाई।
पूजत पेखि प्रीति पुलकत तनु, नयन लाभ लुटि पाई।८।
मख राख्यो खलदल दलि भुजबल, बाजत बिबुध बधाई।
नित पथ-चरित-सहित तुलसी-चित बसत लखन-रघुराई।९।५३

मंजुल मंगलमय नृप-ढोटा ।
मुनि, मुनितिय, मुनिसिसु बिलोकि कहैं मधुर मनोहर जोटा ।१।
नाम-रूप-अनुरूप बेष बय, राम-लखन लाल लोने ।
इन्हतें लही हैं मानो घन-दामिनि दुति मनसिज मरकत सोने ।२।
चरन-सरोज, पीतपट कटितट, तून-तीर-धनुधारी ।
केहरिकंध, काम-करि-करवर बिपुल बाहु, बल भारी ।३।
दूषन-रहित समय सम भूषन पाइ सुअंगनि सोहैं ।
नव-राजीव-नयन, पूरन-बिधु-बदन मदन मन मोहैं ।४।
सिरनि सिखंड, सुमन-दल-मंडन बाल सुभाय बनाए ।
केलि-अंक तनु रेनु पंक जनु प्रगटत चरित चोराए ।५।
मख राखिबे लागि दसरथ सों माँगि आस्रमहिं आने ।
प्रेम पूजि पाहुने प्रानप्रिय गाधिसुवन सनमाने ।६।
साधन-फल साधक सिद्धनि के, लोचन-फल सबही के ।
सकल सुकृत-फल मातु-पिता के, जीवनधन तुलसी के ।७।५४

राग सूहो

रामपद-पदुम-पराग परी ।
ऋषितिय तुरत त्यागि पाहन-तनु छबिमय देह धरी ।१।
प्रबल पाप पति-साप-दुसह-दव दारुन जरनि जरी ।
कृपा-सुधा सिंचि बिबुध बेलि ज्यों फिरि सुख-फरनि फरी ।२।
निगम-अगम मूरति महेस-मति-जुवति बराय बरी ।
सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ इकटक तें न टरी ।३।
बरनति हृदय सरूप सील गुन प्रेम-प्रमोद-भरी ।

तुलसिदास अस केहि आरत की आरति प्रभु न हरी ? ४ ।५५।

परत पद-पंकज ऋषि-रवनी ।
भई हैं प्रगट अति दिव्य देह धरि मानो त्रिभुवन-छबि-छवनी । १ ।
देखि बड़ो आचरज पुलकि तनु कहति मुदित मुनि-भवनी ।
जो चलिहैं रघुनाथ पयादेहि सिला न रहिहि अवनी । २ ।
परसि जो पाँय पुनीत सुरसरी सोहै तीनि-गवनी ।
तुलसिदास तेहि चरन-रेनु की महिमा कहै मति कवनी । ३ ।५६।

भूरिभाग भाजनु भई ।
रूपरासि अवलोकि बंधु दोउ प्रेम-सुरंग रई । १ ।
कहा कहैं केहि भाँति सराहैं, नहिं करतूति नई ।
बिनु कारन करुनाकर रघुबर केहि केहि गति न दई ? । २ ।
करि बहु बिनय, राखि उर मूरति मंगल-मोदमई ।
तुलसी ह्वै बिसोक पति-लोकहि प्रभुगुन गनत गई । ३ ।५७।

राग कान्हरा

कौसिक के मख के रखवारे ।
नाम राम अरु लखन ललित अति दसरथ-राज-दुलारे । १ ।
मेचक पीत कमल कोमल कल काकपच्छ–धर बारे ।
सोभा सकल सकेलि मदन–बिधि सुकर–सरोज सँवारे । २ ।
सहस समूह सुबाहु सरिस खल समर सूर भट भारे ।
केलि-तून-धनु-बान-पानि रन निदरि निसाचर मारे । ३ ।
ऋषितिय तारि स्वयंबर पेखन जनक-नगर पगु धारे ।
मग नरनारि निहारत सादर कहैं बड़ भाग हमारे । ४ ।

तुलसी सुनत एक एकनि सों चलत बिलोकनिहारे।
मूकनि बचन-लाहु, मानो अंधनि लहे हैं बिलोचन-तारे। ५ ।५८।

राग टोड़ी

आए सुनि कौसिक जनक हरषाने हैं।
बोलि गुरु भूसुर समाज सों मिलन चले,
जानि बड़े भाग अनुराग अकुलाने हैं। १।
नाइ सीस पगनि, असीस पाइ प्रमुदित
पाँवड़े अरघ देत आदर सों आने हैं।
असन बसन बास कै सुपास सब बिधि,
पूजि प्रिय पाहुने, सुभाय सनमाने हैं। २।
बिनय बड़ाई ऋषि-राजऊ परसपर,
करत पुलकि प्रेम आनँद अघाने हैं।
देखे राम-लखन निमेषैं बिथकित भईं,
प्रानहुँ तें प्यारे लागे बिनु पहिचाने हैं। ३।
ब्रह्मानंद हृदय, दरस-सुख लोयननि,
अनुभए उभय, सरस राम जाने हैं।
तुलसी बिदेह की सनेह की दसा सुमिरि,
मेरे मन माने राउ निपट सयाने हैं। ४ ।५९।

राग मलार

कोसलराय के कुअँरोटा।
राजत रुचिर जनक-पुर पैठत स्याम गौर नीके जोटा। १।
चौतनि सिरनि, कनक-कली काननि, कटि पटपीत सोहाए।

उर मनि-माल, बिसाल बिलोचन, सीय-स्वयंबर आए । २ ।
बरनि न जात, मनहिं मन भावत, सुभग अबहिं बय थोरी ।
भई हैं मगन बिधुबदन बिलोकत बनिता चतुर चकोरी । ३ ।
कहँ सिवचाप लरिकवनि बूझत बिहँसि चितै तिरछौंहैं ।
तुलसी गलिन भीर, दरसन लगि लोग अटनि आरोहैं । ४ ।६०

ये अवधेस के सुत दोऊ ।
चढ़ि मंदिरनि बिलोकत सादर जनकनगर सब कोऊ । १ ।
स्याम गौर सुंदर किसोरतनु, तून-बान-धनुधारी ।
कटि पटपीत, कंठ मुकुतामनि, भुज बिसाल, बल भारी । २ ।
मुख-मयंक, सरसीरुह-लोचन, तिलक भाल टेढ़ी भौंहैं ।
कल कुंडल, चौतनी चारु अति, चलत मत्त-गज-गौं हैं । ३ ।
बिस्वामित्र हेतु पठए नृप, इनहिं ताड़ुका मारी ।
मख राख्यो रिपु जीति जान जग, मग मुनिबधू उधारी । ४ ।
प्रिय पाहुने जानि नरनारिन नयननि अयन दए ।
तुलसिदास प्रभु देखि लोग सब जनक समान भए । ५ ।६१

राग टोड़ी

बूझत जनक 'नाथ ढोटा दोउ काके हैं' ?
तरुन तमाल-चारु-चंपक-बरन-तनु,
कौने बड़े भागी के सुकृत परिपाके हैं । १ ।
सुख के निधान पाए, हिय के पिधान लाए,
ठग के-से लाडू खाए, प्रेम-मधु छाके हैं ।
स्वारथ-रहित परमारथी कहावत हैं,

भे सनेह-बिबस बिदेहता बिबाके हैं । २ ।
सील-सुधा के अगार, सुखमा के पारावार,
पावत न पैरि पार पैरि पैरि थाके हैं ।
लोचन ललकि लागे, मन अति अनुरागे,
एक रसरूप चित सकल सभा के हैं । ३ ।
जिय जिय जोरत सगाई राम लषन सों
आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं ।
प्रीति को, प्रतीति को, सुमिरिबे को,
सेइबे को, सरन को समरथ तुलसिहु ताके हैं । ४ । ६२

ए कौन, कहाँ तें आए ?
नील-पीत-पाथोज-बरन, मन-हरन सुभाय सुहाए । १ ।
मुनिसुत किधौं भूप-बालक, किधौं ब्रह्म-जीव जग जाए ।
रूप-जलधि के रतन सुछबि तिय लोचन ललित लला ए । २ ।
किधौं रबि-सुवन, मदन, ऋतुपति, किधौं हरि हर बेष बनाए ।
किधौं आपने सुकृत-सुरतरु के सुफल रावरेहि पाए । ३ ।
भए बिदेह बिदेह नेहबस देहदसा बिसराए ।
पुलक गात, न समात हरष हिय, सलिल सुलोचन छाए । ४ ।
जनक-बचन मृदु मंजु मधु-भरे-भगति कौसिकहि भाए ।
तुलसी अति आनंद उमँगि उर राम-लषन गुन गाए । ५ । ६३

कौसिक कृपालु हू को पुलकित तनु भो ।
उमँगत अनुराग, सभा के सराहे भाग,
देखि दसा जनक की कहिबे को मनु भो । १ ।

प्रीति के न पातकी, दिएहूँ साप पाप बड़ो ,
मख-मिस मेरो तब अवध-गवनु भो ।
प्रानहूँ तें प्यारे सुत माँगे दिए दसरथ ,
सत्यसिंधु सोच सहे, सूनो सो भवनु भो ।२।
काकसिखा सिर, कर केलि-तून-धनु-सर ,
बालक बिनोद जातुधाननि सों रनु भो ।
बूझत बिदेह अनुराग-आचरज-बस ,
ऋषिराज-जाग भयो महाराज अनुभो ।३।
भूमिदेव नरदेव सचिव परसपर ,
कहत हमहिं सुरतरु सिवधनु भो ।
सुनत राजा की रीति, उपजी प्रतीति प्रीति ,
भाग तुलसी के, भले साहेब को जनु भो ।४।६४।

चार्‌यो भले बेटा देव दसरथ राय के ।
जैसे राम-लषन भरत-रिपुहन तैसे ,
सील सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के ।१।
ताड़का सँहारि मख राखे, नीके पाले ब्रत ,
कोटि कोटि भट किए एक एक घाय के ।
एक बान बेग ही उड़ाने जातुधान जात ,
सूखि गए गात हैं पतौआ भए बाय के ।२।
सिलाछोर छुअत अहल्या भई दिब्य देह ,
गुन पेखे पारस के पंकरुह पाय के ।
राम के प्रसाद गुरु गौतम खसम भए ,

सखरेहु सतानंद पूत भये माय के ।३।
प्रेम-परिहास - पोख - बचन परसपर
कहत सुनत सुख सबही सुभाय के ।
तुलसी सराहैं भाग कौसिक जनक जू के,
बिधि के सुढर होत सुढर सुदाय के ।४।६५॥

ए दोऊ दसरथ के बारे ।
नाम राम घनस्याम, लषन लघु नखसिख अँग उजियारे ।१।
निज हित लागि माँगि आने मैं धर्मसेतु-रखवारे ।
धीर बीर बिरुदैत बाँकुरे महाबाहु बल भारे ।२।
एक तीर तकि हती ताड़का, किए सुर-साधु सुखारे ।
जज्ञ राखि जग साखि, तोषि ऋषि, निदरि निसाचर मारे ।३।
मुनितिय तारि स्वयंबर पेखन आए सुनि बचन तिहारे ।
एउ देखिहैं पिनाकु नेकु जेहि नृपति लाज-ज्वर जारे ।४।
सुनि सानंद सराहि सपरिजन बारहि बार निहारे ।
पूजि सप्रेम प्रसंसि कौसिकहि भूपति सदन सिधारे ।५।
सोचत सत्य-सनेह-बिबस निसि नृपहिं गनत गए तारे ।
पठए बोलि भोर गुरु के सँग रंगभूमि पगु धारे ।६।
नगर लोग सुधि पाइ मुदित सबही सब काज बिसारे ।
मनहुँ मघा-जल उमगि उदधि रुख चले नदी नद नारे ।७।
ए किसोर, धनु घोर बहुत, बिलखात बिलोकनिहारे ।
टर्‍यो न चाप तिन्हतें जिन्ह सुभटनि कौतुक कुधर उखारे ।८।
ए जाने बिनु जनक जानियत करि पन भूप हँकारे ।

नतरु सुधासागर परिहरि कत कूप खनावत खारे ।९।
सुखमा सील सनेह सानि मनो रूप बिरंचि सँवारे ।
रोम रोम पर सोम काम सत कोटि बारि फेरि डारे ।१०।
कोउ कहै तेज प्रताप पुंज चितए नहिं जात, भिया रे !
छुअत सरासन-सलभ जरैगो ये दिनकर-बंस दिया रे ।११।
एक कहै कछु होउ सुफल भए जीवन जनम हमारे ।
अवलोके भरि नयन आजु तुलसी के प्रानपियारे ।१२।६६।

जनक बिलोकि बार बार रघुबर को ।
मुनिपद सीस नाय आयसु असीस पाई,
एई बातैं कहत गवन कियो घर को ।१।
सोचत सकोचत बिरंचि हरि-हर को ।
तुम्हतें सुगम सब देव देखिबे को अब,
जस हंस किए जोगवत जुग पर को ।२।
ल्याये संग कौसिक, सुनाए कहि गुनगन,
आए देखि दिनकर-कुल-दिनकर को ।
तुलसी तेऊ सनेह को सुभाउ बाउ मानो
चलदल को सो पात करै चित चर को ।३।६७।

राग केदारा

रंग-भूमि भोरे ही जाइकै ।
राम लषन लखि लोग लूटिहैं लोचन-लाभ अघाइकै ।१।
भूप-भवन घर घर, पुर बाहर इहै चरचा रही छाइकै ।
मगन मनोरथ मोद नारि-नर प्रेम-बिबस उठैं गाइकै ।२।

सोचत बिधि-गति समुझि परसपर कहत बचन बिलखाइकै ।
कुँवर किसोर कठोर सरासन - असमंजस भयो आइकै ।३।
सुकृत सँभारि मनाइ पितर सुर सीस ईसपद नाइकै ।
रघुबर-कर धनु-भंग चहत सब अपनो सो हितु चितु लाइकै ।४।
लेत फिरत कनसुई सगुन, सुभ बूझत गनक बोलाइकै ।
सुनि अनुकूल मुदित मन मानहुँ धरत धीरजहि धाइकै ।५।
कौसिक-कथा एक एकनि सों कहत प्रभाउ जनाइकै ।
सीय-राम-संजोग जानियत रच्यो बिरंचि बनाइकै ।६।
एक सराहि सुबाहु-मथन बर बाहु उछाह बढ़ाइकै ।
सानुज राज-समाज बिराजिहैं राम पिनाक चढ़ाइकै ।७।
बड़ी सभा, बड़ो लाहु, बड़ो जस, बड़ी बड़ाई पाइकै ।
को सोहिहै और को लायक रघुनायकहि बिहायकै ? ।८।
गवनिहैं गँवहिं गवाँइ गरब गृह नृपकुल बलहि लजाइकै ।
भली भाँति साहब तुलसी के चलिहैं ब्याहि बजाइ कै ।९।६८

राग टोड़ी

भोर फूल बीनबे को गए फुलवाई हैं ।
सीसनि टिपारे, उपवीत, पीत पट कटि,
दोना बाम करनि सलोने भे सवाई हैं ।१।
रूप के अगार भूप के कुमार सुकुमार,
गुरु के प्रानअधार संग सेवकाई हैं ।
नीच ज्यों टहल करैं, राखैं रुख अनुसरैं,
कौसिक-से कोही बस किये दुहुँ भाई हैं ।२।

सखिन सहित तेहि औसर बिधि के सँजोग
गिरिजा जू पूजिबे को जानकी जू आई हैं।
निरखि लषन राम जाने ऋतुपति काम,
मोहि मानो मदन मोहिनी मूड़ नाई हैं।३।
राघौजू-श्रीजानकी-लोचन मिलिबे को मोद
कहिबे को जोगु न, मैं बातैं-सी बनाई हैं।
स्वामी सीय सखिन्ह लखन तुलसी को तैसो
तैसो मन भयो जाकी जैसिये सगाई हैं।४। ६६

पूजि पारबती भले भाय पाँय परिकै।
सजल सुलोचन सिथिल तनु पुलकित,
आवै न बचन मनु रह्यो प्रेम भरिकै।१।
अंतरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सों हौं,
कही चाहौं बात, मातु, अंत तौ हौं लरिकै।
मूरति कृपालु मंजु माल दै बोलत भई,
पूजो मन कामना भावतो बरु बरिकै।२।
राम कामतरु पाइ बेलि ज्यों बौंड़ी बनाइ
माँग कोषि तोषि पोषि फैलि फूलि फरिकै।
रहौगी कहौगी तब साँची कही अंबा सिय
गहे पाँय द्वै उठाय माथे हाथ धरिकै।३।
मुदित असीस सुनि सीस नाइ पुनि पुनि
बिदा भई देवी सों जननि डर डरिकै।
हरषीं सहेली, भयो भावतो, गावतीं गीत,

गवनी भवन तुलसीस हियो हरिकै ।४।

रंगभूमि आए दसरथ के किसोर हैं।
पेखनो सो पेखन चले हैं पुर-नर-नारि,
बारे बूढ़े अंध पंगु करत निहोर हैं।१।
नील-पीत-नीरज-कनक-मरकत-घन-
दामिनि-बरन तनु रूप के निचोर हैं।
सहज सलोने राम लषन ललित नाम
जैसे सुने तैसेई कुँवर सिरमौर हैं।२।
चरन-सरोज, चारु-जंघा जानु ऊरू कटि,
कंधर बिसाल, बाहु बड़े बरजोर हैं।
नीके कै निषंग कसे, कर कमलनि लसै
बान बिसिषासन मनोहर कठोर हैं।३।
काननि कनकफूल, उपवीत अनुकूल,
पियरे दुकूल बिलसत आछे छोर हैं।
राजिव-नयन बिधुबदन टिपारे सिर,
नख सिख अंगनि ठगौरी ठौर ठौर हैं।४।
सभा-सरबर, लोक-कोकनद-कोकगन
प्रमुदित मन देखि दिनमनि भोर हैं।
अबुध असैले मन-मैले महिपाल भए,
कछुक उलूक कछु कुमुद चकोर हैं।५।
भाई सों कहत बात कौसिकहि सकुचात,
बोल घनघोर-से बोलत थोर थोर हैं।

सनमुख सबहि बिलोकत सबही नीके,
कृपा सों हेरत हँसि तुलसी की ओर हैं। ६।

एई राम लषन जे मुनि सँग आए हैं।
चौतनी चोलना काछे, सखि! सोहैं आगे पाछे,
आछे हुते आछे आछे आछे भाय भाए हैं। १।
साँवरे गोरे सरीर, महाबाहु, महाबीर,
कटि तून तीर धरे, धनुष सोहाए हैं।
देखन कोमल कल, अतुल बिपुल बल,
कौसिक कोदंड-कला कलित सिखाए हैं। २।
इन्हहीं ताड़का मारी, गौतम की तिय तारी,
भारी भारी भूरि भट रन बिचलाए हैं।
ऋषि-मख रखवारे दसरथ के दुलारे,
रंगभूमि पगु धारे, जनक बुलाए हैं। ३।
इन्हके बिमल गुन गनत पुलकि तनु
सतानंद कौसिक नरेसहि सुनाए हैं।
प्रभुपद मन दिए सो समाज चित्त किए
हुलसि हुलसि हिये तुलसिहुँ गाए हैं॥ ८॥७२॥

राग कान्हरा

सीय स्वयंबरु, माई, दोउ भाई आए देखन।
सुनत चलीं प्रमदा प्रमुदित मन,
प्रेम पुलकि तनु मनहुँ मदन मंजुल पेखन।
निरखि मनोहरताई सुख पाई कहैं एक एक सों,

'भूरि भाग हम धन्य, आलि! ए दिन, ए खन।
तुलसी सहज सनेह सुरँग सब,
सो समाज चित-चित्रसार लागीं लेखन ॥७३॥

राग गौरी

राम लषन जब दृष्टि परे, री?
अवलोकत सब लोग जनकपुर मानो बिधि बिबिध बिदेह करे, री।
धनुषजज्ञ कमनीय अवनि-तल कौतुक ही भए आय खरे, री।
छबि सुरसभा मनहुँ मनसिज के कलित कलपतरु रूख फरे, री।
सकल काम बरषत मुख निरखत, करषत चित हित हरष भरे, री।
तुलसी सबै सराहत भूपहि भले पैंत पासे सुढर ढरे री ॥७४॥

नेकु! सुमुखि, चित लाइ चितौ, री।
राजकुँवर-मूरति रचिबे को रुचि सुबरंचि स्रम कियो है कितौ, री।
नख सिख सुंदरता अवलोकत कह्यो न परत सुख होत जितौ, री।
साँवर-रूप-सुधा भरिबे कहँ नयन-कमल-कल-कलस रितौ री।
मेरे जान इन्हैं बोलिबे कारन चतुर जनक ठयो ठाट इतौ री।
तुलसी प्रभु भंजिहैं संभु-धनु भूरि भाग सिय-मातु-पितौ री ॥७५॥

राग सारंग

जब तें राम लषन चितए, री।
रहे इकटक नर-नारि जनकपुर, लागत पलक कलप बितए री ।१।
प्रेम-बिबस माँगत महेस सों देखत ही रहिए नित ए, री।
कै ए सदा बसहु इन्ह नयनन्हि, कै ए नयन जाहु जित ए, री ।२।
कोउ समुझाइ कहै किन भूपहि बड़े भाग आए इत ए, री।

कुलिस कठोर कहाँ संकर-धनु, मृदु मूरति किसोर इत ए, री ।३।
बिरचत इन्हहिं बिरंचि भुवन सब सुंदरता खोजत रितए, री ।
तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम बच जिन्हके हित ए, री ।७६।

सुनु सखि भूपति भलोइ कियो, री ।
जेहि प्रसाद अवधेस कुँवर दोउ नगर-लोग अवलोकि जियो, री ।
मानि प्रतीति कहे मेरे तैं कत सँदेह-बस करति हियो, री ।
तौलौं है यह संभु सरासन श्रीरघुबर जौलौं न लियो, री ।२।
जेहि बिरंचि रचि सीय सँवारी औ रामहिं ऐसो रूप दियो, री ।
तुलसिदास तेहि चतुर बिधाता निज कर यह संजोग सियो, री ।७७।

अनुकूल नृपहि सूलपानि हैं ।
नीलकंठ कारुन्यसिंधु हर दीनबंधु दिनदानि हैं ।१।
जो पहिले ही पिनाक जनक कहँ गए सौंपि जिय जानि हैं ।
बहुरि त्रिलोचन लोचन के फल सबहि सुलभ किन आनि हैं ।२।
सुनियत भव-भावते राम हैं, सिय भावती-भवानि हैं ।
परखत प्रीति प्रतीति पयज पनु रहे काज ठटु ठानि हैं ।३।
भए बिलोकि बिदेह नेहबस बालक बिनु पहिचानि हैं ।
होत हरे होने बिरवन दल सुमति कहति अनुमानि हैं ।४।
देखियत भूप भोर के-से उडुगन, गरत गरीब गलानि हैं ।
तेज प्रताप बढ़त कुँवरन को जदपि सँकोची बानि हैं ।५।
बय किसोर बरजोर बाहुबल मेरु मेलि गुन तानिहैं ।
अवसि राम राजीव-बिलोचन संभु सरासन भानिहैं ।६।
देखिहैं ब्याह-उछाह नारि-नर सकल-सुमंगल-खानि हैं ।

भूरि भाग तुलसी तेऊ जे सुनिहैं, गाइहैं, बखानिहैं ।७।७८।

राग केदारा

रामहिं नीके कै निरखि, सुनैनी !
मनसहु अगम समुझि यह अवसरु कत सकुचति पिकबैनी ।१।
बड़े भाग मख-भूमि प्रगट भइ सीय सुमंगल-ऐनी ।
जा कारन लोचन-गोचर भइ मूरति सब-सुखदैनी ।२।
कुलगुरु-तिय के मधुर बचन सुनि जनक-जुवति मति-पैनी ।
तुलसी सिथिल देह सुधि-बुधि करि सहज-सनेह-बिषैनी ।३।७९

मिलो बरु सुंदर सुंदरि सीतहि लायकु,
साँवरो सुभग, सोभा हूँ को परम सिंगारु ।
मनहूँ को मन मोहै, उपमा को को है ?
सोहै सुखमासागर-संग अनुज राजकुमारु ।१।
ललित सकल अंग, तनु धरे कै अनंग,
नैननि को फल कैधौं, सिय को सुकृत-सारु ।
सरद-सुधा-सदन-छबिहि निंदै बदन,
अरुन आयत नवनलिन-लोचन चारु ।२।
जनक-मन की रीति जानि बिरहित प्रीति,
ऐसीऔ मूरति देखे रह्यो पहिलो बिचारु ।
तुलसी नृपहि ऐसो कहि न बुझावै कोउ,
'पन औ कुँवर दोऊ प्रेम की तुला धौं तारु' ।३। ८० ।

देखि देखि री ! दोउ राजसुवन ।
गौर स्याम सलोने लोने, लोने लोयननि,

जिन्हकी सोभा तें सोहै सकल भुवन ।१।
इन्ह हीं ताड़का मारी, मग मुनि-तिय तारी,
ऋषिमख राख्यो, रन दले हैं दुवन ।
तुलसी प्रभु को अब जनकनगर-नभ,
सुजस - बिमल - बिधु चहत उवन ।२।८१।

राग टोड़ी

राजा रंगभूमि आज बैठे जाइ जाइकै ।
आपने आपने थल, आपने आपने साज,
आपनी आपनी बर बानिक बनाइकै ।१।
कौसिक सहित राम, लषन ललित नाम,
लरिका ललाम लोने पठए बुलाइकै ।
दरस-लालसा बस लोग चले भाय भले,
बिकसत-मुख निकसत धाइ धाइ कै ।२।
सानुज सानंद हिये आगे ह्वै जनक लिए,
रचना रुचिर सब सादर देखाइ कै ।
दिये दिब्य आसन सुपास सावकास अति,
आछे आछे बीछे बीछे बिछौना बिछाइ कै ।३।
भूपति-किसोर दुहुँ ओर, बीच मुनिराउ,
देखिबे को दाउँ, देखौ देखिबो बिहाइ कै ।
उदय-सैल सोहैं सुंदर कुँवर, जोहैं,
मानौ भानु भोर भूरि किरनि छिपाइकै ।४।
कौतुक कोलाहल निसान गान पुर नभ,

बरषत सुमन बिमान रहे छाइ कै।
हित अनहित, रत बिरत बिलोकि बाल,
प्रेम-मोद-मगन जनम-फल पाइ कै।५।
राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाइ,
सतानंद ल्याए सिय सिबिका चढ़ाइ कै।
रूप-दीपिका निहारि मृग-मृगी नर-नारि,
बिथके बिलोचन निमेषैं बिसराइ कै।६।
हानि लाहु अनख उछाहु, बाहुबल कहि
बंदि बोले बिरद अकस उपजाइ कै।
दीप दीप के महीप आए सुनि पैज पन,
कीजै पुरुषारथ को अवसर भो आइ कै।७।
आनाकानी, कंठ, हँसी मुहा-चाही होन लगी,
देखि दसा कहत बिदेह बिलखाइ कै।
घरनि सिधारिए सुधारिए आगिलो काज,
पूजि पूजि धनु कीजै बिजय बजाइ कै।८।
जनक-बचन छुए बिरवा लजारू के-से
बीर रहे सकल सकुचि सिर नाइ कै।
तुलसी लखन माषे, रोषे, राखे रामरुख,
भाषे मृदु परुष सुभायन रिसाइ कै।९।८२।

भूपति बिदेह कही नीकियै जो भई है।
बड़े ही समाज आजु राजनि की लाज-पति
हाँकि आँक एक ही पिनाक छीनि लई है।१।

मेरो अनुचित न कहत लरिकाई-बस,
पन-परिमित और भाँति सुनि गई है।
नतरु प्रभु-प्रताप उतरु चढ़ाय चाप
देतो पै देखाइ बल, फल पापमई है।२।
भूमि के हरैया उखरैया भूमि-धरनि के,
बिधि बिरचे प्रभाउ जाको जग-जई है।
बिहँसि हिये हरषि हटके लषन राम,
सोहत सकोच सील नेह नारि नई है॥३।
सहमी सभा सकल, जनक भए बिकल,
राम लखि कौसिक असीस आज्ञा दई है।
तुलसी सुभाय गुरुपायँ लागि रघुराज
ऋषिराज की रजाइ माथे मानि लई है।४।८३।

सोचत जनक पोच पेंच परि गई है।
जोरि कर-कमल निहोरि कहैं कौसिक सों,
'आयसु भो राम को सो मेरे दुचितई है।१।
बान जातुधानपति भूप दीप सातहूँ के,
लोकप बिलोकत पिनाक भूमि लई है।
जोतिलिंग कथा सुनि जाको अंत पाए बिनु,
आए बिधि हरि हारि सोई हाल भई है।२।
आपुही बिचारिए निहारिए सभा की गति,
बेद-मरजाद मानौ हेतुबाद हई है।
इन्हके जितौहैं मन, सोभा अधिकानी तन,

मुखन की सुखमा सुखद सरसई है। ३।
रावरो भरोसो बल, कै है कोऊ कियो छल,
कैधौं कुल को प्रभाव, कैधौं लरिकई है? ।
कन्या, कल-कीरति, विजय बिस्व की बटोरि,
कैधों करतार इन्हहीं को निरमई है। ४।
पन को न मोह, न बिसेष चिंता सीता हू की,
लुनिहै पै सोई सोई जोई जेहि बई है।
रहै रघुनाथ की निकाई नीकी नीके नाथ,
हाथ सों तिहारे करतूति जाकी नई है'। ५।
कहि 'साधु साधु' गाधि-सुवन सराहे राउ,
'महाराज! जानि जिय ठीक भली दई है'।
हरषे लषन, हरषाने बिलषाने लोग,
तुलसी मुदित जाको राजाराम जई है। ६। ८४।

सुजन सराहैं जो जनक बात कही है।
रामहि सोहानी जानि, मुनिमन-मानी सुनि,
नीच महिपावली दहन बिनु दही है। १।
कहैं गाधिनंदन मुदित रघुनंदन सों,
नृपगति अगह, गिरा न जाति गही है।
देखे सुने भूपति अनेक झूँठे झूँठे नाम,
साँचे तिरहुतनाथ साखि देति मही है। २।
रागऊ बिराग, भोग जोग जोगवत मन,
जोगी जागबलिक-प्रसाद सिद्धि लही है।

तातें न तरनि तें, न सीरे सुधाकरहू तें,
सहज समाधि निरुपाधि निरबही है।३।
ऐसेउ अगाध बोध रावरे सनेह-बस,
बिकल बिलोकित दुचितई सही है।
कामधेनु-कृपा हुलसानी तुलसीस उर,
पन-सिसु हेरि, मरजाद बाँधी रही है।४।८५।

ऋषिराज राजा आजु जनक समान को ?।
आपु यहि भाँति प्रीति सहित सराहित।
रागी औ बिरागी बड़भागी ऐसो आन को ?।१।
भूमि भोग करत अनुभवत जोग-सुख,
मुनि-मन-अगम अलख गति जान को ?
गुरु हर-पद-नेहु गेह बसि भो बिदेह,
अगुन-सगुन-प्रभु-भजन-सयान को ?।२।
कहनि-रहनि एक, बिरति बिबेक नीति,
बेद-बुध-संमत पथी न निरबान को ?।
गाँठि बिनु गुन की कठिन जड़ चेतन की,
छोरी अनायास, साधु सोधक अपान को।३।
सुनि रघुबीर की बचन-रचना की रीति,
भयो मिथिलेस मानो दीपक बिहान को।
मिट्यो महा मोह जी को, छूट्यो पोच सोच सी को,
जान्यो अवतार भयो पुरुष-पुरान को।४।
सभा नृप गुरु, नर-नारि पुर, नभ सुर,

सब चितवत मुख करुनानिधान को।
एकै एक कहत प्रगट एक प्रेम-बस,
तुलसीस तोरिए सरासन इसान को।५।८६।

राग मारू

सुनो भैया भूप सकल दै कान।
बज्ररेख गजदसन जनक-पन बेद-बिदित, जग जान।१।
घोर कठोर पुरारि-सरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु।
जो दसकंठ दियो बाँवों, जेहि हर-गिरि कियो है मनाकु।२।
भूमि-भाल भ्राजत न चलत सो ज्यों बिरंचि को आँकु।
धनु तोरै सोई बरै जानकी राउ होइ की राँकु।३।
सुनि आमरषि उठे अवनीपति, लगे बचनु जनु तीर।
टरै न चाप, करैं अपनी-सी महा महा बलधीर।४।
नमित-सीस सोचहिं सलज्ज सब श्रीहत भए सरीर।
बोले जनक बिलोकि सीय तन दुखित सरोष अधीर।५।
सप्त दीप नव खंड भूमि के भूपति बृंद जुरे।
बड़ो लाभ कन्या कीरति को जहँ तहँ महिप मुरे।६।
डग्यौ न धनु, जनु बीर-बिगत महि, किधौं कहुँ सुभट दुरे।
रोषे लषन बिकट भृकुटी करि, भुज अरु अधर फुरे।७।
सुनहु भानुकुल-कमल-भानु! जो अब अनुसासन पावौं।
का बापुरो पिनाकु मेलि गुन मंदर मेरु नवावौं।८।
देखौ किन किंकर को कौतुक क्यौं कोदंड चढ़ावौं।
लै धावौं, भंजौं मृनाल ज्यौं तौ प्रभु अनुज कहावौं।९।

हरषे पुर-नर-नारि सचिव नृप कुँवर कहे बर बैन ।
मृदु मुसकाइ राम बरज्यो प्रिय बंधु नयन की सैन ।१०।
कौसिक कह्यो उठहु रघुनंदन जगबंदन बलऐन ।
तुलसिदास प्रभु चले मृगपति ज्यौं निज भगतनि सुखदैन ।११।८७

जबहिं सब नृपति निरास भए ।
गुरुपद-कमल बंदि रघुपति तब चाप-समीप गए ।१।
स्याम-तामरस-दाम-बरन बपु उर भुज नयन बिसाल ।
पीत बसन कटि कलित कंठ सुंदर सिंधुर-मनि-माल ।२।
कल कुंडल, पल्लव प्रसून सिर चारु चौतनी लाल ।
कोटि-मदन-छबि-सदन बदन-बिधु, तिलक मनोहर भाल ।३।
रूप अनूप बिलोकत सादर पुरजन राजसमाज ।
लषन कह्यो थिर होहु धरनिधरु धरनि, धरनिधर आज ।४।
कमठ कोल दिग-दंति सकल अँग सजग करहु प्रभु-काज ।
चहत चपरि सिव-चाप चढ़ावन दसरथ को जुवराज ।५।
गहि करतल, मुनि पुलक सहित, कौतुकहि उठाइ लियो ।
नृपगन-मुखनि समेत नमित करि सजि सुख सबहि दियो ।६।
आकरष्यो सिय-मन समेत हरि, हरष्यो जनक-हियो ।
भंज्यौ भृगुपति-गर्व सहित, तिहुँ लोक बिमोह कियो ।७।
भयो कठिन कोदंड-कोलाहल प्रलय-पयोद समान ।
चौंके सिव, बिरंचि, दिसिनायक रहे मूँदि कर कान ।८।
सावधान ह्वै चढ़े बिमाननि चले बजाइ निसान ।
उमगि चल्यौ आनंद नगर, नभ जयधुनि मंगलगान ।९।

विप्र-बचन सुनि सखी सुआसिनि चलीं जानकिहि ल्याइ ।
कुँवर निरखि जयमाल मेलि उर कुँवरि रही सकुचाइ ।१०।
बरषहिं सुमन असीसहिं सुर मुनि, प्रेम न हृदय समाइ ।
सीय राम की सुंदरता पर तुलसिदास बलि जाइ ।११।

राग मलार

जब दोउ दसरथ कुँवर बिलोके ।
जनक-नगर नर-नारि मुदित मन निरखि नयन पल रोके ।१।
बय किसोर घन-तड़ित-बरन तनु नखसिख अंग लोभारे ।
दै चित, कै हित, लै सब छबि-बित बिधि निज हाथ सँवारे ।२।
संकट नृपहि, सोच अति सीतहि, भूप सकुचि सिर नाए ।
उठे राम रघुकुल-कल-केहरि गुरु अनुसासन पाए ।३।
कौतुक ही कोदंड खंडि प्रभु, जय अरु जानकि पाई ।
तुलसिदास कीरति रघुपति की मुनिन्ह तिहूँ पुर गाई ।४।

राग टोड़ी

मुनि-पदरेनु रघुनाथ माथे धरी है ।
रामरुख निरखि, लषन की रजाइ पाइ,
धरा धरा-धरनि सुसावधान करी है ।१।
सुमिरि गनेस गुरु गौरि हर भूमिसुर
सोचत सकोचत सकोची बानि धरी है ।
दीनबंधु, कृपासिंधु, साहसिक, सीलसिंधु,
सभा को सकोच, कुलहू की लाज परी है ।२।
पेषि पुरुषारथ परखि पन, पेम नेम,

सिय-हिय की बिसेषि बड़ी खरभरी है।
दाहिनो दियो पिनाकु, सहमि भयो मनाकु,
महाब्याल बिकल बिलोकि जनु जरी है।३।
सुर हरषत बरषत फूल बार बार,
सिद्धि मुनि कहत सगुन सुभ घरी है।
रामबाहु-बिटप बिसाल बौंड़ी देखियत,
जनक-मनोरथ कलपबेलि फरी है।४।
लख्यौ न चढ़ावत, न तानत, न तोरत हू,
घोर धुनि सुनि सिव की समाधि टरी है।
प्रभु के चरित चारु तुलसी सुनत सुख,
एक ही सुलाभ सबही की हानि हरी है।५।९०।

राग सारंग

राम कामरिपु-चाप चढ़ायो।
मुनिहिं पुलक, आनंद नगर, नभ निरखि निसान बजायो।१।
जेहि पिनाक बिनु नाक किए नृप, सबहि बिषाद बढ़ायो।
सोइ प्रभु कर परसत टूट्यो जनु हुतो पुरारि पढ़ायो।२।
पहिराई जयमाल जानकी जुवतिन्ह मंगल गायो।
तुलसी सुमन बरषि हरषे सुर, सुजस तिहूँ पुर छायो।३।९१।

राग टोड़ी

जनक मुदित मन टूटत पिनाक के।
बाजे हैं बधावने सुहावने मंगल-गान,
भयो सुख एकरस रानी राजा राँक के।१।

दुंदुभी बजाइ, गाइ हरषि, बरषि फूल,
सुरगन नाचैं नाच नायकहू नाक के।
तुलसी महीस देखे दिन रजनीस जैसे,
सूने परे सून-से मनो मिटाए आँक के। २।९२।

लाज तोरि, साजि साज राजा राढ़ रोषे हैं।
कहा भौ चढ़ाए चाप, ब्याह ह्वैहै बड़े खाए,
बोलैं खोलैं सेल असि चमकत चोखे हैं। १।
जानि पुरजन त्रसे, धीर दै लषन हँसे,
बल इनको पिनाक नीके नापे जोखे हैं।
कुलहि लजावैं बाल, बालिस बजावैं गाल,
कैधौं कूर कालबस तमकि त्रिदोषे हैं। २।
कुँवर चढ़ाईं भौंहैं, अब को बिलोकै सोहैं,
जहँ तहँ भे अचेत, खेत के-से धोखे हैं।
देखे नर-नारि कहैं, साग खाइ जाए माइ,
बाहु पीन पाँवरनि पीना खाइ पोखे हैं। ३।
प्रमुदित-मन लोक-कोकनद-कोकगन,
राम के प्रताप-रबि सोच-सर सोखे हैं।
तब के देखैया तोषे, तब के लोगनि भले,
अब के सुनैया साधु तुलसिहुँ तोषे हैं। ४।९३।

जयमाल जानकी जलज-कर लई है।
सुमन सुमंगल सगुन की बनाइ मंजु,
मानहुँ मदन-माली आपु निरमई है। १।

राज-रुख लखि गुरु भूसुर सुआसिनिन्ह,
समय समाज की ठवनि भली ठई है।
चलीं गान करत, निसान बाजे गहगहे,
लहलहे लोयन सनेह सरसई है। २।
हनि देव दुंदुभी हरषि बरषत फूल,
सफल मनोरथ भो, सुख सुचितई है।
पुरजन परिजन रानी राउ प्रमुदित,
मनसा अनूप राम-रूप-रंग रई है। ३।
सतानंद सिष सुनि पाँय परि पहिराई
माल सिय पिय-हिय, सोहत सो भई है।
मानस तें निकसि बिसाल सु तमाल पर
मानहुँ मरालपाँति बैठी बनि गई है। ४।
हितनि के लाह की, उछाह की, बिनोद मोद
सोभा की अवधि नहिं, अब अधिकई है।
यातें बिपरीत अनहितन की जानि लीबी,
गति, कहे प्रगट खुनिस खासी खई है। ५।
निज निज बेद की सप्रेम जोग-छेम-मई,
मुदित असीस बिप्र बिदुषनि दई है।
छबि तेहि काल की कृपालु सीतादूलह की
हुलसति हिए तुलसी के नित नई है। ६।

राग केदारा

लेहु री लोचननि को लाहु।

कुँवर सुंदर साँवरो, सखि सुमुखि ! सादर चाहु ।१।
खंडि हर-कोदंड ठाढ़े, जानु-लंबित बाहु ।
रुचिर उर जयमाल राजति, देत सुख सब काहु ।२।
चितै चित हित-सहित नखसिख अंग-अंग-निबाहु ।
सुकृत निज, सियरामरूप, बिरंचि-मतिहि सराहु ।३।
मुदित मन बरबदन-सोभा उदित अधिक उछाहु ।
मनहुँ दूरि कलंक करि ससि समर सूद्यो राहु ।४।
नयन सुखमा-अयन हरत सरोज-सुंदरताहु ।
बसत तुलसीदास-उरपुर जानकी को नाहु ।५।९५

राग सारंग

भूप के भाग की अधिकाई ।
टूट्यो धनुष, मनोरथ पूज्यौ, बिधि सब बात बनाई ।१।
तब तें दिन दिन उदय जनक को जब तें जानकी जाई ।
अब यहि ब्याह सफल भयो जीवन, त्रिभुवन बिदित बड़ाई ।२।
बारहि बार पहुनई ऐहैं राम लषन दोउ भाई ।
एहि आनंद मगन पुरबासिन्ह देहदसा बिसराई ।३।
सादर सकल बिलोकत रामहिं काम-कोटि-छबि छाई ।
यह सुखसमउ समाज एक मुख क्यों तुलसी कहै गाई ? ।४।९६

राग सोरठ

मेरे बालक कैसे धौं मग निबहिंगे ?
भूख, पियास, सीत, स्रम सकुचनि क्यों कौसिकहि कहहिंगे ? ।१।
को भोर ही उबटि अन्हवैहै, काढ़ि कलेऊ दैहै ?

को भूषन पहिराइ निछावरि करि लोचन-सुख लैहै ? । २ ।
नयन निमेषनि ज्यों जोगवैं नित पितु परिजन महतारी ।
ते पठए ऋषि साथ निसाचर मारन, मख रखवारी । ३ ।
सुंदर सुठि सुकुमार सुकोमल काकपच्छ-धर दोऊ ।
तुलसी निरखि हरषि उर लैहौं बिधि ह्वैहै दिन सोऊ ? । ४ । ६७

ऋषि नृप-सीस ठगौरी-सी डारी ।
कुलगुरु, सचिव, निपुन नेवनि अवरेब न समुझि सुधारी । १ ।
सिरिस-सुमन-सुकुमार कुँवर दोउ, सूर सरोष सुरारी ।
पठए बिनहिं सहाय पयादेहि केलि-बान-धनुधारी । २ ।
अति सनेह कातरि माता कहै, सुनि सखि ! बचन दुखारी ।
बादि बीर-जननी-जीवन जग, छत्रि-जाति-गति भारी । ३ ।
जो कहिहै फिरे राम लषन घर करि मुनिमख-रखवारी ।
सो तुलसी प्रिय मोहिं लागिहै ज्यों सुभाय सुत चारी । ४ । ६८

जब तें लै मुनि संग सिधाए ।
रामलषन के समाचार, सखि ! तब तें कछुअ न पाए । १ ।
बिनु पानही गमन, फल भोजन, भूमि सयन तरुछाहीं ।
सर सरिता जलपान, सिसुन के संग सुसेवक नाहीं । २ ।
कौसिक परम कृपालु परमहित, समरथ, सुखद, सुचाली ।
बालक सुठि सुकुमार सकोची, समुझि सोच मोहिं, आली ॥ ३ ।
बचन सप्रेम सुमित्रा के सुनि सब सनेह-बस रानी ।
तुलसी आइ भरत तेहि औसर कही सुमंगल-बानी । ४ ।

सानुज भरत भवन उठि धाए ।
पितु-समीप सब समाचार सुनि मुदित मातु पहँ आए ।५।
सजल नयन, तनु पुलक, अधर फरकत लखि प्रीति सुहाई ।
कौसल्या लिए लाइ हृदय 'बलि' कह्यौ कछु है सुधि पाई ?। २।
सतानंद उपरोहित अपने तिरहुति-नाथ पठाए ।
खेम कुसल रघुबीर-लषन की ललित पत्रिका ल्याए । ३ ।
दलि ताड़का, मारि निसिचर, मख राखि, बिप्र तिय तारी ।
दै बिद्या, लै गए जनकपुर, हैं गुरु संग सुखारी । ४ ।
करि पिनाक-पन, सुता-स्वयंबर सजि, नृप-कटक बटोर्‌यो ।
राजसभा रघुबर मृनाल ज्यों संभु-सरासन तोर्‌यो ।५।
यों कहि सिथिल सनेह बंधु दोउ अंब अंक भरि लीन्हें ।
बार बार मुख चूमि, चारु मनि बसन निछावरि कीन्हें ।६।
सुनत सुहावनि चाह अवध घर घर आनंद बधाई ।
तुलसिदास रनिवास रहस-बस, सखी सुमंगल गाई ।७।

राग कान्हरा

रामलषन सुधि आई बाजै अवध बधाई ।
ललित लगन लिखि पत्रिका, उपरोहित के कर जनक-जनेस पठाई ।
कन्या भूप बिदेह की रूप अधिकाई ।
तासु स्वयंबर सुनि सब आए देस देस के नृप चतुरंग बनाई । २ ।
पन पिनाक, पबि मेरु तें गुरुता कठिनाई ।
लोकपाल महिपाल बान बानइत, दसानन सके न चाप चढ़ाई । ३ ।
तेहि समाज रघुराज के मृगराज जगाई ।

भंजि सरासन संभु को जग जय कल कीरति, तिय तियमनि सिय पाई

पुर घर घर आनंद महा सुनि चाह सुहाई ।

मातु मुदित मंगल सजैं, कहैं मुनि प्रसाद भए सकल सुमंगल, माई। ५।

गुरु आयसु मंडप रच्यो सब साज सजाई ।

तुलसिदास दसरथ-बरात सजि, पूजि गनेसहि चले निसान बजाई ६

राग केदारा

मन में मंजु मनोरथ हो, री ! ।

सो हर-गौरि-प्रसाद एक तें, कौसिक-कृपा चौगुनो भो, री !। १।

पन-परिताप, चाप-चिंता-निसि, सोच-सकोच-तिमिर नहिं थोरी।

रविकुलरबि अवलोकि सभा-सर हितचित-बारिज-बन बिकसो री २।

कुंवर कुंवरि सब मंगलमूरति, नृप दोउ धरम धुरंधर धोरी।

राजसमाज भूरि-भागी जिन लोचन-लाहु लह्यो एक ठौरी । ३।

ब्याह-उछाह राम-सीता को सुकृत सकेलि बिरंचि रच्यो री।

तुलसिदास जानै सोइ यह सुख जेहि उर बसति मनोहर जोरी।४।१०२

राजति राम जानकी जोरी ।

स्याम-सरोज जलद-सुंदर बर, दुलहिनि तड़ित-बरन तनु गोरी। १।

ब्याह-समय सोहति बितान तर, उपमा कहुँ न लहति मति मोरी।

मनहुँ मदन-मंजुल-मंडप महँ छबि सिँगार सोभा इक ठौरी । २।

मंगलमय दोउ अंग मनोहर ग्रथित चूनरी पीत पिछोरी।

कनककलस कहँ देत भाँवरी, निरखि रूप सारद भइ भोरी। ३।

इत बसिष्ठ मुनि उतहिं सतानँद, बंस-बखान करैं दोउ ओरी।

इत अवधेस उतहिं मिथिलापति, भरत अंक सुख-सिंधु हिलोरी।

मुदित जनक, रनिवास रहसबस, चतुर नारि चितवहिं तृन तोरी।
गान निसान बेद्धुनि सुनि सुर बरषत सुमन, हरष कहै को री?।४।
नयनन को फल पाइ प्रेमबस सकल असीसत ईस निहोरी।
तुलसी जेहि आनंद-मगन मन क्यों रसना बरनै सुख सो री !।५।

दूलह राम, सीय दुलही री !
घन-दामिनि-बर बरन-हरन-मन सुंदरता नखसिख निबही, री।१।
ब्याह-बिभूषन-बसन-बिभूषित, सखि-अवली लखि ठगि-सी रही,री।
जीवन-जनम-लाहु लोचन-फल है इतनोइ, लह्यो आजु सही, री।२।
सुखमा-सुरभि सिंगार-छीर दुहि मयन अमिय-मय कियो है दही,री।
मथि माखन सिय राम सँवारे, सकल-भुवन-छबि मनहुँ मही, री।३।
तुलसिदास जोरी देखत सुख सोभा अतुल न जाति कही, री।
रूप-रासि बिरची बिरंचि मनो, सिला-लवनि रति-काम लही री।४।

जैसे ललित लषन लाल लोने।
तैसिये ललित उरमिला, परसपर लखत सुलोचन-कोने।१।
सुखमासार सिंगारसार करि कनक रचे हैं तिहि सोने।
रूपप्रेम-परमिति न परत कहि, बिथकि रही मति मौने।२।
सोभा सील सनेह सोहावनो, समउ केलिगृह गौने।
देखि तियनि के नयन सफल भए, तुलसीदास हू के होने।३।

राग बिलावल

जानकी-बर सुंदर, माई।
इंद्रनील-मनि-स्याम सुभग अँग अंग मनोजनि बहु छबि छाई।१।
अरुन चरन, अंगुली मनोहर, नख दुतिवंत कछुक अरुनाई।

कंजदलनि पर मनहुँ भौम दस बैठे अचल सु-सदसि बनाई । २ ।
पीत जानु उर चारु जटित मनि नूपुर पद कल मुखर सोहाई ।
पीतपराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लखि रहे लोभाई । ३ ।
किंकिनि कनककंज-अवली मृदु मरकत सिखर मध्य जनु जाई ।
गई न उपर सभीत नमित-मुख, बिकसि चहूँ दिसि रही लोनाई। ४ ।
नाभि गँभीर उदर रेखा बर, उर भृगु-चरन-चिह्न सुखदाई ।
भुज प्रलंब भूषन अनेक जुत, बसन पीत सोभा अधिकाई । ५ ।
यज्ञोपवीत बिचित्र हेममय, मुक्तामाल उरसि मोहिं भाई ।
कंद-तड़ित बिच जनु सुरपति-धनु-रुचिर बलाकपाँति चलि आई । ६ ।
कंबु कंठ, चिबुकाधर सुंदर, क्यों कहौं दसनन की रुचिराई ?
पदुमकोस महँ बसे बज्र मनो निज सँग तड़ित-अरुन-रुचि लाई । ७ ।
नासिक चारु, ललित लोचन, भ्रू कुटिल, कचनि अनुपम छबि पाई ।
रहे घेरि राजीव उभय मनो चंचरीक कछु हृदय डेराई । ८ ।
भाल तिलक, कंचन किरीट सिर, कुंडल लोल कपोलनि झाँई ।
निरखहिं नारि-निकर बिदेहपुर निमि नृप की मरजाद मिटाई । ९
सारद सेस संभु निसि बासर चिंतत रूप न हृदय समाई ।
तुलसिदास सठ क्यों करि बरनै यह छबि, निगम नेति कह गाई। १० ।१०६

राग कान्हरा

भुजनि पर जननी वारि फेरि डारी ।
क्यों तोर्‌यौ कोमल कर-कमलनि संभु-सरासन भारी ? । १ ।
क्यों मारीच सुबाहु महाबल प्रबल ताड़का मारी ?
मुनि-प्रसाद मेरे राम लषन की बिधि बड़ि करवर टारी । २ ।

चरनरेनु लै नयननि लावति, क्यों मुनिबधू उधारी ।
कहौ धौं तात ! क्यों जीति सकल नृप बरी है बिदेहकुमारी । ३ ।
दुसह-रोष-मूरति भृगुपति अति नृपति-निकर खयकारी ।
क्यों सौंप्यो सारंग हारि हिय, करी है बहुत मनुहारी । ४ ।
उमँगि उमँगि आनंद बिलोकति बधुनसहित सुत चारी ।
तुलसिदास आरती उतारति प्रेम-मगन महतारी । ५ । १०७

मुदित-मन आरती करै माता ।
कनक बसन मनि बारि बारि करि पुलक प्रफुल्लित गाता । १ ।
पाँलागनि दुलहियन सिखावति सरिस सासु सत-साता ।
देहि असीस 'ते बरिस कोटि लगि अचल होउ अहिवाता' । २ ।
रामसीय-छबि देखि जुवतिजन करहिं परसपर बाता ।
अब जान्यो साँचहू सुनहु, सखि ! कोबिद बड़ो बिधाता । ३ ।
मंगल-गान निसान नगर नभ, आनँद कह्यो न जाता ।
चिरजीवहु अवधेस-सुवन सब तुलसिदास-सुखदाता । ४ । १०८

अयोध्या कांड

राग सोरठ

नृप कर जोरि कह्यो गुरु पाहीं ।
तुम्हरी कृपा असीस, नाथ ! मेरी सबै महेस निबाहीं ।१।
राम होहिं जुवराज जियत मेरे यह लालच मन माहीं ।
बहुरि मोहिं जियबे मरिबे की चित चिंता कछु नाहीं ।२।
महाराज, भलो काज बिचास्यो बेगि बिलंब न कीजै ।
बिधि दाहिनो होइ तौ सब मिलि जनम लाहु लुटि लीजै ।३।
सुनत नगर आनंद बधावन, कैकेयी बिलखानी ।
तुलसीदास देवमायाबस कठिन कुटिलता ठानी ।४।१।

राग गौरी

सुनहु राम मेरे प्रानपियारे ।
बारौं सत्यबचन स्रुति-सम्मत जातें हौं बिछुरत चरन तिहारे ।१।
बिनु प्रयास सब साधन को फल प्रभु पायो सो तो नाहिं सँभारे ।
हरि तजि धरमसील भयो चाहत, नृपति नारिबस सरबस हारे ।२।
रुचिर काँचमनि देखि मूढ़ ज्यों करतल तें चिंतामनि डारे ।
मुनि लोचन-चकोर, ससि-राघव, सिव-जीवनधन सोउ न बिचारे। ३।
जद्यपि नाथ तात ! मायाबस सुखनिधान सुत तुम्हहिं बिसारे ।
तदपि हमहिं त्यागहु जनि रघुपति दीनबंधु दयालु मेरे बारे ।४।
अतिसय प्रीति बिनीत बचन सुनि प्रभु कोमल-चित चलत न पारे ।
तुलसिदास जो रहौं मातु-हित को सुर बिप्र भूमि भय टारे ? ।५।२

रहि चलिए सुंदर रघुनायक।
जो सुत तात-बचन-पालन-रत जननिउ तात! मानिबे लायक। १।
बेद-बिदित यह बानि तुम्हारी रघुपति सदा संत-सुखदायक।
राखहु निज मरजाद निगम की, हौं बलि जाउँ धरहु धनुसायक। २।
सोक-कूप पुर परिहि, मरिहि नृप, सुनि सँदेस रघुनाथ-सिधायक।
यह दूसन बिधि तोहिं होत अब रामचरन-बियोग-उपजायक। ३।
मातु-बचन सुनि स्रवत नयन जल, कछु सुभाउ जनु नरतनु-पायक।
तुलसिदास सुरकाज न साध्यौ तौ तो दोष होय मोहिं महि आयक।४।३।

राग सोरठ

राम! हौं कौन जतन घर रहिहौं?
बार बार भरि अंक गोद लै ललन कौन सों कहिहौं। १।
इहि आँगन बिहरत मेरे बारे! तुम जो संग सिसु लीन्हें।
कैसे प्रान रहत सुमिरत सुत बहु बिनोद तुम्ह कीन्हें। २।
जिन स्रवननि कल बचन तिहारे सुनि सुनि हौं अनुरागी।
तिन्ह स्रवननि बनगमन सुनति हौं, मो तें कौन अभागी? । ३।
जुग सम निमिष जाहिं रघुनंदन-बदनकमल बिनु देखे।
जौ तनु रहै बरष बीते, बलि, कहा प्रीति इहि लेखे? । ४।
तुलसीदास प्रेमबस श्रीहरि देखि बिकल महतारी।
गदगद कंठ, नयन जल, फिरि फिरि आवन कह्यो मुरारी। ५।४।

राग बिलावल

रहहु भवन हमरे कहे, कामिनि!
सादर सासु चरन सेवहु नित जो तुम्हरे अति हित गृह-स्वामिनि। १।

राजकुमारि कठिन कंटक मग, क्यों चलिहौ मृदु पद गजगामिनि।
दुसह बात बरषा, हिम, आतप कैसे सहिहौ अगनित दिन जामिनि ? २।
हौं पुनि पितु-आज्ञा प्रमान करि ऐहौं बेगि सुनहु दुति-दामिनि।
तुलसिदास प्रभु-बिरह-बचन सुनि सहि न सकी मुरछित भइ भामिनि ३

कृपानिधान सुजान प्रानपति संग बिपिन ह्वै आवोंगी।
गृह तें कोटि-गुनित सुख मारग चलत, साथ सचु पावोंगी। १।
थाके चरन-कमल चापौंगी, स्रम भए बाउ डोलावोंगी।
नयन-चकोरनि मुखमयंक-छबि सादर पान करावोंगी। २।
जो हठि नाथ राखिहौ मोकहँ तौ सँग प्रान पठावोंगी।
तुलसिदास प्रभु-बिनु जीवत रहि क्यों फिरि बदन देखावोंगी ?। ३।

कहौ तुम्ह बिनु गृह मेरो कौन काजु ?
बिपिन कोटि सुरपुर समान मोको जोपै पिय परिहस्यो राजु। १।
बलकल बिमल दुकूल मनोहर, कंद मूल फल अमिय नाजु।
प्रभुपद कमल बिलोकिहैं छिनछिन, इहि तें अधिक कहा सुख-समाजु।
हौं रहौं भवन भोग-लोलुप ह्वै पति कानन कियो मुनि को साजु।
तुलसिदास ऐसे बिरह-बचन सुनि कठिन हियो बिहरो न आजु। ३।

पिय निठुर बचन कहे कारन कवन ?
जानत हौ सब के मन की गति, मृदुचित, परमकृपालु, रवन !। १।
प्राननाथ सुंदर सुजानमनि, दीनबंधु, जग-आरति-दवन।
तुलसिदास प्रभु-पदसरोज तजि रहि हौं कहा करौंगी भवन ? २ ।८।

मैं तुम्ह सों सतिभाव कही है।
बूझति और भाँति भामिनि कत, कानन कठिन कलेस सही है। १।

जौ चलिहौ तो चलौ चलि कै बन, सुनि सिय मन अवलंब लही है ।
बूड़त बिरह-बारिनिधि मानहुँ नाह बचनमिस बाँह गही है ।२।
प्राननाथ के साथ चलीं उठि अवध सोकसरि उमँगि बही है ।
तुलसी सुनी न कबहुँ, काहु कहुँ, तनु परिहरि परिछाँहि रही है ।३।

जबहिं रघुपति-संग सीय चली ।
बिकल-बियोग लोग पुरतिय कहैं अति अन्याउ, अली ।१।
कोउ कहैं मनिगन तजत काँच लगि, करत न भूप भली ।
कोउ कहैं कुल-कुबेलि कैकेयी दुख-बिष-फलनि फली ।२।
एक कहैं बन जोग जानकी ! बिधि बड़ बिषम बली ।
तुलसी कुलिसहु की कठोरता तेहि दिन दलकि दली ।३।१०।

ठाढ़े हैं लषन कमल-कर जोरे ।
उर धकधकी न कहत कछु सकुचनि, प्रभु परिहरत सबनि तृन तोरे ।१।
कृपासिंधु अवलोकि बंधु तन, प्रान-कृपान बीर सी छोरे ।
तात बिदा माँगिए मातु सों, बनिहै बात उपाइ न ओरे ।२।
जाइ चरन गहि आयसु जाँचौ, जननि कहत बहु भाँति निहोरे।
सिय-रघुबर-सेवा सुचि ह्वैहौ तौ जानिहौं सही सुत मोरे ।३।
कीजहु इहै बिचार निरंतर राम समीप सुकृत नहिं थोरे ।
तुलसी सुनि सिष चले चकित-चित,
उड़यो मानो बिहग बधिक भए भोरे ।४।११।

राग सोरठ

मोको बिधुबदन बिलोकन दीजै ।
राम लषन मेरी यहै भेंट, बलि, जाउँ जहाँ मोहिं मिलि लीजै ।१।

सुनि पितु-बचन चरन गहे रघुपति, भूप अंक भरि लीन्हें ।
अजहुँ अवनि-बिदरत दरार मिस सो अवसर-सुधि कीन्हें ।२।
पुनि सिर नाइ गवन कियो प्रभु, मुरछित भयो भूप न जाग्यो ।
करम-चोर नृप-पथिक मारि मानो राम-रतन लै भाग्यो ।३।
तुलसी रबिकुल-रबि रथ चढ़ि चले तकि दिसि दखिन सुहाई ।
लोग नलिन भए मलिन अवध-सर, बिरह-बिषम-हिम पाई ।४।१२

राग बिलावल

कहौ सो बिपिन है धौं केतिक दूरि ।
जहाँ-गवन कियो कुँवर कोसलपति, बूझति सिय पिय-पतिहि-बिसूरि ।
प्राननाथ परदेस पयादेहि चले सुख सकल तजे तृन तूरि ।
करौं बयारि बिलंबिय बिटपतर, झारौं हौं चरन-सरोरुह-धूरि ।२।
तुलसिदास प्रभु प्रियाबचन सुनि नीरजनयन नीर आए पूरि ।
कानन कहाँ अबहिं, सुनु, सुंदरि, रघुपति फिरि चितए हित भूरि ।३।१३

फिरि फिरि राम सीयतनु हेरत ।
तृषित जानि जल लेन लषन गए, भुज उठाइ ऊँचे चढ़ि टेरत ।१।
अवनि कुरंग, बिहँग द्रुम-डारन रूप निहारत पलक न पेरत ।
मगन न डरत निरखि कर-कमलनि सुभग सरासन सायक फेरत ।२।
अवलोकत मग-लोग चहूँ दिसि मनहुँ चकोर चंद्रमहिं घेरत ।
ते जन भूरिभाग भूतल पर तुलसी राम-पथिक-पद जे रत ।३।१४

नृपति-कुँवर राजत मग जात ।
सुंदर बदन, सरोरुह-लोचन मरकत-कनकबरन मृदुगात ।१।
अंसनि चाप, तून कटि मुनिपट, जटा मुकुट बिच नूतन पात ।

फेरत पानि-सरोजनि सायक, चोरत चितहि सहज मुसुकात ।२।
संग नारि सुकुमारि सुभग सुठि राजति बिन भूषन नव-सात ।
सुखमा निरखि ग्राम-बनितनि के नलिन-नयन बिकसित मनो प्रात।३।
अंग अंग अगनित अनंग-छबि उपमा कहत सुकबि सकुचात ।
सिय समेत नित तुलसिदास चित, बसत किसोर पथिक दोउ भ्रात।१५

तू देखि देखि री ! पथिक परम सुंदर दोऊ ।
मरकत-कलधौत-बरन, काम-कोटि-कांतिहरन ,
चरन-कमल कोमल अति, राजकुँवर कोऊ ।१।
कर सर धनु, कटि निषंग, मुनिपट सोहैं सुभग अंग ,
संग चंद्रबदनि बधू, सुंदरि सुठि सोऊ ।
तापस बर बेष किए सोभा सब लूटि लिए ,
चित के चोर बय किसोर, लोचन भरि जोऊ ।२।
दिनकर-कुलमनि निहारि प्रेम - मगन ग्राम-नारि ,
परसपर कहैं, सखि ! अनुराग ताग पोऊ ।
तुलसी यह ध्यान-सुधन जानि मानि लाभ सघन ,
कृपन ज्यों सनेह सो हिये-सुगेह गोऊ ।३।१६।

कुँवर साँवरो, री सजनी ! सुंदर सब अंग ।
रोम रोम छबि निहारि आलि बारि फेरि डारि ,
कोटि भानु-सुवन सरद-सोम, कोटि अनंग ।१।
बाम अंग लसत चाप, मौलि मंजु जटा कलाप ,
सुचि सर कर, मुनिपट कटि-तट कसे निषंग ।
आयत उर बाहु नैन, मुख-सुखमा को लहै न

उपमा अवलोकि लोक, गिरामति-गति भंग । २ ।
यों कहि भई मगन बाल, बिथकीं सुनि जुवति-जाल ।
चितवत चले जात संग मधुप मृग बिहंग ।
बरनौं किमि तिनकी दसहि, निगम-अगम प्रेम-रसहि,
तुलसी-मन-बसन रँगे रुचिर रूपरंग । ३ । १७ ।

राग कल्यान

देखु कोऊ परम सुंदर सखि ! बटोही ।
चलत महि मृदु चरन अरुन-बारिज-बरन
भूपसुत, रूपनिधि निरखि हौं मोही । १ ।
अमल मरकत स्याम सील-सुखमा-धाम,
गौरतनु सुभग सोभा सुमुखि जोही ।
जुगल बिच नारि सुकुमारि सुठि सुंदरी,
इंदिरा इंदु-हरि मध्य जनु सोही । २ ।
करनि बर धनु तीर, रुचिर कटि तूनीर,
धीर, सुर-सुखद, मर्दनअवनि-द्रोही ।
अंबुजायत नयन, बदन, छबि बहु मयन,
चारु चितवनि चतुर लेति चित पोही । ३ ।
बचन प्रिय सुनि स्रवन राम करुनाभवन,
चितए सब अधिक हित सहित कछु ओही ।
दास तुलसी नेह-बिबस बिसरी देह,
जान नहिं आपु तेहि काल धौं कोही । ४ । १८ ।

राग केदारा

सखि ! नीके कै निरखि कोऊ सुठि सुंदर बटोही ।
मधुर मूरति मदनमोहन जोहन-जोग ,
बदन सोभासदन देखि हौं मोही । १ ।
साँवरे गोरे किसोर, सुर मुनि चित्त-चोर ,
उभय-अंतर एक नारि सोही ।
मनहुँ बारिद बिधु बीच ललित अति ,
राजति तड़ित निज सहज बिछोही । २ ।
उर धीरजहि धरि, जन्म सफल करि ,
सुनहि सुमुखि ! जनि बिकल होहो ।
को जानै कौने सुकृत लह्यौ है लोचन-लाहु,
ताहि तें बारहि बार कहति तोही । ३ ।
सखिहि सुसिख दई, प्रेम-मगन भई ,
सुरति बिसरि गई आपनी ओही ।
तुलसी रही है ठाढ़ी पाहन गढ़ी-सी काढ़ी ;
कौन जानै कहाँ तें आई, कौन की को ही । ४ ।१९।।

माई ! मन के मोहन जोहन-जोग जोही ।
थोरी ही बयस गोरे साँवरे सलोने लोने ,
लोयन ललित, बिधुबदन बटोही । १ ।
सिरनि जटा मुकुट मंजुल सुमनजुत ,
तैसिये लसति नव पल्लव खोही ।
किए मुनि-वेष बीर, धरे धनु तून तीर ,

सोहैं मग, को हैं लखि परै न मोही ।२।
सोभा को साँचो सँवारि रूप जातरूप,
ढारि नारि बिरची बिरंचि संग सोही ।
राजत रुचिर तनु, सुंदर स्रम के कन,
चाहे चकचौंधी लागै, कहौं का तोही ? ।३।
सनेह-सिथिल सुनि बचन सकल सिया,
चितई अधिक हित सहित ओही ।
तुलसी मनहुँ प्रभु कृपा की मूरति फिरि,
हेरि कै हरषि हिये लियो है पोही ।४।२०।

सखि ! सरद-बिमल-बिधुबदनि बधूटी ।
ऐसी ललना सलोनी न भई, न है, न होनी,
रत्यो रची बिधि जो छोलत छबि छूटी ।१।
साँवरे गोरे पथिक बीच सोहति अधिक,
तिहुँ त्रिभुवन-सोभा मनहुँ लूटी ।
तुलसी निरखि सिय प्रेमबस कहैं तिय,
लोचन-सिसुन्ह देहु अमिय घूटी ।२।२१।

सोहैं साँवरे पथिक, पाछे ललना लोनी ।
दामिनि-बरन गोरी, लखि सखि तृन तोरी,
बीती हैं बय किसोरी, जोबन होनी ।१।
नीके कै निकाई देखि, जनम सफल लेखि,
हम-सी भूरि-भागिनि नभ न छोनी ।
तुलसी-स्वामी-स्वामिनि जोहे मोही हैं भामिनि,

सोभा-सुधा पिए करि अँखिया दोनी । २ ।२२।

पथिक गोरे साँवरे सुठि लोने ।
संग सुतिय जाके तनु तें लही है द्युति सोन सरोरुह सोने । १ ।
बय किसोर-सरि-पार मनोहर बयस-सिरोमनि होने ।
सोभा-सुधा, आलि ! अँचवहु करि नयन मंजु मृदु दोने । २ ।
हेरत हृदय हरत, नहिं फेरत चारु बिलोचन कोने ।
तुलसी-प्रभु किधौं प्रभु को प्रेम पढ़े प्रगट कपट बिनु टोने । ३ ।२३।

मनोहरता के मानो ऐन ।
स्यामल गौर किसोर पथिक दोउ, सुमुखि ! निरखु भरि नैन । १ ।
बीच बधू बिधुबदनि बिराजति उपमा कहुँ कोऊ है न ।
मानहुँ रति ऋतुनाथ सहित मुनि-बेष बनाए हैं मैन । २ ।
किधौं सिंगार-सुखमा-सुप्रेम मिलि चले जग-चित-बित लैन ।
अद्भुत त्रयी किधौं पठई है बिधि मग-लोगन्हि सुख दैन । ३ ।
सुनि सुचि सरल सनेह सुहावने ग्रामबधुन्ह के बैन ।
तुलसी प्रभु तरु तर बिलँबे किए प्रेम कनौड़े कै न ? । ४ ।२४

बय किसोर गोरे साँवरे धनुबान धरे हैं ।
सब अंग सहज सोहावने, राजीव जिते नैननि, बदननि बिधु निदरे हैं ।
· तून सुमुनिपट कटि कसे, जटा मुकुट करे हैं ।
मंजु मधुर मृदु मूरति, पानहीं न पायनि, कैसे धौं पथ बिचरे हैं ? । २ ।
उभय बीच बनिता बनी लखि मोहि परे हैं ।
मदन सप्रिया सप्रिय सखा मुनि-बेष बनाए लिए मन जात हरे हैं । ३ ।
सुनि जहँ तहँ देखन चले अनुराग भरे हैं ।

राम-पथिक छबि निरखि कै, तुलसी,
मग-लोगनि धाम-काम बिसरे हैं । ४ ।२५।

कैसे पितु मातु, कैसे ते प्रिय परिजन हैं ?
जगजलधि ललाम, लोने लोने गोरे स्याम,
जिन पठए हैं ऐसे बालकनि बन हैं । १ ।
रूप के न पारावार, भूप के कुमार मुनि-बेष
देखत लोनाई लघु लागत मदन हैं ।
सुखमा की मूरति-सी, साथ निसिनाथ-मुखी,
नखसिख अंग सब सोभा के सदन हैं । २ ।
पंकज-करनि चाप, तीर तरकस कटि,
सरद-सरोजहु तें सुंदर चरन हैं ।
सीता राम लषन निहारि ग्रामनारि कहैं,
हेरि, हेरि, हेरि ! हेली हिय के हरन हैं । ३ ।
प्रानहूँ के प्रान-से, सुजीवन के जीवन-से,
प्रेमहू के प्रेम, रंक कृपिन के धन हैं ।
तुलसी के लोचन-चकोर के चंद्रमा-से,
आछे मन-मोर चित-चातक के घन हैं । ४ ।२६।

राग भैरव

देखि ! द्वै पथिक गोरे साँवरे सुभग हैं ।
सुतिय सलोनी संग सोहत सुमग हैं । १ ।
सोभासिंधु-संभव-से नीके नीके नग हैं ।
मातु-पितु-भाग-बस गए परि फँग हैं । २ ।

पाइँ पनह्यौ न, मृदु पंकज-से पग हैं ।
रूप की मोहनी मेलि मोहे अग जग हैं । ३ ।
मुनि-बेष धरे धनु सायक सुलग हैं ।
तुलसी हिये लसत लोने लोने डग हैं । ४ ।२७।
पथिक पयादे जात पंकज-से पाय हैं ।
मारग कठिन, कुस कंटकनिकाय हैं । १ ।
सखी भूखे प्यासे पै चलत चित चाय हैं ।
इन्हके सुकृत सुर संकर सहाय हैं । २ ।
रूप सोभा प्रेम के-से कमनीय काय हैं ।
मुनिबेष किए किधौं ब्रह्म जीव माय हैं । ३ ।
बीर बरियार धीर धनुधर-राय हैं ।
दसचारि-पुर-पाल आली उरगाय हैं । ४ ।
मग-लोग देखत करत हाय हाय हैं ।
बन इनको तो बाम बिधि के बनाय हैं । ५ ।
धन्य ते जे मीन-से अवधि-अंबु-आय हैं ।
तुलसी प्रभु सों जिन्हहूँ के भले भाय हैं । ६ ।२८।

राग आसावरी

सजनी ! हैं कोउ राजकुमार ।
पंथ चलत मृदु पद-कमलनि दोउ सील रूप-आगार । १ ।
आगे राजिवनैन स्याम-तनु सोभा अमित अपार ।
डारौं वारि अंग अंगनि पर कोटि कोटि सत मार । २ ।
पाछे गोर किसोर मनोहर, लोचन बदन उदार ।

कटि तूनीर कसे, कर सर धनु, चले हरन छिति-भार ।३।
जुगुल बीच सुकुमारि नारि इक राजति बिनहिं सिँगार ।
इंद्रनील, हाटक, मुकुतामनि जनु पहिरे महि हार ।४।
अवलोकहु भरि नैन, बिकल जनु होहु, करहु सुबिचार ।
पुनि कहँ यह सोभा, कहँ लोचन, देह गेह संसार ? ।५।
सुनि प्रिय बचन चितै हित कै रघुनाथ कृपा सुखसार ।
तुलसिदास प्रभु हरे सबन्हि के मन, तन रही न सँभार ।६।२६।

देखु री सखी ! पथिक नख-सिख नीके हैं ।
नीले पीले कमल-से कोमल कलेवरनि
तापस हूँ, बेष किये काम कोटि फीके हैं ।१।
सुकृत सनेह सील सुखमा सुख सकेलि
बिरचे बिरंचि किधौं अमिय अमी के हैं ।
रूप की-सी दामिनी सुभामिनी सोहति संग,
उमहुँ रमा तें आछे अंग अंग ती के हैं ।२।
बन-पट कसे कटि, तून तीर धनु धरे,
धीर बीर पालक कृपालु सबही के हैं ।
पानही न, चरन-सरोजनि चलत मग,
कानन पठाए पितु-मातु कैसे ही के हैं ? ।३।
आली अवलोकि लेहु, नयननि के फलु येहु,
लाभ के सुलाभ, सुखजीवन-से जी के हैं ।
धन्य नर-नारि जे निहारि बिनु गाहक हूँ,
आपने आपने मन मोल बिनु बीके हैं ।४।

बिबुध बरखि फूल हरषि हिये कहत,
ग्राम-लोग मगन सनेह सिय-पी के हैं।
जोगीजन अगम दरस पायो पावँरनि,
प्रमुदित मन मुनि सुरप सची के हैं।५।
प्रीति के सुबालक-से लालत सुजन मुनि,
मग चारु चरित लषन राम सी के हैं।
जोग न बिराग जाग तप न तीरथ त्याग,
एही अनुराग भाग खुले तुलसी के हैं।६।२०।

रीति चलिबे की चाहि, प्रीति पहिचानि कै।
आपनी आपनी कहैं प्रेम परबस अहैं,
मंजु मृदु बचन सनेह-सुधा सानि कै।१।
साँवरे कुँवर के बराइ कै चरन-चिह्न,
बधू पग धरति कहा धौं जिय जानि कै।
जुगल कमल-पद-अंक जोगवत जात,
गोरे गात कुँवर महिमा महा मानि कै।२।
उनकी कहनि नीकी, रहनि लषन सी की,
तिनकी गहनि जे पथिक उर आनि कै।
लोचन सजल, तन पुलक, मगन मन,
होत भूरिभागी जस तुलसी बखानि कै।३।२१।

राग केदारा

जेहि जेहि मग सिय राम लषन गए,
तहँ तहँ नर नारि बिनु छर छरिगे।

निरखि निकाई-अधिकाई बिथकित भए,
बच, बिय-नैन-सर सोभा-सुधा भरिगे ।१।
जोते बिनु, बए बिनु, निफन निराए बिनु,
सुकृत-सुखेत सुख-सालि फूलि फरिगे ।
मुनिहुँ मनोरथ को अगम अलभ्य लाभ,
सुगम सो राम लघु लोगन को करिगे ।२।
लालची कौड़ी के कूर पारस परे हैं पाले,
जानत न को हैं, कहा कीबो सो बिसरिगे ।
बुधि न बिचार, न बिगार, न सुधार सुधि,
देह गेह नेह नाते मन से निसरिगे ।२।
बरषि सुमन सुर हरषि हरषि कहैं,
'अनायास भवनिधि नीच नीके तरिगे' ।
सो सनेह समउ सुमिरि तुलसीहू के-से,
भली भाँति भले पैंत भले पाँसे परिगे ।४।३२।
बोले राज देन को, राजयसु भो कानन को,
आनन प्रसन्न, मन मोद, बड़ो काज भो ।
मातु-पिता-बंधु-हित, आपनो परम हित,
मोको बीसहू कै ईस अनुकूल आजु भो ।१।
असन अजीरन को समुझि तिलक तज्यौ,
बिपिन-गवनु भले भूखे को सुनाजु भो ।
धरम-धुरीन धीर बीर रघुबीरजू को
कोटि राज-सरिस भरत जू को राजु भो ।२।

ऐसी बातैं कहत सुनत मग-लोगन की
चले जात बंधु दोउ मुनि को सो साज भो।
ध्याइबे को, गाइबे को, सेइबे सुमिरिबे को,
तुलसी को सब भाँति सुखद समाज भो।३।३३।

सिरिस-सुमन-सुकुमारि सुखमा की सींव
सीय, राम बड़े ही सकोच संग लई है।
भाई के प्रान समान, प्रिया के प्रान के प्रान,
जानि बानि प्रीति रीति कृपासील मई है।१।
आलबाल-अवध सुकामतरु कामबेलि,
दूरि करि केकई बिपत्ति-बेलि बई है।
आप, पति, पूत, गुरुजन, प्रिय परिजन,
प्रजाहू को कुटिल दुसह दसा दई है।२।
पंकज-से पगनि पानह्यौं न, परुष पंथ,
कैसे निबहे हैं निबहैंगे गति नई है?।
एही सोच संकट मगन मग-नर-नारि,
सबकी सुमति राम-राग-रँग-रई है।३।
एक कहैं बाम बिधि दाहिनो हमको भयो,
उत कीन्हीं पीठि, इत को सुडीठि भई है।
तुलसी सहित बनबासी मुनि हमरिऔ,
अनायास अधिक अघाइ बनि गई है।४।३४।

राग गौरी

नीके कै मैं न बिलोकन पाए।

सखि ! यहि मग जुग पथिक मनोहर, बुध बिधु-बदन समेत सिधाए।१

नयन सरोज, किसोर बयस बर, सीस जटा रचि मुकुट बनाए।

कटि मुनि बसन तून, धनु सर कर, स्यामल गौर सुभाय सोहाए।२।

सुंदर बदन, बिसाल बाहु उर, तनु छबि, कोटि मनोज लजाए।

चितवत मोहिं लगी चौंधी-सी जानौं न कौन कहाँ तें धौं आए।३।

मनु गयो संग, सोचबस लोचन मोचत बारि, कितौ समुझाए।

तुलसिदास लालसा दरस की सोइ पुरवै जेहिं आनि देखाए।४।३२

पुनि न फिरे दोउ बीर बटाऊ।

स्यामल गौर सहज सुंदर, सखि ! बारक बहुरि बिलोकिबे काऊ।१।

कर-कमलनि सर सुभग सरासन, कटि मुनि बसन निषंग सोहाए।

भुज प्रलंब, सब अंग मनोहर, धन्य सो जनक जननि जेहि जाए।२।

सरद-बिमल-बिधु-बदन, जटा सिर, मंजुल अरुन-सरोरुह-लोचन।

तुलसिदास मनमथ मारग में राजत कोटि-मदन-मदमोचन।३।३६

राग केदारा

आली ! काहू तौ बूझौ न पथिक कहाँ धौं सिधैहैं।

कहाँ तें आए हैं, को हैं, कहा नाम स्याम गोरे,

काज कै कुसल फिरि एहि मग ऐहैं ?।१।

उठति बयस, मसि भींजति, सलोने सुठि,

सोभा-देखवैया बिनु बित्त ही बिकैहैं।

हिये हेरि हरि लेत लोनी ललना समेत,

लोयननि लाहु देत जहाँ जहाँ जैहैं।२।

राम-लषन-सिय-पंथि की कथा पृथुल,

प्रेम बिथकों कहति सुमुखि सबै हैं।
तुलसी तिन्ह सरिस तेऊ भूरिभाग जेऊ
सुनि कै सुचित तेहि समै समै हैं।३।३७।

बहुत दिन बीते सुधि कछु न लही।
गए जो पथिक गोरे साँवरे सलोने,
सखि! संग नारि सुकुमारि रही।१।
जानि पहिचानि बिनु आपु तें आपनेहु तें,
प्रानहुँ तें प्यारे प्रियतम उपही।
सुधा के सनेह हू के सार लै सँवारे बिधि,
जैसे भावते हैं भाँति जाति न कही।२।
बहुरि बिलोकिबे कबहुँक, कहत
तनु पुलक, नयन जलधार बही।
तुलसी प्रभु सुमिरि ग्रामजुवती सिथिल,
बिनु प्रयास परीं प्रेम सही।३।३८।

आली री! पथिक जे एहि पथ परौं सिधाए।
ते तौ राम लषन अवध तें आए।१।
संग सिय सब अंग सहज सोहाए।
रति, काम, ऋतुपति कोटिक लजाए।२।
राजा दसरथ रानी कौसिला जाए।
कैकेयी कुचालि करि कानन पठाए।३।
बचन कुभामिनि के भूपहि क्यों भाए?
हाय हाय राय बाम बिधि भरमाए।४।

कुलगुरु सचिव काहू न समुझाए।
काँच मनि लै अमोल मानिक गवाँए।५।
भाग मग-लोगनि के देखन जे पाए।
तुलसी सहित जिन गुन गन गाए।६।३९।
सखि! जब तें सीता समेत देखे दोउ भाई।
तब तें परै न कल, कछू न सोहाई।१।
नखसिख नीके, नीके निरखि निकाई।
तन सुधि गई, मन अनत न जाई।२।
हेरनि हँसनि हिय लिये हैं चोराई।
पावन-प्रेम-बिबस भई हौं पराई।३।
कैसे पितु मातु प्रिय परिजन भाई।
जीवत जीव के जीवन बनहिं पठाई।४।
समउ सो चित करि हित अधिकाई।
प्रीति ग्रामबधुन की तुलसिहुँ गाई।५।४०।

राग केदारा

जब तें सिधारे यहि मारग लखन राम
जानकी सहित तब तें न सुधि लही है।
अवध गए धौं फिरि, कैधौं चढ़े बिंध्यगिरि,
कैधौं कहुँ रहे सो कछू न काहू कही है।१।
एक कहै चित्रकूट निकट नदी के तीर
परनकुटीर करि बसे, बात सही है।
सुनियत भरत मनाइबे को आवत हैं,

होइगी पै सोई जो बिधाता चित्त चही है ।२।
सत्य-संध धरम-धुरीन रघुनाथजू को
आपनी निबाहिबे नृप की निरबही है ।
दस-चारि बरिस बिहार बन-पदचार
करिबे पुनीत सैल सर सरि मही है ।३।
मुनि सुर सुजन समाज के सुधारि काज,
बिगरि बिगरि जहाँ जहाँ जाकी रही है ।
पुर पाउँ धारिहैं उधारिहैं तुलसी हूँ-से जन,
जिन जानि कै गरीबी गाढ़ी गही है ।४।

राग सारंग

ये उपही कोउ कुँवर अहेरी ।
स्याम गौर धनु-बान-तूनधर चित्रकूट अब आइ रहे, री ।१।
इन्हहिं बहुत आदरत महामुनि समाचार मेरे नाह कहे, री ।
बनिता बंधु समेत बसे बन, पितु हित कठिन कलेस सहे, री ।२।
बचन परसपर कहति किरातिनि पुलक गात, जल नयन बहे, री ।
तुलसी प्रभुहि बिलोकति एकटक लोचन जनु बिनु पलक लहे, री ।३।

राग चंचरी

चित्रकूट अति बिचित्र, सुंदर बन महि पवित्र,
पावनि पय सरित सकल मल-निकंदिनी ।
सानुज जहँ बसत राम, लोक लोचनाभिराम,
बाम अंग बामाबर बिस्व-बंदिनी ।१।
चितवत मुनिगन चकोर, बैठे निज ठौर ठौर,

अक्षय अकलंक सरद-चंद-चंदिनी ।
उदित सदा बन-अकास, मुदित बदत तुलसिदास,
जय जय रघुनंदन जय जनकनंदिनी ।२।
फटिकसिला मृदु बिसाल, संकुल सुरतरु तमाल,
ललित-लता-जाल हरति छबि बितान की ।
मंदाकिनि तटनि तीर, मंजुल मृग बिहग भीर,
धीर मुनिगिरा गभीर सामगान की ।१।
मधुकर पिक बरहि मुखर, सुंदर गिरि निर्भर भर,
जल-कन घन छाँह, छन प्रभा न भान की ।
सब ऋतु ऋतुपति प्रभाउ, संतत बहै त्रिबिध बाउ,
जनु बिहार-बाटिका नृप पंचबान की ।२।
बिरचित तहँ पर्नसाल, अति बिचित्र लषन लाल,
निबसत जहँ नित कृपालु राम-जानकी ।
निज कर राजीवनयन पल्लव-दल-रचित सयन
प्यास परसपर पियूष प्रेम-पान की ।३।
सिय अँग लिखैं धातुराग, सुमननि भूषन-बिभाग,
तिलक करनि का कहौं कलानिधान की ।
माधुरी बिलास हास, गावत जस तुलसिदास,
बसति हृदय जोरी प्रिय परम प्रान की ।४।४४।

राग केदारा

लोने लाल लषन, सलोने राम, लोनी सिय,
चारु चित्रकूट बैठे सुरतरु-तर हैं ।

गोरे साँवरे सरीर पीत नील नीरज-से,
प्रेमरूप सुखमा के मनसिज-सर हैं।१।
लोने नख-सिख, निरुपम निरखन जोग,
बड़े उर कंधर-बिसाल भुज बर हैं।
लोने लोने लोचन जटनि के मुकुट लोने,
लोने बदननि जीते कोटि सुधाकर हैं।२।
लोने लोने धनुष, बिसिष कर-कमलनि,
लोने मुनिपट, कटि लोने सर-घर हैं।
प्रिया प्रिय बंधु को दिखावत बिटप बेलि,
मंजु कुंज, सिलातल, दल, फूल, फर हैं।३।
ऋषिन के आश्रम सराहैं, मृग नाम कहैं,
लागी मधु, सरित, झरत निर्झर हैं।
नाचत बरहि नीके, गावत मधुप पिक,
बोलत बिहंग, नभ-जल-थल-चर हैं।४।
प्रभुहि बिलोकि मुनिगन पुलके कहत,
भूरिभाग भये सब नीच नारि-नर हैं।
तुलसी सो सुख-लाहु लूटत किरात कोल,
जाको सिसकत सुर बिधि हरि हर हैं।५।४५।

राग सारंग

आइ रहे जब तें दोउ भाई।
तब तें चित्रकूट-कानन-छबि दिन दिन अधिक अधिक अधिकाई।१।
सीता-राम-लषन-पद-अंकित अवनि सोहावनि बरनि न जाई।

मंदाकिनि मज्जत अवलोकत त्रिबिध पाप त्रयताप नसाई । २ ।
उकठेउ हरित भए जल-थलरुह, नित नूतन राजीव सुहाई ।
फूलत फलत पल्लवत पलुहत बिटप बेलि अभिमत सुखदाई । ३ ।
सरित सरनि सरसीरुह-संकुल सदन सँवारि रमा जनु छाई ।
कूजत बिहँग, मंजु गुंजत अलि, जात पथिक जनु लेत बुलाई । ४ ।
त्रिबिध समीर नीर झर झरननि जहँ तहँ रहे ऋषि कुटी बनाई ।
सीतल सुभग सिलनि पर तापस करत जोग जप तप मन लाई । ५ ।
भए सब साधु किरात किरातिनि, राम-दरस मिटि गइ कलुषाई ।
खग मृग मुदित एक सँग बिहरत सहज बिषम बड़ बैर बिहाई । ६ ।
कामकेलि बाटिका बिबुध-बन, लघु उपमा कबि कहत लजाई ।
सकल भुवन सोभा सकेलि मनो राम बिपिन बिधि आनि बसाई । ७ ।
बन मिस मुनि, मुनितिय, मुनि-बालक बरनत रघुबर-बिमल बड़ाई ।
पुलक सिथिल तनु, सजल सलोचनु प्रमुदित मन जीवन फलु पाई । ८
क्यों कहौं चित्रकूट-गिरि संपति महिमा मोद मनोहरताई ।
तुलसी जहँ बसि लखन राम सिय आनंद-अवधि अवध बिसराई।९।४६

राग गौरी

देखत चित्रकूट बन मन अति होत हुलास ।
सीताराम लषन प्रिय, तापस बृंद-निवास । १ ।
सरित सोहावनि पावनि, पापहरनि पय नाम ।
सिद्धि-साधु-सुर-सेवित देति सकल मन काम । २ ।
बिटप बेलि नव किसलय, कुसुमित सघन सुजाति ।
कंदमूल, जल-थलरुह अगनित अनबन भाँति । ३ ।

बंजुल मंजु, बकुल कुल सुरतरु, ताल तमाल ।
कदलि, कदंब, सुचंपक, पाटल, पनस रसाल । ४ ।
भूरुह भूरि भरे जनु छवि अनुराग सुभाग ।
बन बिलोकि लघु लागहिं बिपुल बिबुध-बन-बाग । ५ ।
जाइ न बरनि राम-बन चितवत चित हरि लेत ।
ललित-लता-द्रुम-संकुल मनहुँ मनोज-निकेत । ६ ।
सरित सरनि सरसीरुह फूले नाना रंग ।
गुंजत मंजु मधुप गन कूजत बिबिध बिहंग । ७ ।
लषन कहेउ रघुनंदन देखिय बिपिन-समाज ।
मानहुँ चयन मयन-पुर आयउ प्रिय ऋतुराज । ८ ।
चित्रकूट पर राउर जानि अधिक अनुरागु ।
सखा सहित जनु रतिपति आयउ खेलन फागु । ९ ।
झिल्लि, झाँझ, झरना, डफ, नव मृदंग निसान ।
भेरि उपंग भृंग रव, ताल कीर कलगान ।१०।
हंस कपोत कबूतर बोलत चक्क चकोर ।
गावत मनहुँ नारिनर मुदित नगर चहुँ ओर ।११।
चित्र बिचित्र बिबिध मृग डोलत डोंगर डाँग ।
जनु पुरबीथिन बिहरत छैल सँवारे स्वाँग ।१२।
नचहिं मोर, पिक गावहिं, सुर बर राग बँधान ।
निलज तरुन तरुनी जनु खेलहिं समय समान ।१३।
भरि भरि सुंड करिन करि जहँ तहँ डारहिं बारि ।
भरत परसपर पिचकनि मनहुँ मुदित नर नारि ।१४।

पीठि चढ़ाइ सिसुन्ह कपि कूदत डारहिं डार।
जनु मुँह लाइ गेरु मसि भए खरनि असवार।१५।
लिए पराग सुमन-रस डोलत मलय समीर।
मनहुँ अरगजा छिरकत, भरत गुलाल अबीर।१६।
काम कौतुकी यहि बिधि प्रभुहित कौतुक कीन्ह।
रीझि राम रतिनाथहि जग-बिजयी बर दीन्ह।१७।
दुखवहु मोरे दास जनि, मानेहु मोरि रजाइ।
'भलेहि नाथ' माथे धरि आयसु चलेउ बजाइ।१८।
मुदित किरात किरातिनि रघुबर-रूप निहारि।
प्रभुगुन गावत नाचत चले जोहारि जोहारि।१९।
देहिं असीस प्रसंसहिं मुनि, सुर बरषहिं फूल।
गवने भवन राखि उर मूरति मंगलमूल।२०।
चित्रकूट कानन छबि को कबि बरनै पार।
जहँ सिय लषन सहित नित रघुबर करहिं बिहार।२१।
तुलसिदास चाँचरि मिस कहे राम गुन-ग्राम।
गावहिं सुनहिं नारि नर पावहिं सब अभिराम।२२।४७।

आजु बन्यो है बिपिन देखो, राम धीर। मानो खेलत फागु मुद मदन बीर।
बट बकुल कदंब पनस रसाल। कुसुमित तरु-निकर कुरव तमाल।
मानो बिबिध बेष धरे छैल-जूथ। बिच बीच लता ललना बरूथ।२।
पनवानक निर्झर, अलि उपंग। बोलत पारावत मानो डफ मृदंग।
गायक सुक कोकिल, झिल्लि ताल। नाचत बहु भाँति बरहि मराल।
मलयानिल सीतल सुरभि मंद। बह सहित सुमन रस रेनु बृंद।

मनु छिरकत फिरत सबनि सुरंग । भ्राजत उदार लीला अनंग ।४।
क्रीड़त जीते सुर असुर नाग । हठि सिद्ध मुनिन के पंथ लाग ।
कह तुलसिदास तेहि छाँड़ु मैन । जेहि राख राम राजीवनैन । ५ ।४८।
ऋतुपति आए भलो बन्यो बनसमाज, मानो भए हैं मदन महाराज आज ।
मनो प्रमथ फागु मिस करि अनीति, होरी मिस अरिपुर जारि जीति ।
मारुत मिस पत्र-प्रजा उजारि, नय नगर बसाए बिपिन झारि । २ ।
सिंहासन सैल सिला सुरंग; कानन, छबि रति परिजन कुरंग ।
सित छत्र सुमन, बल्ली बितान, चामर समीर, निर्झर निसान । ३ ।
मनो मधु माधव दोउ अनिप धीर, बर बिपुल बिटप बानैत बीर ।
मधुकर सुक कोकिल बंदि-बृंद, बरनहिं बिसुद्ध जस बिबिध छंद । ४ ।
महि परत सुमन-रस फल पराग, जनु देत इतर नृप कर-बिभाग ।
कलि सचिव सहित नय-निपुन मार, कियो बिस्व बिबस चारिहु प्रकार ।
बिरहिन पर नित नइ परै मारि, डाड़ियत सिद्ध साधक प्रचारि ।
तिनकी न काम सकै चापि छाँह, तुलसी जे बसहिं रघुबीर-बाँह ।६।

राग मलार

सब दिन चित्रकूट नीको लागत ।
बरषाऋतु प्रवेस बिसेष गिरि देखन मन अनुरागत । १ ।
चहुँदिसि बन संपन्न, बिहँग मृग बोलत सोभा पावत ।
जनु सुनरेस देस पुर प्रमुदित प्रजा सकल सुख छावत । २ ।
सोहत स्याम जलद मृदु घोरत धातु रँगमगे सृंगनि ।
मनहुँ आदि अंभोज बिराजत सेवित सुर-मुनि-भृंगनि । ३ ।
सिखर परस घन घटहिं, मिलति बग पाँति सो छबि कबि बरनी ।

आदि बराह बिहरि बारिधि मनो उठ्यो है दसन धरि धरनी ।४।
जल-जुत बिमल सिलनि झलकत नभ, बन-प्रतिबिंब तरंग ।
मानहुँ जग-रचना बिचित्र बिलसति बिराट अँग अंग ।५।
मंदाकिनिहि मिलत झरना झरि झरि भरि भरि जल आछे ।
तुलसी सकल सुकृत सुख लागे मानौ राम भगति के पाछे ।६।

राग सोरठ

आजु को भोर और सो, माई ।
सुनौं न द्वार बेद बंदी-धुनि गुनिगन-गिरा सोहाई ।१।
निज निज सुंदर पति सदननि तें रूप-सील-छबि-छाई ।
लेन असीस सीय आगे करि मोपै सुतबधू न आई ।२।
बूझी हौं न बिहँसि मेरे रघुबर 'कहाँ री ! सुमित्रा माता ?' ।
तुलसी मनहुँ महासुख मेरो देखि न सकेउ बिधाता ।३।५१

जननी निरखति बान धनुहियाँ ।
बार बार उर नैननि लावति प्रभुजू की ललित पनहियाँ ।१।
कबहुँ प्रथम ज्यों जाइ जगावति कहि प्रिय बचन सवारे ।
उठहु तात ! बलि मातु बदन पर, अनुज सखा सब द्वारे ।२।
कबहुँ कहति यों "बड़ी बार भइ जाहु भूप पहँ, भैया ।
बंधु बोलि जेंइय जो भावै गई निछावरि मैया" ।३।
कबहुँ समुझि बनगमन राम को रहि चकि चित्र लिखी-सी ।
तुलसिदास वह समय कहे तें लागति प्रीति सिखी-सी ।४।५२

माई री ! मोहिं कोउ न समुझावै ।
राम-गवन साँचो किधौं सपनो, मन परतीति न आवै ।१।

लगेइ रहत मेरे नैननि आगे राम लषन अरु सीता ।
तदपि न मिटत दाह या उर को, बिधि जो भयो बिपरीता ।२।
दुख न रहै रघुपतिहि बिलोकत, तनु न रहै बिनु देखे ।
करत न प्रान पयान सुनहु, सखि ! अरुझि परी यहि लेखे ।३।
कौसल्या के बिरह-बचन सुनि रोइ उठीं सब रानी ।
तुलसिदास रघुबीर-बिरह की पीर न जाति बखानी ।४।५३।

जब जब भवन बिलोकति सूनो ।
तब तब बिकल होति कौसल्या दिन दिन प्रति दुख दूनो ।१।
सुमिरत बाल-बिनोद राम के सुंदर मुनि-मन-हारी ।
होत हृदय अति सूल समुझि पदपंकज अजिर-बिहारी ।२।
को अब प्रात कलेऊ माँगत रूठि चलैगो, माई !
स्याम-तामरस-नैन स्रवत जल काहि लेउँ उर लाई ।३।
जीवौं तौ बिपति सहौं निसिबासर मरौं तौ मन पछितायो ।
चलत बिपिन भरि नयन राम को बदन न देखन पायो ।४।
तुलसिदास यह दुसह दसा अति, दारुन बिरह घनेरो ।
दूरि करै को भूरि कृपा बिनु सोकजनित रुज मेरो ?५।५४।

मेरो यह अभिलाषु बिधाता ।
कब पुरवै सखि सानुकूल है हरि सेवक सुखदाता ।१।
सीता सहित कुसल कोसलपुर आवत हैं सुत दोऊ ।
स्रवन-सुधा-सम बचन सखी कब आइ कहैगो कोऊ ?२।
सुनि संदेस प्रेम-परिपूरन संभ्रम उठि धावौंगी ।
बदन बिलोकि रोकि लोचन-जल हरषि हिये लावौंगी ।३।

जनकसुता कब सासु कहैं मोहि, राम लषन कहैं मैया।
बाहु जोरि कब अजिर चलहिंगे स्याम-गौर दोउ भैया।४।
तुलसिदास यहि भाँति मनोरथ करत प्रीति अति बाढ़ी।
थकित भई उर आनि राम-छबि मनहुँ चित्र लिखि काढ़ी।५।५५

सुन्यौ जब फिरि सुमंत पुर आयो।
कहिहैं कहा प्रानपति की गति, नृपति बिकल उठि धायो।१।
पायँ परत मंत्री अति ब्याकुल, नृप उठाइ उर लायो।
दसरथ-दसा देखि न कह्यो कछु हरि जो सँदेस पठायो।२।
बूझि न सकत कुसल प्रीतम को हृदय यहै पछितायो।
साँचेहु सुत-बियोग सुनिबे कहँ धिग बिधि मोहिं जिआयो।३।
तुलसिदास प्रभु जानि निठुर हौं न्याय नाथ बिसरायो।
हा! रघुपति कहि परयो अवनि जनु जल तें मनि बिलगायो।४।५६

मुएहु न मिटैगो मेरो मानसिक पछिताउ।
नारिबस न बिचारि कीन्हों काज, सोचत राउ।१।
तिलक को बोल्यो, दियो बन, चौगुनो चित चाउ।
हृदय दाड़िम ज्यों न बिदरयो समुझि सील सुभाउ।२।
सीय रघुबर लषन बिनु, भय भभरि भगी न आउ।
मोहिं बूझि न परत यातें कौन कठिन कुघाउ।३।
सुनि सुमंत! कि आनि सुंदर सुवन सहित जिआउ।
दास तुलसी नतरु मोको मरन-अमिय पिआउ।४।

अवध बिलोकि हौं जीवत रामभद्र-बिहीन।
कहा करिहैं आइ सानुज भरत धरमधुरीन।१।

राम-सोक-सनेह-संकुल, तनु बिकल, मनु लीन ।
टूटि तारो गगन-मग ज्यों होत छिन छिन छीन । २ ।
हृदय समुझि सनेह सादर प्रेम-पावन-मीन ।
करी तुलसीदास दसरथ प्रीति-परमिति पीन । ३ ।५८।

राग गौरी

करत राउ मन मों अनुमान ।
सोक-बिकल मुख बचन न आवै बिछुरे कृपानिधान । १ ।
राज देन कहि बोलि नारि-बस मैं जो कह्यौं बन जान ।
आयसु सिर धरि चले हरषि हिय कानन भवन समान । २ ।
ऐसे सुत के बिरह-अवधि लौं जौ राखौं यह प्रान ।
तौ मिटि जाइ प्रीति की परमिति अजस सुनौं निज कान । ३ ।
राम गए अजहूँ हौं जीवत समुझत हिय अकुलान ।
तुलसिदास तनु तजि रघुपति हित कियो प्रेम परवान । ४ ।५९

ऐसे तैं क्यों कटु बचन कह्यो, री ?
'राम जाहु कानन' कठोर तेरो कैसे धौं हृदय रह्यो री । १ ।
दिनकर-बंस, पिता दसरथ-से, राम-लषन-से भाई ।
जननी ! तू जननी ? तौ कहा कहौं, बिधि केहि खोरि न लाई ? २ ।
हौं लहिहौं सुख राजमातु ह्वै, सुत सिर छत्र धरैगो ।
कुल-कलंक मल मूल मनोरथ तव बिनु कौन करैगो ? ३ ।
ऐहैं राम, सुखी सब ह्वैहैं, ईस अजस मेरो हरिहैं ।
तुलसिदास मोको बड़ो सोच है तू जनम कौनि बिधि भरिहै । ४ ।६०

तातें हौं देत न दूषन तोहूँ ।
रामबिरोधी उर कठोर तें प्रगट कियो है बिधि मोहूँ ।१।
सुंदर सुखद सुसील सुधानिधि, जरनि जाइ जिहि जोए ।
बिष-बारुनी-बंधु कहियत बिधु ! नातो मिटत न धोए ।२।
होते जौं न सुजान-सिरोमनि राम सबके मन माहीं ।
तौ तोरी करतूति, मातु ! सुनि, प्रीति प्रतीति कहा हीं ? ।३।
मृदु मंजुल सींची-सनेह सुचि सुनत भरत-बर-बानी ।
तुलसी 'साधु साधु' सुर नर मुनि कहत प्रेम पहिचानी ।४।६१।

जो पै हौं मातु मते महँ ह्वैहौं ।
तौ जननी ! जग में या मुख की कहाँ कालिमा ध्वैहौं ? । १ ।
क्यों हौं आजु होत सुचि सपथनि ? कौन मानिहै साँची ? ।
महिमा-मृगी कौन सुकृती की खल-बच-बिसिषन बाँची ? ।२।
गहि न जाति रसना काहू की, कहौ जाहि जोइ सूझै ।
दीनबंधु कारुण्य-सिंधु बिनु कौन हिये की बूझै ? ३।
तुलसी रामबियोग-बिषम-बिष-बिकल नारिनर भारी ।
भरत-सनेहसुधा सींचे सब भए तेहि समय सुखारी ।४।६२

काहे को खोरि कैकयिहि लावौं ?
धरहु धीर बलि जाउँ, तात ! मोको आज बिधाता बावौं ।१।
सुनिबे जोग बियोग राम को हौं न होउँ मेरे प्यारे ।
सो मेरे नयननि आगे तें रघुपति बनहिं सिधारे ।२।
तुलसिदास समुझाइ भरत कहँ आँसु पोंछि उर लाए ।
उपजी प्रीति जानि प्रभु के हित, मनहुँ राम फिरि आए ।३।६३।

मेरो अवध धौं कहहु कहा है।
करहु राज रघुराज-चरन तजि, लै लटि लोगु रहा है।१।
धन्य मातु, हौं धन्य लागि जेहि राज-समाज ढहा है।
तापर मोकों प्रभु करि चाहत, सब बिनु दहन दहा है।२।
राम-सपथ कोउ कछू कहै जनि, मैं दुख दुसह सहा है।
चित्रकूट चलिए सब मिलि, बलि, छमिए मोहिं हहा है।३।
यों कहि भोर भरत गिरिवर को मारग बूझि गहा है।
सकल सराहत एक भरत जग जनमि सुलाहु लहा है।४।
जानहिं सिय रघुनाथ भरत को सील सनेह महा है।
कै तुलसी जाको राम-नाम सों प्रेम-नेम निबहा है।५।६४।

भाई! हौं अवध कहा रहि लैहौं।
राम-लषन-सिय-चरन बिलोकन काल्हि काननहिं जैहौं।१।
जद्यपि मोतें, कै कुमातु तें, ह्वै आई अति पोची।
सन्मुख गए सरन राखहिंगे रघुपति परम सँकोची।२।
तुलसी यों कहि चले भोरहीं, लोग बिकल सँग लागे।
जनु बन जरत देखि दारुन दव निकसि बिहँग मृग भागे।३।६५

सुक सों गहवर हिये कहै सारो।
बीर कीर! सिय राम लषन बिनु लागत जग अँधियारो।१।
पापिनि चेरि, अयानि रानि, नृप हित अनहित न बिचारो।
कुलगुरु सचिव साधु सोचत, बिधि को न बसाइ उजारो?२।
अवलोके न चलत भरि लोचन, नगर कोलाहल भारो।
सुने न बचन करुनाकर के जब पुर परिवार सँभारो।३।

भैया भरत भावते के सँग बन सब लोग सिधारो ।
हम पँख पाइ पींजरनि तरसत, अधिक अभाग हमारो ।४।
सुनि खग कहत अंब ! मौंगी रहि समुझि प्रेमपथ न्यारो ।
गए ते प्रभुहि पहुँचाइ फिरे पुनि करत करम गुन गारो ।५।
जीवन जग जानकी लखन को मरन महीप सँवारो ।
तुलसी और प्रीति की चरचा करत कहा कछु चारो ।६।६६

कहै सुक सुनहिं सिखावन, सारो ! ।
बिधि करतब बिपरीत बाम गति, रामप्रेम-पथ न्यारो ।१।
को नर-नारि अवध खग-मृग जेहि जीवन राम तें प्यारो ।
बिद्यमान सबके गवने बन, बदन करम को कारो ।२।
अंब अनुज प्रिय सखा सुसेवक देखि बिषाद बिसारो ।
पंछी परबस परे पींजरनि लेखो कौन हमारो ।३।
रही नृप की, बिगरी है सबकी, अब एक सँवार निहारो ।
तुलसी प्रभु निज चरन-पीठ-मिस भरत-प्रान रखवारो ।४।६७।

ता दिन सृंगबेरपुर आए ।
राम सखा तें समाचार सुनि बारि बिलोचन छाए ।
कुस साथरी देखि रघुपति की हेतु अपनपौ जानी ।
कहत कथा सिय राम लषन की बैठेहि रैनि बिहानी ।
भोरहि भरद्वाज आस्रम है करि निषादपति आगे ।
चले जनु तक्यो तड़ाग तृषित गज घोर घाम के लागे ।
बूझत 'चित्रकूट कहँ' जेहि तेहि मुनि बालकनि बतायो ।
तुलसी मनहुँ फनिक मनि ढूँढत निरखि हरषि हिय धायो ।१।६८

राग केदारा

बिलोके दूरि तें दोउ बीर ।
उर आयत, आजानु सुभग भुज, स्यामल गौर सरीर ।१।
सीस जटा, सरसीरुह लोचन, बने परिधन मुनिचीर ।
निकट निषंग, संग सिय सोभित, करनि धुनत धनु तीर ।२।
मन अगहुँड़ तनु पुलक सिथिल भयो, नलिन नयन भरे नीर ।
गड़त गोड़ मानों सकुच-पंक महँ, कढ़त प्रेम-बल धीर ।३।
तुलसिदास दसा देखि भरत की उठि धाए अतिहि अधीर ।
लिये उठाइ उर लाइ कृपानिधि बिरह-जनित हरि पीर ।४।६६

भरत भए ठाढ़े कर जोरि ।
ह्वै न सकत सामुहें सकुचबस समुझि मातुकृत खोरि ।१।
फिरिहैं किधौं फिरन कहिहैं प्रभु कलपि कुटिलता मोरि ।
हृदय सोच, जल भरे बिलोचन, नेह देह भइ भोरि ।२।
बनबासी, पुरलोग, महामुनि किए हैं काठ के-से कोरि ।
दै दै स्रवन सुनिबे को जहँ तहँ रहे प्रेम मन बोरि ।३।
तुलसी राम-सुभाव सुमिरि उर धरि धीरजहि बहोरि ।
बोले बचन बिनीत उचित हित करुना-रसहि निचोरि ।४।

जानत हौ सबही के मन की ।
तदपि कृपालु करौं बिनती सोइ सादर सुनहु दीन हित जन की ।१।
ए सेवक संतत अनन्य अति ज्यों चातकहि एक गति घन की ।
यह बिचारि गवनहु पुनीत पुर, हरहु दुसह आरति परिजन की ।२।
मेरो जीवन जानिय ऐसोइ जियै जैसो अहि जासु गई मनि फन की ।

मेटहु कुलकलंक कोसलपति आज्ञा देहु नाथ मोहिं बन की। ३।
मोकों जोइ लाइय लागै सोइ, उतपति है कुमातु तें तन की।
तुलसिदास सब दोष दूरि करि प्रभु अब लाज करहु निज पन की। ४।

तात ! बिचारो धौं हौं क्यों आवौं।
तुम्ह सुचि सुहृद सुजान सकल बिधि, बहुत कहा कहि कहि समुझावौं
निज कर खाल खैंचि या तनु तें जौ पितु पग पानहीं करावौं।
होउँ न उरिन पिता दसरथ तें; कैसे ताके बचन मेटि पति पावौं। २।
तुलसिदास जाको सुजस तिहूँ पुर क्यों तेहि कुलहि कालिमा लावौं।
प्रभुरुखनिरखि निरासभरतभए, जान्योहै सबहिभाँति बिधिबावौं ! ३।

बहुरो भरत कह्यो कछु चाहैं।
सकुच-सिंधु बोहित बिबेक करि बुधि बल बचन निबाहैं। १।
छोटे हुतें छोह करि आए मैं सामुहैं न हेरो।
एकहि बार आजु बिधि मेरो सील सनेह निबेरो। २।
तुलसी जो फिरिबो न बनै प्रभु तौ हौं आयसु पावौं।
घर फेरिए लषन लरिका हैं, नाथ साथ हौं आवौं। ३। ७३

रघुपति ! मोहिं संग किन लीजै ?
बारबार 'पुर जाहु' नाथ ! केहि कारन आयसु दीजै। १।
जद्यपि हौं अति अधम कुटिल मति अपराधिनि को जायो।
प्रनतपाल कोमल-सुभाव जिय जानि सरन तकि आयो। २।
जो मेरे तजि चरन आन गति, कहौं हृदय कछु राखी।
तौ परिहरहु दयालु दीनहित प्रभु अभिअंतर-साखी। ३।
ताते, नाथ ! कहौं मैं पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गोसाईं।
भजन-हीन नरदेह बृथा खर स्वान फेरु की नाईं। ४।

बंधु-बचन सुनि स्रवन नयन राजीव नीर भरि आए।
तुलसिदास प्रभु परम कृपा गहि बाँह भरत उर लाए। ५।७४

काहेको मानत हानि हिये हौ ?
प्रीति नीति गुन सील धर्म कहँ तुम अवलंब दिये हौ। १।
तात ! जात जानिबे न ए दिन, करि प्रमान पितु-बानी।
ऐहौं बेगि, धरहु धीरज उर कठिन कालगति जानी। २।
तुलसिदास अनुजहिं प्रबोधि प्रभु चरनपीठ निज दीन्हें।
मनहुँ सबनि के प्रान-पाहरू भरत सीस धरि लीन्हें। ३।७५

बिनती भरत करत कर जोरे।
दीनबंधु दीनता दीन की कबहुँ परै जिनि भोरे। १।
तुम्ह-से तुम्हहिं नाथ मोको, मो-से जन तुमको बहुतेरे।
इहै जानि पहिचानि प्रीति छमिए अघ औगुन मेरे। २।
यों कहि सीय-राम-पाँयनि परि लषन लाइ उर लीन्हें।
पुलक सरीर नीर भरि लोचन कहत प्रेम-पन कीन्हें। ३।
तुलसी बीते अवधि प्रथम दिन जो रघुबीर न ऐहौ।
तौ प्रभु-चरन-सरोज-सपथ जीवत परिजनहि न पैहौ। ४।७६

अवसि हौं आयसु पाइ रहौंगो।
जनमि कैकयी-कोखि कृपानिधि ! क्यों कछु चपरि कहौंगो। १।
'भरत-भूप, सिय राम लषन बन,' सुनि सानंद सहौंगो।
पुर परिजन अवलोकि मातु सब सुख संतोष लहौंगो। २।
प्रभु जानत जेहि भाँति अवधि लौं बचन पालि निबहौंगो।
आगे की बिनती तुलसी तब जब फिरि चरन गहौंगो। ३।७७

प्रभु सों मैं ढीठो बहुत दई है ।
कीबी छमा नाथ आरति तें कही कुजुगुति नई है ।१।
यों कहि बार बार पायँनि परि पाँवरि पुलकि लई है ।
अपनो अदिन देखि हौं डरपत जेहि बिष बेलि बई है ।२।
आए सदा सुधारि गोसाईं जन तें बिगरि गई है ।
थके बचन पैरत सनेह-सरि पर्‍यो मानो घोर घई है ।३।
चित्रकूट तेहि समय सबनि की बुद्धि बिषाद हई है ।
तुलसी राम-भरत के बिछुरत सिला सप्रेम भई है ।४।७८

जब तें चित्रकूट तें आए ।
नंदिग्राम खनि अवनि, डासि कुस, परनकुटी करि छाए ।१।
अजिन बसन, फल असन, जटा धरे रहत अवधि चित दीन्हें ।
प्रभुपद-प्रेमनेमव्रत निरखत मुनिन्ह नमित मुख कीन्हें ।२।
सिंहासन पर पूजि पादुका बारहिं बारु जोहारे ।
प्रभु-अनुराग माँगि आयसु पुरजन सब काज सँवारे ।३।
तुलसी ज्यों ज्यों घटत तेज तनु त्यौं त्यौं प्रीति अधिकाई ।
भए, न हैं, न होहिंगे कबहूँ भुवन भरत-से भाई ।४।७९

राग रामकली

राखी भगति भलाई भली भाँति भरत ।
स्वारथ परमारथ पथी जय जय जग करत ।१।
जो ब्रत मुनिबरनि कठिन मानस आचरत ।
सो ब्रत लिए चातक ज्यों सुनत पाप हरत ।२।
सिंहासन सुभग राम-चरन-पीठ धरत ।
चालत सब राजकाज आयसु अनुसरत ।३।

आपु अवध, बिपिन बंधु, सोच जरनि जरत ।
तुलसी सम विषम, सुगम अगम लखि न परत ।४।८०।

मोहिं भावति, कहि आवति नहिं भरतजू की रहनि ।
सजल नयन, सिथिल बयन प्रभु-गुन-गन कहनि ।१।
असन-बसन-अयन-सयन धरम-गरुअ-गहनि ।
दिन दिन पन प्रेम नेम निरुपधि निरबहनि ।२।
सीता-रघुनाथ-लषन-बिरह-पीर सहनि ।
तुलसी तजि उभय लोक रामचरन-चहनि ।३।८१

जानी है संकर हनुमान लषन भरत-रामभगति ।
कहत सुगम, करत अगम, सुनत मीठी लगति ।१।
लहत सुकृत चहत सकल, जुग जुग जगमगति ।
राम-प्रेम-पथ तें कबहुँ डोलति नहिं डगति ।२।
ऋधि, सिधि, बिधि चारि सुगति जा बिनु गति अगति ।
तुलसी तेहि सनमुख बिनु बिषय-ठगिनि ठगति ।३।८२।

राग गौरी

कैकयी करी धौं चतुराई कौन ?
राम लषन सिय बनहिं पठाए, पति पठए सुरभौन ।१।
कहा भलो धौं भयो भरत को लगे तरुन-तन दौन ।
पुरबासिन्ह के नयन नीर बिनु कबहुँ तो देखति हौं न ।२।
कौसल्या दिन राति बिसूरति बैठि मनहिं मन मौन ।
तुलसी उचित न होइ रोइबो प्रान गए सँग जौ न ।३।८३।

हाथ मींजिबो हाथ रह्यो ।
लगी न संग चित्रकूटहु तें ह्याँ कहा जात बह्यो ।१।

पति सुरपुर, सिय राम लषन बन, मुनिब्रत भरत गह्यो ।
हौं रहि घर मसान पावक ज्यों मरिबोइ मृतक दह्यो ।२।
मेरोइ हिय कठोर करिबे कहँ बिधि कहुँ कुलिस लह्यो ।
तुलसी बन पहुँचाइ फिरी सुत, क्यों कछु परत कह्यो ।३।८४।

राग सोरठ

हौं तो समुझि रही अपनो सो ।
राम लषन सिय को सुख मो कहँ भयो, सखी! सपनो सो ।१।
जिन्हके बिरह बिषाद बँटावन खग मृग जीव दुखारी ।
मोहिं कहा सजनी समुझावति हौं तिन्हकी महतारी ।२।
भरत-दसा सुनि, सुमिरि भूपगति, देखि दीन पुरबासी ।
तुलसी 'राम' कहति हौं सकुचति ह्वैहै जग उपहाँसी ।३।८५।

आली! हौं इन्हहिं बुझावौं कैसे ? ।
लेत हिये भरि पति को हित, मातुहेतु सुत जैसे ।१।
बार बार हिहिनात हेरि उत जो बोलै कोउ द्वारे ।
अंग लगाइ लिए बारे तें करुनामय सुत प्यारे ।२।
लोचन सजल, सदा सोवत-से, खान-पान बिसराए ।
चितवत चौंकि नाम सुनि, सोचत राम-सुरति उर आए ।३।
तुलसी प्रभु के बिरह बधिक हठि राजहंस से जोरे ।
ऐसेहु दुखित देखि हौं जीवति राम लषन के घोरे ।४।८६।

राघौ! एक बार फिरि आवौ ।
ए बर बाजि बिलोकि आपने बहुरो बनहिं सिधावौ ।१।
जे पय प्याइ पोखि कर-पंकज बार बार चुचुकारे ।

क्यों जीवहिं, मेरे राम लाड़िले ! ते अब निपट बिसारे ।२।
भरत सौगुनी सार करत हैं अति प्रिय जानि तिहारे ।
तदपि दिनहिं दिन होत झाँवरे मनहुँ कमल हिम-मारे ।३।
सुनहु पथिक ! जो राम मिलहिं बन कहियो मातु सँदेसो ।
तुलसी मोहिं और सबहिन तें इन्हको बड़ो अँदेसो ।४।

राग केदारा

काहू सों काहू समाचार ऐसे पाए ।
चित्रकूट तें राम लषन सिय सुनियत अनत सिधाए ।१।
सैल, सरित, निर्झर, बन, मुनिथल देखि देखि सब आए ।
कहत सुनत सुमिरत सुखदायक मानस सुगम सुहाए ।२।
बड़ि अवलंब बाम-बिधि-बिघटित, बिषम बिषाद बढ़ाए ।
सिरिस सुमन सुकुमार मनोहर बालक बिंध्य चढ़ाए ।३।
अवध सकल नर नारि बिकल अति अँकनि बचन अनभाए ।
तुलसी राम-बियोग-सोग-बस समुझत नहिं समुझाए ।४।८८

सुनी मैं, सखि ! मंगल चाह सुहाई ।
सुभ पत्रिका निषादराज की आजु भरत पहँ आई ।१।
कुँवर सो कुसल-छेम अलि ! तेहि पल कुलगुरु कहँ पहुँचाई ।
गुरु कृपालु संभ्रम पुर घर घर सादर सबहि सुनाई ।२।
बधि बिराध, सुर साधु सुखी करि, ऋषि सिख आसिष पाई ।
कुंभज सिष्य समेत संग सिय मुदित चले दोउ भाई ।३।
बीच बिंध्य रेवा सुपास थल बसे हैं परन-गृह छाई ।
पंथ-कथा रघुनाथ पथिक की तुलसिदास सुनि गाई ।४।८९

अरण्य कांड

राग मलार

देखे राम-पथिक नाचत मुदित मोर ।
मानत मनहुँ सतड़ित ललित घन, धनु सुरधनु, गरजनि टंकोर ।१।
कँपै कलाप बर बरहि फिरावत, गावत कल कोकिल-किसोर ।
जहँ जहँ प्रभु बिचरत तहँ तहँ सुख दंडकबन कौतुक न थोर ।२।
सघन छाँह तम-रुचिर रजनि भ्रम, बदन-चंद चितवत चकोर ।
तुलसी मुनि खग मृगनि सराहत भए हैं सुकृत सब इन्हकी ओर ।३।१

राग कल्यान

सुभग सरासन सायक जोरे ।
खेलत राम फिरत मृगया बन बसति सो मृदु मूरति मन मोरे ।
पीत बसन कटि, चारु चारि सर, चलत कोटि नट सो तृन तोरे ।
स्यामल तनु स्रम-कन राजत ज्यों नव घन सुधा-सरोवर खोरे ।
ललित कंध, बर भुज, बिसाल उर, लेहिं कंठ-रेखैं चित चोरे ।
अवलोकत मुख देत परम सुख लेत सरद-ससि की छबि छोरे ।
जटा मुकुट सिर सारस-नयननि गौं हैं तकत सुभौंह सकोरे ।
सोभा अमित समाति न कानन, उमगि चली चहुँ दिसि मिति फोरे ।
चितवत चकित कुरंग कुरंगिनि सब भए मगन मदन के भोरे ।
तुलसिदास प्रभु बान न मोचत, सहज सुभाय प्रेमबस थोरे ।२।

राग सोरठ

बैठे हैं राम लषन अरु सीता ।
पंचबटी बर परनकुटी तर कहैं कछु कथा पुनीता ।
कपट-कुरंग कनक-मनिमय लखि प्रिय सों कहति हँसि बाला ।
पाए पालिबे जोग मंजु मृग, मारेहुँ मंजुल छाला ।
प्रिया बचन सुनि बिहँसि प्रेमबस गवहिं चाप सर लीन्हें ।
चल्यो भाजि फिरि फिरि चितवत मुनिमख-रखवारे चीन्हें ।
सोहति मधुर मनोहर मूरति हेमहरिन के पाछे ।
धावनि, नवनि, बिलोकनि, बिथकनि बसै तुलसि उर आछे ।३।

राग कल्यान

कर सर धनु, कटि रुचिर निषंग ।
प्रिया-प्रीति-प्रेरित बन बीथिन्ह बिचरत कपट-कनक-मृग संग ।
भुज बिसाल, कमनीय कंध उर, स्रम-सीकर सोहैं साँवरे अंग ।
मनु मुकुता मनि-मरकतगिरि पर लसत ललित रबि-किरनि प्रसंग ।
नलिन नयन, सिर जटा मुकुट बिच सुमन-माल मनु सिव-सिर गंग ।
तुलसिदास ऐसी मूरति की बलि, छबि,
बिलोकि लाजैं अमित अनंग ।४।

राग केदारा

राघव, भावति मोहि बिपिन की बीथिन्ह धावनि ।
अरुन-कंज-बरन चरन सोकहरन, अंकुस कुलिस केतु अंकित अवनि ।
सुंदर स्यामल अंग, बसन पीत सुरंग, कटि निषंग परिकर मेरवनि ।
कनक-कुरंग संग साजे कर सर चाप, राजिवनयन इत उत चितवनि ।

सोहत सिर मुकुट जटा पटल, निकर सुमन लता सहित, रची बनवनि।
तैसेई स्रम-सीकर रुचिर राजत मुख, तैसिए ललित भ्रकुटिन्ह की नवनि
देखत खग-निकर, मृग रवनिन्ह जुत, थकित बिसारि जहाँ तहाँ की भँवनि
हरि-दरसन-फल पायो है ज्ञान बिमल, जाँचत भगति मुनि चाहत जवनि
जिन्हके मन मगन भए हैं रस सगुन, तिन्हके लेखे अगुन मुकुति कवनि।
स्रवन-सुख करनि, भवसरिता तरनि, गावत तुलसिदास कीरति पवनि

राग सोरठ

रघुबर दूरि जाइ मृग मार्‍यो।
लखन पुकारि, राम हरुए कहि मरतहुँ बैर सँभार्‍यो॥
सुनहु तात! कोउ तुम्हहिं पुकारत प्राननाथ की नाईं।
कह्यो लषन हत्यौ हरिन, कोपि सिय हठि पठयो बरिआईं॥
बंधु बिलोकि कहत तुलसी-प्रभु "भाई! भली न कीन्हीं।
मेरे जान जानकी काहू खल छल करि हरि लीन्हीं" ।६।

आरत बचन कहति बैदेही।
बिलपति भूरि बिसूरि 'दूरि गए मृग सँग परम सनेही'॥
कहे कटु बचन, रेख नाँघी मैं, तात छमा सो कीजै।
देखि बधिक-बस राजमरालनि लषन लाल छिनि लीजै॥
बनदेवनि सिय कहन कहति यों छल करि नीच हरी हौं।
गोमर-कर सुरधेनु, नाथ! ज्यौं त्यौं पर-हाथ परी हौं॥
तुलसिदास रघुनाथ-नाम-धुनि अकनि गीध धुकि धायो।
'पुत्रि पुत्रि! जनि डरहि, न जैहै नीचु! मीचु हौं आयो' ।७।

फिरत न बारहिं बार पचारयो ।
चपरि चोंच चंगुल हय हति, रथ खंड खंड करि डार्यो ॥
बिरथ बिकल कियो, छीनि लीन्हि सिय, घन घायनि अकुलान्यो ।
तब असि काढ़ि काटि पर पाँवर लै प्रभु-प्रिया परान्यो ॥
रामकाज खगराज आजु लर्यो जियत न जानकि त्यागी ।
तुलसिदास सुर सिद्ध सराहत धन्य बिहँग बड़भागी । ८ ।

राग गौरी

हेम को हरिन हनि फिरे रघुकुल-मनि
लषन ललित कर लिए मृगछाल ।
आस्रम आवत चले, सगुन न भए भले,
फरके बाम बाहु लोचन बिसाल । १ ।
सरित जल मलिन, सरनि सूखे नलिन,
अलि न गुंजत, कल कूजैं न मराल ।
कोलिनि कोल किरात जहाँ तहाँ बिलखात,
बन न बिलोकि जात खग-मृग-माल । २ ।
तरु जे जानकी लाए, ज्याये हरि करि कपि,
हेरैं न हुँकरि, झरैं फल न रसाल ।
जे सुक-सारिका पाले, मातु ज्यों ललकि लाले,
तेऊ न पढ़त, न पढ़ावैं मुनिबाल । ३ ।
समुझि सहमे सुठि, प्रिया तौ न आई उठि,
तुलसी बिबरन परन-तृन-साल ।
औरै सो सब समाजु, कुसल न देखौं आजु

गहबर हिय कहैं कोसलपाल ।४।९।

आस्रम निरखि भूले, द्रुम न फले न फूले,
अलि खग मृग मानो कबहुँ न हे ।
मुनि न मुनिबधूटी, उजरी परनकुटी,
पंचबटी पहिचानि ठाढ़ेइ रहे ।१।
उठी न सलिल लिये प्रेम प्रमुदित हिये
प्रिया, न पुलकि प्रिय बचन कहे ।
पल्लव-सालन हेरी, प्रानबल्लभा न टेरी,
बिरह बिथकि लखि लषन गहे ।२।
देखे रघुपति-गति बिबुध बिकल अति,
तुलसी गहन बिनु दहन दहे ।
अनुज दियो भरोसो, तौलौं हैं सोचु खरो सो,
सिय-समाचार-प्रभु जौलौं न लहे ।३।१०।

राग सोरठ

जबहिं सिय-सुधि सब सुरनि सुनाई ।
भए सुनि सजग बिरहसरि पैरत थके थाह-सी पाई ।
कसि तूनीर तीर धनु-धर-धुर धीर बीर दोउ भाई ।
पंचबटी गोदहिं प्रनाम करि कुटी दाहिनी लाई ।
चले बूझत बन बेलि बिटप खग मृग अलि अवलि सुहाई ।
प्रभु की दसा सो समौ कहिबे को कबि उर आह न आई ।
रटनि अकनि पहिचानि गीध फिरे करुनामय रघुराई ।
तुलसी रामहिं प्रिया बिसरि गई सुमिरि सनेह सगाई ।११।

मेरे एकौ हाथ न लागी ।
गयो बपु बीति बादि कानन ज्यों कलपलता दव दागी ॥
दसरथ सों न प्रेम प्रतिपाल्यौ हुतो जो सकल जग साखी ।
बरबस हरत निसाचरपति सों हठि न जानकी राखी ॥
मरत न मैं रघुबीर बिलोके तापस बेष बनाए ।
चाहत चलन प्रान पाँवर बिनु सिय-सुधि प्रभुहि सुनाए ॥
बारबार कर मींजि सीस धुनि गीधराज पछिताई ।
तुलसी प्रभु कृपालु तेहि औसर आइ गए दोउ भाई ।१२।

राघौ गीध गोद करि लीन्हों ।
नयन-सरोज सनेह-सलिल सुचि मनहुँ अरघजल दीन्हो ॥
सुनहु लषन ! खगपतिहि मिले बन मैं पितु-मरन न जान्यौ ।
सहि न सक्यौ सो कठिन बिधाता बड़ो पछु आजुहि भान्यौ ॥
बहु बिधि राम कह्यौ तनु राखन परम धीर नहिं डोल्यौ ।
रोकि प्रेम, अवलोकि बदनबिधु बचन मनोहर बोल्यो ॥
तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि समय न धोखो लैहौं ।
जाको नाम मरत मुनि दुर्लभ तुमहिं कहाँ पुनि पैहौं ।१३।

नीके कै जानत राम हियो हौं ।
प्रनतपाल, सेवक-कृपालु-चित, पितु पटतरहि दियो हौं ॥
त्रिजगजोनि-गत गीध जनम भरि खाइ कुजंतु जियो हौं ।
महाराज सुकृती-समाज सब-ऊपर आजु कियो हौं ॥
स्रवन बचन, मुख नाम, रूप चख, राम उछंग लियो हौं ।
तुलसी मो समान बड़भागी को कहि सकै बियो हौं ।१४।

मेरे जान तात कछू दिन जीजै ।
देखिय आपु सुवन-सेवासुख मोहिं पितु को सुख दीजै ॥
दिव्य-देह इच्छा-जीवन जग बिधि मनाइ मँगि लीजै ।
हरि-हर सुजस सुनाइ, दरस दै लोग कृतारथ कीजै ॥
देखि बदन, सुनि बचन अमिय, तन रामनयन-जल भीजै ।
बोल्यो बिहग बिहँसि 'रघुबर बलि कहौं सुभाय पतीजै ॥
मेरे मरिबे सम न चारि फल होहिं तौ क्यों न कहीजै ?' ।
तुलसी प्रभु दियो उतरु मौन ह्वै परी मानो प्रेम सहीजै ।१५।

मेरो सुनियो, तात ! सँदेसो ।
सीय-हरन जनि कहेहु पिता सों, ह्वैहैं अधिक अँदेसो ॥
रावरे पुन्यप्रताप-अनल महँ अलप दिननि रिपु दहिहैं ।
कुल समेत सुरसभा दसानन समाचार सब कहिहैं ॥
सुनि प्रभु-बचन राखि उर मूरति चरनकमल सिर नाई ।
चल्यो नभ सुनत राम-कल-कीरति अरु निज भाग बड़ाई ॥
पितु ज्यों गीध-क्रिया करि रघुपति अपने धाम पठायो ।
ऐसो प्रभु बिसारि तुलसी सठ तू चाहत सुख पायो ।१६।

राग सूहो

सबरी सोइ उठी, फरकत बाम बिलोचन बाहु ।
सगुन सुहावने सूचत मुनि-मन-अगम उछाहु ॥
मुनि-अगम उर आनंद, लोचन सजल, तनु पुलकावली ।
तृन-पर्नसाल बनाइ, जल भरि कलस, फल चाहन चली ॥
मंजुल मनोरथ करति, सुमिरति बिप्र-बरबानी भली ।

ज्यों कल्प-बेलि सकेलि सुकृत सुफूल-फूली सुख-फली । १ ।
प्रानप्रिय पाहुने ऐहैं राम लषन मेरे आजु ।
जानत जन-जिय की मृदु चित राम गरीबनिवाजु ॥
मृदु चित गरीबनिवाज आजु बिराजिहैं गृह आइकै ।
ब्रह्मादि संकर गौरि पूजित पूजिहौं अब जाइकै ॥
लहि नाथ हौं रघुनाथ-बानो पतितपावन पाइकै ।
दुहुँ ओर लाहु अघाइ तुलसी तीसरेहु गुन गाइकै । २ ।
दोना रुचिर रचे पूरन कंद-मूल-फल-फूल ।
अनुपम अमियहु तें अंबक अवलोकत अनुकूल ॥
अनुकूल अंबक अंब ज्यों निज डिंभ हित सब आनिकै ।
सुंदर सनेह सुधा सहस जनु सरस राखे सानिकै ॥
छन भवन, छन बाहर बिलोकति पंथ भू पर पानिकै ।
दोउ भाइ आये सबरिका के प्रेम-पन पहिचानिकै । ३ ।
स्रवन सुनत चली आवत देखि लषन रघुराउ ।
सिथिल सनेह कहै, 'है सपना बिधि कैधों सति भाउ' ॥
सति भाउ कै सपनो ? निहारि कुमार कोसलराय के ।
गहे चरन जे अघहरन नत-जन-बचन-मानस-काय के ॥
लघु-भाग-भाजन उदधि उमग्यो लाभ सुख चित चाय कै ।
सो जननि ज्यों आदरी सानुज, राम भूखे भाय के । ४ ।
प्रेम पट पाँवड़े देत सुअरघ बिलोचन-बारि ।
आस्रम लै दिए आसन पंकज-पायँ पखारि ॥
पद-पंकजात पखारि पूजे पंथ-स्रम-बिरहित भये ।

फल फूल अंकुर मूल धरे सुधारि भरि दोना नये ॥
प्रभु खात पुलकित गात, स्वाद सराहि आदर जनु जये ।
फल चारिहू फल चारि दहि परचारि फल सबरी दये ।५।
सुमन बरषि हरषे सुर, मुनि मुदित सराहि सिहात ।
केहि रुचि केहि छुधा सानुज माँगि माँगि प्रभु खात !
प्रभु खात माँगत, देति सबरी राम भोगी जाग. के ।
पुलकत प्रसंसत सिद्ध सिव सनकादि भाजन-भाग के ॥
बालक सुमित्रा कौसिला के पाहुने फल साग के ।
सुनु समुझि तुलसी जानु रामहिं बस अमल अनुराग के ।६।
रघुबर अँचइ उठे सबरी करि प्रनाम कर जोरि ।
हौं बलि बलि गई पुरई मंजु मनोरथ मोरि ॥
पुरई मनोरथ स्वारथहु परमारथहु पूरन करी ।
अघ अवगुनन्हि की कोठरी करि कृपा मुदमंगल भरी ॥
तापस किरातिनि कोल मृदु मूरति मनोहर मन धरी ।
सिर नाइ आयसु पाइ गवने परमनिधि पाले परी ।७।
सिय-सुधि सब कहो नख सिख निरखि निरखि दोउ भाइ ।
दै दै प्रदच्छिना करति प्रनाम न प्रेम अघाइ ॥
अति प्रीति मानस राखि रामहिं, राम-धामहिं सो गई ।
तेहि मातु ज्यों रघुनाथ अपने हाथ जलअंजलि दई ॥
तुलसी-भनित सबरी-प्रनति, रघुबर प्रकृति करुनामई ।
गावत, सुनत, समुझत भगति हिय होय प्रभुपद नित नई ।८।१७

किष्किंधा कांड

राग केदारा

भूषन बसन बिलोकत सिय के ।
प्रेम-बिबस मन, कंप पुलक तनु, नीरजनयन नीर भरे पिय के ॥
सकुचत कहत, सुमिरि उर उमगत, सील सनेह सुगुनगन तिय के ।
स्वामिदसा लखि लषन सखा कपि, पिघले हैं आँच माठ मानो घियके।
सोचत हानि मानि मन, गुनि, गुनि, गये निघटि फल सकल सुकिय के
बरने जामवंत तेहि अवसर, बचन बिबेक बीररस बिय के ॥
धीर बीर सुनि समुझि परसपर, बल उपाय उघटत निज हिय के ।
तुलसिदास यह समउ कहे तें कबि लागत निपट निठुर जड़ जियके।२।

प्रभु कपि-नायक बोलि कह्यो है ।
बरषा गई, सरद आई, अब लगि नहिं सिय-सोधु लह्यो है ॥
जा कारन तजि लोकलाज तनु राखि बियोग सह्यो है ।
ताको तौ कपिराज आज लगि कछु न काज निबह्यो है ॥
सुनि सुग्रीव सभीत नमित-मुख उतरु न देन चह्यो है ।
आइ गए हरि-जूथ देखि उर पूरि प्रमोद रह्यो है ॥
पठये बदि बदि अवधि दसहुँ दिसि, चले बलु सबनि गह्यो है ।
तुलसी सिय लगि भवदधि-निधि मनु फिर हरि चहत मह्यो है ।२।

सुंदर कांड

राग केदारा

रजायसु राम को जब पायो ।
गाल मेलि मुद्रिका मुदित मन पवनपूत सिर नायो ॥
भालुनाथ नल नील साथ चले, बली बालि को जायो ।
फरकि सुअँग भए सगुन, कहत मानो मग मुद-मंगल छायो ॥
देखि बिबर सुधि पाइ गीध सों सबनि अपनो बलु मायो ।
सुमिरि राम, तकि तरकि तोयनिधि लंक लूक सो आयो ॥
खोजत घर घर जनु दरिद्र-मनि फिरत लागि धन धायो ।
तुलसी सिय बिलोकि पुलक्यो तनु भूरिभाग भयो भायो ।१।

देखी जानकी जब जाइ ।
परम धीर समीरसुत के प्रेम उर न समाइ ॥
कृस सरीर सुभाय सोभित, लगी उड़ि उड़ि धूलि ।
मनहुँ मनसिज मोहनी-मनि गयो भोरे भूलि ॥
रटति निसि बासर निरंतर राम राजिवनैन ।
जात निकट न बिरहिनी-अरि अकनि ताते बैन ॥
नाथ के गुनगाथ कहि कपि दई मुँदरी डारि ।
कथा सुनि उठि लई कर वर रुचिर नाम निहारि ॥
हृदय हरष बिषाद अति पति-मुद्रिका पहिचानि ।
दास तुलसी दसा सो केहि भाँति कहै बखानि ? २।

राग सोरठ

बोलि, बलि, मूँदरी ! सानुज कुसल कोसलपालु ।
अमिय बचन सुनाइ मेटहि बिरह-ज्वाला-जालु ॥
कहत हित अपमान मैं कियो, होत हिय सोइ सालु ।
रोष छमि सुधि करत कबहूँ ललित लछिमन लालु ?
परस्पर पति देवरहि का होति चरचा चालु ।
देवि ! कहु केहि हेत बोले बिपुल बानर भालु ॥
सीलनिधि समरथ सुसाहिब दीनबंधु दयालु ।
दास तुलसी प्रभुहि काहु न कह्यो मेरो हालु ।३।
सदल सलषन हैं कुसल कृपालु कोसल-राउ !
सील-सदन सनेह-सागर सहज सरल सुभाउ ॥
नींद भूख न देवरहि परिहरे को पछिताउ ।
धीरधुर रघुबीर को नहिं सपनेहूँ चित चाउ ॥
सोधु बिनु, अनुरोध ऋतु के, बोध बिहित उपाउ ।
करत हैं सोइ समय साधन फलति बनत बनाउ ॥
पठए कपि दिसि दसहुँ जे प्रभुकाज कुटिल न काउ ।
बोलि लियो हनुमान करि सनमान जानि समाउ ॥
दई हौं संकेत कहि कुसलात सियहि सुनाउ ।
देखि दुर्ग बिसेषि जानकि जानि रिपु-गति आउ ॥
कियो सीय प्रबोध मुँदरी, दियो कपिहि लखाउ ।
पाइ अवसर नाइ सिर तुलसीस गुनगन गाउ ।४।
सुवन समीर को धीर धुरीन बीर बड़ोइ ।

देखि गति सिय मुद्रिका की बाल ज्यौं दियो रोइ ॥
अकनि कटु बानी कुटिल की क्रोध-बिंध्य बढ़ोइ ।
सकुचि सम भयो ईस-आयसु-कलसभव जिय जोइ ॥
बुद्धि बल साहस पराक्रम अछत राखे गोइ ।
सकल साज समाज साधक समउ कहै सब कोइ ॥
उतरि तरु तें नमत पद, सकुचात सोचत सोइ ।
चुके अवसर मनहुँ सुजनहिं सुजन सनमुख होइ ॥
कहे बचन बिनीत प्रीति प्रतीति नीति निचोइ ।
सीय सुनि हनुमान जान्यौ भली भाँति भलोइ ॥
देवि ! बिनु करतूति कहिबो जानिहैं लघु लोइ ।
कहौंगो मुख की समरसरि कालि कारिख धोइ ॥
करत कछू न बनत हरिहिय हरष सोक समोइ ।
कहत मन तुलसीस लंका करहुँ सघन घमोइ ।५।

राग केदारा

हौं रघुबंसमनि को दूत ।
मातु मानु प्रतीति जानकि ! जानि मारुतपूत ॥
मैं सुनी बातैं असैली जे कही निसिचर नीच ।
क्यों न मारै गाल बैठो काल-डाढ़नि बीच ॥
निदरि अरि रघुबीर-बल लै जाउँ जौ हठि आज ।
डरौं आयसु-भंग तें, अरु बिगरिहै सुरकाज ॥
बाँधि बारिधि, साधि रिपु दिन चारि में दोउ बीर ।
मिलहिंगे कपि-भालु-दल सँग, जननि उर धरु धीर ॥

चित्रकूट कथा कुसल कहि सीस नायो कीस ।
सुहृद सेवक नाथ को लखि दई अचल असीस ॥
भये सीतल स्रवन तन मन सुने बचन-पियूष ।
दास तुलसी रही नयननि दरस ही की भूख ।६।

तात ! तोहूँ सों कहत होति हिये गलानि ।
मन को प्रथम पन समुझि अछत तनु
लखि नइ गति भइ मति मलानि ।
पिय को बचन परिहस्यो जिय के भरोसे,
संग चली बन बड़ो लाभ जानि ।
पीतम-बिरह तौ सनेह सरबसु, सुत !
औसर को चूकिबो सरिस न हानि ।
आरज-सुवन के तो दया दुवनहुँ पर,
मोहिं सोच मोतें सब बिधि नसानि ।
आपनी भलाई भलो कियो नाथ सबही को,
मेरे ही दिन सब बिसरी बानि ।
नेम तौ पपीहा ही के, प्रेम प्यारो मीन ही के,
तुलसी कही है नीके हृदय आनि ।
इतनी कही सो कही सीय, ज्योंहीं त्योंहीं,
रही, प्रीति परी सही, बिधि सों न बसानि ।७।

मातु काहे कों कहति अति बचन दीन ?
तब की तुहीं जानति, अब की हौं ही कहत,
सब के जिय की जानत प्रभु प्रबीन ।

ऐसे तो सोचहिं न्याय-निठुर-नायक-रत
सलभ, खग, कुरंग, कमल, मीन।
करुनानिधान को तो ज्यों ज्यों तनु छीन भयो
त्यों त्यों मनु भयो तेरे प्रेम पीन।
सिय को सनेह, रघुबर की दसा सुमिरि
पवनपूत देखि भयो प्रीति-लीन।
तुलसी जन को जननी प्रबोध कियो,
"समुझि तात! जग बिधि-अधीन"।८।

राग जयतश्री

कहु कपि कब रघुनाथ कृपा करि, हरिहैं निज बियोग-संभव दुख।
राजिवनयन मयन-अनेक-छबि रबिकुल-कुमुद सुखद मयंक-मुख।
बिरह-अनल स्वासा-समीर निज तनु जरिबे कहँ रही न कछू सक।
अति बल जल बरषत दोउ लोचन दिन अरु रैन रहत एकहिं तक।
सुदृढ़ ज्ञान अवलंबि सुनहु सुत! राखति प्रान बिचारि दहन मत।
सगुन रूप, लीला-बिलास-सुख सुमिरति करति रहति अंतरगत।
सुनु हनुमंत! अनंत-बंधु करुना सुभाव सीतल कोमल अति।
तुलसिदास यहि त्रास जानि जिय बरु दुख सहौं प्रगट कहि न सकति।

राग केदारा

कबहूँ, कपि! राघव आवहिंगे?
मेरे नयन - चकोर प्रीतिबस राकाससि मुख दिखरावहिंगे।
मधुप मराल मोर चातक है लोचन बहु प्रकार धावहिंगे।
अंग अंग छबि भिन्न भिन्न सुख निरखि निरखि तहँ तहँ छावहिंगे।

बिरह-अगिनि जरि रही लता ज्यों कृपादृष्टि-जल पलुहावहिंगे।
रावनबध रघुनाथ-बिमल-जस नारदादि मुनिजन गावहिंगे।
यह अभिलाष रैन - दिन मेरे राज बिभीषन कब पावहिंगे।
तुलसिदास प्रभु मोहजनित भ्रम-भेद्-बुद्धि कब बिसरावहिंगे? १०

सत्य बचन सुनु मातु जानकी!
जन के दुख रघुनाथ दुखित अति, सहज प्रकृति करुनानिधान की।
तुव बियोग-संभव दारुन दुख बिसरि गई महिमा सुबान की।
ननु कहु कहँ रघुपति-सायक-रबि, तम-अनीक कहँ जातुधान की॥
कहँ हम पसु साखामृग चंचल बात कहौं मैं बिद्यमान की।
कहँ हरि सिव-अज-पूज्य ज्ञानघन नहिं बिसरति वह लगनि कान की।
तुव दरसन, सँदेस सुनि हरि को बहुत भई अवलंब प्रान की।
तुलसिदास गुन सुमिरि राम के प्रेम मगन नहिं सुधि अपान की।११

राग कान्हरा

रावन! जु पै राम रन रोषे।
को कहि सकै सुरासुर समरथ बिसिष काल-दसननि तें चोषे॥
तपबल, भुजबल कै सनेह-बल सिव बिरंचि नीकी विधि तोषे।
सो फल राजसमाज सुवन जन, आपुन नास आपने पोषे।
तुला पिनाक, साहु नृप, त्रिभुवन भट बटोरि सबके बल जोषे।
परसुराम-से सूर-सिरोमनि पल में भए खेत के धोषे।
कालि की बात बालि की सुधि करि समुझिहि ता हित खोलि झरोखे
कह्यो कुमंत्रिन को न मानिए, बड़ी हानि, जिय जानि त्रिदोषे।
जासु प्रसाद जनमि जग पुरषनि सागर सृजे, खने अरु सोखे।

तुलसिदास सो स्वामि न सूझ्यो नयन बीस मंदिर के-से मोखे।१२

राग मारू

जो हौं प्रभु-आयसु लै चलतो ।
तौ यहि रिस तोहिं सहित दसानन जातुधान दल दलतो ॥
रावन सो रसराज सुभट-रस सहित लंक खल खलतो ।
करि पुटपाक नाक-नायकहित घने घने घर घलतो ॥
बड़े समाज लाज-भाजन भयो, बड़ो काज बिनु छलतो ।
लंकनाथ रघुनाथ-बैरु-तरु आजु फैलि फूलि फलतो ॥
कालकरम दिगपाल सकल जग जाल जासु करतल तो ।
ता रिपु सों पर भूमि रारि रन जीवन मरन सुथल तो ॥
देखी मैं दसकंठ-सभा सब, मोतें कोउ न सबल तो ।
तुलसी अरि उर आनि एक अब एती गलानि न गलतो ।१३।

तौलौं, मातु ! आपु नीके रहिबो ।
जौलौं हौं ल्यावौं रघुबीरहिं, दिन दस और दुसह दुख सहिबो ॥
सोखि कै खेत कै, बाँधि सेतु करि, उतरिबो उदधि न बोहित चहिबो
प्रबल दनुज-दल दलि पल आध में, जीवत दुरित-दसानन गहिबो।
बैरि-बृंद-बिधवा-बनितनि को, देखिबो बारि-बिलोचन बहिबो।
सानुज सेन समेत स्वामिपद निरखि परम मुद मंगल लहिबो ।
लंक-दाह उर आनि मानिबो साँचु राम सेवक को कहिबो ।
तुलसी प्रभु सुर सुजस गाइहैं,मिटि जैहैं सबको सोचु दव दहिबो।१४।

कपि के चलत सिय को मनु गहबरि आयो ।
पुलक सिथिल भयो सरीर, नीर नयनन्हि छायो ॥

कहनचह्योसंदेस, नहिंकह्यो, पियकेजियकीजानि हृदय दुसह दुख दुरायो।
देखि दसा ब्याकुल हरीस, ग्रीषम के पथिक ज्यों धरनि तरनि-तायो।
मीचतें नीच लगी अमरता छलको न बल को निरखि थल परुष प्रेम पायो।
कै प्रबोध मातु प्रीति सों असीस दीन्हीं ह्वैहै तिहारोई मन भायो।
करुना कोप लाज भय भरो कियो गौन, मौन हीं चरन-कमल सीस नायो।
यह सनेह सरबस समौ तुलसीरसना रूखी ताही तें परत गायो ।१५।

राग बसंत

रघुपति ! देखो आयो हनूमंत। लंकेस-नगर खेल्यो बसंत।
श्रीराम-काजहित सुदिन सोधि। साथी प्रबोधि लाँघ्यो पयोधि।
सिय-पाँय पूजि आसिषा पाइ, फल अमिय सरिस खायो अघाइ।
कानन दलि होरी रचि बनाइ, हठि तेल बसन बालधि बँधाइ।
लिए ढोल चले सँग लोग लागि, बरजोर दई चहुँ ओर आगि।
आखत आहुति किए जातुधान, लखि लपट भभरि भागे बिमान।
नभतल कौतुक, लंका बिलाप, परिनाम पचहि पातकी पाप।
हनुमान-हाँक सुनि बरषि फूल, सुर बार बार बरनहिं लँगूर।
भरि भुवन सकल कल्यान-धूम, पुर जारि बारिनिधि बोरि लूम।
जानकी तोषि पोषेउ प्रताप, जय पवन-सुवन दलि दुअन-दाप।
नाचहिं कूदहिं कपि करि बिनोद, पीवत मधु मधुबन मगन मोद।
यों कहत लषन गहे पाँव आइ, मुनि सहित मुदित भेंट्यो उठाइ।
लगे सजन सेन भयो हिय हुलास, जय जय जसगावत तुलसिदास।१६

राग जयतश्री

सुनहु राम बिश्रामधाम ! हरि जनकसुता अति बिपति जैसे सहति।

हे सौमित्रि-बंधु करुनानिधि मन महँ, रटति प्रगट नहिं कहति ॥
निजपद-जलज बिलोकि सोकरत नयननि बारि रहत न एक छन ।
मनहुँ नील नीरज ससि-संभव रवि वियोग दोउ स्रवत सुधाकन ॥
बहु राक्षसी सहित तरु के तर तुम्हरे विरह निज जनम बिगोवति ।
मनहुँ दुष्ट इंद्रिय संकट महँ बुद्धि-विवेक-उदय मग जोवति ॥
सुनि कपि बचन बिचारि हृदय हरि अनपायनी सदा सो एक मन ।
तुलसिदास दुख-सुखातीतहरि सोच करत मानहुँ प्राकृत जन ।१७

राग केदारा

रघुकुल-तिलक वियोग तिहारे ।
मैं देखी जब जाइ जानकी मनहु विरह-मूरति मन मारे ॥
चित्र से नयन अरु गढ़े से चरन कर, मढ़े से स्रवन नहिं सुनति पुकारे ।
रसना रटति नाम, कर सिर चिर रहैं, नित निजपद-कमल निहारे ॥
दरसन-आस-लालसा मन महँ राखे प्रभु ध्यान प्रान-रखवारे ।
तुलसिदास पूजति त्रिजटा नीके रावरे गुन-गन-सुमन सँवारे ।१८

अतिहि अधिक दरसन की आरति ।
राम-बियोग असोक-बिटप तर सीय निमेष कलप सम टारति ।
बार बार बर बारिजलोचन भरि भरि बरत बारि उर ढारति ।
मनहुँ बिरह के सद्य घाय हिये लखि तकि तकि धरि धीरज तारति ।
तुलसिदास जद्यपि निसि बासर छिन छिन प्रभु मूरतिहि निहारति ।
मिटति न दुसह ताप तउ तनु की, यह बिचारि अंतरगति हारति ।१९

तुम्हरे बिरह भई गति जौन ।
चित दै सुनहु, राम करुनानिधि ! जानौं कछु पै सकौं कहि हौं न ।

लोचन-नीर कृपिन के धन ज्यों रहत निरंतर लोचनन-कोन ।
'हा धुनि'-खगी लाज-पिंजरी महँ राखि हिये बड़े बधिक हठि मौन ।
जेहि बाटिका बसति तहँ खग मृग तजि तजि भजे पुरातन भौन ।
स्वास-समीर भेंट भइ भोरेहुँ तेहि मग पगु न धस्यो तिहुँ पौन ।
तुलसिदास प्रभु ! दसा सीय की मुख करि कहत होति अति गौन ।
दीजै दरस दूरि कीजै दुख हौ तुम्ह आरत-आरति-दौन ।२०।

कपि के सुनि कल कोमल बैन ।
प्रेम पुलकि सब गात सिथिल भए, भरे सलिल सरसीरुह नैन ।
सिय-बियोग-सागर नागर मनु बूड़न लग्यो सहित चित चैन ।
लही नाव पवनज प्रसन्नता, बरबस तहाँ गह्यो गुन मैन ।
सकत न बूझि कुसल, बूझे बिन गिरा बिपुल व्याकुल उर ऐन ।
ज्यों कुलीन सुचि सुमति बियोगिनि सनमुख सहै बिरह सर पैन ।
धरि धरि धीर बीर कोसलपति किए जतन सके उत्तरु दै न ।
तुलसिदास प्रभु सखा अनुज सों सैनहिं कह्यौ चलहु सजि सैन ।२१।

राग मारू

जब रघुबीर पयानो कीन्हों ।
छुभित सिंधु, डगमगत महीधर, सजि सारँग कर लीन्हों ।
सुनि कठोर टंकोर घोर अति चौंके बिधि त्रिपुरारि ।
जटापटल ते चली सुरसरी सकत न संभु सँभारि ।
भए बिकल दिगपाल सकल, भय भरे भुवन दसचारि ।
खरभर लंक, ससंक दसानन, गर्भ स्रवहिं अरि-नारि ।
कटकटात भट भालु बिकट मरकट करि केहरि-नाद ।

कूदत करि रघुनाथ-सपथ उपरी-उपरा बदि बाद ।
गिरि-तरुधर नख मुख कराल रद कालहु करत बिषाद ।
चले दस दिसि रिस भरि, धरु धरु कहि, को बराक मनुजाद ?
पवन पंगु, पावक पतंग ससि दुरि गए, थके बिमान ।
जाचत सुर निमेष, सुरनायक नयन-भार अकुलान ।
गए पूरि सर धूरि, भूरि भय अग थल जलधि समान ।
नभ निसान हनुमान हाँक सुनि समुभत कोउ न अपान ।
दिग्गज कमठ कोल सहसानन धरत धरनि धरि धीर ।
बारहिं बार अमरषत करषत करकैं परीं सरीर ।
चली चमू, चहुँ ओर सोर, कछु बनै न बरने भीर ।
किलकिलात, कसमसत, कोलाहल होत नीरनिधि-तीर ।
जातुधानपति जानि कालबस मिले बिभीषन आइ ।
सरनागत-पालक कृपालु कियो तिलक, लियो अपनाइ ।
कौतुकहीं बारिधि बँधाइ उतरे सुबेल तट जाइ ।
तुलसिदास गढ़ देखि फिरे कपि प्रभु आगमन सुनाइ ।२२।

राग आसावरी

आए देखि दूत सुनि सोच सठ मन मैं ।
बाहर बजावैं गाल भालु कपि कालबस,
मोसे बीर सों चहत जीत्यो रारि रन मैं ।
राम छाम, लरिका लषन, बालि-बालकहि
घालि को गनत ? रीछ जल ज्यौं न घन मैं ।
काज को न कपिराज, कायर कपिसमाज,

मेरे अनुमान हनुमान हरि गन मैं।
समय सयानी मृदु बानी रानी कहै 'पिय !
पावक न होइ जातुधान-बेनु-बन मैं।
तुलसी जानकी दिए स्वामी सों सनेह किए
कुसल, नतरु सब ह्वैहै छार छन मैं ।२३।

आपनी आपनी भाँति सब काहू कही है।
मंदोदरी, महोदर, मालवान महामति,
राजनीति-पहुँच जहाँ लौं जाकी रही है।
महामद-अंध दसकंध न करत कान;
मीचु-बस नीच हठि कुगहनि गही है।
हँसि कहै सचिव 'सयाने मोसों यों कहत,
चहै मेरु उड़न बड़ी बयारि बही है।
भालु, नर, बानर अहार निसचरनि को,
सोऊ नृप-बालकनि माँगी धारि लही है।
देखो कालकौतुक पिपीलिकनि पंख लागो।
भाग मेरे लोगनि के भई चित-चही है।
तोसों न तिलोक आजु साहस समाज-साजु,
महाराज-आयसु भो जोई सोई सही है।
तुलसी प्रनाम कै विभीषन बिनती करै
'ख्याल, बेधे ताल, कपि केलि लंका दही है' ।२४।

दूसरो न देखतु साहिब सम रामै।
बेदऊ पुरान कबि कोबिद बिरद-रत,

जाको जस सुनत, गावत गुन ग्रामै।
माया, जीव, जग-जाल, सुभाउ, करमकाल,
सबको सासकु, सबमैं; सब जामैं।
बिधि से करनिहार, हरि से पालनिहार,
हर से हरनिहार जपैं जाके नामैं।
सोइ नरबेष जानि, जन की बिनती मानि,
मतो नाथ सोई जा तें भलो परिनामै।
सुभट-सिरोमनि कुठारपानि सारिखेहू
लखी औ लखाई इहाँ किए सुभसामैं।
बचन-बिभूषन बिभीषन-बचन सुनि
लागे दुख दूषन से दाहिनेउ बामैं।
तुलसी हुमुकि हिये हन्यो लात, भले तात
चल्यो सुरतरु ताकि तजि घोर घामैं।२५।

जाय माय पाँय परि कथा सो सुनाई है।
समाधान करति बिभीषन को बार बार,
"कहा भयो तात लात मारे, बड़ो भाई है।
साहिब पितु समान, जातुधान को तिलक,
ताके अपमान तेरी बड़िए बड़ाई है।
गरत गलानि जानि सनमानि सिख देति,
रोष किए दोष, सहें समुझें भलाई है।
इहाँ तें बिमुख भए, राम की सरन गए
भलो नेकु लोक राखे निपट निकाई है।

मातु पग सीस नाइ, तुलसी असीस पाइ,
चले भले सगुन कहत मन भाई है ।२६।
भाई को सो करौं डरौं कठिन कुफेरै ।
सुकृत-संकट पर्‌यो जात गलानिन्ह गर्‌यो,
'कृपानिधि को मिलौं पै मिलि कै कुबेरै' ।
जाइ गहे पाँय, धाइ धनद उठाइ भेंट्यो,
समाचार पाइ पोच सोचत सुमेरै ।
तहँई मिले महेस, दियो हित-उपदेस,
'राम की सरन जाहि, सुदिनु न हेरै ।
जाको नाम कुंभज कलेस-सिंधु सोखिबे को,
मेरो कह्यो मानि, तात ! बाँधै जिनि बेरै ।
तुलसी मुदित चले, पाए हैं सगुन भले,
रंक लूटिबे को मानों मनिगन-ढेरै ।२७।

राग केदारा

संकर सिख आसिष पाइकै ।
चले मनहिं मन कहत बिभीषन सीस महेसहि नाइकै ।
गए सोच, भए सगुन सुमंगल दस दिसि देत देखाइकै ।
सजल नयन, सानंद हृदय तनु प्रेम पुलक अधिकाइकै ।
अंतहु भाव भलो भाई को कियो अनभलो मनाइकै ।
भइ कूबर की लात बिधाता राखी बात बनाइकै ।
नाहित क्यों कुबेर घर मिलि हर हितु कहते चित लाइकै ।
जो सुनि सरन राम ताके मैं निज वामता बिहाइकै ।

अनायास अनुकूल सूलधर मग मुदमूल जनाइकै ।
कृपासिंधु सनमानि जानि जन दीन लियो अपनाइकै ।
स्वारथ परमारथ करतलगत स्रमपथ गयो सिराइकै ।
सपने कै सौतुक सुख-सस सुर सींचत देत निराइकै ।
गुरु गौरीस साँइ सीतापति हित हनुमानहिं जाइकै ।
मिलिहौं मोहिं कहा कीबे अब अभिमत अवधि अघाइकै ।
मरतो कहाँ जाइ को जानै लटि लालची ललाइकै ।
तुलसिदास भजिहौं रघुबीरहि अभय-निसान बजाइकै ।२८।

पदपद्म गरीबनिवाज के ।
देखिहौं जाइ पाइ लोचन-फल हित सुर साधु समाज के ।
गई-बहोर, ओर निरबाहक, साजक बिगरे साज के ।
सबरी सुखद, गीध गतिदायक, समनसोक कपिराज के ।
नाहिंन मोहिं और कतहूँ कछु जैसे काग जहाज के ।
आयो सरन सुखद पदपंकज चोंथे रावन बाज के ।
आरतिहरन सरन समरथ सब दिन अपने की लाज के ।
तुलसी पाहि कहत नत-पालक मोहुँ से निपट निकाज के ।२९।

महाराज राम पहँ जाउँगो ।
सुख स्वारथ परिहरि करिहौं सोइ ज्यों साहिबहिं सुहाउँगो ।
सरनागत सुनि बेगि बोलिहैं, हौं निपटहिं सकुचाउँगो ।
राम गरीबनिवाज निवाजिहैं, जानिहैं ठाकुर ठाउँ गो ।
धरिहैं नाथ हाथ माथे एहि तें केहि लाभ अघाउँगो ।
सपनो सो अपनो न कछू लखि लघु लालच न लोभाउँगो ।

कहिहौं बलि, रोटिहा रावरो बिनु मोलही बिकाउँगो ।
तुलसी पट ऊतरे ओढ़िहौं, उबरी जूठनि खाउँगो ।३०।

आइ सचिव बिभीषन के कही ।
कृपासिंधु दसकंधबंधु लघु चरन-सरन आयो सही ।
बिषम-बिषाद-बारिनिधि बूड़त थाह कपीस कथा लही ।
गए दुख दोष देखि पदपंकज अब न साध एकौ रही ।
सिथिल सनेह सराहत नखसिख नीक निकाई निरबही ।
तुलसी मुदित दूत भयो मानहुँ अमिय-लाहु माँगत मही ।३१।

बिनती सुनि प्रभु प्रमुदित भए ।
रीछराज, कपिराज, नील, नल बोलि बालिनंदन लए ।
बूझिए कहा ? रजाइ पाइ नय धरम सहित ऊतर दए ।
बली बंधु ताको जेहिं बिमोह-बस बैर-बीज बरबस बए ।
बाँह-पगार द्वार तेरे तैं सभय न कबहूँ फिरि गए ।
तुलसी असरन-सरन स्वामि के बिरद बिराजत नित नए ।३२।

हिय बिहँसि कहत हनुमान सों ।
सुमति साधु सुचि सुहृद बिभीषन, बूझि परत अनुमान सों ।
'हौं बलि जाउँ, और को जानै ?' कही कपि कृपानिधान सों ।
छली न होइ स्वामि सनमुख ज्यों तिमिर सातहय-जान सों ।
खोटो खरो सभीत पालिए सो सनेह सनमान सों ।
तुलसी प्रभु कीबो जो भलो सोइ बूझि सरासन बान सों ।३३।

साँचेहु बिभीषन आइहै ?
बूझत बिहँसि कृपालु, लषन सुनि कहत सकुचि सिर नाइ है ।

ऐहै कहा, नाथ ! आयो ह्याँ, क्यों कहि जाति बनाइ है ।
रावन-रिपुहि राखि रघुबर बिनु को त्रिभुवन पति पाइहै ।
प्रभु प्रसन्न सब सभा सराहति दूत-बचन मन भाइ है ।
तुलसी बोलिये बेगि लषन सों भइ महराज रजाइ है ।३४।

चले लेन लषन हनुमान हैं ।
मिले मुदित बूझि कुसल परसपर सकुचत करि सनमान हैं ।
भयो रजायसु पाँउ धारिए, बोलत कृपानिधान हैं ।
दूरि तें दीनबंधु देखे जनु देत अभय बरदान हैं ।
सील सहस हिमभानु तेज सत कोटि भानुहूँ के भानु हैं ।
भगतनि को हित कोटि मातुपितु, अरिन्ह को कोटि कृसानु हैं ।
जन गुन रज गिरि गनि सकुचत निज गुन गिरि रज परमानु हैं ।
बाँह-पगारु बोल को अबिचल, बेद करत गुनगान हैं ।
चारु चाप तूनीर तामरस करनि सुधारत बान हैं ।
चरचा चलति बिभीषन की सोइ सुनत सुचित दै कान हैं ।
हरषत सुर बरषत प्रसून सुभ सगुन कहत कल्यान हैं ।
तुलसी ते कृतकृत्य जे सुमिरत समय सुहावनो ध्यान हैं ।३५।

रामहिं करत प्रनाम निहारिकै ।
उठे उमँगि आनंद-प्रेम-परिपूरन बिरद बिचारिकै ।
भयो बिदेह बिभीषन उत, इत प्रभु अपनपौ बिसारिकै ।
भली भाँति भावते भरत ज्यों भेंट्यो भुजा पसारिकै ।
सादर सबहिं मिलाइ समाजहिं निपट निकट बैठारिकै ।
बूझत छेम कुसल सप्रेम अपनाइ भरोसे भारिकै ।

नाथ ! कुसल कल्यान सुमंगल बिधि सुख सकल सुधारिकै ।
देत लेत जे नाम रावरो बिनय करत मुख चारि कै ।
जो मूरति सपने न बिलोकत मुनि महेस मन मारिकै ।
तुलसी तेहि हौं लियो अंक भरि, कहत कछू न सँवारिकै ।३६।

करुनाकर की करुना भई ।
मिटी मीचु, लहि लंक संक गइ, काहू सों न खुनिस खई ।
दसमुख तज्यो दूध-माखो ज्यों आपु काढ़ि साढ़ी लई ।
भव-भूषन सोइ कियो बिभीषन मुद-मंगल-महिमामई ।
बिधि हरि हर मुनि सिद्ध सराहत, मुदित देव दुंदुभी दई ।
बारहिं बार सुमन बरषत, हिय हरषत कहि जै जै जई ।
कौसिक सिला जनक संकट हरि भृगुपति की टारी टई ।
खग मृग सबर निसाचर सबकी पूँजी बिनु बाढ़ी सई ।
जुग जुग कोटि कोटि करतब करनी न कछू बरनी नई ।
राम-भजन-महिमा हुलसी हिय तुलसीहू की बनि गई ।३७।

मंजुल मूरति मंगलमई ।
भयो बिसोक बिलोकि बिभीषन नेह देह सुधिसींव गई ।
उठि दाहिनी ओर तें सनमुख सुखद माँगि बैठक लई ।
नखसिख निरखि निरखि सुख पावत, भावत कछु कछु और भई ।
बार कोटि सिर काटि साटि लटि रावन संकर पै लई ।
सोइ लंका लखि अतिथि अनवसर राम तृनासन ज्यों दई ।
प्रीति-प्रतीति-रीति-सोभासरि थाहत जहँ जहँ तहँ घई ।
बाहु-बली, बानैत बोल को, बीर बिस्वबिजयी जई ।

को दयालु दूसरो दुनी जेहि जरनि दीन-हिय की हई ? ।
तुलसी काको नाम जपत जग जगती जामति बिनु बई ।३८।

सब भाँति बिभीषन की बनी ।
कियो कृपालु अभय कालहु तें गइ संसृति साँसति घनी ।
सखा लषन हनुमान संभु गुरु धनी राम कोसलधनी ।
हिय ही और और कीन्हीं बिधि, रामकृपा औरै ठनी ।
कलुष-कलंक कलेस-कोस भयो जो पद पाय रावन रनी ।
सोइ पद पाय बिभीषन भो भव-भूषन दलि दूषन-अनी ।
बाँह-पगार उदार-सिरोमनि नत-पालक पावन-पनी ।
सुमन बरषि रघुबर-गुन बरनत हरषि देव दुंदुभी हनी ।
रंक-निवाज रंक राजा किए, गए गरब गरि गरि गनी ।
राम-प्रनाम महा महिमा-खनि-सकल सुमंगलमनि जनी ।
होय भलो ऐसे ही अजहुँ गये राम-सरन परिहरि मनी ।
भुजा उठाइ साखि संकर करि कसम खाइ तुलसी भनी ।३९।

कहो क्यों न बिभीषन की बनै ?
गयो छाँड़ि छल सरन राम की जो फल चारि चार्‌यौं जनै ।
मंगलमूल प्रनाम जासु जग मूल अमंगल के खनै ।
तेहि रघुनाथ हाथ माथे दियो, को ताकी महिमा भनै ? ।
नाम-प्रताप पतित-पावन किए जे न अघाने अघ अनै ।
कोउ उलटो कोउ सूधो जपि भए राजहंस बायस-तनै ।
हुतो ललात कृसगात खात खरि मोद पाइ कोदो-कनै ।
सो तुलसी चातक भयो जाँचत राम स्याम सुंदर घनै ।४०।

अति भाग बिभीषन के भले।
एक प्रनाम प्रसन्न राम भए दुरित दोष दारिद दले।
रावन कुंभकरन बर माँगत सिव बिरंचि बाचा छले।
राम-दरस पायो अबिचल पद, सुदिन सगुन नीके चले।
मिलनि बिलोकि स्वामि सेवक की उकठे तरु फूले फले।
तुलसी सुनि सनमान बंधु को दसकंधर हँसि हिये जले।४१।

गये राम सरन सबको भलो।
गनी-गरीब, बड़ो-छोटो, बुध-मूढ़, हीनबल-अतिबली।
पंगु अंध निरगुनी निसंबल जो न लहै जाँचे जलो।
सो निबह्यो नीके जो जनमि जग राम-राजमारग चलो।
नाम-प्रताप-दिवाकर-कर खर गरत तुहिन ज्यों कलिमलो।
सुत हित नाम लेत भवनिधि तरि गयो अजामिल सो खलो।
प्रभुपद-प्रेम प्रनाम-कामतरु सद्य बिभीषन को फलो।
तुलसी सुमिरत नाम सबनि को मंगलमय नभ जल थलो।

सुजस सुनि स्रवन हौं नाथ ! आयो सरन।
उपल केवट गीध सबरी संसृत-समन,
सोक स्रमसीव सुग्रीव आरतिहरन।
राम राजीव-लोचन बिमोचन-बिपति,
स्याम नव तामरस-दाम, बारिद-बरन।
लसत जटजूट सिर चारु मुनिचीर कटि,
धीर रघुबीर तूनीर-सर-धनु-धरन।
जातुधानेस भ्राता बिभीषन नाम,

बंधु अपमान गुरु ग्लानि चाहत गरन ।
पतितपावन प्रनतपाल करुनासिंधु !
राखिए मोहिं सौमित्रि-सेवित-चरन ।
दीनता प्रीति संकलित मृदुबचन सुनि,
पुलकि तन प्रेम, जल नयन लागे भरन ।
बोलि लंकेस कहि अंक भरि भेंटि प्रभु,
तिलक दियो दीन-दुख-दोष-दारिद-दरन ।
रातिचर-जाति आराति सब भाँति गत,
कियो सो कल्यान-भाजन सुमंगल करन ।
दास तुलसी सदय हृदय रघुबंसमनि,
पाहि कहे काहि कीन्हों न तारनतरन ? ।४३।

दीन-हित बिरद पुराननि गायो ।
आरत-बंधु, कृपालु, मृदुल-चित जानि सरन हौं आयो ।
तुम्हरे रिपु को अनुज बिभीषन, बंस निसाचर जायो ।
सुनि गुन सील सुभाउ नाथ को मैं चरननि चितु लायो ।
जानत प्रभु दुख सुख दासनि को तातें कहि न सुनायो ।
करि करुना भरि नयन बिलोकहु तब जानौं अपनायो ।
बचन बिनीत सुनत रघुनायक हँसि करि निकट बुलायो ।
भेट्यो हरि भरि अंक भरत ज्यौं लंकापति मन भायो ।
करपंकज सिर परसि अभय कियो, जन पर हेतु दिखायो ।
तुलसिदास रघुबीर भजन करि को न परमपद पायो ? ।४४।

राग धनाश्री

सत्य कहौं मेरो सहज सुभाउ ।

सुनहु सखा कपिपति लंकापति तुम्हसन कौन दुराउ ।
सब बिधि हीन दीन अति जड़मति जाको कतहुँ न ठाउँ ।
आयो सरन भजौं, न तजौं तिहि, यह जानत ऋषिराउ ।
जिन्हके हौं हित सब प्रकार चित नाहिंन और उपाउ ।
तिन्हहिं लागि धरि देह करौं सब, डरौं न सुजस नसाउ ।
पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं सकल सभा पतिआउ ।
नहिं कोऊ प्रिय मोहिं दास सम कपट प्रीति बहि जाउ ।
सुनि रघुपति के बचन बिभीषन प्रेम मगन मन चाउ ।
तुलसिदास तजि आस त्रास सब ऐसे प्रभु कहँ गाउ ।४५।

नाहिन भजिबे जोग बियो ।
श्रीरघुबीर समान आन को पूरन कृपा हियो ।
कहहु कौन सुर सिला तारि पुनि केवट मीत कियो ? ।
कौने गीध अधम को पितु ज्यों निज कर पिंड दियो ? ।
कौन देव सबरी के फल करि भोजन सलिल पियो ? ।
बालित्रास-बारिध बूड़त कपि केहि गहि बाँह लियो ? ।
भजन प्रभाउ बिभीषन भाष्यौ सुनि कपि-कटक जियो ।
तुलसिदास को प्रभु कोसलपति सब प्रकार बरियो ।४६।

राग जयतश्री

कब देखौंगी नयन वह मधुर मूरति ?
राजिवदल-नयन, कोमल-कृपा अयन, मयननि बहु छबि अंगनि दूरति।
सिरसि जटा-कलाप पानि सायक चाप उरसि रुचिर बनमाल लूरति।
तुलसिदास रघुबीरकी सोभा सुमिरि, भई है मगन नहि तनकी सूरति४७

राग केदारा

कहु कबहुँ देखिहौं आली ! आरज-सुवन ।
सानुज सुभग-तनु, जब तें बिछुरे बन, तब तें दव सी लगी तीनहूँ भुवन ।
मूरति सूरति किये प्रगट प्रीतम हिये, मन के करन चाहैं चरन छुवन ।
चित चढ़ि गो बियोग दसा न कहिबे जोग, पुलकगात, लागे लोचन चुवन
तुलसी त्रिजटा जानी सिय अति अकुलानी मृदुबानी कह्यौ ऐहैं दवन-दुवन
तमीचर-तमहारी सुरकंजसुखकारी, रविकुल-रवि अब चाहत उवन ।४८

अबलौं मैं तोसों न कहे री ।
सुन त्रिजटा ! प्रिय प्राननाथ बिनु बासर निसि दुख दुसह सहे री ।
बिरह बिषम बिष-बेलि बढ़ी उर, ते सुख सकल सुभाय दहे री ।
सोइ सींचिबे लागि मनसिज के रहँट नयन नित रहत नहे री ।
सर-सरीर सूखे प्रान बारिचर जीवन आस तजि चलन्न चहे री ।
तैं प्रभु-सुजस-सुधा सीतल करि राखे तदपि न तृप्ति लहे री ।
रिपु-रिस घोर नदी बिबेक बल, धीर सहित हुते जात बहे री ।
दै मुद्रिका-टेक तेहि औसर, सुचि समीरसुत पैरि गहे री ।
तुलसिदास सब सोच पोच मृग मन कानन भरि पूरि रहे री ।
अब सखि सिय संदेह परिहरु हिय आइ गए दोउ बीर अहेरी ।४९।

राग बिलावल

सो दिन सोने को कहु कब ऐहै ?
जा दिन बंध्यो सिंधु त्रिजटा सुनु तू संभ्रम आनि मोहिं सुनैहै ।
बिस्वदवन सुर-साधु-सतावन रावन कियो आपनो पैहै ।
कनक-पुरी भयो भूप बिभीषन, बिबुध-समाज बिलोकन धैहै ।

दिव्य दुंदुभी, प्रसंसिहैं मुनिगन, नभतल विमल बिमाननि छ्वैहैं ।
बरषिहैं कुसुम भानुकुल-मनि पर, तब मोको पवनपूत लै जैहैं ।
अनुज सहित सोभिहैं कपिन महँ, तनु-छबि कोटि मनोज हितैहैं ।
इन नयनन्हि यहि भाँति प्रानपति, निरखि हृदय आनँद न समैहैं ।
बहुरो सदल, सनाथ, सलछिमन, कुसल कुसल बिधि अवध देखैहैं ।
गुरु, पुर लोग, सास, दोउ देवर, मिलत दुसह उर तपनि बुतैहैं ।
मंगल-कलस, बधावने घर घर, पैहैं माँगने जो जेहि भैहैं ।
बिजय राम राजाधिराज को, तुलसिदास पावन जस गैहैं । ५० ।

सिय ! धीरज धरिये राघौ अब ऐहैं ।
पवनपूत पै पाइ तिहारी सुधि सहज कृपालु बिलंब न लैहैं ।
सेन साजि कपि भालु काल सम कौतुक ही पाथोधि बँधैहैं ।
घेराइ पै देखिबो लंकगढ़ बिकल जातुधानी पछितैहैं ।
रावन करि परिवार अगमनो जमपुर जात बहुत सकुचैहैं ।
तिलक सारि अपनाय बिभीषन अभय-बाँह दै अमर बसैहैं ।
जय धुनि मुनि बरषिहैं सुमन सुर, ब्योम बिमान निसान बजैहैं ।
बंधु समेत प्रानबल्लभपद परसि सकल परिताप नसैहैं ।
राम बाम दिसि देखि तुमहिं सब नयनवंत लोचन फल पैहैं ।
तुम अति हित चितइहौ नाथ-तनु, बार बार प्रभु तुमहिं चितैहैं ।
यह सोभा सुख समय बिलोकत काहू तो पलकैं नहिं लैहैं ।
कपिकुल लखन सुजस जय जानकि सहित कुसल निज नगर सिधैहैं ।
प्रेम पुलकि आनंद मुदित मन तुलसिदास कल कीरति गैहैं । ५१ ।

लंका कांड

राग मारू

मानु अजहूँ सिष परिहरि क्रोधु ।
पिय पूरो आयो अब काहि कहु करि रघुबीर-बिरोधु ।
जेहि ताड़ुका सुबाहु मारि मख राखि जनायो आपु ।
कौतुक ही मारीच-नीचमिस प्रगट्यौ बिसिष-प्रतापु ।
सकल भूप बल गरब-सहित तोस्यौ कठोर सिवचापु ।
ब्याहो जेहि जानकी जीति जग हस्यौ परसुधर-दापु ।
कपट काक साँसति प्रसाद करि बिनु स्रम बध्यो बिराधु ।
खर दूषन त्रिसिरा कबंध हति कियो सुखी सुर साधु ।
एकहि बान बालि मास्यो जेहि जो बल-उदधि अगाधु ।
कहु धौं कंत कुसल बीती केहिं किये राम-अपराधु ।
लाँघि न सके लोक-बिजयी तुम जासु अनुज-कृत-रेषु ।
उतरि सिंधु जास्यो प्रचारि पुर जाको दूत बिसेषु ।
कृपासिंधु खलबन-कृसानु सम, जस गावत स्रुति सेषु ।
सोइ बिरुदैत बीर कोसलपति नाथ समुझि जिय देषु ।
मुनि पुलस्त्य के जस-मयंक महँ कत कलंक हठि होहि ।
और प्रकार उबार नहीं कहुँ मैं देख्यों जगु जोहि ।
चलु मिलु बेगि कुसल सादर सिय सहित अग्र करि मोहिं ।
तुलसिदास प्रभु सरन सबद सुनि अभय करैंगे तोहिं । १ ।

राग कान्हरा

तू दसकंठ भले कुल जायो ।
तामहँ सिव-सेवा बिरंचिबर, भुजबल बिपुल जगत जस पायो ।
खर, दूषन, त्रिसिरा, कबंध रिपु जेहि बाली जमलोक पठायो ।
ताको दूत पुनीत चरित हरि सुभ संदेस कहन हौं आयो ।
श्रीमद नृप-अभिमान मोहबस जानत अनजानत हरि लायो ।
तजि व्यलीक भजु कारुनीक प्रभु दै जानकिहि सुनहि समझायो ।
जातें तव हित होइ कुसल कुल अचल राज चलिहै न चलायो ।
नाहिंत रामप्रताप-अनल महँ ह्वै पतंग परिहै सठ धायो ।
जद्यपि अंगद नीति परम हित कह्यौ तथापि न कछु मन भायो ।
तुलसिदास सुनि बचन क्रोध अति पावक जरत मनहुँ घृत नायो ।२।
तैं मेरो मरम कछू नहिं पायो ।
रे कपि कुटिल ढीठ पसु पाँवर ! मोहिं दास ज्यों डाटन आयो ।
भ्राता कुंभकरन रिपुघातक, सुत सुरपतिहि बंदि कर ल्यायो ।
निज भुजबल अति अतुल कहौं क्यों कंदुक लौं कैलास उठायो ।
सुर नर असुर नाग खग किन्नर सकल करत मेरो मन भायो ।
निसिचर रुचिर अहार मनुज-तनु ताको जस खल मोहि सुनायो ।
कहा भयो बानर सहाय मिलि करि उपाय जो सिंधु बँधायो ।
जो तरिहै भुज बीस घोरनिधि ऐसो को त्रिभुवन में जायो ?
सुनि दससीस-बचन कपि-कुंजर बिहँसि ईसमायहि सिर नायो ।
तुलसिदास लंकेस कालबस गनत न कोटि जतन समझायो ।३।
सुनु खल मैं तोहिं बहुत बुझायो ।

एते मान सठ भयो मोहबस जानतहूँ चाहत बिष खायो ।
जगत-बिदित अति बीर बालि-बल जानत हौ किधौं अब बिसरायो।
बिनु प्रयास सोउ हत्यो एक सर सरनागत पर प्रेम देखायो ।
पावहुगे निज करम जनित फल भजे ठौर हठि बैर बढ़ायो ।
बानर भालु चपेट लपेटनि मारत तब ह्वैहै पछितायो ।
हौं ही दसन तोरिबे लायक कहा करौं जी न आयसु पायो ।
अब रघुबीर-बान-बिदलित-उर सोवहिगो रनभूमि सुहायो ।
अबिचल राज्य बिभीषन को सब जेहि रघुनाथ-चरन चित लायो ।
तुलसिदास यहि भाँति बचन कहि गरजत चल्यो बालिनृप-जायो ।४।

राग केदारा

राम लषन उर लाय लये हैं ।
भरे नीर राजीवनयन सब अँग परिताप तये हैं ।।
कहत ससोक बिलोकि बंधु-मुख बचन प्रीति गुथये हैं ।
सेवक सखा भगति भायप गुन चाहत अब अथये हैं ।।
निज कीरति करतूति, तात ! तुम सुकृति सकल जये हैं ।
मैं तुम्ह बिनु तनु राखि लोक अपने अपलोक लये हैं ।।
मेरे पन की लाज इहाँ लौं हठि प्रिय प्रान दये हैं ।
लागति साँगि बिभीषन-ही पर सीपर आपु भये हैं ।।
सुनि प्रभु-बचन भालु कपि-गन सुर सोच सुखाइ गये हैं ।
तुलसी आइ पवनसुत-बिधि मानो फिरि निरमये नये हैं ।। ५ ।।

राग सोरठ

मोपै तौ न कछू ह्वै आई ।

ओर निबाहि भली बिधि भायप चल्यौ लषन सो भाई ॥
पुर पितु मातु सकल सुख परिहरि जेहि बन-बिपति बँटाई ।
ता सँग हौं सुरलोक सोक तजि सक्यौं न प्रान पठाई ॥
जानत हौं या उर कठोर तें कुलिस कठिनता पाई ।
सुमिरि सनेह सुमित्रा-सुत को दरकि दरार न जाई ॥
तात-मरन तिय-हरन गीध-बध भुज दाहिनी गँवाई ।
तुलसी मैं सब भाँति आपने कुलहि कालिमा लाई । ६ ।

मेरो सब पुरुषारथ थाको !
बिपति-बँटावन बंधु-बाहु बिनु करौं भरोसो काको ?
सुनु सुग्रीव साँचेहूँ मोपर फेर्‌यो बदन बिधाता ।
ऐसे समय समर-संकट हौं तज्यो लषन सो भ्राता ॥
गिरि कानन जैहैं साखामृग हौं पुनि अनुज-सँघाती ।
ह्वैहै कहा बिभीषन की गति, रही सोच भरि छाती ॥
तुलसी सुनि प्रभु-बचन भालु-कपि सकल बिकल हिय हारे ।
जामवंत हनुमंत बोलि तब औसर जानि प्रचारे । ७ ।

राग मारू

जो हौं अब अनुसासन पावौं ।
तौ चंद्रमहिं निचोरि चैल ज्यों आनि सुधा सिर नावौं ॥
कै पाताल दलौं ब्यालावलि अमृत-कुंड महि लावौं ।
भेदि भुवन करि भानु बाहिरो तुरत राहु दै तावौं ॥
बिबुध-बैद बरबस आनौं धरि तौ प्रभु अनुग कहावौं ।
पटकौं मीच नीच मूषक ज्यों सबहि को पापु बहावौं ॥

तुम्हरिहि कृपा प्रताप तिहारेहि नेकु बिलंब न लावौं ।
दीजै सोइ आयसु तुलसीप्रभु जेहि तुम्हरे मन भावौं । ८ ।

सुनि हनुमंत-बचन रघुबीर ।
सत्य समीर-सुवन सब लायक कह्यो राम धरि धीर ॥
चहिए बैद, ईस-आयसु धरि-सीस कीस बलऐन ।
आन्यो सदन सहित सोवत ही जौ लौं पलक परै न ॥
जियै कुँवर निसि मिलै मूलिका, कीन्हीं बिनय सुषेन ।
उठ्यो कपीस सुमिरि सीतापति चल्यो सजीवनि लेन ॥
कालनेमि दलि बेगि बिलोक्यौ द्रोनाचल जिय जानि ।
देखी दिव्य ओषधी जहँ तहँ जरी न परि पहिचानि ॥
लियो उठाय कुधर कंदुक ज्यों, बेग न जाइ बखानि ।
ज्यों धाए गजराज उधारन सपदि सुदरसनपानि ॥
आनि पहार जोहारे प्रभु, कियो बैदराज उपचार ।
करुनासिंधु बंधु भेंट्यो, मिटि गयो सकल दुख भार ॥
मुदित भालु-कपि-कटक लह्यो जनु समर-पयोनिधि पार ।
बहुरि ठौरही राखि महीधर आयो पवनकुमार ॥
सेन सहित सेवकहि सराहत पुनि पुनि राम सुजान ।
बरषि सुमन हिय हरषि प्रसंसत बिबुध बजाइ निसान ॥
तुलसिदास सुधि पाइ निसाचर भए मनहुँ बिनु प्रान ।
परी भोरही रोर लंकगढ़, दई हाँक हनुमान । ९ ।

राग केदारा

कौतुक ही कपि कुधर लियो है ।

चल्यो नभ नाइ माथ रघुनाथहि, सरिस न बेग बियो है ।
देख्यो जात जानि निसिचर बिनु फर सर हयो हियो है ।
पस्यो कहि राम, पवन राख्यो गिरि पुर तेहि तेज पियो है ।
जाइ भरत भरि अंक भेंटि निज जीवन-दान दियो है ।
दुख लघु लषन मरम-घायल सुनि, सुख बड़ो कीस जियो है ।
आयसु इतहि स्वामि-संकट उत, परत न कछू कियो है ।
तुलसिदास बिहस्यो अकास सो कैसेकै जात सियो है ।१०।

भरत सत्रुसूदन बिलोकि कपि चकित भयो है ।
राम लषन रन जीति अवध आए, कैधौं मोहिं भ्रम, कैधौं काहू कपट ठयो है
प्रेम पुलकि पहचानि कै पदपदुम नयो है ।
कह्यो न परत जेहि भाँति दुहूँ भाइन सनेह सों सो उर लाय लयो है ।
समाचार कहि गहरु भो, तेहि ताप तयो है ।
कुधर सहित चढ़ौ बिसिष, बेगि पठवौं, सुनि हरिहिय गरब गूढ़ उपयो है
तीर तें उतरि जस कह्यो चहै, गुनगननि जयो है ।
धनि भरत ! धनि भरत ! करत भयो मगन मौन रह्यो मन अनुराग रयो है
यह जलनिधि खन्यो, मथ्यो, लँघ्यो, बाँध्यो, अँचयो है ।
तुलसिदास रघुबीर-बंधु-महिमा को सिंधु तरि को कवि पार गयो है? ११

होतो नहिं जो जग जनम भरत को ।
तौं कपि कहत कृपान-धार-मग चलि आचरत बरत को ?
धीरज-धरम-धरनि धर-धुरहू तें गुरु धुर धरनि धरत को ?
सब सदगुन सनमानि आनि उर, अघ औगुन निदरत को ?
सिवहु न सुगम सनेह रामपद सुजननि सुलभ करत को ?

सृजि निज जस-सुरतरु तुलसी कह अभिमत फरनि फरत को ?।१२।

सुनि रन घायल लषन परे हैं।
स्वामि-काज संग्राम सुभट सों लोहे ललकारि लरे हैं।
सुवन-सोक संतोष सुमित्रहि रघुपति-भगति बरे हैं।
छिन छिन गात सुखात छिनहि छिन हुलसत होत हरे हैं।
कपि सों कहति सुभाय अंब के अंबक अंबु भरे हैं।
रघुनंदन बिनु बंधु कुअवसर जद्यपि धनु दुसरे हैं।
'तात! जाहु कपि सँग' रिपुसूदन उठि कर जोरि खरे हैं।
प्रमुदित पुलकि पैतँ पूरे जनु बिधिबस सुढर ढरे हैं।
अंब-अनुज-गति लखि पवनज भरतादि गलानि गरे हैं।
तुलसी सब समुझाइ मातु तेहि समय सचेत करे हैं।१३।

बिनय सुनाइबी परि पाय।
कहौं कहा कपीस तुम्ह सुचि सुमति सुहृद सुभाय।
स्वामि-संकट-हेतु हौं, जड़ जननि जनम्यो जाय।
समौ पाइ कहाइ सेवक घट्यो तौ न सहाय।
कहत सिथिल सनेह भो जनु धीर घायल घाय।
भरत-गति लखि मातु सब रहि ज्यों गुड़ी बिनु बाय।
भेंट कहि कहिबो, कह्यो यों कठिन-मानस माय।
"लाल! लोने लषन-सहित सुललित लागत नाँय"।
देखि बंधु-सनेह अंब-सुभाउ, लषन कुठाय।
तपत तुलसी तरनि त्रासकु एहि नये तिहुँ ताय।१४।

हृदय-घाउ मेरे, पीर रघुबीरै ।
पाइ सजीवन जागि कहत यों प्रेमपुलकि बिसराय सरीरै ।
मोहिं कहा बूझत पुनि पुनि जैसे पाठ अरथ चरचा कीरै ।
सोभा सुख छति लाहु भूप कहँ, केवल कांति मोल हीरै ।
तुलसी सुनि सौमित्रि-बचन सब धरि न सकत धीरौ धीरै ।
उपमा राम-लषन की प्रीति को क्यौं दीजै खीरै-नीरै ।१५।

राग कान्हरा

राजत राम काम-सत-सुंदर ।
रिपु रन जीति अनुज-सँग सोभित, फेरत चाप-बिसिष बनरुह-कर ।
स्याम सरीर रुचिर स्रमसीकर, सोनित-कन बिच बीच मनोहर ।
जनु खद्योत-निकर हरिहित-गन भ्राजत मरकत-सैल-सिखर पर ।
घायल बीर बिराजत चहुँ दिसि, हरषित सकल ऋच्छ अरु बनचर ।
कुसुमित किंसुक-तरु-समूह महँ तरुन तमाल बिसाल बिटप बर ।
राजिव-नयन बिलोकि कृपा करि किए अभय मुनि नाग बिबुध नर ।
तुलसिदास यह रूप अनूपम हिय सरोज बसि दुसह बिपतिहर ।१६।

राग आसावरी

अवधि आजु किधौं औरो दिन द्वै हैं ।
चढ़ि धौरहर बिलोकि दषिन दिसि बूझ धौं पथिक कहाँ ते आए वै हैं ।
बहुरि बिचारि हारि हिय सोचति पुलकिगात लागे लोचन च्वै हैं ।
निज बासरनि बरष पुरवैगो बिधि मेरे तहाँ करम कठिन कृत कै हैं ।
बन रघुबीर, मातु गृह जीवति, निलज प्रान सुनि सुनि सुख स्वैहैं ।
तुलसिदास मोसी कठोर-चित कुलिससाल-भंजनि को ह्वैहैं ।१७।

आली ! अब राम-लषन कित ह्वै हैं ।
चित्रकूट तज्यौ तब तें न लही सुधि बधू-समेत कुसल सुत द्वै हैं ।
बारि बयारि बिषम हिम आतप सहि बिनु बसन भूमितल स्वै हैं ।
कंद मूल फल फूल असन बन, भोजन समय मिलत कैसे वै हैं ।
जिन्हहिं बिलोकि सोचिहैं लता द्रुम खग मृग मुनि लोचन जल च्वै हैं ।
तुलसिदास तिन्हकी जननी हौं, मो सी निठुर चित औरो कहुँ ह्वै हैं ।

राग सोरठ

बैठी सगुन मनावति माता ।
कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुरि बाता ।
दूध - भात की दोनी दैहौं सोने चोंच मढ़ैहौं ।
जब सिय-सहित बिलोकि नयन भरि राम-लषन उर लैहौं ।
अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी ।
गनक बोलाइ पाँय परि पूछति प्रेम-मगन मृदु बानी ।
तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो ।
प्रभु-आगमन सुनत तुलसी मनो मीन मरत जल पायो ।१९।

राग गौरी

छेमकरी बलि बोलि सुबानी ।
कुसल छेम सिय राम लषन कब ऐहैं, अंब ? अवध रजधानी ।
ससिमुखि, कुंकुम-बरनि, सुलोचनि, मोचनि-सोचनि बेद बखानी ।
देवि ! दया करि देहि दरसफल जोरि पानि बिनवहिं सब रानी ।
सुनि सनेहमय बचन निकट ह्वै मंजुल मंडल कै मड़रानी ।
सुभ मंगल आनंद गगन-धुनि अकनि अकनि उर जरनि जुड़ानी ।

फरकन लगे सुअंग बिदिसि दिसि, मन प्रसन्न दुख-दसा सिरानी ।
करहिं प्रनाम सप्रेम पुलकि तनु मानि बिबिध बलि सगुन सयानी ।
तेहि अवसर हनुमान भरत सों कही सकल कल्यान-कहानी ।
तुलसिदास सोइ चाह सजीवनि बिषम बियोगव्यथा बड़ि भानी ।२०

राग धनाश्री

सुनियत सागरसेतु बँधायो ।
कोसलपति की कुसल सकल सुधि कोउ इक दूत भरत पहँ ल्यायो ॥
बध्यो बिराध त्रिसिर खर दूषन, सूर्पनखा को रूप नसायो ।
हति कबंध, बल-अंध बालि दलि कृपासिंधु सुग्रीव बसायो ॥
सरनागत अपनाइ बिभीषन रावन सकुल समूल बहायो ।
बिबुध-समाज निवाजि बाँह दै बंदिछोर बर बिरद कहायो ॥
एक एक सों समाचार सुनि नगरलोग जहँ तहँ सब धायो ।
घन-धुनि अकनि मुदित मयूर ज्यों बूड़त जलधि पार सो पायो ॥
'अवधि आजु', यों कहत परसपर बेगि बिमान निकट पुर आयो ।
उतरि अनुज अनुगनि समेत प्रभु गुरु द्विजगन सिर नायो ।
जो जेहि जोग राम तेहि बिधि मिलि सबके मन अति मोद बढ़ायो ।
भेंटी मातु, भरत, भरतानुज, क्यों कहौं प्रेम अमित अनमायो ।
तेही दिन मुनिवृंद अनंदित तुरत तिलक को साज सजायो ।
महाराज रघुबंस-नाथ को सादर तुलसिदास गुन गायो ।२१

राग जयतश्री

रन जीति राम राउ आए ।
सानुज सदल ससीय कुसल आजु अवध आनंद-बधाए ॥

अरिपुर जारि, उजारि, मारि रिपु, बिबुध सुबास बसाए।
धरनि धेनु महिदेव साधु सबके सब सोच नसाये॥
दई लंक, थिर थपे बिभीषन, बचन पियूष पिआए।
सुधा सींचि कपि, कृपा नगर-नर-नारि निहारि जिआए॥
मिलि गुरु बंधु मातु जन परिजन भए सकल मन भाए।
दरस-हरष दसचारि बरष के दुख पल में बिसराए॥
बोलि सचिव सुचि सोधि सुदिन मुनि मंगल साज सजाए।
महाराज अभिषेक बरषि सुर सुमन निसान बजाए॥
लै लै भेंट नृप अहिप लोकपति अति सनेह सिर नाए।
पूजि प्रीति पहिचानि राम आदरे अधिक अपनाए॥
दान मान सनमानि जानि रुचि जाचक जन पहिराए।
गए सोक-सर सूखि, मोद-सरिता-समुद्र गहिराए।
प्रभु, प्रताप - रवि अहित - अमंगल - अघ-उलूक-तम ताए।
किये बिसोक हित-कोक - कोकनद, लोक सुजस सुभ छाए॥
राम राज कुलकाज सुमंगल सबनि सबै सुख पाए।
देहिं असीस भूमिसुर प्रमुदित प्रजा प्रमोद बढ़ाए॥
आस्रम - धरम - बिभाग बेदपथ पावन लोग चलाए।
धर्म - निरत सिय - राम - चरन - रत मनहुँ राम-सिय-जाए॥
कामधेनु महि बिटप कामतरु कोउ बिधि बाम न लाये।
ते तब, अब तुलसी तेउ जिन्ह हित-सहित राम-गुन गाये।२२

राग टोड़ी

आजु अवध आनंद-बधावन रिपु रन जीति राम आए।

सजि सुबिमान निसान बजावत मुदित देव देखन धाए ॥
घर घर चारु चौक चंदन मनि, मंगल-कलस सबनि साजे ।
ध्वज पताक तोरन बितान बर, बिबिध भाँति बाजन बाजे ॥
राम-तिलक सुनि दीप दीप के नृप आए उपहार लिये ।
सीय सहित आसीन सिंहासन निरखि जोहारत हरष हिये ॥
मंगल गान, वेदधुनि, जयधुनि मुनि-असीस-धुनि भुवन भरे ।
बरषि सुमन सुर सिद्ध प्रसंसत, सबके सब संताप हरे ॥
राम-राज भइ कामधेनु महि सुख संपदा लोक छाए ।
जनम जनम जानकीनाथ के गुनगन तुलसिदास गाए ।२३

उत्तर कांड

राग सोरठ

बन तें आइकै राजा राम भए भुवाल ।
मुदित चौदह भुवन, सब सुख सुखी सब सब काल ।
मिटे कलुष कलेस कुलषन कपट कुपथ कुचाल ।
गए दारिद दोष दारुन दंभ दुरित दुकाल ।
कामधुक मही, कामतरु तरु, उपल मनिगन लाल ।
नारि नर तेहि समय सुकृती भरे भाग सुभाल ।
बरन-आस्रम-धरमरत, मन बचन बेष मराल ।
राम-सिय-सेवक सनेही साधु सुमुख रसाल ।
राम-राज-समाज बरनत सिद्ध सुर दिगपाल ।
सुमिरि सो तुलसी अजहुँ हिय हरष होत बिसाल । १ ।

राग ललित

भोर जानकीजीवन जागे ।
सूत मागध प्रवीन, बेनु बीना धुनि द्वारे, गायक सरस राग रागे ।
स्यामल सलोने गात, आलसबस जँभात प्रिया प्रेमरस पागे ।
उनींदे लोचन चारु, मुख सुषमा सिंगार हेरि हारे मार भूरि भागे ।
सहज सुहाई छबि, उपमा न लहैं कबि, मुदित बिलोकन लागे ।
तुलसिदास निसि बासर अनूप रूप रहत प्रेम-अनुरागे ।२।

राग कल्याण

रघुपति राजीवनयन, सोभातनु कोटि मयन,
करुनारस-अयन चयन-रूप भूप, माई ।

देखो सखि अतुलित छबि, संत कंज-कानन-रबि
गावत कल कीरति कबि कोबिद - समुदाई ॥
मज्जन करि सरजुतीर ठाढ़े रघुबंसबीर,
सेवत पद कमल धीर निरमल चित लाई।
ब्रह्ममंडली - मुनींद्रबृंद - मध्य इंदुबदन
राजत सुखसदन लोकलोचन - सुखदाई ॥
बिथुरित सिररुह-बरूथ कुंचित बिच सुमन-जूथ,
मनिजुत सिसु-फनि-अनीक ससि - समीप आई।
जनु सभीत दै अँकोर राखे जुग रुचिर मोर,
कुण्डल-छबि निरखि चोर सकुचत अधिकाई ॥
ललित भ्रुकुटि तिलक भाल चिबुक अधर द्विज रसाल,
हास चारुतर, कपोल नासिका सुहाई।
मधुकर जुग पंकज बिच सुक बिलोकि नीरज पर
लरत मधुप-अवलि मानो बीच कियो जाई ॥
सुंदर पटपीत बिसद, भ्राजत बनमाल उरसि,
तुलसिका - प्रसून - रचित बिविध बिधि बनाई।
तरु तमाल अधबिच जनु त्रिबिध कीरपाँति रुचिर,
हेमजाल अंतर परि तातें न उड़ाई ॥
संकर - हृदि - पुंडरीक निसि बस हरि - चंचरीक,
निर्व्यलीक मानस - गृह संतत रहे छाई।
अतिसय आनंदमूल तुलसिदास सानुकूल,
हरन सकल सूल, अवध-मंडन रघुराई। ३।

राजत रघुबीर धीर, भंजन भव-भीर, पीर
हरन सकल सरजुतीर निरखहु, सखि! सोहैं।
संग अनुज मनुज-निकर, दनुज-बल-विभंग-करन,
अंग अंग छबि अनंग अगनित मन मोहैं॥
सुखमा-सुख-सील-अयन नयन निरखि निरखि नीळ
कुंचित कच, कुंडल कल नासिक चित पोहैं।
मनहुँ इंदुबिंब मध्य कंज मीन खंजन लखि
मधुप मकर कीर आए तकि तकि निज गौं हैं।
ललित गंड मंडल, सुविसाल भाल तिलक झलक
मंजुतर मयंक-अंक, रुचिर बंक भौंहैं।
अरुन अधर, मधुर बोल, दसन दमक दामिनि दुति,
हुलसति हिय हँसनि चारु, चितवनि तिरछौंहैं।
कंबु कंठ, भुज बिसाल, उरसि तरुन तुलसिमाल,
मंजुल मुकतावलि जुत जागति जिय जोहैं।
जनु कलिंदनंदिनि मनि-इंद्रनील-सिखर परसि
धँसति लसति हंससेनि संकुल अधिकौंहैं।
दिव्यतर दुकूल भव्य, नव्य रुचिर चंपक चय,
चंचला कपाल कनक निकर अलि किधौं हैं।
सज्जन-चख-झख-निकेत, भूषन मनिगन समेत,
रूप-जलधि-वपुष लेत मन-गयंद बोहैं।
अकनि बचन चातुरी, तुरीय पेखि प्रेम मगन
पग न परत इत उत सब चकित तेहि समौ हैं।

तुलसिदास यह सुधि नहिं कौन की, कहाँ तें आई,
कौन काज, काके ढिग, कौन ठाउँ को हैं। ४ ॥

देखु सखि ! आजु रघुनाथ सोभा बनी।
नील - नीरद - बरन - वपुष, भुवनाभरन,
पीत - अंबर - धरन हरन दुति - दामिनी ॥
सरजु मज्जन किए, संग सज्जन लिए,
हेतु जन पर हिये, कृपा कोमल घनी।
सजनि आवत भवन, मत्त-गजवर-गवन,
लंक मृगपति ठवनि, कुँवर कोसलधनी।
सघन चिक्कन कुटिल चिकुर बिलुलित मृदुल,
करनि बिवरत चतुर सरस सुषमा जनी।
ललित अहि-सिसु-निकर मनहुँ ससि सन समर,
लरत, धरहरि करत रुचिर जनु जुग फनी।
भाल भ्राजत तिलक, जलज लोचन, पलक,
चारु भ्रू नासिका सुभग सुक-आननी।
चिबुक सुंदर, अधर अरुन, द्विज दुति सुघर,
बचन गंभीर, मृदुहास भव-भाननी।
स्रवन कुंडल, विमल गंड मंडित चपल,
कलित कल कांति अति भाँति कछु तिन्ह तनी।
जुगल कंचन-मकर मनहुँ बिधुकर मधुर,
पियत पहिचानि करि सिंधुकीरति भनी।
उरसि राजत पदिक, ज्योति रचना अधिक,

माल सुबिसाल चहुँ पास बनि गजमनी ।
स्याम नव जलद पर निरखि दिनकर-कला,
कौतुकी मनहुँ रही घेरि उडुगन-अनी ।
मंदिरनि पर खरी नारि आनँद-भरी,
निरखि बरषहिं बिपुल कुसुम कुंकुम-कनी ।
दास तुलसी राम परम करुनाधाम,
काम सत कोटि मद हरत छबि आपनी ।५।

आजु रघुबीर छबि जाति नहिं कछु कही ।
सुभग सिंहासनासीन सीतारमन,
भुवन अभिराम बहु काम सोभा सही ।
चारु चामर ब्यजन, छत्र मनिगन बिपुल,
दाम मुकुतावली जोति जगमगि रही ।
मनहुँ राकेस-सँग हंस उडुगन बरहि,
मिलन आए हृदय जानि निज नाथ ही ।
मुकुट सुंदर सिरसि, भालबर तिलक भ्रू,
कुटिल कच, कुंडलनि परम आभा लही ।
मनहुँ हर-डर जुगल मारध्वज के मकर
लागि स्रवननि करत मेरु की बतकही ।
अरुन-राजीव-दलःनयन करुना-अयन,
बदन सुषमासदन, हास त्रय-तापही ।
बिबिध कंकन हार, उरसि गजमनि-माल
मनहुँ बग-पाँति जुग मिलि चली जलद ही ।

पीत निर्मल चैल, मनहुँ मरकत सैल,
पृथुल दामिनि रही छाइ तजि सहज ही।
ललित सायक-चाप, पीन भुज बल अतुल
मनुज-तनु दनुजबन-दहन मंडन-मही।
जासु गुन-रूप नहिं कलित निरगुन सगुन,
संभु सनकादि सुक भक्ति दृढ़ करि गही।
दासतुलसी राम-चरन-पंकज सदा
बचन मन कर्म चहै प्रीति नित निरबही।६।

राम राजराजमौलि मुनिवर-मन-हरन सरन
लायक, सुखदायक रघुनायक देखौ, री।
लोक लोचनाभिराम, नीलमनि-तमाल-स्याम,
रूप सीलधाम, अंग छबि अनंग को री १।
भ्राजत सिर मुकुट पुरट-निर्मित मनि-रचित चारु,
कुंचित कच रुचिर परम, सोभा नहिं थोरी।
मनहुँ चंचरीक-पुंज कंजबृंद प्रीति लागि
गुंजत कल गान तान दिनमनि रिझयो री।
अरुनकंज-दल-बिसाल लोचन भ्रू तिलक भाल
मंडित स्रुति कुंडल बर सुंदरतर जोरी।
मनहुँ संबरारि मारि, ललित मकर-जुग बिचारि
दीन्हें ससि कहँ पुरारि, भ्राजत दुहुँ ओरी।
सुंदर नासा कपोल चिबुक, अधर अरुन, बोल
मधुरे, दसन राजत जब चितवत मुख मोरी।

कंज-कोस भीतर जनु कंजराग-सिखर-निकर,
रुचिर रचित बिधि बिचित्र तड़ित-रंग बोरी ।
कंबु कंठ, उर बिसाल तुलसिका नवीन माल,
मधुकर बर बास बिबस उपमा सुनु सो री ।
जनु कलिंदजा सुनील सैल तें धसी समीप,
कंद-बृंद बरषत छबि मधुर घोरि घोरी ।
निर्मल अति पीत चैल, दामिनि जनु जलद नील,
राखी निज सोभाहित बिपुल बिधि निहोरी ।
नयनन्हि को फल बिसेष ब्रह्म अगुन सगुन बेष
निरखहु तजि पलक, सफल जीवन लेखौ री ।
सुंदर सीता समेत सोभित करुनानिकेत,
सेवक सुख देत लेत चितवत चित चोरी ।
बरनत यह अमित रूप थकित निगम नागभूप,
तुलसिदास छबि बिलोकि सारद भइ भोरी ।७।

राग केदारा

सखि ! रघुनाथ-रूप निहारु ।
सरद-बिधु रबि-सुवन मनसिज-मान-भंजनिहारु ।
स्याम सुभग सरीर जन-मन-काम-पूरनिहारु ।
चारु चंदन मनहुँ मरकत सिखर लसत निहारु ।
रुचिर उर उपबीत राजत, पदिक गजमनि-हारु ।
बिमल पीत दुकूल दामिनि-दुति-बिनिंदनिहारु ।
बदन सुषमासदन सोभित मदन-मोहनिहारु ।

सकल अंग अनूप नहिं कोउ सुकबि बरननिहारु ।
दासतुलसी निरखतहि सुख लहत निरखनिहारु ।८।

सखि ! रघुबीर-मुखछबि देखु !
चित्त-भीति सुप्रीति-रंग सुरूपता अवरेखु ।
नयन-सुखमा निरखि नागरि ! सफल जीवन लेखु ।
मनहुँ बिधि जुग जलज बिरचे ससि सुपूरन मेखु ।
भ्रुकुटि भाल बिसाल राजत रुचिर कुँकुम-रेखु ।
भ्रमर द्वै रबिकिरनि ल्याए करन जनु उनमेखु ।
सुमुखि ! केस सुदेस सुंदर सुमन-संजुत पेखु ।
मनहुँ उडुगन-निवह आए मिलन तम तजि द्वेषु ।
स्रवन कुंडल मनहुँ गुरु-कबि करत बाद बिसेषु ।
नासिका द्विज अधर जनु रह्यो मदनु करि बहु बेषु ।
रूप बरनि न सकत नारद संभु सारद सेषु ।
कहै तुलसीदास क्यों मतिमंद-सकल-नरेषु ।९।

राग जयतश्री

देखौ राघव-बदन बिराजत चारु ।
जात न बरनि बिलोकत ही सुख, मुख किधौं छबि बर नारि सिंगारु ।
रुचिर चिबुक, रद-जोति अनूपम, अधर अरुन, सित हास निहारु ।
मनो ससिकर बस्यो चहत कमल महँ प्रगटत दुरत न बनत बिचारु ।
नासिक सुभग मनहुँ सुक सुंदर, चितवत चकि आचरज अपारु ।
कल कपोल, मृदु बोल मनोहर, रीझि चित चतुर अपनपौ वारु ।
नयनसरोज, कुटिल कच, कुंडल भ्रुकुटि सुभाल तिलक सोभा-सारु ।

मनहुँ केतु के मकर, चाप-सर गयो बिसारि भयो मोहित मारु।
निगम सेष सारद सुक संकर बरनत रूप न पावत पारु।
तुलसिदास कहै कहौ धौं कौन बिधि अति लघुमति जड़ कूर गँवारु १०

राग ललित

आज रघुपति-मुख देखत लागत सुख,
सेवक सुरुष सोभा सरद-ससि सिहाई।
दसन-बसन लाल बिसद हास रसाल,
मानो हिमकर-कर राखे राजीव मनाई॥
अरुन नैन बिसाल, ललित भ्रुकुटि, भाल
तिलक, चारु कपोल चिबुक नासा सुहाई।
बिथुरे कुटिल कच, मानहुँ मधु लालच अलि
नलिन-जुगल उपर रहे लोभाई॥
स्रवन सुंदर सम कुंडल कल जुगम
तुलसिदास अनूप उपमा कही न जाई।
मानो मरकत सीप सुंदर ससि समीप
कनक-मकरजुत बिधि बिरची बनाई॥११॥

राग भैरव

प्रातकाल रघुबीर-बदन-छबि चितै चतुर चित मेरे।
होहिं बिबेक-बिलोचन निर्मल सुफल सुसीतल तेरे॥
भाल बिसाल बिकट भ्रुकुटी बिच तिलक-रेख रुचि राजै।
मनहुँ मदन तम तकि मरकत-धनु जुगुल कनक सर साजै॥
रुचिर पलक लोचन जुग तारक स्याम, अरुन सित कोए।

जनु अलि नलिन-कोस महँ बंधुक-सुमन सेज सजि सोए ॥
बिलुलित ललित कपोलनि पर कच मेचक कुटिल सुहाए।
मनो बिधु महँ बनरुह बिलोकि अलिबिपुल सकौतुक आए ॥
सोभित स्रवन कनक-कुंडल कल लंबित बिबि भुजमूले।
मनहुँ केकि तकि गहन चहत जुग उरग इंदु प्रतिकूले ॥
अधर अरुन-तर, दसन-पाँति बर, मधुर मनोहर हासा।
मनहुँ सोन-सरसिज महँ कुलिसनि तड़ित सहित कृत बासा ॥
चारु चिबुक, सुकतुंड-बिनिंदक सुभग सुउन्नत नासा।
तुलसिदास छबिधाम राममुख सुखद समन भवत्रासा ॥१२॥

राग केदारा

सुमिरत श्री रघुबीर की बाहें।
होत सुगम भव-उदधि अगम अति, कोउ लाँघत, कोउ उतरत थाहें ॥
सुंदर-स्याम-सरीर-सैल तें धँसि जनु जुग जमुना अवगाहें।
अमित अमल जल-बल परिपूरन जनु जनमी सिँगार-सविता हैं ॥
धारैं बान, कूल धनु, भूषन जलचर, भँवर सुभग सब घाहैं।
बिलसति बीचि बिजय-बिरदावलि, कर-सरोज सोहत सुषमा हैं ॥
सकल-भुवन-मंगल-मंदिर के द्वार बिसाल सुहाई साहैं।
जे पूजी कौसिक-मख ऋषयनि जनक गनप संकर गिरिजा हैं ॥
भवधनु दलि जानकी बिवाही भए बिहाल नृपाल त्रपा हैं।
परसु पानि जिन्ह किए महामुनि जे चितए कबहूँ न कृपा हैं ॥
जातुधान-तिय जानि बियोगिनि दुखई सीय सुनाइ कुचाहैं।
जिन्ह रिपु मारि सुरारि-नारि तेइ सीस उघारि दिवाई धाहैं ॥

दसमुख-बिबस तिलोक लोकपति बिकल बिनाए नाक चना हैं ।
सुबस बसे गावत जिन्ह के जस अमर-नाग-नर-सुमुखि सनाहैं ॥
जे भुज बेद पुरान सेष सुक सारद सहित सनेह सराहैं ।
कल्पलताहु की कल्पलता बर, कामदुहहु की कामदुहा हैं ॥
सरनागत आरत प्रनतनि को दै दै अभयपद ओर निबाहैं ।
करि आई, करिहैं, करतीहैं तुलसिदास दासनि पर छाहैं ॥१३॥

राग भैरव

रामचंद्र-करकंज कामतरु बामदेव-हितकारी ।
सियसनेह-बर-बेलि-बलित बर प्रेमबंधु बर बारी ॥
मंजुल मंगल-मूल मूल-तनु करज मनोहर साखा ।
रोम परन, नख सुमन, सुफल सब काल सुजन-अभिलाषा ॥
अबिचल अमल अनामय अबिरल ललित रहित-छल-छाया ।
समन सकल संताप पाप रुज मोह मान मद माया ॥
सेवहिं सुचि मुनि-भृंग-बिहग मन-मुदित मनोरथ पाए ।
सुमिरत हिय हुलसत तुलसी अनुराग उमँगि गुन गाए ॥१४॥

रामचरन अभिराम कामप्रद तीरथ-रथ बिराजै ।
संकर-हृदय भगति भूतल पर प्रेम-अछयबट भ्राजै ॥
स्यामबरन पद-पीठ, अरुन तल, लसति बिसद नखस्रेनी ।
जनु रबिसुता सारदा सुरसरि मिलि चली ललित त्रिबेनी ॥
अंकुस कुलिस कमल-धुज सुंदर भँवर तरंग-बिलासा ।
मज्जहिं सुर सज्जन मुनिजन-मन मुदित मनोहर बासा ॥
बिनु बिराग जप जाग जोग ब्रत, बिनु तप, बिनु तनु त्यागे ।

सब सुख सुलभ सद्य तुलसी प्रभु-पद-प्रयाग अनुरागे ॥१५

राग बिलावल

रघुबर-रूप बिलोकु नेकु मन ।
सकल लोक-लोचन-सुखदायक नखसिख सुभग स्यामसुंदर तन ॥
चारु चरन-तल-चिह्न चारि फल चारि देत परचारि जानि जन ।
राजत नख जनु कमल-दलनि पर अरुन-प्रभा-रंजित तुषार-कन ॥
जंघा-जानु आनु कदलि उर, कटि किंकिनि, पटपीत सुहावन ।
रुचिर निषंग, नाभि रोमावलि त्रिबलि-बलित उपमा कछु आव न ॥
भृगुपद-चिह्न पदिक उर सोभित मुकुतमाल कुंकुम अनुलेपन ।
मनहुँ परस्पर मिलि पंकज रबि प्रगट्यो निज अनुराग सुजस घन ॥
बाहु बिसाल ललित सायक धनु, कर कंकन-केयूर महाधन ।
बिमल दुकूल दलन दामिनि-दुति यज्ञोपवीत लसत अति पावन ॥
कंबुग्रीव, छबिसींव चिबुक द्विज, अधर कपोल, बोल भय-मोचन ।
नासिक सुभग कृपापरिपूरन, तरुन अरुन राजीव बिलोचन ॥
कुटिल भ्रुकुटिबर, भाल तिलक रुचि, सुचि सुंदरता स्रवन बिभूषन ।
मनहुँ मारि मनसिज पुरारि दिय ससिहि चापसर-मकर अदूषन ॥
कुंचित कच, कंचन-किरीट सिर जटित ज्योतिमय बहु बिधि मनिगन ।
तुलसिदास रबिकुल-रबि-छबि कबि कहि न सकत सुक संभु सहस फन१६

राग कान्हरा

देखो रघुपति-छबि अतुलित अति ।
जनु तिलोक सुषमा सकेलि बिधि राखी रुचिर अंग अंगनि प्रति ॥
पदुमराग रुचि मृदु पदतल, धुज अंकुस कुलिस कमल यहि सूरति ।

रही आनि चहुँ बिधि भगतनि की जनु अनुराग भरी अंतरगति ॥
सकल सुचिह्न सुजन सुखदायक ऊरधरेख बिसेष बिराजति ।
मनहुँ भानु-मंडलहि सँवारत धस्यो सूत बिधि-सुत बिचित्रमति ॥
सुभग अँगुष्ठ अंगुली अबिरल, कछुक अरुन नख-ज्योति जगमगति ।
चरन-पीठ उन्नत नत-पालक, गूढ़ गुलुफ, जंघा कदलीजति ॥
काम-तून-तल सरिस जानु जुग, उर करि-कर करभहि बिलखावति ।
रसना रचित रतन चामीकर, पीत बसन कटि कसे सरसावति ॥
नाभी सर त्रिबली निसेनिका, रोमराजि सैवल छबि पावति ।
उर मुकुतामनि-माल मनोहर मनहुँ हंस-अवली उड़ि आवति ॥
हृदय पदिक भृगु-चरन-चिह्न बर, बाहु बिसाल जानु लगि पहुँचति ।
कल केयूर पूर-कंचन-मनि, पहुँची मंजु कंजकर सोहति ॥
सुजव सुरेख सुनख अंगुलिजुत, सुंदर पानि मुद्रिका राजति ।
अंगुलित्रान कमान बानछबि सुरनि सुखद असुरनि-उर सालति ॥
स्याम सरीर सुचंदन-चर्चित, पीत दुकूल अधिक छबि छाजति ।
नील जलद पर निरखि चंद्रिका दुरनि त्यागि दामिनि जनु दमकति ॥
यज्ञोपवीत पुनीत बिराजत गूढ़ जत्रु बनि पीन अंस तति ।
सुगढ़ पुष्ट उन्नत कृकाटिका कंबु कंठ सोभा मन मानति ॥
सरद-समय-सरसीरुह-निंदक मुख-सुखमा कछु कहत न बानति ।
निरखत ही नयननि निरुपम सुख, रबिसुत, मदन, सोम-दुति निदरति ॥
अरुन अधर द्विजपाँति अनूपम ललित हँसनि जनु मन आकरषति ।
बिद्रुम-रचित बिमान मध्य जनु सुरमंडली सुमन-चय बरषति ॥
मंजुल चिबुक मनोरम हनुथल, कल कपोल नासा मन मोहति ।

पंकज-मान-बिमोचन लोचन, चितवनि चारु अमृत-जल सींचति ॥
केस सुदेस गँभीर बचन बर, स्रुति कुंडल-डोलनि जिय जागति ।
लखि नव नील पयोद रवित सुनि रुचिर मोर जोरी जनु नाचति ॥
भौंहैं बंक मयंक-अंक रुचि कुंकुमरेख भाल भलि भ्राजति ।
सिरसि हेम-हीरक-मानिकमय मुकुट-प्रभा सब भुवन प्रकासति ॥
बरनत रूप पार नहिं पावत निगम सेष सुक संकर भारति ।
तुलसिदास केहि बिधि बखानि कहै यह मन बचन अगोचर मूरति। १७

राग मलार

आली री ! राघौ के रुचिर हिंडोलना झूलन जैए ।
फटिक-भीति सुचारु चहुँ दिसि, मंजु मनिमन पौरि ।
गच काँच लखि मन नाच सिखि जनु, पाँचसर सु फँसौरि ॥
तोरन बितान पताक चामर धुज सुमन फल-घौरि ।
प्रतिछाँह-छबि कबि साखि दै प्रति सों कहैं गुरु हौं रि ! ॥
मदन-जय के खंभ से रचे खंभ सरल बिसाल ।
पाटीर-पाटि बिचित्र भँवरा बलित बेलनि लाल ॥
डाँड़ो कनक कुंकुम-तिलक रेखैं सी मनसिज-भाल ।
पटुली पदिक रति-हृदय जनु कलधौत-कोमल-माल ॥
उनये सघन घनघोर, मृदु झरि सुखद सावन लाग ।
बगपाँति सुरधनु, दमक दामिनि, हरित भूमि-बिभाग ॥
दादुर मुदित, भरे सरित सर, महि उमग जनु अनुराग ।
पिक मोर मधुप चकोर चातक सोर उपबन बाग ॥
सो समौ देखि सुहावनो नवसत सँवारि सँवारि ।

गुन-रूप-जोबन सींव सुंदरि चलीं झुंडनि झारि ॥
हिंडोल-साल बिलोकि सब अंचल पसारि पसारि ।
लागीं असीसन राम-सीतहि सुख-समाजु निहारि ॥
झूलहिं झुलावहिं ओसरिन्ह गावैं सुहो गौंड-मलार ।
मंजीर-नूपुर-वलय-धुनि जनु काम-करतल तार ॥
अति स्रुवत स्रमकन मुखनि बिथुरे चिकुर बिलुलित हार ।
तम तड़ित उडुगन अरुन बिधु जनु करत व्योम-बिहार ॥
हिय हरषि बरषि प्रसून निरखति बिबुध तिय तृन तूरि ।
आनंद-जल लोचन, मुदित मन, पुलक तनु भरिपूरि ॥
सब कहहिं अबिचल राज नित, कल्यान मंगल भूरि ।
चिर जियौ जानकिनाथ जग तुलसी सजीवनि मूरि ॥१८॥

राग सूहो

कोसलपुरी सुहावनी सरि सरजू के तीर ।
भूपावली-मुकुटमनि नृपति जहाँ रघुबीर ॥
पुर-नरनारि चतुर अति धरमनिपुन, रत-नीति ।
सहज सुभाय सकल उर श्रीरघुबर-पद-प्रीति ॥
श्रीरामपद-जलजात सब के प्रीति अबिरल पावनी ।
जो चहत सुक सनकादि संभु बिरंचि मुनिमन-भावनी ॥
सबही के सुंदर मंदिराजिर, राउ रंक न लखि परै ।
नाकेस-दुर्ल्लभ भोग लोग करहिं न मन बिषयनि हरै ॥१॥
सब ऋतु सुखप्रद सो पुरी पावस अति कमनीय ।
निरखत मनहिं हरत हठि हरित अवनि रमनीय ॥

बीरबहूटि बिराजहीं, दादुर-धुनि चहुँ ओर ।
मधुर गरजि घन बरषहिं, सुनि सुनि बोलत मोर ॥
बोलत जो चातक मोर कोकिल कीर पारावत घने ।
खग बिपुल पाले बालकनि कूजत उड़ात सुहावने ॥
बकराजि राजति गगन, हरिधनु तड़ित दिसि दिसि सोहहीं ।
नभ-नगर की सोभा अतुल अवलोकि मुनि-मन मोहहीं ॥
गृह गृह रचे हिंडोलना महि गच काँच सुढार ।
चित्र बिचित्र चहूँ दिसि परदा फटिक पगार ॥
सरल बिसाल बिराजहीं बिद्रुम-खंभ सुजोर ।
चारु पाटि पटी पुरट की झरकत मरकत भौंर ॥
मरकत भँवर डाँड़ी कनक मनि-जटित दुति जगमगि रही ।
पटुली मनहुँ बिधि निपुनता निज प्रगट करि राखी सही ॥
बहुरंग लसत बितान मुकुतादाम - सहित मनोहरा ।
नव सुमन माल सुगंध लोभे मंजु गुंजत मधुकरा ॥ ३ ॥
झुंड झुंड झूलन चलीं गजगामिनि बर नारि ।
कुसुँभि चीर तनु सोहहीं भूषन बिबिध सँवारि ॥
पिकबयनी मृगलोचनी सारद ससि सम तुंड ।
राम-सुजस सब गावहीं सुसुर सुसारँग गुंड ॥
सारंग गुंड मलार सोरठ सुहव सुघरनि बाजहीं ।
बहु भाँति तान-तरंग सुनि गंधरब किंनर लाजहीं ॥
अति मचत, छूटत कुटिल कच, छबि अधिक सुंदरि पावहीं ।
पट उड़त, भूषन खसत, हँसि हँसि अपर सखी झुलावहीं ॥ ४ ॥

फिरि फिर झूलहिं भामिनी अपनी अपनी बार ।
बिबुध-बिमान थकित भए देखत चरित अपार ॥
बरषि सुमन हरषहिं उर बरनहिं हरिगुन-गाथ ।
पुनि पुनि प्रभुहि प्रसंसहीं 'जय जय जानकिनाथ' ॥
जय जानकीपति बिसद कीरति सकल-लोक-मलापहा ।
सुरबधू देहिं असीस चिरजिव राम सुख संपति महा ॥
पावस समय कछु अवध बरनत सुनि अघौघ नसावहीं ।
रघुबीर के गुनगन नवल नित दास तुलसी गावहीं ।५।१९

राग आसावरी

साँझ समय रघुबीर-पुरी की सोभा आजु बनी ।
ललित दीपमालिका बिलोकहिं हित करि अवधधनी ॥
फटिक-भीत-सिखरन पर राजित कंचन-दीप-अनी ।
जनु अहिनाथ मिलन आयो मनि-सोभित सहसफनी ॥
प्रति मंदिर कलसनि पर भ्राजहिं मनिगन दुति अपनी ।
मानहुँ प्रगटि बिपुल लोहितपुर पठइ दिए अवनी ॥
घर घर मंगलचार एकरस हरषित रंक गनी ।
तुलसिदास कल कीरति गावहिं जो कलिमल-समनी ॥२०॥

राग गौरी

अवध नगर अति सुंदर बर सरिता के तीर ।
नीति-निपुन नर तिय सबहिं धरम-धुरंधर धीर ॥
सकल ऋतुन्ह सुखदायक तामहँ अधिक वसंत ।
भूप-मौलि-मनि जहँ बस नृपति जानकीकंत ॥

बन उपबन नव किसलय कुसुमित नाना रंग ।
बोलत मधुर मुखर खग पिकबर, गुंजत भृंग ॥
समय बिचारि कृपानिधि देखि द्वार अति भीर ।
खेलहु मुदित नारि नर बिहँसि कहेउ रघुबीर ॥
नगर नारि नर हरषित सब चले खेलन फागु ।
देखि राम-छबि अतुलित उमगत उर अनुरागु ॥
स्याम-तमाल-जलदतनु निर्मल पीत दुकूल ।
अरुन-कंज-दल-लोचन सदा दास - अनुकूल ॥
सिर किरीट, स्रुति कुंडल, तिलक मनोहर भाल ।
कुंचित केस, कुटिल भ्रू , चितवनि भगत-कृपाल ॥
कल कपोल, सुक नासिक, ललित अधर द्विज-जोति ।
अरुन कंज महँ जनु जुग पाँति रुचिर गजमोति ॥
बर दर-ग्रीव, अमितबल बाहु सुपीन बिसाल ।
कंकन हार मनोहर, उरसि लसति बनमाल ॥
उर भृगु-चरन बिराजत, द्विज-प्रिय चरित पुनीत ।
भगत हेतु नर-बिग्रह सुरवर गुन-गोतीत ॥
उदर त्रिरेख मनोहर, सुंदर नाभि गँभीर ।
हाटक-घटित जटित मनि कटितट रट मंजीर ॥
उरु अरु जानु पीन मृदु मरकत खंभ समान ।
नूपुर मुनि मन मोहत करत सुकोमल गान ॥
अरुन बरन पदपंकज, नखदुति इंदु-प्रकास ।
जनक-सुता-करपल्लव-लालित बिपुल बिलास ॥

कंज कुलिस धुज अंकुस रेख चरन सुभ चारि ।
जन-मन-मीन हरन कहँ बंसी रची सँवारि ॥
अंग अंग प्रति अतुलित सुषमा बरनि न जाइ ।
एहि सुख मगन होइ मन फिरि नहिं अनत लोभाइ ॥
खेलत फागु अवधपति अनुज सखा सब संग ।
बरषि सुमन सुर निरखहिं, सोभा अमित अनंग ॥
ताल मृदंग झाँझ डफ बाजहिं पनव निसान ।
सुघर सरस सहनाइन्ह गावहिं समय समान ॥
बीना बेनु मधुर धुनि सुनि किंनर गंधर्व ।
निज गुन गरुअ हरुअ अति मानहिं मन तजि गर्व ॥
निज निज अटनि मनोहर गान करहिं पिकबैनि ।
मनहुँ हिमालय-सिखरनि लसहिं अमर-मृगनैनि ॥
धवल धाम तें निकसहिं जहँ तहँ नारि बरूथ ।
मानहुँ मथत पयोनिधि बिपुल अपसरा-जूथ ॥
किंसुक-बरन सुअंसुक सुषमा सुखनि समेत ।
जनु बिधु-निवह रहे करि दामिनि-निकर निकेत ॥
कुंकुम सुरस अबीरनि भरहिं चतुर बर नारि ।
ऋतुसुभाय सुठि सोभित देहिं बिबिध बिधि गारि ॥
जो सुख जोग जाग जप तप तीरथ तें दूरि ।
राम-कृपा तें सोइ सुख अवध गलिन्ह रह्यो पूरि ॥
खेलि बसंत कियो प्रभु मज्जन सरजूनीर ।
बिबिध भाँति जाचक-जन पाए भूषन-चीर ॥

तुलसिदास तेहि अवसर माँगी भगति अनूप ।
मृदु मुसुकाइ दीन्हि तब कृपादृष्टि रघुभूप ॥२१॥

राग वसंत

खेलत बसंत राजाधिराज, देखत नभ कौतुक सुर-समाज ।
सोहैं सखा अनुज रघुनाथ साथ, झोलिन्ह अबीर, पिचकारि हाथ ।
बाजहिं मृदंग डफ ताल बेनु, छिरकैं सुगंध-भरे मलय-रेनु ।
उत जुवति-जूथ जानकी संग, पहिरे पट भूषन सरस रंग ।
लिए छरी बेंत सोधैं बिभाग, चाँचरि झूमक कहैं सरस राग ।
नूपुर-किंकिनि-धुनि अति सोहाइ, ललना-गन जब जेहि धरइँ धाइ ।
लोचन आँजहिं फगुआ मनाइ, छाँड़हिं नचाइ हाहा कराइ ।
चढ़े खरनि बिदूषक स्वाँग साजि, करैं कूटि, निपट गइ लाज भाजि ।
नर नारि परसपर गारि देत, सुनि हँसत राम भाइन समेत ।
बरसत प्रसून बर-बिबुध-बृंद, जय जय दिनकर-कुल-कुमुद-चंद ।
ब्रह्मादि प्रसंसत अवध बास, गावत कल कीरति तुलसिदास ।२२।

राग केदारा

देखत अवध को आनंद ।
हरषि बरषत सुमन दिन दिन देवतनि को बृंद ।
नगर-रचना सिखन को बिधि तकत बहु बिधिबंद ॥
निपट लागत अगम ज्यों जलचरहि गमन सुछंद ।
मुदित पुरलोगनि सराहत निरखि सुखमाकंद ॥
जिन्ह के सुअलि-चख पियत राम-मुखारबिंद-मरंद ।
मध्य ब्योम बिलंबि चलत दिनेस उडुगन चंद ।
रामपुरी बिलोकि तुलसी मिटत सब दुख-द्वंद्व ॥२३॥

राग सोरठ

पालत राज यों राजाराम धरमधुरीन ।
सावधान सुजान सब दिन रहत नय-लयलीन ॥
स्वान खग जति न्याउ देख्यो आपु बैठि प्रबीन ।
नीचु हति महिदेव-बालक कियो मीचुबिहीन ॥
भरत ज्यों अनुकूल जग निरुपाधि नेह नवीन ।
सकल चाहत राम ही, ज्यों जल अगाधहि मीन ॥
गाइ राज-समाज जाँचत दास तुलसी दीन ।
लेहु निज करि, देहु निज पदप्रेम पावन पीन ॥२४॥

संकट सुकृत को सोचत जानि जिय रघुराउ ।
सहस द्वादस पंचसत में कछुक है अब आउ ॥
भोग पुनि पितु-आयु को, सोउ किए बनै बनाउ ।
परिहरे बिनु जानकी नहिं और अनघ उपाउ ॥
पालिबे असिधार-व्रत प्रिय प्रेम-पाल सुभाउ ।
होइ हित केहि भाँति, नित सुबिचारु नहिं चित चाउ॥
निपट असमंजसहु बिलसति मुख मनोहरताउ ।
परम धीर-धुरीन हृदय कि हरष बिसमय काउ ?॥
अनुज सेवक सचिव हैं सब सुमति साधु सखाउ ।
जान कोउ न जानकी बिनु अगम अलख लखाउ ॥
राम जोगवत सीय-मनु प्रिय मनहि प्रानप्रियाउ ।
परम पावन प्रेम-परमिति समुझि तुलसी गाउ ॥२५॥

राम बिचारि कै राखी ठीक दै मन माहिं ।

लोक बेद सनेह पालत पल कृपालहि जाहिं ॥
प्रियतमा-पति-देवता जिहि उमा रमा सिहाहिं ।
गुरुविनी सुकुमारि सिय तियमनि समुझि सकुचाहिं
मेरेही सुख सुखी सुख अपनो सपनहूँ नाहिं ।
गेहिनी गुन-गेहिनी गुन सुमिरि सोच समाहिं ॥
राम सीय सनेह बरनत अगम सुकबि सकाहिं ।
रामसीय-रहस्य तुलसी कहत राम-कृपाहिं ॥२६॥

चरचा चरनि सों चरची जानमनि रघुराइ ।
दूत-मुख सुनि लोक-धुनि घर घरनि बूझी आइ ॥
प्रिया निज अभिलाष रुचि कहि कहति सिय सकुचाइ ।
तीय तनय समेत तापस पूजिहौं बन जाइ ॥
जानि करुनासिंधु भावी-बिबस सकल सहाइ ।
धीर धरि रघुबीर भोरहि लिए लषन बोलाइ ॥
"तात तुरतहि साजि स्यंदन सीय लेहु चढ़ाइ ।
बालमीकि मुनीस-आस्रम आइयहु पहुँचाइ ॥
'भले हि नाथ' सुहाथ माथे राखि राम-रजाइ ।
चले तुलसी पालि सेवक-धरम-अवधि-अघाइ ॥२७॥

आए लषन लै सौंपी सिय मुनीसहि आनि ।
नाइ सिर रहे पाइ आसिष जोरि पंकजपानि ॥
बालमीकि बिलोकि ब्याकुल, लषन गरत गलानि ।
सर्वविद बूझत न बिधि की बामता पहिचानि ॥
जानि जिय अनुमान ही सिय सहस बिधि सनमानि ।

राम सद्गुन-धाम, परमिति भई कछुक मलानि ।।
दीनबंधु दयालु देवर देखि अति अकुलानि ।।
कहति बचन उदास तुलसीदास त्रिभुवन-रानि ।।२८।।

तौलौं बलि आपु ही कीबी बिनय समुझि सुधारि ।
जौलौं हौं सिखि लेउँ बन ऋषि-रीति बसि दिन चारि ।।
तापसी कहि कहा पठवति नृपनि को मनुहारि ।
बहुरि तिहि बिधि आइ कहिहै साधु कोउ हितकारि ।।
लषन लाल कृपाल ! निपटहि डारिबी न बिसारि ।
पालबी सब तापसनि ज्यों राजधरम बिचारि ।।
सुनत सीता-बचन मोचत सकल लोचन-बारि ।
बालमीकि न सके तुलसी सो सनेह सँभारि ।।२६।।

सुनि ब्याकुल भए उतरु कछु कह्यो न जाइ ।
जानि जिय बिधि बाम दीन्हों मोहिं सरुष सजाइ ।।
कहत हिय मेरी कठिनई लखि गई प्रीति लजाइ ।
आजु अवसर ऐसे हूँ जौं न चले प्रान बजाइ ।।
इतहि सीय-सनेह-संकट उतहि राम-रजाइ ।
मौनही गहि चरन गौने सिख सुआसिष पाइ ।।
प्रेम-निधि पितु को कहे मैं परुष-बचन अघाइ ।
पाप तेहि परिताप तुलसी उचित सहे सिराइ ।।३०।।

गौने मौनही बारहि बार परि परि पाय ।
जात जनु रथ चोर कर लछिमन मगन पछिताय ।।
असन बिनु बन, बरम बिनु रन, बच्यौ कठिन कुघाय ।

दुसह साँसति सहन को हनुमान ज्यायो जाय ॥
हेतु हौं सियहरन को तब, अबहुँ भयों सहाय ।
होत हठि मोहिं दाहिनो दिन दैव दारुन-दाय ॥
तज्यो तनु संग्राम जेहि लगि गीध जसी जटाय ।
ताहि हौं पहुँचाइ कानन चल्यों अवध सुभाय ॥
घोर हृदय कठोर करतब सृज्यो हौं बिधि बायँ ।
दास तुलसी जानि राख्यो कृपानिधि रघुराय ॥३१॥

पुत्रि ! न सोचिए आई हौं जनक-गृह जिय जानि ।
कालिही कल्यान कौतुक, कुसल तव, कल्यानि ॥
राजऋषि पितु ससुर, प्रभु पति, तू सुमंगल खानि ।
ऐसेहूँ थल बामता, बड़ि बाम बिधि की बानि ।
बोलि मुनि कन्या सिखाई प्रीति-गति पहिचानि ॥
आलसिन्ह की देवसरि सिय सेइयहु मन मानि ।
न्हाइ प्रातहि पूजिबो बट बिटप अभिमत-दानि ॥
सुवन-लाहु उछाहु, दिन दिन, देबि अनहित-हानि ॥
पाप-ताप-बिमोचनी कहि कथा सरस पुरानि ।
बालमीकि प्रबोधि तुलसी गई गरुइ गलानि ॥३२॥

जब तें जानकी रही रुचिर आस्रम आइ ।
गगन, जल, थल बिमल तब तें सकल मंगलदाइ ॥
निरस भूरुह सरस फूलत फलत अति अधिकाइ ।
कंद मूल अनेक अंकुर स्वाद सुधा लजाइ ॥
मलय मरुत, मराल-मधुकर-मोर-पिक-समुदाइ ।

मुदित-मन मृग बिहग बिहरत बिषम बैर बिहाइ ॥
रहत रबि अनुकूल दिन, ससि रजनि सजनि सुहाइ ।
सीय सुनि सादर सराहति सखिन्ह भलो मनाइ ॥
मोद-बिपिन-बिनोद चितवत लेत चितहिं चोराइ ।
राम बिनु सिय सुखद बन तुलसी कहै किमि गाइ ॥३३॥

सुभ दिन, सुभ घरी, नीको नखत, लगन सुहाइ ।
पूत जाये जानकी द्वै मुनिबधू उठीं गाइ ॥
हरषि बरषत सुमन सुर गहगहे बधाए बजाइ ।
भुवन कानन आस्रमनि रहे मोद मंगल छाइ ॥
तेहि निसा तहँ सत्रुसूदन रहे बिधिबस आइ ।
माँगि मुनि सों बिदा गवने भोर सो सुख पाइ ॥
मातु मौसी बहिनहूँ तें सासु तें अधिकाइ ।
करहिं तापस-तीय-तनया सीय-हित चित लाइ ॥
किए बिधि-ब्यवहार मुनिबर बिप्रबृंद बोलाइ ।
कहत सब ऋषिकृपा को फल भयो आजु अघाइ ॥
सुरुष ऋषि सुख सुतनि को, सिय सुखद सकल सहाइ ।
सूल राम-सनेह को तुलसी न जिय तें जाइ ॥३४॥

मुनिबर करि छठी कीन्हीं बारहें की रीति ।
बन-बसन पहिराइ तापस, तोषि पोषे प्रीति ॥
नामकरन सुअन्नप्रासन बेदबाँधी नीति ।
समय सब ऋषिराज करत समाज साज समीति ॥
बाल लालहिं, कहहिं "करिहैं राज सब जग जीति" ।

राम-सिय-सुत, गुरु-अनुग्रह, उचित अचल प्रतीति ।।
निरखि बाल-बिनोद तुलसी जात बासर बीति ।
पिय-चरित सिय-चित चितेरो लिखत नित हित-भीति ।।

बालक सीय के बिहरत मुदित मन दोउ भाइ ।
नाम लवकुस राम-सिय-अनुहरति सुंदरताइ ।।
देत मुनि मुनि-सिसु खेलौना ते लै धरत दुराइ ।
खेल खेलत नृप-सिसुन्ह के बालबृंद बोलाइ ।।
भूप भूषन बसन बाहन राज-साज सजाइ ।
बरम चरम कृपान सर धनु तून लेत बनाइ ।।
दुखी सिय पिय-बिरह तुलसी, सुखी सुत-सुख पाइ ।
आँच पय उफनात सींचत सलिल ज्यों सकुचाइ ।।३६।।

कैकेयी जौलों जियति रही ।
तौलों बात मातु सों मुहँ भरि भरत न भूलि कही ।।
मानी राम अधिक जननी तें जननिहु गँस न गही ।
सीय लषन रिपुदवन राम-रुख लखि सबकी निबही ।।
लोक-बेद-मरजाद दोष-गुन-गति चित-चखनचही ।
तुलसी भरत समुझि सुनि राखी राम-सनेह सही ।।३७।।

राग रामकली

रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावहिं सकल अवधवासी ।
अति उदार अवतार मनुज-बपु धरे ब्रह्म अज अबिनासी ।।
प्रथम ताड़का हति सुबाहु बधि, मख राख्यो द्विज-हितकारी ।
देखि दुखी अति सिला सापबस रघुपति बिप्रनारि तारी ।।

सब भूपन को गरब हस्यो हरि, भंज्यो संभु-चाप भारी ।
जनकसुता समेत आवत गृह परसुराम अति मदहारी ॥
तात-बचन तजि राजकाज सुर चित्रकूट मुनिबेष धस्यो ।
एक नयन कीन्हों सुरपतिसुत, बधि बिराध ऋषि-सोक हस्यो ॥
पंचबटी पावन राघव करि सूपनखा कुरूप कीन्हों ।
खर-दूषन-संहारि कपटमृग गीधराज कहँ गति दीन्हीं ॥
हति कबंध सुग्रीव सखा करि, बेधे ताल, बालि मास्यो ।
बानर रीछ सहाय अनुज सँग सिंधु बाँधि जस बिस्तास्यो ॥
सकुल पुत्र दल सहित दसानन मारि अखिल सुर-दुख टास्यो ।
परमसाधु जिय जानि बिभीषन लंकापुरी तिलक सास्यो ॥
सीता अरु लछिमन सँग लीन्हें औरहु जिते दास आए ।
नगर निकट बिमान आए सब नर-नारी देखन धाए ॥
सिव बिरंचि सुक नारदादि मुनि अस्तुति करत बिमल बानी ।
चौदह भुवन चराचर हरषित, आए राम रजधानी ॥
मिले भरत जननी गुरु परिजन चाहत परम अनंद भरे ।
दुसह-बियोग-जनित दारुन दुख रामचरन देखत बिसरे ॥
बेद - पुरान बिचारि लगन सुभ महाराज अभिषेक कियो ।
तुलसिदास जिय जानि सुअवसर भगति-दान तब माँगि लियो ॥३८

कवितावली

कवितावली

बालकांड

सवैया

अवधेस के द्वारे सकारे गई, सुत गोद कै भूपति लै निकसे।
अवलोकि हौं सोच बिमोचन को ठगि सी रही, जे न ठगे धिक से॥
तुलसी मनरंजन रंजित-अंजन नैन सु खंजन-जातक से।
सजनी ससि में समसील उभै नवनील सरोरुह से बिकसे॥१॥
पग नूपुर औ पहुँची करकंजनि, मंजु बनी मनिमाल हिये।
नवनील कलेवर पीत झँगा झलकैं, पुलकैं नृप गोद लिये॥
अरबिंद सो आनन, रूपमरंद अनंदित लोचन-भृंग पिये।
मन मों न बस्यौ अस बालक जौं तुलसी जग में फल कौन जिये?॥२॥
तन की दुति स्याम सरोरुह, लोचन कंज की मंजुलताई हरैं।
अति सुंदर सोहत धूरि भरे, छवि भूरि अनंग की दूरि धरैं॥
दमकैं दँतियाँ दुति दामिनि ज्यों, किलकैं कल बाल-बिनोद करैं।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी-मन-मंदिर में बिहरैं॥३॥
कबहूँ ससि माँगत आरि करै, कबहूँ प्रतिबिंब निहारि डरैं।
कबहूँ करताल बजाइ कै नाचत, मातु सबै मन मोद भरैं॥
कबहूँ रिसिआइ कहैं हठि कै, पुनि लेत सोई जेहि लागि अरैं।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी-मन-मंदिर में बिहरैं॥४॥

बर दंत की पंगति कुंदकली, अधराधर-पल्लव खोलन की ।
चपला चमकै घन बीच जगै छबि मोतिन माल अमोलन की ॥
घुँघुरारी लटैं लटकैं मुख ऊपर, कुंडल लोल कपोलन की ।
निवछावरि प्रान करै तुलसी, बलि जाउँ लला इन बोलन की ॥५॥
पदकंजनि मंजु बनी पनहीं, धनुहीं सर पंकजपानि लिये ।
लरिका सँग खेलत डोलत हैं सरजूतट चौहट हाट हिये ॥
तुलसी अस बालक सों नहिं नेह कहा जप जोग समाधि किये ? ।
नर ते खर सूकर स्वान समान, कहौ जग में फल कौन जिये ॥६॥
सरजू बर तीरहि तीर फिरैं रघुबीर, सखा अरु बीर सबै ।
धनुहीं कर तीर, निषंग कसे कटि, पीत दुकूल नवीन फबै ॥
तुलसी तेहि औसर लावनिता दस, चारि, नौ, तीनि, इकीस सबै ।
मति-भारति पंगु भई जो निहारि, बिचारि फिरी उपमा न पबै ॥७॥

कवित्त

छोनी में के छोनीपति छाजै जिन्हैं छत्रछाया
छोनी छोनी छाये छिति आए निमिराज के ।
प्रबल प्रचंड बरिबंड बर बेर बपु
बरबे को बोले बयदेही बरकाज के ॥
बोले बंदी बिरुद बजाइ बर बाजनेऊ,
बाजे बाजे बीर बाहु धुनत समाज के ।
तुलसी मुदित मन पुरनर-नारि जेते
बारबार हेरैं मुख औध-मृगराज के ॥८॥

सीय के स्वयंबर समाज जहाँ राजनि को,
राजनि के राजा महाराजा जानै नाम को ?
पवन, पुरंदर, कृसानु, भानु, धनद-से,
गुन के निधान रूपधाम सोम काम को ? ॥
बान बलवान जातुधानप सरीखे सूर
जिन्हके गुमान सदा सालिम संग्राम को।
तहाँ दसरत्थ के समत्थ नाथ तुलसी के
चपरि चढ़ायो चाप चंद्रमा-ललाम को ॥९॥

मयनमहन पुरदहन गहन जानि
आनि कै सबै को सारु धनुष गढ़ायो है।
जनक-सदसि जेते भले भले भूमिपाल
किए बलहीन, बल आपनो बढ़ायो है॥
कुलिस कठोर कूर्म-पीठि तें कठिन अति,
हठि न पिनाक काहू चपरि चढ़ायो है।
तुलसी सो राम के सरोज-पानि परसत ही,
टूट्यो मानों बारे तें पुरारि ही पढ़ायो है ॥१०॥

छप्पय

डिगति उर्बि अति गुर्बि, सर्ब पब्बै समुद्र सर।
ब्याल बधिर तेहि काल, बिकल दिगपाल चराचर॥
दिग्गयंद लरखरत, परत दसकंठ मुक्खभर।
सुरबिमान हिमभानु भानु संघटित परस्पर॥
चौंके बिरंचि संकर सहित, कोलकमठ अहि कलमल्यौ।

ब्रह्मांड खंड कियो चंड धुनि जबहिं राम सिवधनु दल्यौ ॥११॥

घनाक्षरी

लोचनाभिराम घनस्याम रामरूप सिसु,
सखी कहै सखी सों तू प्रेमपय पालि, री !
बालक नृपालजू के ख्याल ही पिनाक तोर्‍यो,
मंडलीक - मंडली - प्रताप - दाप दालि री ॥
जनक को, सिया को, हमारो, तेरो, तुलसी को,
सबको भावतो ह्वैहै मैं जो कह्यो कालि री।
कौसिला की कोखि पर तोषि तन वारिये री,
राय दसरत्थ की बलैया लीजै आलि री ।१२।
दूब दधि रोचना कनकथार भरि भरि,
आरती सँवारि बर नारि चलीं गावतीं ।
लीन्हें जयमाल करकंज सोहैं जानकी के,
"पहिराओ राघो जू को" सखियाँ सिखावतीं।
तुलसी मुदितमन जनक नगरजन,
झाँकती झरोखे लागीं सोभा रानी पावतीं ।
मनहुँ चकोरी चारु बैठीं निज निज नीड़
चंद की किरन पीवैं, पलकैं न लावतीं ।१३।
नगर निसान बर बाजैं, ब्योम दुंदुभी,
बिमान चढ़ि गान कै कै सुरनारि नाचहीं ।
जय जय तिहूँ पुर, जयमाल राम-उर,
बरषैं सुमन सुर, रूरे रूप राचहीं ॥

जनक को पन जयो, सबको भावतो भयो,
तुलसी मुदित रोम रोम मोद माचहीं।
साँवरो किसोर, गोरी सोभा पर तृन तोरि
'जोरी जियौ जुग जुग' सखीजन जाँचहीं।१४।

भले भूप कहत भले भदेस भूपनि सों
"लोक लखि बोलिए पुनीत रीतिमारखी"।
जगदंबा जानकी, जगतपितु रामभद्र,
जानि जिय जोवो जो न लागै मुँह कारखी॥
देखे हैं अनेक ब्याह, सुने हैं पुरान बेद,
बूझे हैं सुजान साधु नर-नारि पारखी।
ऐसे सम समधी समाज ना बिराजमान,
राम से न बर, दुलही न सीय सारखी।१५।

बानी बिधि गौरी हर सेसहू गनेस कही,
सही भरी लोमस भुसुंडि बहुबारिखो।
चारिदस भुवन निहारि नर-नारि सब,
नारद को परदा न नारद सो पारिखो॥
तिन कही जग में जगमगाति जोरी एक,
दूजो को कहैया औ सुनैया चष चारिखो।
रमा, रमारमन, सुजान हनुमान कही,
"सीय-सी न तीय, न पुरुष राम-सारिखो"।१६।

सवैया

दूलह श्री रघुनाथ बने, दुलही सिय सुंदर मंदिर माहीं।

गावतिं गीत सबै मिलि सुंदरि, बेद जुआ जुरि बिप्र पढ़ाहीं ॥
राम को रूप निहारति जानकि, कंकन के नग की परछाहीं।
यातें सबै सुधि भूलि गई, कर टेकि रही पल टारति नाहीं।१७।

कवित्त

भूपमंडली प्रचंड चंडीस-कोदंड खंड्यौ,
चंड बाहुदंड जाको ताही सों कहतु हौं।
कठिन कुठार-धार धारिबे की धीरताहि
बीरता बिदित ताकी देखियै चहतु हौं ॥
'तुलसी' समाज राज तजि सो बिराजै आजु,
गाज्यौ मृगराज गजराज ज्यों गहतु हौं।
छोनी में न छाँड्यौ छप्यौ छोनिप को छोना छोटो,
छोनिप-छपन बाँकी बिरुद बहतु हौं।१८।
निपट निदरि बोले बचन कुठारपानि,
मानि त्रास औनिपन मानौ मौनता गही।
रोषे माषे लषन अकनि अनखौहीं बातें,
तुलसी बिनीत बानी बिहँसि ऐसी कही ॥
"सुजस तिहारो भरो भुवननि, भृगुनाथ!
प्रगट प्रताप आपु कह्यो सो सबै सही।
टूट्यो सो न जुरैगो सरासन महेसजू को,
रावरी पिनाक में सरीकता कहा रही" ? ॥१९॥

सवैया

गर्भ के अर्भक काटन को पटु-धार कुठार कराल है जाको।

सोई हौं बूझत राज-सभा 'धनु को दल्यो' ? हौं दलिहौं बल ताको ॥
लघु आनन उत्तर देत बड़ो, लरिहै, मरिहै, करिहै कछु साको ।
गोरो गरूर गुमान भरो कहौ कौसिक छोटो सो ढोटो है काको ॥ २० ॥

घनाक्षरी

मख राखिबे के काज राजा मेरे संग दये,
जीते जातुधान, जे जितैया बिबुधेस के ।
गौतम की तीय तारी, मेटे अघ भूरि भारी,
लोचन-अतिथि भए जनक जनेस के ॥
चंड बाहुदंड बल चंडीस-कोदंड खंड्यो,
ब्याही जानकी, जीते नरेस देस देस के ।
साँवरे गोरे सरीर, धीर महाबीर दोऊ,
नाम राम-लषन, कुमार कोसलेस के ॥ २१ ॥

मत्तगयंद सवैया

काल कराल नृपालन के धनुभंग सुने फरसा लिए धाए ।
लक्खन-राम बिलोकि सप्रेम, महारिसि तें फिरि आँखि दिखाए ॥
धीर-सिरोमनि बीर बड़े, बिनयी, बिजयी रघुनाथ सुहाए ।
लायक हे भृगुनायक सो धनु-सायक सौंपि सुभाय सिधाए ॥ २२ ॥

अयोध्या कांड

मत्तगयंद सवैया

कीर के कागर ज्यों नृपचीर बिभूषन, उप्पम अंगनि पाई ।
औध तजी मगबास के रूख ज्यों, पंथ के साथी ज्यों लोग-लुगाई ॥
संग सुबंधु, पुनीत प्रिया मनो धर्म-क्रिया धरि देह सुहाई ।
राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाई ॥१॥
कागर-कीर ज्यों भूषन चीर सरीर लस्यो तजि नीर ज्यों काई ।
मातु-पिता प्रिय लोग सबै सनमानि सुभाय सनेह सगाई ॥
संग सुभामिनि भाइ भलो, दिन द्वै जनु औध हुते पहुनाई ।
राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाऊ की नाई ॥२॥

घनाक्षरी

सिथिल सनेह कहै कौसिला सुमित्राजू सों,
मैं न लखी सौति, सखी ! भगिनी ज्यों सेई है ।
कहैं मोहिं मैया, कहौं 'मैं न मैया भरत की;
बलैया लैहौं, भैया ! तेरी मैया कैकेई है' ॥
'तुलसी' सरल भाय रघुराय माय मानी,
काय मन बानी हूँ न जानी कै मतेई है ।
बाम बिधि मेरो सुख सिरिससुमन सम
ताको छल - छुरी कोह - कुलिस लै टेई है ॥३॥
'कीजै कहा, जीजी जू !' सुमित्रा परि पायँ कहै,
'तुलसी सहावै बिधि सोई सहियतु है ।

रावरो सुभाव राम-जन्म ही तें जानियत,
भरत की मातु को कि ऐसो चहियतु है ?
जाई राजघर, ब्याहि आई राजघर माहँ,
राज-पूत पाए हूँ न सुख लहियतु है।
देह सुधागेह ताहि मृगहू मलीन कियो,
ताहू पर बाहु बिनु राहु गहियतु है" ।४।

मत्तगयंद सवैया

नाम अजामिल-से खलकोटि अपार नदी भव बूड़त काढ़े।
जो सुमिरे गिरि-मेरु सिला-कन, होत अजाखुर बारिधि बाढ़े ॥
'तुलसी' जेहि के पद-पंकज तें प्रगटी तटिनी जो हरै अघ गाढ़े।
सो प्रभु स्वै सरिता तरिबे कहँ माँगत नाव करारे ह्वै ठाढ़े ।५।
एहि घाट तें थोरिक दूरि अहै कटि लौं जल-थाह देखाइहौं जू।
परसे पगधूरि तरै तरनी, घरनी घर क्यों समुझाइहौं जू ?
'तुलसी' अवलंब न और कछू, लरिका केहि भाँति जिआइहौं जू ?
बरु मारिए मोहिं, बिना पग धोए हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौं जू ।६।
रावरे दोष न पायँन को, पगधूरि को भूरि प्रभाउ महा है।
पाहन तें बन-बाहन काठ को कोमल है, जल खाइ रहा है ॥
पावन पायँ पखारि कै नाव चढ़ाइहौं, आयसु होत कहा है ?
'तुलसी' सुनि केवट के बर बैन हँसे प्रभु जानकी ओर हहा है ।७।

घनाक्षरी

पात भरी सहरी, सकल सुत बारे बारे,
केवट की जाति कछू बेद ना पढ़ाइहौं।

सब परिवार मेरो याही लागि, राजा जू !
हौं दीन बित्तहीन कैसे दूसरी गढ़ाइहौं ? ।
गौतम की घरनी ज्यों तरनी तरैगी मेरी,
प्रभु सों निषाद ह्वैकै बाद न बढ़ाइहौं ।
'तुलसी' के ईस राम रावरी सौं, साँची कहौं,
बिना पग धोए नाथ नाव न चढ़ाइहौं ।८।

जिनको पुनीत बारि धारे सिर पै पुरारि,
त्रिपथगामिनि-जसु बेद कहै गाइ कै ।
जिनको जोगींद्र मुनिबृंद देव देह भरि
करत बिराग जप जोग मन लाइ कै ॥
तुलसी जिनकी धूरि परसि अहल्या तरी,
गौतम सिधारे गृह गौनो-सो लिवाइ कै ।
तेई पायँ पाइकै चढ़ाइ नाव धोए बिनु
ख्वैहौं न पठावनी कै ह्वैहौं न हँसाइ कै ? ।९।

प्रभुरुख पाइ कै बोलाइ बाल घरनिहिं
बंदि कै चरन चहूँ दिसि बैठे घेरि-घेरि ।
छोटो सो कठौता भरि आनि पानी गंगाजू को,
धोइ पायँ पीयत पुनीत बारि फेरि-फेरि ॥
'तुलसी' सराहैं ताको भाग सानुराग सुर,
बरषैं सुमन जय जय कहैं टेरि-टेरि ।
बिबुध-सनेह-सानी बानी असयानी सुनि,
हँसे राघौ-जानकी लषन-तन हेरि-हेरि ॥१०॥

दुर्मिल सवैया

पुर तें निकसी रघुबीर-बधू, धरि धीर दए मग में डग द्वै ।
झलकीं भरि भाल कनी जल की, पुट सूखि गए मधुराधर वै ॥
फिरि बूझति हैं 'चलनो अब केतिक, पर्नकुटी करिहौ कित ह्वै ?' ।
तिय की लखि आतुरता पिय की अँखियाँ अतिचारु चलीं जल च्वै।११

"जल को गए लक्खन हैं लरिका, परिखौ, पिय ! छाँह घरीक ह्वै ठाढ़े ।
पोंछि पसेउ बयारि करौं, अरु पायँ पखारिहौं भूभुरि डाढ़े" ॥
'तुलसी' रघुबीर-प्रिया स्रम जानि कै बैठि बिलंब लौं कंटक काढ़े ।
जानकी, नाह को नेह लख्यो, पुलको तनु,बारि बिलोचन बाढ़े ।१२।

ठाढ़े हैं नौ द्रुम डार गहे; धनु काँधे, धरे, कर सायक लै ।
बिकटी भ्रुकुटी बड़री अँखियाँ, अनमोल कपोलन की छबि है ॥
'तुलसी' असि मूरति आनि हिये जड़ डारि धौं प्रान निछावरि कै ।
स्रम-सीकर साँवरि देह लसै मनो रासि महातम तारक-मै ।१३।

घनाक्षरी

जलज-नयन, जलजानन, जटा है सिर,
जोबन उमंग अंग उदित उदार हैं ।
साँवरे-गोरे के बीच भामिनी सुदामिनी-सी,
मुनिपट धरे, उर फूलनि के हार हैं ॥
करनि सरासन सिलीमुख, निषंग कटि,
अति ही अनूप काहू भूप के कुमार हैं ।
'तुलसी' बिलोकि कै तिलोक के तिलक तीनि,
रहे नरनारि ज्यों चितेरे चित्रसार हैं ।१४।

आगे सोहै साँवरो कुवँर, गोरो पाछे पाछे,
आछे मुनि-बेष धरे लाजत अनंग हैं।
बान बिसिषासन, बसन बन ही के कटि
कसे हैं बनाइ, नीके राजत निषंग हैं॥
साथ निसिनाथमुखी पाथनाथ-नंदिनी-सी,
'तुलसी' बिलोके चित लाइ लेत संग हैं।
आनँद उमंग मन, जोबन उमंग तन,
रूप की उमंग उमगत अंग अंग हैं।१५।

कवित्त

सुंदर बदन, सरसीरुह सुहाए नैन,
मंजुल प्रसून माथे मुकुट जटनि के।
अंसनि सरासन लसत, सुचि कर सर,
तून कटि, मुनिपट लूटक पटनि के॥
नारि सुकुमारि संग, जाके अंग उबटि कै,
बिधि बिरचे बरूथ बिद्युत-छटनि के।
गोरे को बरन देखे सोनो न सलोनो लागै,
साँवरे बिलोके गर्ब घटत घटनि के।१६।
बल्कल बसन, धनुबान पानि, तून कटि,
रूप के निधान, घन-दामिनी-बरन हैं।
'तुलसी' सुतीय संग सहज सुहाए अंग,
नवल कवँल हू तें कोमल चरन हैं॥

औरै सो बसंत, औरै रति, औरै रतिपति,
मूरति बिलोके तन मन के हरन हैं।
तापस बेषै बनाइ, पथिक पथै सुहाइ
चले लोक-लोचननि सुफल करन हैं।१७।

सवैया

बनिता बनी स्यामल गौर के बीच, बिलोकहु, री सखी! मोहिं-सी है।
मग जोग न, कोमल क्यों चलिहै? सकुचाति मही पद-पंकज छ्वै॥
'तुलसी' सुनि ग्रामबधू बिथकीं, पुलकीं तन औ चले लोचन च्वै।
सब भाँति मनोहर मोहन रूप, अनूप हैं भूप के बालक द्वै।१८।
साँवरे गोरे सलोने सुभाय, मनोहरता जिति मैन लियो है।
बान कमान निषंग कसे, सिर सोहैं जटा, मुनिबेष कियो है॥
संग लिए बिधु-बैनी बधू, रति को जेहि रंचक रूप दियो है।
पाँयन तौ पनहीं न, पयादेहि क्यों चलिहैं? सकुचात हियो है।१९।
रानी मैं जानी अजानी महा, पबि पाहन हूँ तें कठोर हियो है।
राजहु काज अकाज न जान्यो, कह्यो तिय को जिन कान कियो है॥
ऐसी मनोहर मूरति ये, बिछुरे कैसे प्रीतम लोग जियो है?
आँखिन में, सखि! राखिबे जोग, इन्हें किमि कै बनबास दियो है? २०
सीस जटा, उर बाहु बिसाल, बिलोचन लाल, तिरीछी-सी भौंहैं।
तून सरासन बान धरे, 'तुलसी' बन-मारग में सुठि सोहैं॥
सादर बारहिं बार सुभाय चितै तुम त्यों हमरो मन मोहैं।
पूछति ग्रामबधू सिय सों 'कहो साँवरे-से, सखि रावरे को हैं?'२१।
सुनि सुंदर बैन सुधारस-साने, सयानी हैं जानकी जानी भली।

तिरछे करि नैन दै सैन तिन्हैं समुझाइ कछू मुसुकाइ चली ॥
'तुलसी' तेहि औसर सोहैं सबै अवलोकति लोचन-लाहु अली ।
अनुराग-तड़ाग में भानु-उदै बिगसीं मनो मंजुल कंज-कली ।२२।
धरि धीर कहैं "चलु देखिय जाइ जहाँ सजनी रजनी रहिहैं ।
कहिहै जग पोच, न सोच कछू, फल लोचन आपन तौ लहिहैं ॥
सुख पाइहैं कान सुने बतियाँ, कल आपुस में कछु पै कहिहैं" ।
'तुलसी' अति प्रेम लगीं पलकैं, पुलकीं लखि राम हिये महि हैं ।२३।
पद कोमल, स्यामल गौर कलेवर, राजत कोटि मनोज लजाए ।
कर बान सरासन, सीस जटा, सरसीरुह लोचन सोन सुहाए ॥
जिन देखे, सखी! सत भायहु तें 'तुलसी' तिन तौ मन फेरि न पाए ।
यहि मारग आजु किसोर बधू बिधु-बैनी समेत सुभाय सिधाए ।२४।
मुखपंकज, कंज बिलोचन मंजु, मनोज-सरासन-सी बनी भौंहैं ।
कमनीय कलेवर, कोमल, स्यामल गौर-किसोर, जटा सिर सोहैं ॥
'तुलसी' कटि तून, धरे धनु बान, अचानक दीठि परी तिरछोहैं ।
केहि भाँति कहौं, सजनी! तोहिसों मृदुमूरति द्वै निबसीं मन मो हैं ।२५
प्रेम सों पीछे तिरीछे प्रियाहि चितै चितु दै, चले लै चित चोरे ।
स्याम सरीर पसेउ लसै, हुलसै 'तुलसी' छबि सो मन मोरे ॥
लोचन लोल, चलैं भ्रुकुटी, कल काम-कमानहु सो तृन तोरे ।
राजत राम कुरंग के संग, निषंग कसे, धनु सों सर जोरे ।२६।
सर चारिक चारु बनाइ कसे कटि, पानि सरासन सायक लै ।
बन खेलत राम फिरैं मृगया, 'तुलसी' छबि सो बरनै किमि कै ॥
अवलोकि अलौकिक रूप मृगी मृग चौंकि चकैं चितवैं चित दै ।

न डगैं, न भगैं जिय जानि सिलीमुख पंच धरे रतिनायक हैं।२७।

बिंध्य के बासी उदासी तपोब्रतधारी महा, बिनु नारि दुखारे।
गौतमतीय तरी, 'तुलसी' सो कथा सुनि भे मुनिबृंद सुखारे॥
ह्वैहैं सिला सब चंद्रमुखी परसे पद-मंजुल-कंज तिहारे।
कीन्हीं भली, रघुनायक जू करुना करि कानन को पगु धारे।२८।

अरण्य कांड

पंचबटी बर पर्नकुटी तर बैठे हैं राम सुभाय सुहाए।
सोहैं प्रिया, प्रिय बंधु लसै, 'तुलसी' सब अंग घने छबि छाए॥
देखि मृगा मृगनैनी कहे प्रिय बैन, ते प्रीतम के मन भाए।
हेमकुरंग के संग सरासन-सायक लै रघुनायक धाए।१।

किष्किंधा कांड

जब अंगदादिन की मति-गति मंद भई,
पवन के पूत को न कूदिबे को पलु गो।
साहसी ह्वै सैल पर सहसा सकेलि आइ
चितवत चहूँ ओर, औरन को कलु गो॥
'तुलसी' रसातल को निकसि सलिल आयो,
कोल कलमल्यो, अहि कमठ को बलु गो।
चारिहू चरन के चपेट चाँपे चिपटि गो,
उचके उचकि चारि अंगुल अचलु गो।१।

सुंदर कांड

बासव बरुन बिधि बन तें सुहावनो,
दसानन को कानन बसंत को सिंगारु सो।
समय पुराने पात परत डरत बात,
पालत, लालत रति मार को बिहारु सो॥
देखे बर बापिका तड़ाग बाग को बनाव
रागबस भो बिरागी पवनकुमार सो।
सीय की दसा बिलोकि बिटप असोक-तर,
'तुलसी' बिलोक्यो सो तिलोक सोक-सारु सो।१।
माली मेघमाल, बनपाल बिकराल भट,
नीके सब काल सींचे सुधासार नीर को।
मेघनाद तें दुलारो प्रान तें पियारो बाग,
अति अनुराग जिय जातुधान धीर को॥
'तुलसी' सो जानि सुनि, सीय को दरस पाइ,
पैठो बाटिका बजाइ बल रघुबीर को।
बिद्यमान देखत दसानन को कानन सो,
तहस-नहस कियो साहसी समीर को।२।
बसन बटोरि बोरि-बोरि तेल तमीचर,
खोरि-खोरि धाइ आइ बाँधत लँगूर हैं।

तैसो कपि कौतुकी डरात ढीलो गात कै-कै,
लात के अघात सहै जी में कहै 'कूर हैं' ॥
बाल किलकारी कै-कै, तारी दै-दै गारी देत,
पाछे लोग बाजत निसान ढोल तूर हैं।
बालधी बढ़न लागी, ठौर-ठौर दीन्हीं आगि,
बिंध की दवारि, कैधों कोटिसत सूर हैं।३।
लाइ-लाइ आगि, भागे बाल-जाल जहाँ तहाँ,
लघु ह्वै निबुकि, गिरिमेरु तें बिसाल भो।
कौतुकी कपीस कूदि कनक-कँगूरा चढ़ि,
रावन-भवन जाइ ठाढ़ो तेहि काल भो ॥
'तुलसी' बिराज्यो ब्योम बालधी पसारि भारी,
देखे हहरात भट काल तें कराल भो।
तेज को निधान मानो कोटिक कृसानु भानु,
नख बिकराल, मुख तैसो रिस-लाल भो।४।
बालधी बिसाल बिकराल ज्वाल-जाल मानौं,
लंक लीलिबे को काल रसना पसारी है।
कैधों ब्योमबीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु,
बीररस बीर तरवारि-सी उघारी है ॥
'तुलसी' सुरेस-चाप, कैधों दामिनी-कलाप,
कैधों चली मेरु तें कृसानु-सरि भारी है।
देखे जातुधान जातुधानी अकुलानी कहैं
'कानन उजार्‌यो अब नगर प्रजारीहै'।५।

जहाँ तहाँ बुबुक बिलोकि बुबुकारी देत,
"जरत निकेत धाओ धाओ लागि आगि रे।
कहाँ तात, मात, भ्रात, भगिनी, भामिनी, भाभी,
ढोटे-छोटे छोहरा अभागे भोरे भागि रे॥
हाथी छोरो, घोरा छोरो, महिष बृषभ छोरो,
छेरी छोरो, सोवै सो जगाओ जागि जागि रे"।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
"बार बार कह्यो पिय कपि सों न लागि रे!"॥६॥
देखि ज्वालजाल, हाहाकार दसकंध सुनि,
कह्यो 'धरो धरो' धाए बीर बलवान हैं।
लिये सूल, सेल, पास, परिघ, प्रचंड दंड,
भाजन सनीर, धीर धरे धनु-बान हैं॥
'तुलसी' समिध सौंज, लंक-जज्ञकुंड लखि,
जातुधान पुंगीफल, जव, तिल, धान हैं।
स्रुवा सो लँगूल बलमूल, प्रतिकूल हबि,
स्वाहा महा हाँकि-हाँकि हुनै हनुमान हैं।७।
गाज्यो कपि गाज ज्यों, बिराज्यो ज्वालजाल-जुत,
भाजे बीर धीर, अकुलाइ उठ्यो रावनो।
'धाओ धाओ धरो' सुनि धाए जातुधान-धारि,
बारिधारा उलदैं जलद ज्यों न सावनो।
लपट झपट झहराने, हहराने बात
भहराने भट पस्यो प्रबल परावनो।

ढकनि ढकेलि पेलि सचिव चले लै ठेलि,
'नाथ न चलैगो बल अनल भयावनो' । ८ ।
बड़ो बिकराल बेष देखि, सुनि सिंहनाद,
उठ्यो मेघनाद, सबिषाद कहै रावनो ।
बेग जीत्यो मारुत, प्रताप मारतंड कोटि,
कालऊ करालता बड़ाई जीतो बावनो ।
'तुलसी' सयाने जातुधान पछिताने मन,
'जाको ऐसो दूत सो साहब अबै आवनो ।'
काहे की कुसल रोषे राम बामदेवहू के,
बिषम बली सों बादि बैर को बढ़ावनो । ९ ।
'पानी पानी पानी' सब रानी अकुलानी कहैं,
जाति हैं परानी, गति जानि गजचालि है ।
बसन बिसारैं, मनि-भूषन सँभारत न,
आनन सुखाने कहैं 'क्योंहूँ कोऊ पालिहै ?'
'तुलसी' मँदोवै मीजि हाथ, धुनि माथ कहै,
'काहू कान कियो न मैं कह्यो केतो कालि है ।'
बापुरो बिभीषन पुकारि बार बार कह्यो,
'बानर बड़ी बलाइ घने घर घालिहै' ।१०।
कानन उजारयो तौ उजारयो न बिगारयो कछू,
बानर बिचारो बाँधि आन्यो हठि हार सों ।
निपट निडर देखि काहू ना लख्यो बिसेषि,
दीन्हों ना छुड़ाइ कहि कुल के कुठार सों ।

छोटे औ बड़ेरे मेरे पूतऊ अनेरे सब,
साँपनि सों खेलैं, मेलैं गरे छुराधार सों ।'
तुलसी मँदोवै रोइ-रोइ कै बिगोवै आपु,
'बार बार कह्यौ मैं पुकारि दाढ़ीजार सों' ।११।
रानी अकुलानी सब डाढ़त परानी जाहिं,
सकैं ना बिलोकि बेष केसरीकुमार को ।
मींजि-मींजि हाथ, धुनैं माथ दसमाथ-तिय,
'तुलसी' तिलौ न भयो बाहिर अगार को ।
सब असबाब डाढ़ो, मैं न काढ़ो तैं न काढ़ो,
जिय की परी, सँभार सहन भँडार को ?
खीझति मँदोवै सबिषाद देखि मेघनाद,
'बयो लुनियत सब याही दाढ़ीजार को' ॥१२॥
रावन की रानी जातुधानी बिलखानी कहैं,
हा हा ! कोऊ कहै बीसबाहु दसमाथ सों ।
काहे मेघनाद, काहे काहे, रे महोदर तू,
धीरज न देत, लाइ लेत क्यों न हाथ सों ?
काहे अतिकाय, काहे काहे रे अकंपन !
अभागे तिय त्यागे भोंड़े भागे जात साथ सों ? ।
तुलसी बढ़ाय बादि साल तें बिसाल बाहैं,
याही बल, बालिसो ! बिरोध रघुनाथ सों !।१३॥
हाट, बाट, कोट, ओट, अट्टनि, अगार, पौरि,
खोरि-खोरि दौरि-दौरि दीन्हीं अति आगि है ।

आरत पुकारत, सँभारत न कोऊ काहू,
व्याकुल जहाँ सों तहाँ लोग चले भागि हैं ॥
बालधी फिरावै बार बार झहरावै, झरैं
बूँदिया-सी, लंक पघिलाइ पाग पागिहै ।
'तुलसी' बिलोकि अकुलानी जातुधानी कहैं,
'चित्रहू के कपि सों निसाचर न लागिहै' ॥१४॥
'लागि लागि आगि,' भागि-भागि चले जहाँ तहाँ,
धीय को न माय, बाप पूत न सँभारहीं ।
छूटे बार, बसन उघारे, धूमधुंध अंध;
कहैं बारे बूढ़े 'बारि बारि' बार-बार हीं ॥
हय हिहिनात भागे जात, घहरात गज,
भारी भीर ठेलि-पेलि रौंदि खौंदि डारहीं ।
नाम लै चिलात, बिललात अकुलात अति
'तात तात ! तौंसियत, झौंसियत झारहीं' ॥१५॥
लपट कराल ज्वालजालमाल दहूँ दिसि,
धूम अकुलाने पहिचानै कौन काहि रे ?
पानी को ललात, बिललात, जरे गात जात,
परे पाइमाल जात, भ्रात ! तू निबाहि रे ॥
प्रिया तू पराहि, नाथ नाथ ! तू पराहि, बाप
बाप ! तू पराहि, पूत पूत ! तू पराहि रे ।
'तुलसी' बिलोकि लोग व्याकुल बिहाल कहैं
लेहि दससीस अब बीस चख चाहि रे ॥१६॥

बीथिका बजार प्रति, अटनि अगार प्रति,
पँवरि पगार प्रति, बानर बिलोकिए।
अध ऊर्द्ध बानर, बिदिसि दिसि बानर है,
मानहु रह्यो है भरि बानर तिलोकिए॥
मूँदे आँखि हीय में, उघारे आँखि आगे ठाढ़ो,
धाइ जाइ जहाँ तहाँ और कोऊ को किए?।
'लेहु अब लेहु, तब कोऊ' न सिखाओ मानो,
सोई सतराइ जाइ जाहि जाहि रोकिए॥१७॥
एक करै धौज, एक कहै काढ़ौ सौंज,
एक औंजि पानी पी कै कहै 'बनत न आवनो'।
एक परे गाढ़े, एक डाढ़त हीं काढ़े, एक
देखत हैं ठाढ़े, कहैं 'पावक भयावनो'॥
'तुलसी' कहत एक नीके हाथ लाए कपि,
अजहूँ न छाँड़ै बाल गाल को बजावनो।
धाओ रे, बुझाओ रे कि बावरे हौ रावरे, या
औरै आगि लागी, न बुझावै सिंधु सावनो।१८।
कोपि दसकंध तब प्रलय-पयोद बोले,
रावन-रजाइ धाइ आए जूथ जोरि कै।
कह्यो लंकपति लंक बरत बुताओ बेगि,
बानर बहाइ मारौ महा बारि बोरि कै॥
'भले नाथ!' नाइ माथ चले पाथप्रदनाथ,

जीवन तें जागी आगी, चपरि चौगुनी लागी,
'तुलसी' भभरि मेघ भागे मुख मोरि कै ।१६।
इहाँ ज्वाल जरे जात, उहाँ ग्लानि गरे गात,
सूखे सकुचात सब कहत पुकार हैं ।
"जुग-षट भानु देखे, प्रलय-कृसानु देखे,
सेष-मुख-अनल बिलोके बार बार हैं ॥
तुलसी सुन्यो न कान सलिल सर्पी समान,
अति अचरज कियो केसरीकुमार है" ।
बारिद बचन सुनि धुनैं सीस सचिवन्ह,
कहैं 'दससीस-ईस-बामता-बिकार है' ।२०।
"पावक, पवन, पानी, भानु, हिमवान, जम,
काल, लोकपाल मेरे डर डाँवाडोल हैं ।
साहिब महेस सदा, संकित रमेस मोहिं,
महातप-साहस बिरंचि लीन्हें मोल हैं ॥
'तुलसी' तिलोक आजु दूजो न बिराजै राजा,
बाजे-बाजे राजनि के बेटा-बेटी ओल हैं ।
को है ईस नाम को ? जो बाम होत मोहू सो को ?
मालवान ! रावरे के बावरे-से बोल हैं" ।२१।
"भूमि भूमिपाल, ब्यालपालक पताल, नाक-
पाल, लोकपाल जेते सुभट समाज हैं ।
कहै मालवान "जातुधानपति रावरे को
मनहूँ अकाज आनै ऐसो कौन आज है ?

राम-कोह-पावक, समीर सीयस्वास, कीस-
ईस-बामता बिलोकु, बानर को ब्याज है।
जारत प्रचारि फेरि-फेरि सो निसंक लंक,
जहाँ बाँको बीर तो-सो सूर-सिरताज है' ॥२२॥

पान, पकवान बिधि नाना को, सँधानो, सीधो,
बिबिध बिधान धान बरत बखारहीं।
कनक-किरीट कोटि, पलँग, पेटारे, पीठ,
काढ़त कहार, सब जरे भरे भारहीं॥
प्रबल अनल बाढ़ै, जहाँ काढ़ै तहाँ डाढ़ै,
झपट लपट भरै भवन भँडारहीं।
'तुलसी' अगार न पगार न बजार बच्यो,
हाथी हथिसार जरे, घोरे घोरसारहीं ॥२३॥

हाट-बाट हाटक पिघिलि चलो घी-सो घनो,
कनक-कराही लंक तलफति ताय सों।
नाना पकवान जातुधान बलवान सब,
पागि-पागि ढेरी कीन्हीं भली भाँति भाय सों॥
पाहुने कृसानु पवमान सो परोसो,
हनुमान सनमानि कै जेंवाए चित चाय सों।
'तुलसी' निहारि अरि-नारि दै दै गारि कहैं,
'बावरे सुरारि बैर कीन्हों रामराय सों' ।२४।

रावन सो राजरोग बाढ़त बिराटउर,
दिन दिन बिकल सकल-सुख-राँक सो।

नाना उपचार करि हारे सुर सिद्ध मुनि,
होत न बिसोक, ओत पावै न मनाक सो ॥
राम की रजाय तें रसायनी समीरसूनु
उतरि पयोधि-पार सोधि सरवाक सो ।
जातुधान बुट, पुटपाक लंक जातरूप,
रतन जतन जारि कियो है मृगांक सो ।२५।
जारि बारि कै बिधूम, बारिधि बुताइ लूम,
नाइ माथो पगनि, भो ठाढ़ो कर जोरि कै ।
'मातु! कृपा कीजै, सहदानि दीजै' सुनि सीय
दीन्हीं है असीस चारु चूड़ामनि छोरि कै ॥
'कहा कहौं, तात! देखे जात ज्यों बिहात दिन,
बड़ी अवलंब ही सो चले तुम तोरि कै' ।
'तुलसी' सनीर नैन, नेह सों सिथिल बैन,
बिकल बिलोकि कपि कहत निहोरि कै ।२२।
''दिवस छ सात जात जानिबे न, मातु धरु
धीर, अरि अंत की अवधि रही थोरिकै ।
बारिधि बँधाय सेतु ऐहैं भानुकुलकेतु,
सानुज कुसल कपिकटक बटोरि कै'' ॥
बचन बिनीत कहि सीता को प्रबोध करि,
'तुलसी' त्रिकूट चढ़ि कहत डफोरि कै ।
'जै जै जानकीस दससीस-करि-केसरी'
कपीस कूद्यो, बातघात बारिधि हलोरि कै ।२७।

साहसी समीरसूनु नीरनिधि लंघि, लखि
लंक सिद्धिपीठि निसि जागो है मसान सो।
'तुलसी' बिलोकि महा साहस प्रसन्न भई
देवी सिय सारिषी, दियो है बरदान सो॥
बाटिका उजारि, अच्छ-धारि मारि, जारि गढ़,
भानुकुलभानु को प्रताप-भानु-भानु सो।
करत बिसोक लोककोकनद, कोक-कपि,
कहैं जामवंत आयो आयो हनुमान सो।२८।
गगन निहारि, किलकारी भारी सुनि,
हनुमान पहिचानि भये सानँद सचेत हैं।
बूड़त जहाज बच्यो पथिकसमाज, मानो
आजु जाए जानि सब अंकमाल देत हैं॥
'जै जै जानकीस, जै जै लषन कपीस' कहि
कूदैं कपि कौतुकी, नचत रेत रेत हैं।
अंगद, मयंद, नल, नील, बलसील महा,
बालधी फिरावैं, मुख नाना गति लेत हैं।२९।
आयो हनुमान प्रान-हेतु, अंकमाल देत,
लेत पगधूरि एक चूमत लँगूल हैं।
एक बूझैं बार बार सीय समाचार, कहे
पवनकुमार भो बिगत स्रमसूल हैं॥
एक भूखे जानि आगे आने कंद मूल फल,
एक पूजे बाहुबल तोरि मूल फूल हैं।

एक कहैं 'तुलसी' सकल सिधि ताके जाके
    कृपा-पाथनाथ सीतानाथ सानुकूल हैं ।३०।
सीय को सनेहसील, कथा तथा लंक की
    चले कहत चाय सों, सिरानो पथ छन में ।
कह्यो जुवराज बोलि बानर-समाज, 'आजु
    खाहु फल' सुनि पेलि पैठे मधुबन में ॥
मारे बागवान, ते पुकारत देवान गे,
    'उजारे बाग अंगद', दिखाए घाय तन में ।
कहैं कपिराज 'करि काज आये कीस,
    तुलसीस की सपथ महामोद मेरे मन में' ।३१।
नगर कुबेर को सुमेरु की बराबरी,
    बिरंचि-बुद्धि को बिलास लंक निरमान भो ।
ईसहिं चढ़ाय सीस बीसबाहु बीर तहाँ,
    रावन सो राजा रजतेज को निधान भो ॥
'तुलसी' त्रिलोक की समृद्धि सौज संपदा
    सकेलि चाकि राखी रासि, जाँगर जहान भो ।
तीसरे उपास बनबास सिंधुपास सो
    समाज महाराज जू को एक दिन दान भो ।३२।

लंका कांड

बड़े बिकराल भालु, बानर बिसाल बड़े,
'तुलसी' बड़े पहार लै पयोधि तोपिहैं।
प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड खंडि,
मंडि मेदिनी को मंडलीक-लीक लोपिहैं।
लंकदाहु देखे न उछाहु रह्यो काहुन को,
कहैं सब सचिव पुकारि पाँव रोपि हैं॥
'बाचिहै न पाछे त्रिपुरारि हू मुरारिहू के,
को है रन रारि को जौं कोसलेस कोपिहैं?'।१।

त्रिजटा कहत बार बार तुलसीस्वरी सों,
'राघौ बान एकही समुद्र सातौ सोषिहैं।
सकुल सँघारि जातुधान-धारि, जंबुकादि,
जोगिनी-जमाति कालिका-कलाप तोषिहैं॥
राज दै निवाजिहैं बजाइ कै बिभीषनै,
बजैंगे ब्योम बाजने बिबुध प्रेम पोषिहैं।
कौन दसकंध, कौन मेघनाद बापुरो,
को कुंभकर्न-कीट जब राम रन रोषिहैं'।२।

बिनय सनेह सों कहति सीय त्रिजटा सों
'पाए कछु समाचार आरजसुवन के?'।

'पाए जू ! बँधायो सेतु, उतरे कटक कुलि,
आए देखि देखि दूत दारुन दुवन के ॥
बदन-मलीन बलहीन दीन देखि मानों,
मिटे घटे तमीचर-तिमिर भुवन के।
लोकपति-सोक-कोक, मूँदे कपि-कोकनद,
दंड द्वै रहे हैं रघु-आदित उवन के' ।३।

झूलना छंद

सुभुज मारीच खर त्रिसिर दूषन बालि,
दलत जेहि दूसरो सर न साँध्यो।
आनि परबाम बिधिबाम तेहि राम सों
सकत संग्राम दसकंध काँध्यो ॥
समुझि तुलसीस कपि-कर्म घर-घर घैरु,
बिकल सुनि सकल पाथोधि बाँध्यो।
बसत गढ़ लंक लंकेस नायक अछत
लंक नहिं खात कोउ भात राँध्यो ।४।

सवैया

बिस्वजयी भृगुनायक-से बिनु हाथ भये हनि हाथ-हजारी।
बातुल मातुल की न सुनी सिख, का 'तुलसी' कपि लंक न जारी ? ॥
अजहूँ तौ भलो रघुनाथ मिलें, फिरि बूझिहै को गज कौन गजारी।
कीर्त्ति बड़ो, करतूति बड़ो, जन, बात बड़ो, सो बड़ोई बजारी ।५।
जब पाहन भे बनबाहन-से, उतरे बनरा 'जय राम' रढ़े।
'तुलसी' लिए सैल-सिला सब सोहत, सागर ज्यों बलवारि बढ़े ॥

करि कोप करैं रघुबीर को आयसु, कौतुक ही गढ़ कूदि चढ़े ।
चतुरंग चमू पल में दलिकै रन रावन राढ़ के हाड़ गढ़े ।६।

घनाक्षरी

बिपुल बिसाल बिकराल कपि-भालु मानौ,
काल बहु बेष धरे धाए किए करषा ।
लिए सिला सैल, साल ताल औ तमाल तोरि,
तोपैं तोयनिधि, सुर को समाज हरषा ॥
डगे दिगकुंजर, कमठ कोल कलमले,
डोले धराधर-धारि, धराधर धरषा ।
'तुलसी' तमकि चलैं, राघौ की सपथ करैं,
को करै अटक कपि-कटक अमरषा ? ।७।

आए सुक-सारन बोलाए, ते कहन लागे,
पुलक सरीर सेना करत फहम ही ।
'महाबली बानर बिसाल भालु काल-से
कराल हैं, रहैं कहाँ, समाहिंगे कहाँ मही' ।
हँस्यो दसमाथ रघुनाथ को प्रताप सुनि,
'तुलसी' दुरावै मुख सूखत सहम ही ॥
राम के बिरोधे बुरो बिधि-हरि-हरहू को,
सबको भलो है राजा राम के रहम ही ।८।

'आयो आयो आयो सोई बानर बहोरि', भयो
सोर चहुँ ओर, लंक आए जुवराज के ।

एक काढ़ै सौंज, एक धौंज करै कहा ह्वैहै,
'पोच भई महा' सोच सुभट-समाज के ॥
गाज्यो कपिराज रघुराज की सपथ करि,
मूँदे कान जातुधान मानो गाजे गाज के ।
सहमि सुखात बातजात की सुरति करि,
लवा ज्यों लुकात 'तुलसी' झपेटे बाज के ।६।
तुलसीस-बल रघुबीरजू के बालिसुत,
वाहि न गनत, बात कहत करेरी-सी ।
'बखसीस ईसजू की खीस होत देखियत,
रिस काहे लागति कहत हौं तो तेरी-सी ।
चढ़ि गढ़ मढ़ दृढ़ कोट के कँगूरे कोपि,
नेकु धका देहैं ढैहैं ढेलन की ढेरी-सी ॥
सुनु दसमाथ ! नाथ-साथ के हमारे कपि,
हाथ लंका लाइहैं तो रहेगी हथेरी-सी' ।१०।
दूषन बिराध खर त्रिसिर कबंध बधे,
तालऊ बिसाल बेधे, कौतुक है कालि को ।
एक ही बिसिष बस भयो बीर बाँकुरो जो,
तोंहू है बिदित बल महाबली बालि को ॥
'तुलसी' कहत हित, मानतो न नेकु संक,
मेरो कहा जैहै, फल पैहै तू कुचालि को ।
बीर-करि-केसरी कुठारपानि मानी हारि,
तेरी कहा चली, बिड़ ! तो-सो गनै घालि को ।११।

मत्तगयंद सवैया

तोसों कहौं दसकंधर रे, रघुनाथ-बिरोध न कीजिय बौरे ।
बालि बली खर-दूषन और अनेक गिरे जे जे भीति में दौरे ॥
ऐसिय हाल भई तोहिं धौं, नतु लै मिलु सीय चहै सुख जौ रे ।
राम के रोष न राखि सकैं 'तुलसी' बिधि, श्रीपति, संकर सौ रे ॥१२

तू रजनीचर-नाथ महा, रघुनाथ के सेवक को जन हौं हौं ।
बलवान है स्वान गली अपनी, तोहि लाज न, गाल बजावत सौहौं ।
बीस भुजा दससीस हरौं न डरौं प्रभु-आयसु-भंग तें जौ हौं ।
खेत में केहरि ज्यों गजराज दलौं दल बालि को बालक तौ हौं ॥१३

कोसलराज के काज हौं आज त्रिकूट उपारि लै बारिधि बोरौं ।
महाभुज-दंड द्वै अंडकटाह चपेट की चोट चटाक दै फोरौं ॥
आयसु-भंग तें जौ न डरौं सब मीँजि सभासद सोनित खोरौं ।
बालि को बालक जौ 'तुलसी' दसहूमुख के रन में रद तोरौं ॥१४

अति कोप सों रोप्यो है पाँव सभा, सब लंक ससंकित सोर मचा ।
तमके घननाद-से बीर पचारि कै, हारि निसाचर-सैन पचा ॥
न टरै पग मेरुहु तें गरु भो, सो मनों महि-संग बिरंचि रचा ।
'तुलसी' सब सूर सराहत हैं 'जग में बलसालि है बालि-बचा' ॥१५

घनाक्षरी

रोप्यो पाँव पैज कै बिचारि रघुबीर-बल,
लागे भट सिमिटि न नेकु टसकतु है ।
तज्यो धीर धरनि, धरनिधर धसकत,
धराधर धीर भार सहि न सकतु है ॥

महाबली बालि को, दबत दलकति भूमि,
 'तुलसी' उछरि सिंधु, मेरु मसकतु है।
कमठ कठिन पीठि, घट्टा परो मंदर को,
 आयो सोई काम, पै करेजो कसकतु है ॥१६॥

झूलना छंद

कनकगिरि-सृंग चढ़ि देखि मर्कट-कटक,
 बदति मंदोदरी परम भीता।
"सहसभुज-मत्त-गजराज-रनकेसरी,
 परसुधर-गर्व जेहि देखि बीता॥
दास 'तुलसी' समरसूर कोसलधनी,
 ख्याल ही बालि बलसालि जीता।
कंत! तृन दंत गहि सरन श्रीराम, कहि,
 अजहुँ यहि भांति लै सौंपु सीता ॥१७॥
रे नीच! मारीच बिचलाइ, हति ताड़का,
 भंजि सिवचाप सुख सबहि दीन्ह्यो।
सहस-दसचारि खल सहित खर दूषनहि,
 पठै जमधाम, तैं तउ न चीन्ह्यो॥
मैं जु कहौं कंत, सुनु संत भगवंत सों,
 बिमुख है बालि फल कौन लीन्ह्यो?
बीस भुज, सीस दस खीस गए तबहिं
 जब ईस के ईस सों बैर कीन्ह्यो ॥१८॥

बालि दलि, काल्हि जलजान पाषान किय,
कंत ! भगवंत तैं तउ न चीन्हें ।
बिपुल बिकराल भट भालु कपि काल-से,
संग तरु तुंग गिरिसृंग लीन्हें ॥
आइगे कोसलाधीस तुलसीस जेहि
छत्र मिस मौलि दस दूरि कीन्हें ।
ईस-बकसीस जनि खीस करु ईस ! सुनु,
अजहुँ कुल कुसल बैदेहि दीन्हें ॥१६॥
सैन के कपिन को को गनै अर्बुदै,
महाबलबीर हनुमान जानी ।
भूलिहै दस दिसा, सेस पुनि डोलिहैं
कोपि रघुनाथ जब बान तानी ॥
बालिहू गर्ब जिय माहिं ऐसो कियो,
मारि दहपट कियो जम की घानी ।
कहति मंदोदरी सुनहि रावन ! मतो,
बेगि लै देहि बैदेहि रानी ॥२०॥
गहन उज्जारि, पुर जारि, सुत मारि तव,
कुसल गो कीस बरबेर जाको ।
दूसरो दूत पन रोपि कोप्यो सभा,
खर्ब कियो सर्ब को गर्ब थाको ॥
'दास तुलसी' सभय बदति मयनंदिनी,
मंदमति कंत ! सुनु मंत म्हाको ।

तौं लौं मिलु बेगि नहिं जौलौं रन रोष भयो,
दासरथि बीर बिरुदैत बाँको ॥२१॥

घनाक्षरी

कानन उजारि, अच्छ मारि, धारि धूरि कीन्हीं,
नगर प्रजार्‍यो सो बिलोक्यो बल कीस को ।
तुम्हैं विद्यमान जातुधान-मंडली में कपि,
कोपि रोप्यो पाँउ, सो प्रभाव तुलसीस को ॥
कंत ! सुनु मंत, कुल अंत किये अंत हानि,
हातो कीजै हीय तें भरोसो भुज बीस को ।
तौलौं मिलु बेगि जौलौं चाप न चढ़ायो राम,
रोषि बान काढ्यो न दलैया दससीस को ॥२२॥
पवन को पूत देखौ दूत बीर बाँकुरो जो
बंक गढ़ लंक सो ढका ढकेलि ढाहिगो ॥
बालि बलसालि को, सो काल्हि दाप दलि, कोपि
रोप्यो पाँउ, चपरि चमू को चाउ चाहिगो ।
सोई रघुनाथ कपि साथ, पाथनाथ बाँधि,
आए नाथ ! भागे तें खिरिरि खेह खाहिगो ॥
'तुलसी' गरब तजि मिलिबे को साज सजि
देहि सीय न तौ पिय ! पाइमाल जाहिगो ।
उदधि अपार उतरत नहिं लागी बार,
केसरीकुमार सो अदंड कैसो डाँड़िगो ।

बाटिका उजारि अच्छ रच्छकनि मारि, भट
भारी भारी रावरे के चाउर-से काँड़िगो ॥
'तुलसी' तिहारे बिद्यमान जुवराज आजु
कोपि पाँव रोपि, बस कै छोहाइ छाँड़िगो ।
कहे की न लाज; पिय ! अजहूँ न आए बाज,
सहित समाज गढ़ राँड़ कै सो भाँड़िगो ॥२४॥

जाके रोष दुसह त्रिदोष दाह दूरि कीन्हें,
पैयत न छत्री-खोज खोजत खलक में ।
माहिषमती को नाथ साहसी सहसबाहु,
समर समर्थ, नाथ ! हेरिए हलक में ॥
सहित समाज महाराज सो जहाजराज,
बूड़ि गयो जाके बलबारिधि-छलक में ।
टूटत पिनाक के मनाक बाम राम से, ते
नाक बिनु भये भृगुनायक पलक में ॥२५॥

कीन्हीं छोनी छत्री बिनु, छोनिप-छपनहार
कठिन कुठारपानि बीर बानि जानि कै ।
नाक में पिनाक मिस बामता बिलोकि राम,
रोक्यो परलोक, लोक भारी भ्रम भानि कै ।
परम कृपाल जो नृपाल लोकपालन पै,
जब धनु-हाई ह्वैहै मन अनुमानि कै ॥
नाइ दस माथ महि, जोरि बीस हाथ, पिय !
मिलिए पै नाथ रघुनाथ पहिचानि कै ॥२६॥

कह्यो मत मातुल बिभीषनहू बार - बार,
आँचर पसारि, पिय, पाँइ लै-लै हौं परी ।
बिदित बिदेहपुर, नाथ ! भृगुनाथगति,
समय सयानी कीन्हीं जैसी आइ गौं परी ॥
बायस, बिराध, खर, दूषन, कबंध, बालि,
बैर रघुबीर के न पूरी काहु कों परी ।
कंत बीस लोचन बिलोकिए कुमंत फल
ख्याल लंका लाई कपि राँड़ की-सी झोपरी ॥२७॥

सवैया मत्तगयंद

राम सों साम किये नित है हित, कोमल काज न कीजिए टाँठे ।
आपनि सूझि कहौं, पिय ! बूझिए, जूझिबे जोग न ठाहरु नाठे ॥
नाथ ! सुनी भृगुनाथकथा, बलि बालि गए चलि बात के साँठे ।
भाइ बिभीषन जाइ मिल्यो प्रभु आइ परे सुनी सायर-काँठे ॥२८
पालिबे को कपि-भालु-चमू जम काल करालहु को पहरी है ।
लंक-से बंक महागढ़ दुर्गम ढाहिबे दाहिबे को कहरी है ॥
तीतर-तोम तमीचर-सेन समीर को सूनु बड़ो बहरी है ।
नाथ भलो रघुनाथ मिले रजनीचर-सेन हिये हहरी है ॥२९

घनाक्षरी

रोष्यो रन रावन बोलाए बीर बानइत,
जानत जे रीति सब संजुग-समाज की ।
चली चतुरंग चमू, चपरि हने निसान,
सेना सराहन जोग रातिचर-राज की ॥

'तुलसी' बिलोकि कपि-भालु किलकत,
ललकत लखि ज्यों कँगाल पातरी सुनाज की ।
राम-रुख निरखि हरषे हिय हनुमान,
मानों खेलवार खोली सीसताज बाज की ॥३०॥
साजिकै सनाह गजगाह सउछाह दल,
महाबली धाए बीर जातुधान धीर के ।
इहाँ भालु बंदर बिसाल मेरु मंदर-से
लिए सैल साल तोरि नीरनिधि-तीर के ।
'तुलसी' तमकि ताकि भिरे भारी जुद्ध क्रुद्ध,
सेनप सराहैं निज निज भट भीर के ।
रुंडन के झुंड झूमि झूमि झुकरे-से नाचैं;
समर सुमार सूर मारे रघुबीर के ॥ ३१ ॥

सवैया

तीखे तुरंग कुरंग सुरंगनि साजि चढ़े छँटि छैल छबीले ।
भारी गुमान जिन्हैं मन में; कबहूँ न भए रन में तनु ढीले ।
'तुलसी' गज-से लखि केहरि लौं झपटे-पटके सब सूर सलीले ।
भूमि परे भट घूमि कराहत, हाँकि हने हनुमान हठीले ।३२
सूर सँजोइल साजि सुबाजि, सुसेल धरे बगमेल चले हैं ।
भारी भुजा भरि, भारी सरीर, बली बिजयी सब भाँति भले हैं ।
'तुलसी' जिन्हैं धाए धुकै धरनीधर, धौर धकानि सों मेरु हले हैं ।
ते रन-तीर्थनि लक्खन लाखन-दानि ज्यों दारिद दाबि दले हैं ।३३

गहि मंदर बंदर भालु चले सो मनो उनए घन सावन के।
'तुलसी' उत झुंड प्रचंड झुके, झपटैं भट जे सुर-दावन के॥
बिरुझे बिरुदैत जे खेत अरे, न टरे हठि बैर-बढ़ावन के।
रन मारि मची उपरी-उपरा, भले बीर रघुप्पति रावन के।३४
सर तोमर सेल समूह पँवारत, मारत बीर निसाचर के।
इत तें तरु ताल तमाल चले, खर खंड प्रचंड महीधर के॥
'तुलसी' करि केहरि-नाद भिरे भट खग्ग खगे खपुवा खरके।
नख दंतन सों भुजदंड विहंडत, मुंड सों मुंड परे झरके।३५
रजनीचर मत्तगयंद-घटा बिघटै मृगराज के साज लरै।
झपटै, भट कोटि मही पटकै, गरजै रघुबीर की सौंह करै॥
'तुलसी' उत हाँक दसानन देत, अचेत भे बीर को धीर धरै?
बिरुझो रन मारुत को बिरुदैत, जो कालहु काल-सो बूझि परै।३६
जे रजनीचर बीर बिसाल कराल बिलोकत काल न खाए।
ते रनरौर कपीस-किसोर बड़े बरजोर परे फँग पाए॥
लूम लपेटि अकास निहारि कै हाँकि हठी हनुमान चलाए।
सूखि गे गात चले नभ जात, परे भ्रम-बात न भूतल आए।३७
जो दससीस महीधर ईस को, बीस भुजा खुलि खेलनहारो।
लोकप दिग्गज दानव देव सबै सहमैं सुनि साहस भारो॥
बीर बड़ो बिरुदैत बली, अजहूँ जग जागत जासु पँवारो।
सो हनुमान हनी मुठिका, गिरि गो गिरिराज ज्यों गाज को मारो।३८
दुर्गम दुर्ग, पहार तें भारे, प्रचंड महा भुजदंड बने हैं।
लक्ख में पक्खर तिक्खन तेज जे सूर-समाज में गाज गने हैं॥

वे बिरुदैत बली रन-बाँकुरे हाँकि हठी हनुमान हने हैं।
नाम लै राम दिखावत बंधु को, घूमत घायल घाय घने हैं ।३९

घनाक्षरी

हाथिन सों हाथी मारे, घोरे घोरे सों सँहारे;
रथनि सों रथ बिदरनि, बलवान की ।
चंचल चपेट चोट चरन चकोट चाहैं,
हहरानी फौजैं भहरानी जातुधान की ॥
बार-बार सेवक-सराहना करत राम,
'तुलसी' सराहै रीति साहेब सुजान की ।
लाँबी लूम लसत लपेटि पटकत भट,
देखौ देखौ, लखन ! लरनि हनुमान की ॥४०॥
दबकि दबोरे एक, बारिधि में बोरे एक,
मगन मही में एक गगन उड़ात हैं ।
पकरि पछारे कर, चरन उखारे एक,
चीरि फारि डारे, एक मींजि मारे लात हैं ॥
'तुलसी' लखत राम-रावन, बिबुध, बिधि,
चक्रपानि, चंडीपति, चंडिका सिहात हैं ।
बड़े-बड़े बानइत बीर बलवान बड़े,
जातुधान जूथप निपाते बातजात हैं ॥४१॥
प्रबल प्रचंड बरिबंड बाहुदंड बीर,
धाए जातुधान हनुमान लियो घेरि कै ।

महाबल-पुंज कुंजरारि ज्यों गरजि भट,
जहाँ तहाँ पटके लँगूर फेरि फेरि कै ॥
मारे लात, तोरे गात, भागे जात हाहा खात,
कहैं 'तुलसीस राखि राम की सौं' टेरि कै ।
ठहर - ठहर परे कहरि - कहरि उठैं,
हहरि - हहरि हर सिद्ध हँसे हेरि कै ॥४२॥

जाकी बाँकी बीरता सुनत सहमत सूर,
जाकी आँच अजहूँ लसत लंक लाह-सी ।
सोई हनुमान बलवान बाँके बानइत,
जोहि जातुधान-सेना चले लेत थाह-सी ॥
कंपत अकंपन, सुखाय अतिकाय काय,
कुंभऊकरन आइ रह्यो पाइ आह-सी ।
देखे गजराज मृगराज ज्यों गरजि धायो,
बीर रघुबीर को समीरसुनु साहसी ॥४३॥

झूलना

मत्तभट-मुकुट-दसकंध-साहस-सइल-
सृंग-बिदरनि जनु बज्रटाँकी ।
दसन धरि धरनि चिक्करत दिग्गज कमठ,
सेष संकुचित, संकित पिनाकी ॥
चलित महि मेरु, उच्छलित सायर सकल,
बिकल बिधि बधिर दिसि बिदिसि झाँकी ।

रजनिचर-घरनि घर गर्भ - अर्भक स्त्रवत,
सुनत हनुमान की हाँक बाँकी ॥४४॥
कौन की हाँक पर चौंक चंडीस, बिधि,
चंडकर थकित फिरि तुरँग हाँके ।
कौन के तेज बलसीम भट भीम-से,
भीमता निरखि कर नयन ढाँके ॥
दास तुलसीस के बिरुद बरनत बिदुष,
बीर बिरुदैत बर बैरि धाँके ।
नाक नरलोक पाताल कोउ कहत किन,
कहाँ हनुमान-से बीर बाँके ॥४५॥
जातुधानावली-मत्त-कुंजर-घटा,
निरखि मृगराज जनु गिरि तें टूट्यो ।
बिकट चटकन चपट, चरन गहि पटकि महि,
निघटि गए सुभट, सत सबको छूट्यो ॥
'दास तुलसी' परत धरनि, धरकत झुकत,
हाट-सी उठति जंबुकनि लूट्यो ।
धीर रघुबीर को बीर रन-बाँकुरो,
हाँकि हनुमान कुलि कटक कूट्यो ॥४६॥

छप्पय

कतहुँ बिटप भूधर उपारि पर सेन बरक्खत ।
कतहुँ बाजि सों बाजि मर्दि, गजराज करक्खत ॥
चरन-चोट चटकन-चकोट अरि उर सिर बज्जत ।

बिकट कटक बिदरत, बीर बारिद जिमि गज्जत ॥
लँगूर लपेटत पटकि भट, 'जयति राम जय' उच्चरत ।
तुलसीस पवननंदन अटल जुद्ध क्रुद्ध कौतुक करत ॥४७॥

घनाक्षरी

अंग-अंग दलित ललित फूले किंसुक-से,
हने भट लाखन लषन जातुधान के ।
मारि कै पछारि कै उपारि भुजदंड चंड,
खंड-खंड डारे ते बिदारे हनुमान के ॥
कूदत कबंध के कदंब बंब-सी करत,
धावत दिखावत हैं लाघौ राघौ बान के ।
'तुलसी' महेस, बिधि, लोकपाल, देवगन,
देखत बिमान चढ़े कौतुक मसान के ॥४८॥
लोथिन सों लोहू के प्रबाह चले जहाँ तहाँ,
मानहुँ गिरिन गेरु-झरना झरत हैं ।
सोनित-सरित घोर, कुंजर करारे भारे,
कूल तें समूल बाजि-बिटप परत हैं ॥
सुभट सरीर नीरचारी भारी भारी तहाँ,
सूरनि उछाह, कूर कादर डरत हैं ।
फेकरि-फेकरि फेरु फारि-फारि पेट खात,
काक कंक-बकुल कोलाहल करत हैं ॥४९॥
ओझरी की झोरी काँधे, आँतनि की सेल्ही बाँधे,
मूँड़ के कमंडलु, खपर किये कोरि कै ।

जोगिनी झुटुंग झुंड झुंड बनी तापस-सी
तीर-तीर बैठीं सो समर-सरि खोरि कै ॥
सोनित सों सानि सानि गूदा खात सतुआ-से,
प्रेत एक पियत बहोरि घोरि घोरि कै ।
'तुलसी' बैताल भूत साथ लिए भूतनाथ,
हेरि हेरि हँसत हैं हाथ हाथ जोरि कै ॥५०॥

सवैया

राम-सरासन तें चले तीर, रहे न सरीर, हड़ावरि फूटी ।
रावन धीर न पीर गनी, लखि लै कर खप्पर जोगिनि जूटी ॥
सोनित छींट-छटानि-जटे 'तुलसी' प्रभु सोहैं, महाछबि छूटी ।
मानो मरकत-सैल बिसाल में फैलि चलीं बर बीरबहूटी ॥५१॥

घनाक्षरी

मानी मेघनाद सों प्रचारि भिरे भारी भट,
आपने अपन पुरुषारथ न ढील की ।
घायल लषनलाल लखि बिलखाने राम,
भई आस सिथिल जगन्निवास दील की ॥
भाई को न मोह, छोह सीय को न, तुलसीस
कहैं 'मैं बिभीषन की कछु न सबील की' ।
लाज बाँह बोले की, नेवाजे की सँभार सार,
साहेब न राम-से, बलैया लेउँ सील की ॥५२॥

सवैया

कानन बास, दसानन सो रिपु, आनन-श्री ससि जीति कियो है ।
बालि महाबलसालि दल्यो, कपि पालि, बिभीषन भूप कियो है ॥
तीय हरी, रन बंधु पर्‌यो, पै भर्‌यो सरनागत-सोच हियो है ।
बाँह-पगार उदार कृपालु, कहाँ रघुबीर सो बीर बियो है ।५३।

लीन्हों उखारि पहार बिसाल, चल्यो तेहि काल, बिलंब न लायो ।
मारुतनंदन मारुत को, मन को, खगराज को बेग लजायो ॥
तीखी तुरा 'तुलसी' कहतो, पै हिये उपमा को समाउ न आयो ।
मानो प्रतच्छ परब्बत की नभ लीक लसी कपि यों धुकि आयो ।५४।

घनाक्षरी

चल्यो हनुमान सुनि जातुधान कालनेमि
पठयो, सो मुनि भयो, पायो फल छलि कै ।
सहसा उखारो है पहार बहु जोजन को,
रखवारे मारे भारे भूरि भट दलि कै ॥
बेग बल साहस सराहत कृपानिधान,
भरत की कुसल अचल ल्यायो चलि कै ।
हाथ हरिनाथ के बिकाने रघुनाथ जनु,
सीलसिंधु तुलसीस भलो मान्यो भलि कै ॥५५॥

बापु दियो कानन, भो आनन सुभानन सो,
बैरी भो दसानन सो, तीय को हरन भो ।
बालि बलसालि दलि, पालि कपिराज को,
बिभीषन नेवाजि, सेतुसागर तरन भो ॥

घोर रारि हेरि त्रिपुरारि बिधि हारे हिए,
घायल लखन बीर बानर-बरन भो।
ऐसे सोक में तिलोक कै बिसोक पल ही में,
सबही को 'तुलसी' को साहिब सरन भो ॥५६॥

सवैया

कुंभकरन्न हन्यो रन राम, दल्यो दसकंधर, कंधर तोरे।
पूषन-बंस-बिभूषन-पूषन तेज प्रताप गरे अरि-ओरे॥
देव निसान बजावत गावत, सावँत गो, मनभावत भो रे!।
नाचत बानर भालु सबै तुलसी कहि 'हा रे! हहा भइया, हो रे!।।५७

घनाक्षरी

मारे रन रातिचर, रावन सकुल दल,
अनुकूल देव मुनि फूल बरषतु हैं।
नाग नर किन्नर बिरंचि हरि हर हेरि,
पुलक सरीर, हिये हेतु, हरषतु हैं॥
बाम ओर जानकी कृपानिधान के बिराजैं,
देखत बिषाद मिटै मोद करषतु हैं।
आयसु भो लोकनि सिधारे लोकपाल सबै,
'तुलसी' निहाल कै कै दिए सरषतु हैं ॥५८॥

उत्तर कांड

सवैया

वालि-से बीर बिदारि सुकंठ थप्यो, हरषे सुर बाजने बाजे ।
पल में दल्यो दासरथी दसकंधर, लंक बिभीषन राज बिराजे ।
राम-सुभाव सुने 'तुलसी' हुलसे अलसी, हम-से गलगाजे ।
कायर कूर कपूतन की हद तेउ गरीबनेवाज नेवाजे ।१।
वेद पढ़ैं बिधि संभु सभीत, पुजावन रावन सों नित आवैं ।
दानव देव दयावने दीन दुखी दिन दूरिहि तें सिर नावैं ।
ऐसेउ भाग भगे दसभाल तें जो प्रभुता कबि कोबिद गावैं ।
राम से बाम भए तेहि बामहि बाम सबै सुख संपति लावैं ।२।
बेद-बिरुद्ध, मही मुनि साधु ससोक किए, सुरलोक उजारो ।
और कहा कहौं तीय हरी, तबहूँ करुनाकर कोप न धारो ।
सेवक-छोह तें छाँड़ी छमा, 'तुलसी' लख्यो राम सुभाव तिहारो ।
तौलौं न दाप दल्यो दसकंधर जौलौं बिभीषन लात न मारो ।३।
सोक-समुद्र निमज्जत काढ़ि कपीस कियो जग जानत जैसो ।
नीच निसाचर बैरी को बंधु बिभीषन कीन्ह पुरंदर कैसो ।
नाम लिए अपनाइ लियो, 'तुलसी' सो कहौ जग कौन अनैसो ।
आरत-आरति-भंजन राम, गरीबनेवाज न दूसरो ऐसो ।४।
मीत पुनीत कियो कपि भालु को, पाल्यो ज्यों काहु न बाल तनूजो ।
सज्जन-सींव बिभीषन भो, अजहूँ बिलसै बर बंधु-बधू जो ।

कोसलपाल विना 'तुलसी' सरनागतपाल कृपालु न दूजो ।
कूर कुजाति कुपूत अघी सबकी सुधरै जो करै नर पूजो ।५।
तीय-सिरोमनि सीय तजी जेहिं पावक की कलुषाई दही है ।
धर्म-धुरंधर बंधु तज्यो, पुरलोगनि की बिधि बोलि कही है ।
कीस निसाचर की करनी न सुनी, न बिलोकी न चित्त रही है ।
राम सदा सरनागत की अनखौहीं अनैसी सुभाय सही है ।६।
अपराध अगाध भए जन तें अपने उर आनत नाहिंन जू ।
गनिका गज गीध अजामिल के गनि पातक-पुंज सिराहिं न जू ।
लिए बारक नाम सुधाम दियो जिहि धाम महामुनि जाहिं न जू ।
'तुलसी' भजु दीनदयालुहि रे, रघुनाथ अनाथहि दाहिन जू ।७।
प्रभु सत्य करी प्रहलाद-गिरा, प्रगटे नरकेहरि खंभ महाँ ।
झखराज ग्रस्यो गजराज, कृपा ततकाल, बिलंब कियो न तहाँ ।
सुर साखी दै राखी है पांडुबधू पट लूटत, कोटिक भूप जहाँ ।
'तुलसी' भजु सोच-बिमोचन को, जन को पन राम न राख्यो कहाँ ।८
नरनारि उघारि सभा महँ होत दियो पट, सोच हर्‌यो मन को ।
प्रहलाद-बिषाद-निवारन, बारन-तारन, मीत अकारन को ।
जो कहावत दीनदयालु सही, जेहि भार सदा अपने पन को ।
'तुलसी' तजि आन भरोस, भजे भगवान, भलो करिहैं जन को ।९।
ऋषिनारि उधारि, कियो सठ केवट मीत, पुनीत सुकीर्ति लही ।
निज लोक दियो सबरी खग को, कपि थाप्यो सो मालुम है सबही ।
दससीस-बिरोध सभीत बिभीषन भूप कियो जग लीक रही ।
करुनानिधि को भजु रे 'तुलसी' रघुनाथ अनाथ के नाथ सही ।१०

कौसिक बिप्रबधू मिथिलाधिप के सब सोच दले पल माहैं ।
बालि-दसानन-बंधु कथा सुनि सत्रु सुसाहिब-सील सराहैं ।
ऐसी अनूप कहैं 'तुलसी' रघुनायक की अगनी गुन-गाहैं ।
आरत दीन अनाथन को रघुनाथ करैं निज हाथ की छाहैं ।११

तेरे बेसाहे बेसाहत औरनि, और बेसाहि कै बेचनहारे ।
ब्योम रसातल भूमि भरे नृप क्रूर कुसाहिब सेंतिहुँ खारे ।
'तुलसी' तेहि सेवत कौन मरै? रज तें लघु को करै मेरु तें भारे ।
स्वामि सुसील समर्थ सुजान सो तोसों तुहीं दसरत्थ दुलारे ।१२

घनाक्षरी

जातुधान भालु कपि केवट बिहंग जो जो,
पाल्यो नाथ सद्य सो सो भयो काम-काज को ।
आरत अनाथ दीन मलिन सरन आए,
राखे अपनाइ, सो सुभाव महाराज को ॥
नाम 'तुलसी' पै भोंडो भाँग तें, कहायो दास,
कियो अंगीकार ऐसे बड़े दगाबाज को ।
साहेब समर्थ दसरत्थ के दयालु देव,
दूसरो न तोसों तुही आपने की लाज को ॥१३॥

महाबली बालि दलि, कायर सुकंठ कपि,
सखा किये, महाराज हौं न काहू काम को ।
भ्रात-घात-पातकी निसाचर सरन आए,
कियो अंगीकार नाथ एते बड़े बाम को ॥

राय दसरत्थ के समर्थ तेरे नाम लिए,
'तुलसी'-से कूर को कहत जग राम को।
आपने निवाजे की तौ लाज महाराज को,
सुभाव समुझत मन मुदित गुलाम को ॥
रूप सीलसिंधु गुनसिंधु, बंधु दीनन को,
दयानिधान, जान-मनि, बीर बाहु-बोल को।
स्राद्ध कियो गीध को, सराहे फल सबरी के,
सिलासाप-समन, निबाह्यो नेह कोल को ॥
'तुलसी' उराउ होत राम को सुभाव सुनि,
को न बलि जाइ, न बिकाइ बिन मोल को?।
ऐसेहू सुसाहेब सों जाको अनुराग न सो,
बड़ोई अभागो, भाग भागो लोभ-लोल को ॥१५॥
सूर-सिरताज महाराजनि के महाराज,
जाको नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो।
साहब कहाँ जहान जानकीस सो सुजान,
सुमिरे कृपालु के मराल होत खूसरो ॥
केवट पषान जातुधान कपि भालु तारे,
अपनायो 'तुलसी'-सो धींग धमधूसरो।
बोल को अटल, बाँह को पगार, दीनबंधु,
दूबरे को दानी, को दयानिधान दूसरो? ॥१६॥
कीबे को बिसोक लोक लोकपाल हुते सब,
कहूँ कोऊ भो न चरवाहो कपि भालु को।

पबि को पहार कियो ख्याल ही कृपालु राम,
बापुरो बिभीषन घरौंधा हुतो बालु को ।।
नाम-ओट लेत ही निखोट होत खोटे खल,
चोट बिनु मोट पाइ भयो न निहालु को ।
'तुलसी' की बार बड़ी ढील होति, सीलसिंधु !
बिगरी सुधारिबे को दूसरो दयालु को ?।।१७।।
नाम लिए पूत को पुनीत कियो पातकीस,
आरति निवारी प्रभु पाहि कहे पील की ।
छलिन की छौंड़ी सो निगोड़ी छोटी जाति पाँति,
कीन्हीं लीन आपु में सुनारी भोंड़े भील की ।।
तुलसीऔ तारिबो बिसारिबो न अंत, मोहिं
नीके है प्रतीति रावरे सुभाव सील की ।
देव तौ दयानिकेत, देत दादि दीनन की,
मेरी बार मेरे ही अभाग नाथ ढील की ।।१८।।
आगे परे पाहन कृपा, किरात, कोलनी,
कपीस निसिचर अपनाए नाए माथ जू ।
साँची सेवकाई हनुमान की सुजानराय,
ऋनियाँ कहाए हौ बिकाने ताके हाथ जू ।।
'तुलसी'-से खोटे खरे होत ओट नाम ही की,
तेजी माटी मगहू की मृग-मद साथ जू ।
बात चले बात को न मानिबो बिलग, बलि,
काकी सेवा रीझि कै नेवाजो रघुनाथ जू ?।।१९।।

कौसिक की चलत, पषान की परस पायँ,
टूटत धनुष बनि गई है जनक की।
कोल पसु सबरी बिहंग भालु रातिचर,
रतिन के लालचिन प्रापति मनक की॥
कोटि-कला-कुसल कृपालु नतपाल, बलि,
बातहू कितिक तिन 'तुलसी' तनक की।
राय दसरत्थ के समर्त्थ राम राजमनि,
तेरे हेरे लोपै लिपि बिधिहू गनक की॥२०॥

घनाक्षरी

सिला-साप-पाप, गुह गीध को मिलाप,
सबरी के पास आप चलि गये हौ सो सुनी मैं।
सेवक सराहे कपिनायक बिभीषन,
भरत-सभा सादर सनेह-सुरधुनी मैं॥
आलसी-अभागी-अघी-आरत-अनाथपाल,
साहेब समर्थ एक नीके मन गुनी मैं।
दोष-दुख-दारिद-दलैया दीनबंधु राम,
'तुलसी' न दूसरो दयानिधान दुनी मैं॥२१॥
मीत बालि-बंधु, पूत दूत, दसकंध-बंधु,
सचिव, सराध कियो सबरी जटाइ को।
लंक जरी जोहे जिय सोच सो बिभीषन को,
कहौ ऐसे साहेब की सेवा न खटाइ को १।

बड़े एक एक तें अनेक लोक लोकपाल,
अपने अपने को तौ कहैगो घटाइ को ?।
साँकरे के सेइबे, सराहिबे सुमिरिबे को,
राम सो न साहिब, न कुमति-कटाइको ॥२२॥
भूमिपाल, ब्यालपाल, नाकपाल, लोकपाल
कारन-कृपालु, मैं सबै के जी की थाह ली।
कादर को आदर काहू के नाहिं देखियत,
सबनि सोहात है सेवा-सुजानि टाहली ॥
'तुलसी' सुभाय कहै नाहीं कछु पच्छपात,
कौने ईस किए कीस भालु खास माहली ।
राम ही के द्वारे पै बोलाइ सनमानियत,
मो-से दीन दूबरे कुपूत कूर काहली ॥२३॥
सेवा अनुरूप फल देत भूप कूप ज्यों,
बिहूने-गुन पथिक पियासे जात पथ के।
लेखे जोखे चोखे चित 'तुलसी' स्वारथहित,
नीके देखे देवता देवैया घने गथ के ॥
गीध मानो गुरु, कपि भालु मानो मीत कै,
पुनीत गीत साके सब साहेब समत्थ के।
और भूप परखि सुलाखि तौलि ताइ लेत,
लसम के खसम तुही पै दसरत्थ के ॥२४॥
रीति महाराज की नेवाजिए जो माँगनो सो,
दोष-दुख-दारिद-दरिद्र कै कै छाँड़िए।

नाम जाको कामतरु देत फल चारि, ताहि
'तुलसी' बिहाइ कै बबूर रेंड़ गोड़िए ॥
जाँचै को नरेस, देसदेस को कलेस करै ?
देहैं तौ प्रसन्न ह्वै बड़ी बड़ाई बोड़िए ।
कृपापाथनाथ लोकनाथ नाथ सीतानाथ,
तजि रघुनाथ हाथ और काहि ओड़िए ? ॥२५॥

सवैया

जाके बिलोकत लोकप होत बिसोक, लहैं सुरलोग सुठौरहि ।
सो कमला तजि चंचलता करि कोटि कला रिझवै सुरमौरहि ॥
ताको कहाइ, कहै 'तुलसी', तू लजाहि न माँगत कूकुर-कौरहि ।
जानकीजीवन को जन ह्वै जरि जाउ सो जीह जो जाँचत औरहि ॥२६
जड़ पंच मिलै जेहि देह करी, करनी लखु धौं धरनीधर की ।
जन की कहु क्यों करिहै न सँभार, जो सार करै सचराचर की ॥
'तुलसी' कहु राम समान को आन है सेवकि जासु रमा घर की ।
जग में गति जाहि जगत्पति की, परवाह है ताहि कहा नर की ॥२७
जग जाँचिए कोऊ न; जाँचिए जौ जिय जाँचिए जानकी-जानहि रे ।
जेहि जाँचत जाचकता जरि जाइ जो जारति जोर जहानहि रे ॥
गति देखु बिचारि बिभीषन की, अरु आनु हिये हनुमानहि रे ।
'तुलसी' भजु दारिद-दोष-दवानल, संकट-कोटि-कृपानहि रे ॥२८
सुनु कान दिए नित नेम लिए रघुनाथहिं के गुनगाथहि रे ।
सुख-मंदिर सुंदर रूप सदा उर आनि धरे धनुभाथहि रे ॥

रसना निसि-बासर सादर सो 'तुलसी' जपु जानकीनाथहि रे ।
करु संग सुसील सुसंतन सों, तजि कूर कुपंथ कुसाथहि रे ॥२९
सुत, दार, अगार, सखा, परिवार बिलोकु महा कुसमाजहि रे ।
सबकी ममता तजिकै, समता सजि संतसभा न बिराजहि रे ॥
नरदेह कहा, करि देखु बिचार, बिगारु गँवार न काजहि रे ।
जनि डोलहि लोलुप कूकर ज्यों, 'तुलसी' भजु कोसलराजहि रे ॥३०
बिषया परनारि निसा-तरुनाई, सु पाइ परयौ अनुरागहि रे ।
जम के पहरू दुख रोग बियोग बिलोकतहू न बिरागहि रे ॥
ममताबस तैं सब भूलि गयो, भयो भोर, महा भय भागहि रे ।
जरठाइ दिसा, रबिकाल उग्यो, अजहूँ जड़ जीव न जागहि रे ॥३१
जनम्यो जेहि जोनि अनेक क्रिया सुख लागि करी, न परै बरनी ।
जननी जनकादि हितू भए भूरि, बहोरि भई उर की जरनी ॥
'तुलसी' अब राम को दास कहाइ हिये धरु चातक की धरनी ।
करि हंस को बेष बड़ो सब सों, तजि दे बक बायस की करनी ॥३२
भलि भारतभूमि, भले कुल जन्म, समाज सरीर भलो लहि कै ।
करषा तजि कै परुषा बरषा हिम मारुत घाम सदा सहि कै ॥
जो भजै भगवान सयान सोई 'तुलसी' हठ चातक ज्यों गहि कै ।
नतु और सबै बिष बीज बये हर-हाटक कामदुहा नहि कै ।३३।
सो सुकृती, सुचिमंत, सुसंत, सुजान, सुसील-सिरोमनि स्वै ।
सुर तीरथ तासु मनावत आवन, पावन होत हैं ता तन छ्वै ॥
गुनगेह, सनेह को भाजन सो, सब ही सों उठाइ कहौं भुज द्वै ।
सति भाय सदा छल-छाँड़ि सबै 'तुलसी' जो रहै रघुबीर को ह्वै ।३४।

सो जननी, सो पिता, सोइ भाइ, सो भामिनि, सो सुत, सो हित मेरो ।
सोई सगो, सो सखा, सोइ सेवक, सो गुरु, सो सुर, साहिब, चेरो ॥
सो 'तुलसी' प्रिय प्रान समान, कहाँ लौं बनाइ कहौं बहुतेरो ।
जो तजि देह को गेह को नेह सनेह सों राम को होइ सबेरो ।३५।
राम हैं मातु पिता गुरु बंधु औ संगी सखा सुत स्वामि सनेही ।
राम की सौंह भरोसो है राम को, रामरँग्यो रुचि राच्यो न केही ॥
जीयत राम, मुये पुनि राम, सदा रघुनाथहि की गति जेही ।
सोई जियै जग में 'तुलसी' नतु डोलत और मुये धरि देही ।३६।
सियराम-सरूप अगाध अनूप बिलोचन-मीनन को जलु है ।
श्रुति राम-कथा, मुख राम को नाम, हिये पुनि रामहिं को थलु है ॥
मति रामहिं सों, गति रामहिं सों, रति राम सों, रामहिं को बलु है ।
सबकी न कहै, 'तुलसी' के मते इतनो जग जीवन को फलु है ।३७।
दसरत्थ के दानि-सिरोमनि राम, पुरान-प्रसिद्ध सुन्यो जसु मैं ।
नर नाग सुरासुर जाचक जो तुम सों मनभावत पायो न कै ॥
'तुलसी' कर जोरि करै बिनती जो कृपा करि दीनदयालु सुनैं ।
जेहि देह सनेह न रावरे सों असि देह धराइ कै जाय जियैं ।३८।
'झूठो है, झूठो है, झूठो सदा जग' संत कहंत जे अंत लहा है ।
ताको सहै सठ संकट कोटिक, काढ़त दंत, करंत हहा है ॥
जानपनी को गुमान बड़ो, 'तुलसी' के बिचार गँवार महा है ।
जानकीजीवन जान न जान्यो तौ जान कहावत जान्यो कहा है ।३९।
तिन्ह तें खर सूकर स्वान भले, जड़ताबस ते न कहैं कछुवै ।
तुलसी जेहि राम सों नेह नहीं सो सही पसु पूँछ बिखान न द्वै ।

जननी कत भार मुई दस मास, भई किन बाँझ, गई किन च्वै।
जरि जाउ सो जीवन, जानकीनाथ! जियै जग में तुम्हरो बिन ह्वै।४०।
गज-बाजि-घटा, भले भूरि भटा, बनिता सुत भौंह तकैं सब कै।
धरनी धन धाम सरीर भलो, सुरलोकहु चाहि इहै सुख स्वै॥
सब फोकट साटक है तुलसी, कहनी न कछू सपनो दिन द्वै।
जरि जाउ सो जीवन जानकिनाथ! जियै जग में तुम्हरो बिनु ह्वै।४१।
सुरराज सो राज-समाज, समृद्धि बिरंचि, धनाधिप सो धन भो।
पवमान-सो, पावक-सो, जस सोम-सो, पूषन-सो, भवभूषन भो॥
करि जोग, समीरन साधि, समाधि कै, धीर बड़ो, बसहू मन भो।
सब जाय सुभाय कहै 'तुलसी' जो न जानकीजीवन को जन भो ४२
काम-से रूप, प्रताप दिनेस-से, सोम-से सील, गनेस-से माने।
हरिचंद्र-से साँचे, बड़े बिधि-से, मघवा-से महीप बिषै-सुखसाने॥
सुक-से मुनि, सारद-से बकता, चिरजीवन लोमस तें अधिकाने।
ऐसे भए तौ कहा तुलसी जु पै राजिवलोचन राम न जाने ४३।
झूमत द्वार अनेक मतंग जँजीर जरे मदअंबु चुचाते।
तीखे तुरंग मनोगति चंचल, पौन के गौनहुँ तें बढ़ि जाते॥
भीतर चंद्रमुखी अवलोकति, बाहर भूप खरे न समाते।
ऐसे भए तौ कहा तुलसी जुपै जानकीनाथ के रंग न राते।४४।
राज सुरेस पचासक को, बिधि के कर को जो पटो लिखि पाए।
पूत सपूत, पुनीत प्रिया, निज सुंदरता रति को मद नाए॥
संपति सिद्धि सबै 'तुलसी' मन की मनसा चितवैं चित लाए।
जानकिजीवन जाने बिना जग ऐसेउ जीवन जीवत जाए।४५।

कुसगात ललात जो रोटिन को, घरबात घरै खुरपा खरिया ।
तिन सोने के मेरु-से ढेरु लहे मन तौ न भरो घर पै भरिया ॥
तुलसी दुख दूनो दसा दुहुँ देखि, कियो मुख दारिद को करिया ।
तजि आस भो दास रघुप्पति को, दसरत्थ को दानि दया-दरिया ॥४६
को भरिहै हरि के रितये, रितवै पुनि को हरि जौ भरिहै ।
उथपै तेहि को जेहि राम थपै ? थपिहै तेहि को हरि जौ टरिहै ॥
'तुलसी' यह जानि हिये अपने सपने नहिं कालहु तें डरिहै ।
कुमया कछु हानि न औरनि की जोपै जानकीनाथ मया करिहै ॥४७
ब्याल कराल, महाविष, पावक, मत्तगयंदहु के रद तोरे ।
साँसति संकि चली, डरपे हुते किंकर, ते करनी मुख मोरे ॥
नेकु बिषाद नहीं प्रहलादहिं, कारन केहरि केवल हो रे ।
कौन की त्रास करै तुलसी, जोपै राखिहै राम तो मारिहै को रे ? ॥४८
कृपा जिनकी कछु काज नहीं, न अकाज कछू जिनके मुख मोरे ।
करैं तिनकी परवाहि ते जो बिनु पूँछ बिषान फिरैं दिन दौरे ॥
'तुलसी' जेहिके रघुनाथ-से नाथ, समर्थ सु सेवत रीझत थोरे ।
कहा भव-भीर परी तेहि धौं, बिचरै धरनी तिन सों तिन तोरे ॥४९
कानन, भूधर, बारि, बयारि, महाविष, ब्याधि दवा, अरि घेरे ।
संकट कोटि जहाँ तुलसी, सुत मातु पिता हित बंधु न नेरे ॥
राखिहैं राम कृपालु तहाँ, हनुमान-से सेवक हैं जेहि केरे ।
नाक, रसातल, भूतल में रघुनायक एक सहायक मेरे ॥५०
जबै जमराज रजायसु तें मोहिं लै चलिहैं भट बाँधि नटैया ।
तात न मात न स्वामि सखा सुत बंधु बिसाल बिपत्ति बँटैया ॥

साँसति घोर, पुकारत आरत, कौन सुनै चहुँ ओर डटैया ।
एक कृपालु तहाँ तुलसी दसरत्थ को नंदन बंदि कटैया ॥५१
जहाँ जमजातना, घोर-नदी, भट कोटि जलच्चर दंत-टेवैया ।
जहँ धार भयंकर वार न पार, न बोहित, नाव न नीक खेवैया ॥
'तुलसी' जहँ मातु पिता न सखा, नहिं कोउ कहूँ अवलंब-देवैया ।
तहाँ बिनु कारन राम कृपालु बिसाल भुजा गहि काढ़ि लेवैया ॥५२
जहाँ हित, स्वामि, न संग सखा, बनिता सुत बंधु न, बापु न भैया ।
काय गिरा मन के जन के अपराध सबै छल छाँड़ि छमैया ॥
'तुलसी' तेहि काल कृपालु बिना दूजो कौन है दारुन दुःख दमैया ।
जहाँ सब संकट दुर्घट सोच तहाँ मेरो साहब राखै रमैया ॥५३
तापस को बरदायक देव, सबै पुनि बैर बढ़ावत बाढ़े ।
थोरेहि कोप कृपा पुनि थोरेहि, बैठिकै जोरत तोरत ठाढ़े ॥
ठोंकि बजाय लखे गजराज, कहाँ लौं कहौं केहिसों रद काढ़े ।
आरत के हित नाथ अनाथ के राम सहाय सही दिन गाढ़े ॥५४
जप, जोग, बिराग, महा मख-साधन, दान, दया-दम कोटि करै ।
मुनि, सिद्ध, सुरेस, गनेस, महेस-से सेवत जन्म अनेक मरै ॥
निगमागम, ज्ञान पुरान पढ़ै, तपसानल में जुग-पुंज जरै ।
मन सों पन रोपि कहै 'तुलसी' रघुनाथ बिना दुख कौन हरै ॥५५
पातक पीन, कुदारिद दीन, मलीन धरे कथरी करवा है ।
लोक कहै बिधिहू न लिख्यो सपनेहूँ नहीं अपने बर बाहै ॥
राम को किंकर सो 'तुलसी' समुझेहि भलो कहिबो न रवा है ।
ऐसे को ऐसो भयो कबहूँ न भजे बिन, बानर के चरवाहै ॥५६

मातु पिता जग जाय तज्यो, बिधिहू न लिखी कछु भाल भलाई ।
नीच, निरादर-भाजन, कादर, कूकर टूकन लागि ललाई ॥
राम-सुभाउ सुन्यो 'तुलसी', प्रभु सों कह्यो बारक पेट खलाई ।
स्वारथ को परमारथ को रघुनाथ सो साहब खोरि न लाई ॥५७
पाप हरे, परिताप हरे, तन पूजि भो हीतल सीतलताई ।
हंस कियो बक तें बलि जाउँ, कहाँ लौं कहौं करुना अधिकाई ॥
काल बिलोकि कहै 'तुलसी' मन में प्रभु की परतीति अघाई ।
जन्म जहाँ तहँ रावरे सों निबहै भरि देह सनेह सगाई ॥२८
लोग कहैं अरु हौं हूँ कहौं 'जन खोटो खरो रघुनायक ही को' ।
रावरी राम बड़ी लघुता, जस मेरो भयो सुखदायक ही को ॥
कै यह हानि सहौ बलि जाउँ कि मोहू करौ निज लायक ही को ।
आनि हिए हित जानि करौ ज्यों हौं ध्यान धरौं धनुसायक ही को॥५९
आपु हौं आपुको नीके कै जानत, रावरो राम ! भरायो गढ़ायो ।
कीर ज्यों नाम रटै 'तुलसी' सो कहै जग जानकीनाथ पढ़ायो ॥
सोई है खेद, जो बेद कहै, न घटै जन जो रघुबीर बढ़ायो ।
हौं तौ सदा खर को असवार, तिहारोई नाम गयंद चढ़ायो ॥६०

घनाक्षरी

छार तें सँवारि कै पहार हू तें भारी कियो,
गारो भयो पंच में पुनीत पच्छ पाइकै ।
हौं तौ जैसो तब तैसो अब, अधमाई कै कै
पेट भरौं राम रावरोई गुन गाइकै ॥
आपने निवाजे की पै कीजै लाज, महाराज !
मेरी ओर हेरिकै न बैठिए रिसाइकै ।

पालिकै कृपालु ब्याल-बाल को न मारिए
 औ काटिए न, नाथ ! बिषहू को रूख लाइकै ॥६१॥
बेद न पुरान गान, जानौं न बिज्ञान ज्ञान,
 ध्यान, धारना, समाधि, साधन-प्रबीनता ।
नाहिंन बिराग, जोग, जाग भाग 'तुलसी' के,
 दया-दान-दूबरों हौं, पाप ही की पीनता ॥
लोभ-मोह-काम-कोह-दोषकोष मो-सो कौन ?
 कलि हू जो सीखि लई मेरियै मलीनता ।
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत हौं,
 रावरे दयालु दीनबंधु, मेरी दीनता ॥६२॥
रावरो कहावौं, गुन गावौं राम रावरोई,
 रोटी द्वै हौं पावौं राम रावरी ही कानि हौं ।
जानत जहान, मन मेरे हू गुमान बड़ो,
 मान्यो मैं न दूसरो, न मानत, न मानिहौं ॥
पाँच की प्रतीति न, भरोसो मोहिं आपनोई,
 तुम अपनायो हौं तबै हीं परि जानिहौं ।
गढ़ि गुढ़ि, छोलि छालि कुंद की सी भाईं बातैं
 जैसी मुख कहौं तैसी जीय अब आनिहौं ॥६३॥
बचन बिकार, करतबउ खुआर, मन,
 बिगत-बिचार, कलि-मल को निधानु है ।
राम को कहाइ, नाम बेचि बेचि खाइ, सेवा
 संगति न जाइ पाछिले को उपखानु है ॥

तेहूँ 'तुलसी' को लोग भलो भलो कहैं, ताको
दूसरो न हेतु, एक नीके कै निदानु है।
लोकरीति बिदित बिलोकियत जहाँ तहाँ,
स्वामी के सनेह स्वान हू को सनमानु है ॥६४॥
स्वारथ को साज न समाज परमारथ को,
मो-सो दगाबाज दूसरो न जगजाल है।
कै न आयों, करौं न करौंगो करतूति भली,
लिखी न बिरंचि हू भलाई भूलि भाल है ॥
रावरी सपथ, राम - नाम ही की गति मेरे,
इहाँ झूठो, झूठी सो तिलोक तिहूँ काल है।
'तुलसी' को भलो पै तुम्हारे ही किए, कृपालु !
कीजै न बिलंब, बलि, पानी-भरी खाल है।६५।
राग को न साज, न बिराग जोग जाग जिय,
काया नहिं छाँड़ि देत ठाटिबो कुठाट को।
मनोराज करत अकाज भयो आजु लगि,
चाहै चारु चीर पै लहै न टूक टाट को ॥
भयो करतार बड़े कूर को कृपालु, पायो
नाम-प्रेम-पारस हौं लालची बराट को।
तुलसी बनी है राम रावरे बनाए, ना तौ,
धोबी कैसो कूकर न घर को घाट को।६६।
ऊँचो मन, ऊँची रुचि, भाग नीचो निपट ही,
लोकरीति-लायक न, लंगर लबारु है।

स्वारथ अगम, परमारथ की कहा चली,
पेट की कठिन, जग जीव को जवारु है ॥
चाकरी न आकरी न खेती न बनिज भीख,
जानत न कूर कछु किसब कबारु है ।
'तुलसी' की बाजी राखी राम ही के नाम, नतु
भेंट पितरन कों न मूड़हू में बारु है ।६७।
अपत, उतार, अपकार को अगार, जग
जाकी छाँह छुए सहमत ब्याध बाधको ।
पातक पुहुमि पालिबे को सहसानन सो,
कानन कपट को, पयोधि अपराध को ॥
'तुलसी'-से बाम को भो दाहिनो दयानिधान,
सुनत सिहात सब सिद्ध साधु साधको ।
रामनाम ललित ललाम कियो लाखनि को
बड़ो कूर कायर कपूत कौड़ी आध को ।७८।
सब-अंग-हीन, सब-साधन-बिहीन, मन
बचन मलीन, हीन कुल करतूति हौं ।
बुधि-बल-हीन, भाव-भगति-बिहीन, हीन-
गुन, ज्ञानहीन, हीन भाग हू बिभूति हौं ॥
'तुलसी' गरीब की गई-बहोर रामनाम,
जाहि जपि जीह राम हू को बैठो धूति हौं ।
प्रीति रामनाम सों, प्रतीति रामनाम की,
प्रसाद रामनाम के पसारि पायँ सूतिहौं ।६९।

मेरे जान जब तें हौं जीव ह्वै जनम्यो जग,
तब तें बेसाह्यो दाम लोह कोह काम को।
मन तिनहीं की सेवा, तिनहीं सों भाव नीको,
बचन बनाइ कहौं 'हौं गुलाम राम को' ॥
नाथहू न अपनायो, लोक झूठी ह्वै परी, पै
प्रभु हू तें प्रबल प्रताप प्रभु नाम को।
आपनी भलाई भलो कीजै तौ भलाई, न तौ
'तुलसी' को खुलैगो खजानो खोटे दाम को ॥७०॥
जोग न बिराग जप जाग तप त्याग ब्रत,
तीरथ न धर्म जानौं बेदबिधि किमि है।
'तुलसी'-सो पोच न भयो है, नहिं ह्वैहै कहूँ,
सोचैं सब याके अघ कैसे प्रभु छमिहै ॥
मेरे तौ न डरु रघुबीर सुनौ साँची कहौं,
खल अनखैहैं, तुम्हैं सज्जन न गमिहै।
भले सुकृती के संग मोहिं तुला तौलिए तौ,
नाम के प्रसाद भार मेरी ओर नमिहै ॥७१॥
जाति के, सुजाति के, कुजाति के, पेटागिबस,
खाए टूक सबके बिदित बात दुनी सो।
मानस बचन काय किए पाप सति भाय,
राम को कहाय दास, दगाबाज पुनी सो ॥
रामनाम को प्रभाउ, पाउ महिमा प्रताप,
'तुलसी' सो जग मानियत महामुनी सो।

अतिही अभागो अनुरागत न रामपद,
मूढ़ एतो बड़ो अचरज देखि सुनी सो ॥७२॥
जायो कुल मंगन, बधावनो बजायो सुनि,
भयो परिताप पाप जननी जनक को।
बारे तें ललात बिललात द्वार द्वार दीन,
जानत हौं चारि फल चारि ही चनक को॥
'तुलसी' सो साहिब समर्थ को सुसेवक है,
सुनत सिहात सोच बिधिहू गनक को।
नाम, राम! रावरो सयानो किधौं बावरो,
जो करत गिरी तें गरु तृन तें तनक को ॥७३॥
बेद हू पुरान कही, लोकहू बिलोकियत,
रामनाम ही सों रीझे सकल भलाई है।
कासी हू मरत उपदेसत महेस सोई,
साधना अनेक चितई न चित लाई है॥
छाछी को ललात जे ते राम-नाम के प्रसाद
खात खुनसात सोंधे दूध की मलाई है।
रामराज सुनियत राजनीति की अवधि,
नाम, राम! रावरो तो चाम की चलाई है ॥७४॥
सोच संकटनि सोच संकट परत, जर
जरत, प्रभाव नाम ललित ललाम को।
बूड़ियौ तरति, बिगरीयौ सुधरति बात,
होत देखि दाहिनो सुभाव बिधि बाम को॥

भागत अभाग, अनुरागत बिराग, भाग
जागत, आलसी 'तुलसी' हू से निकाम को।
धाई धारि फिरि कै गोहारि हितकारी होति,
आई मीचु मिटति जपत रामनाम को ॥७५॥
आँधरो, अधम, जड़, जाजरो जरा जवन,
सूकर के सावक ढका ढकेल्यो मग मैं।
गिरो हिये हहरि, 'हराम हो हराम हन्यो'
हाय हाय करत परीगो काल-फँग मैं॥
'तुलसी' बिसोक ह्वै त्रिलोकपति-लोक गयो
नाम के प्रताप, बात बिदित है जग मैं।
सोई रामनाम जो सनेह सों जपत जन
ताकी महिमा क्यों कही है जाति अगमैं॥७६॥
जापकी न, तप खप कियो न तमाइ जोग,
जाग न, बिराग त्याग तीरथ न तनको।
भाई को भरोसो न खरो सो बैर बैरीहू सों,
बल अपनो न, हितू जननी न जनको॥
लोक को न डर, परलोक को न सोच,
देवसेवा न सहाय, गर्व धाम को न धन को।
राम ही के नाम तें जो होइ सोई नीको लागै,
ऐसोई सुभाव कछु 'तुलसी' के मन को॥७७॥
ईस न, गनेस न, दिनेस न, धनेस न,
सुरेस सुर गौरि गिरापति नहिं जपने।

तुम्हरेई नाम को भरोसो भव तरिबे को,
बैठे-उठे, जागत बागत सोए सपने ॥
'तुलसी' है बावरो सो रावरोई, रावरी सों,
रावरेऊ जानि जिय, कीजिए जु अपने ।
जानकी-रमन मेरे ! रावरे बदन फेरे,
ठाउँ न समाउँ कहाँ, सकल निरपने ॥७८॥

जाहिर जहान में जमानो एक भाँति भयो,
बेंचिए बिबुध-धेनु रासभी बेसाहिए ।
ऐसेऊ कराल कलिकाल में कृपालु तेरे
नाम के प्रताप न त्रिताप तन दाहिए ॥
'तुलसी' तिहारो मन बचन करम, तेहि
नाते नेह-नेम निज ओर तें निबाहिए ।
रंक के निवाज रघुराज राजा राजनि के,
उमरि दराज महाराज तेरी चाहिए ॥७९॥

स्वारथ सयानप, प्रपंच परमारथ,
कहायो राम रावरो हौं, जानत जहानु है ।
नाम के प्रताप, बाप ! आजु लौं निबाही नीके,
आगे को गोसाईं स्वामी सबल सुजानु है ॥
कलि की कुचालि देखि दिन-दिन दूनी देव !
पाहरूई चोर हेरि हिय हहरानु है ।
'तुलसी' की, बलि, बार बार ही सँभार कीबी,
जद्यपि कृपानिधान सदा सावधानु है ॥८०॥

दिन-दिन दूनो देखि दारिद दुकाल दुख,
दुरित दुराज, सुख सुकृत सकोचु है।
माँगे पैंत पावत पचारि पातकी प्रचंड,
काल की करालता भये को होत पोचु है॥
आपने तौ एक अवलंब अंब डिंभ ज्यों,
समर्थ सीताराम सब संकट-बिमोचु है।
'तुलसी' को साहस सराहिए कृपालु, राम!
नाम के भरोसे परिनाम को निसोचु है॥८१॥
मोह-मद-मात्यो, रात्यो कुमति-कुनारि सों,
बिसारि बेद लोक-लाज, आँकरो अचेतु है।
भावै सो करत, मुँह आवै सो कहत कछु,
काहू की सहत नाहिं, सरकस हेतु है॥
तुलसी अधिक अधमाई हू अजामिल तें,
ताहू में सहाय कलि कपट-निकेतु है।
जैबे को अनेक टेक, एक टेक ह्वैबे की, जो
पेट-प्रिय-पूत-हित रामनाम लेतु है॥८२॥
जागिए न सोइए, बिगोइए जनम जाय,
दुख रोग रोइए, कलेस कोह काम को।
राजा, रंक, रागी औ बिरागी, भूरि भागी ये
अभागी जीव जरत, प्रभाव कलि बाम को।
'तुलसी' कबंध कैसो धाइबो बिचारु, अंध!
धुंध देखियत जग सोच परिनाम को।

सोइबो जो राम के सनेह की समाधि-सुख,
जागिबो जो जीह जपै नीके रामनाम को ॥८३॥
बरन-धरम गयो, आस्रम निवास तज्यो,
त्रासन चकित सो परावनो परो सो है।
करम उपासना कुबासना बिनास्यो, ज्ञान
बचन, बिराग बेष जगत हरो सो है॥
गोरख जगायो जोग, भगति भगायो लोग,
निगम नियोग ते सो कलि ही छरो सो है।
काय मन बचन सुभाय 'तुलसी' है जाहि
रामनाम को भरोसो ताहि को भरोसो है ॥८४॥
बेद पुरान बिहाइ सुपंथ कुमारग कोटि कुचाल चली है।
काल कराल नृपाल कृपालन राजसमाज बड़ोई छली है॥
बर्न-बिभाग न आस्रम-धर्म, दुनी दुख-दोष-दरिद्र दली है।
स्वारथ को परमारथ को कलि राम को नाम-प्रताप बली है ॥८५॥
न मिटै भवसंकट दुर्घट है तप तीरथ जन्म अनेक अटो।
कलि में न बिराग न ज्ञान कहूँ, सब लागत फोकट झूँठ-जटो॥
नट ज्यों जनि पेट-कुपेटक कोटिक चेटक कौतुक ठाट ठटो।
'तुलसी' जो सदा सुख चाहिय तौ रसना निसिबासर राम रटो॥८६॥
दम दुर्गम, दान दया मख कर्म सुधर्म अधीन सबै धन को।
तप तीरथ साधन जोग बिराग सों होइ नहीं दृढ़ता तन को॥
कलिकाल कराल में, राम कृपालु! यहै अवलंब बड़ो मन को।
तुलसी सब संजमहीन सबै, इक नाम अधार सदा जन को॥८७॥

पाइ सुदेह बिमोह-नदी-तरनी न लही, करनी न कछू की।
रामकथा बरनी न बनाइ, सुनी न कथा प्रहलाद न ध्रू की॥
अब जोर जरा जरि गात गयो, मन मानि गलानि कुबानि न मूकी।
नीके कै ठीक दई तुलसी, अवलंब बड़ो उर आखर दू की॥८८॥
राम बिहाय 'मरा' जपते बिगरी सुधरी कबि-कोकिल हू की।
नामहि तें गज की, गनिका की, अजामिल की चलि गै चल-चूकी॥
नाम-प्रताप बड़े कुसमाज बजाइ रही पति पांडुबधू की।
ताको भलो अजहूँ 'तुलसी' जेहि प्रीति प्रतीति है आखर दू की।८९।
नाम अजामिल से खल तारन, तारन बारन बारबधू को।
नाम हरे प्रहलाद बिषाद, पिता भय साँसति सागर सूको॥
नाम सों प्रीति-प्रतीति बिहीन गिल्यो कलिकाल कराल न चूको।
राखिहैं राम सो जासु हिये 'तुलसी' हुलसै बल आखर दू को।९०।
जीव जहान में जायो जहाँ सो तहाँ 'तुलसी' तिहुँ दाह दहो है।
दोष न काहू, कियो अपनो, सपनेहु नहीं सुख-लेस लहो है॥
राम के नाम तें होउ सो होउ, न सोऊ हिये, रसना ही कहो है।
कियो न कछू, करिबो न कछू, कहिबो न कछू मरिबोइ रहो है॥९१॥
जीजै न ठाउँ, न आपन गाँउ, सुरालयहू को न संबल मेरे।
नाम रटौ, जमबास क्यों जाउँ, को आइ सकै जम-किंकर नेरे?॥
तुम्हरो सब भाँति; तुम्हारिय सों, तुम्हही, बलि, हौ मोकों ठाहरु हेरे।
बैरष बाँह बसाइए पै, 'तुलसी'-घरु ब्याध अजामिल खेरे॥९२॥
का कियो जोग अजामिल जू, गनिका कबहीं मति पेम पगाई?
ब्याध को साधुपनो कहिए, अपराध अगाधनि मैं ही जनाई॥

करुनाकर की करुना करुना-हित नाम-सुहेत जो देत दगाई।
काहे को खीजिय ? रीझिय पै, 'तुलसी' सों है बलि सोइ सगाई।९३।
जे मद-मार-बिकार-भरे ते अचार-बिचार समीप न जाहीं।
है अभिमान तऊ मन में 'जन भाषिहै दूसरे दीनन पाहीं' ? ।।
जौ कछु बात बनाइ कहौं 'तुलसी' तुम तें तुम हौ उर माहीं।
जानकी-जीवन जानत हौ हम हैं तुम्हरे, तुममें, सक नाहीं ।।९४।।
दानव देव अहीस महीस महा मुनि तापस सिद्ध समाजी।
जग जाचक, दानि दुतीय नहीं तुमहीं सबकी सब राखत बाजी ।।
एते बड़े तुलसीस तऊ सबरी के दिए बिनु भूख न भाजी।
राम गरीबनेवाज ! भए हौ गरीबनेवाज गरीब नेवाजी ।।९५।।

घनाक्षरी

किसबी, किसान-कुल, बनिक, भिखारी, भाँट,
चाकर, चपल-नट, चोर, चार चेटकी।
पेट को पढ़त, गुन गढ़त, चढ़त गिरि,
अटत गहन-बन अहन अखेटकी ।।
ऊँचे-नीचे करम धरम-अधरम करि,
पेट ही को पचत बेचत बेटा-बेटकी।
'तुलसी' बुझाइ एक राम-घनस्याम ही तें,
आगि बड़वागि तें बड़ी है आगि पेट की ।।९६।।
खेती न किसान को, भिखारी को न भीख, बलि,
बनिक को बनिज न चाकर को चाकरी।

जीविका-विहीन लोग सीद्यमान सोचबस,
कहैं एक-एकन सों 'कहाँ जाई, का करी ?' ॥
बेद हू पुरान कही, लोकहू बिलोकियत,
साँकरे सबै पै राम रावरे कृपा करी ।
दारिद-दसानन दबाई दुनी, दीनबंधु !
दुरित-दहन देखि 'तुलसी' हहा करी ॥९७॥

कुल, करतूति, भूति, कीरति, सुरूप, गुन,
जोबन जरत जुर, परै न कछू कही ।
राजकाज कुपथ, कुसाज, भोग रोगही के,
बेद-बुध बिद्या पाइ बिबस बलकही ॥
गति तुलसीस की लखै न कोऊ जो करत,
पब्बइ तें छार, छारै पब्बइ पलक ही ।
कासों कीजै रोष ? दोष दीजै काहि ? पाहि राम !
कियो कलिकाल कुलि खलल खलक ही ॥९८॥

बबुर बहेरे को बनाय बाग लाइयत,
रूँधिबे को सोइ सुरतरु काटियतु है !
गारी देत नीच हरिचंदहू दधीचिहू को,
आपने चना चबाइ हाथ चाटियतु है ॥
आप महापातकी हँसत हरिहरहू को,
आपु है अभागी, भूरिभागी डाँटियतु है ।
कलि को कलुष, मन मलिन किए महत,
मसक की पाँसुरी पयोधि पाटियतु है ॥९९॥

सुनिए कराल कलिकाल भूमिपाल तुम !
जाहि घालो चाहिए कहौ धौं राखै ताहि को ?।
हौं तौ दीन-दूबरो, बिगारो ढारो रावरो न,
मैं हूँ तैं हूँ ताहि को सकल जग जाहि को ॥
काम-कोह लाइकै देखाइयत आँखि मोहिं,
एते मान अकस कीबे को आपु आहि को ?।
साहिब सुजान जिन स्वानहू को पच्छ कियो,
रामबोला नाम, हौं गुलाम-राम-साहि को ॥१००॥

सवैया

साँची कहौं कलिकाल कराल मैं, ढारो बिगारो तिहारो कहा है ?
काम को, कोह को, लोभ को, मोह को, मोहि सों आनि प्रपंच रहा है ॥
हौ जगनायक लायक आजु, पै मेरियौ टेव कुटेव महा है ।
जानकीनाथ बिना, 'तुलसी', जग दूसरे सों करिहौं न हहा है ।१०१।
भागीरथी जलपान करौं अरु नाम द्वै राम के लेत नितै हौं ।
मोको न लेनो न देनो कछू, कलि ! भूलि न रावरी ओर चितैहौं ॥
जानिकै जोर करौ परिनाम, तुम्हैं पछितैहौ पै मैं न भितैहौं ॥
ब्राह्मन ज्यों उगिल्यो उरगारि हौं त्योंही तिहारे हिये न हितैहौं १०२
राजमराल के बालक पेलि कै, पालत लालत खूसर को ।
सुचि सुंदर सालि सकेलि सुबारि कै बीज बटोरत ऊसर को ॥
गुन-ज्ञान-गुमान भभेरि बड़ो, कलपद्रुम काटत मूसर को ।
कलिकाल बिचार-अचार हरो, नहिं सूझै कछू धमधूसर को ॥१०३॥

कीबे कहा, पढ़िबे को कहा ? फल बूझि न बेद को भेद बिचारै।
स्वारथ को परमारथ को कलि कामद राम को नाम बिसारै ॥
बाद बिबाद बिषाद बढ़ाइ कै छाती पराई औ आपनी जारै।
चारिहुको, छहु को, नव को, दस आठ को पाठ कुकाठ ज्यों फारै १०४
आगम बेद पुरान बखानत, मारग कोटिक जाहिं न जाने।
जे मुनि ते पुनि आपुहि आपु को ईस कहावत सिद्ध सयाने ॥
धर्म सबै कलिकाल ग्रसे, जप जोग बिराग लै जीव पराने।
को करि सोच मरै, 'तुलसी' हम जानकीनाथ के हाथ बिकाने॥१०५
धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूत कहौ, जोलहा कहौ कोऊ।
काहू की बेटी सों बेटा न ब्याहब, काहू की जाति बिगारौं न सोऊ॥
'तुलसी' सरनाम गुलाम है राम को, जाको रुचै सो कहौ कछु ओऊ।
माँगि कै खैबो मसीत को सोइबो, लैबे को एक न दैबे को दोऊ १०६

घनाक्षरी

मेरे जाति-पाँति, न चहौं काहू की जाति-पाँति,
मेरे कोऊ काम को, न हौं काहू के काम को।
लोक परलोक रघुनाथ ही के हाथ सब,
भारी है भरोसो 'तुलसी' के एक नाम को॥
अति ही अयाने उपखानो नहिं बूझैं लोग
'साह ही को गोत गोत होत है गुलाम को'।
साधु कै असाधु, कै भलो कै पोच सोच कहा,
का काहू के द्वार परौं, जो हौं सो हौं राम को ॥१०७॥

कोऊ कहै करत कुसाज दगाबाज बड़ो,
कोऊ कहै राम को गुलाम खरो खूब है ।
साधु जानैं महासाधु, खल जानैं महाखल,
बानी झूठी साँची कोटि उठत हबूब है ॥
चहत न काहू सों, न कहत काहू की कछु,
सबकी सहत उर-अंतर न ऊब है ।
'तुलसी' को भलो पोच हाथ रघुनाथ ही के,
राम की भगति भूमि, मेरी मति दूब है ॥१०८॥
जागैं जोगी जंगम, जती जमाती ध्यान धरैं,
डरैं उर भारी लोभ मोह कोह काम के ।
जागैं राजा राजकाज, सेवक समाज साज,
सोचैं सुनि समाचार बड़े बैरी बाम के ॥
जागैं बुध बिद्याहित पंडित चकित चित,
जागैं लोभी लालच धरनि धन धाम के ।
जागैं भोगी भोग ही, बियोगी रोगी सोगबस,
सोवै सुख 'तुलसी' भरोसे एक राम के ॥१०९॥

छप्पय

राम मातु, पितु, बंधु, सुजन, गुरु, पूज्य, परम हित ।
साहेब, सखा, सहाय नेह नाते पुनीत चित ॥
देस कोस कुल कर्म धर्म धन धाम धरनि गति ।
जाति-पाँति सब भाँति लागि रामहिं हमारि पति ॥

परमारथ स्वारथ सुजस, सुलभ राम तें सकल फल।
कह 'तुलसिदास' अब जब कबहुँ एक राम तें मोर भल।११०
महाराज बलि जाउँ रामसेवक सुखदायक।
महाराज बलि जाउँ राम सुंदर सब लायक॥
महाराज बलि जाउँ राम सब संकट-मोचन।
महाराज बलि जाउँ राम राजीव-बिलोचन॥
बलि जाउँ राम करुनायतन प्रनतपाल पातकहरन।
बलि जाउँ राम कलि-भय-बिकल 'तुलसिदास' राखिय सरन१११
जय ताड़का-सुबाहु-मथन, मारीच-मानहर।
मुनि-मख-रच्छन-दच्छ, सिलातारन करुनाकर॥
नृपगन-बल-मद-सहित संभु - कोदंड-बिहंडन।
जय कुठारधर - दर्पदलन, दिनकरकुल-मंडन॥
जय जनकनगर-आनंदप्रद, सुखसागर सुखमाभवन।
कह 'तुलसिदास' सुर-मुकुटमनि जय जय जय जानकिरवन११२
जय जयंत-जयकर, अनंत, सज्जन-जन-रंजन।
जय बिराध-बध-बिदुष,बिबुध-मुनिगन-भयभंजन॥
जय निसिचरी-बिरूप-करन रघुबंस-बिभूषन।
सुभट-चतुर्दस-सहस-दलन-त्रिसिरा-खर - दूषन॥
जय दंडकबन-पावन-करन तुलसिदास संसय-समन।
जगबिदित जगतमनि जयति जय जय जय जय जानकिरमन॥
जय मायामृग - मथन गीध-सबरी-उद्धारन।
जय कबंध-सूदन बिसाल-तरु-ताल-बिदारन॥

दवन-बालि-बलसालि, थपन-सुग्रीव संत - हित।
कपि-कराल-भट-भालु-कटक-पालन, कृपालु-चित॥
जय सिय - बियोग - दुख - हेतु - कृत-सेतुबंध बारिधि-दमन।
दससीस बिभीषन अभयप्रद जयजयजयजय जानकिरमन ११४

कनक-कुधर केदार, बीज सुंदर सुरमनिबर।
सींचि कामधुक-धेनु सुधामय पय बिसुद्धतर॥
तीरथपति अंकुर-सरूप, जच्छेस रच्छ तेहिं।
मरकतमय साखा-सुपत्र मंजरि सुलच्छि जेहि॥
कैवल्य सकल फल कल्पतरु, सुभ सुभाव सब सुख बरिस।
कह 'तुलसिदास' रघुबंसमनि तौ कि होहि तुव कर-सरिस।११५

जाय सो सुभट समर्थ पाइ रन रारि न मंडै।
जाय सो जती कहाय बिषय-बासना न छंडै॥
जाय धनिक बिनु दान, जाय निर्धन बिनु धर्महिं।
जाय सो पंडित पढ़ि पुरान जो रत न सुकर्महिं॥
सुत जाय मातु-पितु-भक्ति बिनु, तिय सो जाय जेहि पति न हित।
सब जाय 'दास तुलसी' कहै जौ न रामपद नेह नित॥११६

को न क्रोध निरदह्यो, काल बस केहि नहिं कीन्हों ?
को न लोभ दृढ़फंद बाँधि त्रासन करि दीन्हों॥
कौन हृदय नहिं लाग कठिन अति नारि-नयन-सर ?
लोचनजुत नहिं अंध भयो श्री पाइ कौन नर ?।
सुर-नाग-लोक महिमंडलहु को जु मोह कीन्हों जय न ?
कह 'तुलसिदास' सो ऊबरै जेहि राख राम राजिवनयन।११७

सवैया

भौंह-कमान-सँधान-सुठान जे नारि-बिलोकनि-बान तें बाँचे ।
कोप-कृसानु गुमान-अवाँ घट ज्यों जिनके मन आँच न आँचे ॥
लोभ सबै नट के बस ह्वै कपि ज्यों जग में बहु नाच न नाँचे ।
नीके हैं साधु सबै 'तुलसी' पै तेई रघुबीर के सेवक साँचे ।११८

कवित्त

भेष सुबनाइ, सुचि बचन कहैं चुवाइ,
जाइ तौ न जरनि धरनि धन धाम की ।
कोटिक उपाय करि लालि पालियत देह,
मुख कहियत गति राम ही के नाम की ॥
प्रगटै उपासना, दुरावै दुरबासनाहिं,
मानस निवास-भूमि लोभ, मोह, काम की ।
राग रोष ईरषा कपट कुटिलाई भरे
'तुलसी' से भगत भगति चहैं राम की ॥११९॥

'काल्हिही तरुन तन, काल्हि ही धरनि धन,
काल्हि ही जितौंगो रन, कहत कुचालि है ।
काल्हि ही साधौंगो काज, काल्हि ही राजा समाज',
मसक ह्वै कहै 'भार मेरे मेरु हालिहै' ॥
'तुलसी' यही कुमति घने घर घालि आई,
घने घर घालति है, घने घर घालिहै ।
देखत सुनत समुझत हू न सूझै सोई,
कबहूँ कह्यो न 'कालहू को काल काल्हि है' ॥१२०॥

भयो न तिकाल तिहूँ लोक 'तुलसी'-सो मंद,
निंदैं सब साधु, सुनि मानौं न सकोचु हौं।
जानत न जोग, हिय हानि मानैं, जानकीस !
काहे को परेखो पातकी प्रपंची पोचु हौं॥
पेट भरिबे के काज महाराज को कहायों,
महाराजहू कह्यो है 'प्रनत-बिमोचु' हौं।
निज अघ जाल, कलिकाल की करालता
बिलोकि होत ब्याकुल, करत सोई सोचु हौं॥१२१॥

धरम के सेतु जगमंगल के हेतु भूमि-
भार हरिबे को अवतार लियो नर को।
नीति औ प्रतीति-प्रीति-पाल प्रभु चालि मान,
लोक-बेद राखिबे को पन रघुबर को॥
बानर बिभीषन की ओर के कनावड़े हैं,
सो प्रसंग सुने अंग जरै अनुचर को।
राखे रीति आपनी जो होइ सोई कीजै, बलि,
'तुलसी' तिहारो घरजायऊ है घर को॥१२२॥

नाम महाराज के निबाह नीको कीजै उर,
सबही सोहात, मैं न लोगनि सोहात हौं।
कीजै राम बार यहि मेरी ओर चख-कोर,
ताहि लगि रंक ज्यों सनेह को ललात हौं॥
'तुलसी' बिलोकि कलिकाल की करालता,
कृपालु को सुभाव समुझत सकुचात हौं।

लोक एक भाँति को, तिलोकनाथ लोकबस,
आपनो न सोच, स्वामी सोच ही सुखात हौं ॥१२३॥
तौ लौं लोभ, लोलुप ललात लालची लबार,
बार बार, लालच धरनि धन धाम को।
तब लौं बियोग-रोग-सोग, भोग जातना को,
जुग सम लगत जीवन जाम-जाम को ॥
तौ लौं दुख दारिद दहत अति नित तनु,
'तुलसी' है किंकर बिमोह कोह काम को।
सब दुख आपने, निरापने सकल सुख,
जौ लौं जन भयो न बजाइ राजा राम को।१२४।
तब लौं मलीन हीन दीन, सुख सपने न,
जहाँ-तहाँ दुखी जन भाजन कलेस को।
तब लौं उबेने पायँ फिरत पेटै खलाय,
बाये मुँह सहत पराभौ देस-देस को ॥
तब लौं दयावनो, दुसह दुख दारिद को,
साथरी को सोइबो, ओढ़िबो झूने खेस को।
जब लौं न भजै जीह जानकी-जीवन राम,
राजन को राजा सो तौ साहेब महेस को।१२५।
ईसन के ईस, महाराजन के महाराज,
देवन के देव, देव! प्रानहूँ के प्रान हौ।
कालहू के काल, महाभूतन के महाभूत,
कर्म हू के करम, निदान के निदान हौ ॥

निगम को अगम, सुगम 'तुलसी' हू-से को,
एते मान सीलसिंधु करुनानिधान हौ।
महिमा अपार, काहू बोल को न वारापार,
बड़ी साहिबी में नाथ बड़े सावधान हौ।१२६।

सवैया

आरतपालु कृपालु जो राम, जेही सुमिरे तेहि को तहँ ठाढ़े।
नाम-प्रताप महा महिमा, अँकरे किये खोटेउ, छोटेउ बाढ़े॥
सेवक एक तें एक अनेक भए 'तुलसी' तिहुँ ताप न डाढ़े।
प्रेम बदौं प्रहलादहि को जिन पाहन तें परमेसुर काढ़े।१२७।
काढ़ि कृपान, कृपा न कहूँ, पितु काल कराल बिलोकि न भागे।
'राम कहाँ?' सब ठाउँ हैं' 'खंभ में?' 'हाँ' सुनि हाँक नृकेहरि जागे॥
बैरी बिदारि भए बिकराल, कहे प्रहलादहि के अनुरागे।
प्रीति प्रतीति बढ़ी 'तुलसी' तब तें सब पाहन पूजन लागे।१२८।
अंतरजामिहु तें बड़ बाहरजामि हैं राम, जे नाम लिए तें।
धावत धेनु पन्हाइ लवाइ ज्यों बालक-बोलनि कान किए तें॥
आपनि बूझि कहै 'तुलसी', कहिबे की न बावरि बात बिये तें।
पैज परे प्रहलादहु को प्रगटे प्रभु पाहन तें, न हिये तें।१२९।
बालक बोलि दियो बलि काल को, कायर कोटि कुचाल चलाई।
पापी है बाप, बड़े परिताप तें आपनी ओर तें खोरि न लाई॥
भूरि दई बिषमूरि भई प्रहलाद-सुधाई सुधा की मलाई।
रामकृपा 'तुलसी' जन को जग होत भले को भलोई भलाई।१३०।

कंस करी ब्रजबासिन पै करतूति कुभाँति, चली न चलाई ।
पांडु के पूत सपूत, कुपूत सुजोधन भो कलि-छोटो छलाई ॥
कान्ह कृपालु बड़े नतपालु, गए खल खेचर खीस खलाई ।
ठीक प्रतीति कहै 'तुलसी' जग होइ भले को भलोई भलाई ।१३१।
अवनीस अनेक भए अवनी जिनके डर तें सुर सोच सुखाहीं ।
मानव-दानव-देव-सतावन रावन-घाटि रच्यो जग माहीं ॥
ते मिलए धरि धूरि-सुजोधन जे चलते बहु छत्र की छाँहीं ।
बेद-पुरान कहैं, जग जान, गुमान गोबिंदहि भावत नाहीं ।१३२।
जब नैनन प्रीति ठई ठग स्याम सों, स्यानी सखी हठि हौं बरजी ।
'नहिं जान्यो बियोग सों रोग है आगे' झुकी, तब हौं तेहि सों तरजी ।
अब देह भई पट नेह के घाले सों, ब्योंत करै बिरहा-दरजी ।
ब्रजराज-कुमार बिना सुनु, भृंग ! अनंग भयो जिय को गरजी ।१३३
जोग-कथा पठई ब्रज को, सब सो सठ चेरि की चाल-चलाकी ।
ऊधोजू ! क्यों न कहै कुबरी जो बरी नट-नागर हेरि हलाकी ।
जाहि लगै पर जानै सोई, 'तुलसी' सो सुहागिनि नंदलला की ।
जानी है जानपनी हरि की, अब बाँधियैगी कछु मोटि कला की ।१३४।

कवित्त

पठयो है छपद छबीले कान्ह कैहूँ कहूँ
खोजि कै खवास खासो कूबरी-सी बाल को ।
ग्यान को गढ़ैया, बिनु गिरा को पढ़ैया, बार-
खाल को कढ़ैया सो बढ़ैया उर-साल को ॥

प्रीति को बधिक, रसरीति को अधिक, नीति-
निपुन, विवेक है, निदेस देस-काल को।
'तुलसी' कहे न बनै, सहे ही बनैगी सब,
जोग भयो जोग को, वियोग नंदलाल को।१३५।

हनूमान है कृपालु, लाड़िले लषन लाल,
भावते भरत कीजे सेवक-सहाय जू।
बिनती करत दीन दूबरो दयावनो सो,
बिगरे तें आपुही सुधारि लीजै भाय जू॥
मेरी साहिबिनी! सदा सीस पर बिलसति,
देबि! क्यों न दास को दिखाइयत पायँ जू।
खीझहू में रीझिबे की बानि, राम रीझत हैं,
रीझे ह्वैहैं राम की दुहाई रघुराय जू।१३६।

सवैया

बेष बिराग को, राग-भरो मनु, माय! कहौं सतिभाव हौं तो सों।
तेरे ही नाथ को नाम लै बेचिहौं पातकी पामर प्राननि पोसों॥
एते बड़े अपराधी अघी कहुँ, तैं कहु अंब कि मेरो तु मो सों।
स्वारथ को परमारथ को परिपूरन भो फिरि घाटि न होसों १३७

घनाक्षरी

जहाँ बालमीकि भए ब्याध तें मुनींद्र साधु,
'मरा मरा' जपे सुनि सिष ऋषि सात की।
सीय को निवास लव-कुस को जनम-थल,
'तुलसी' छुवत छाँह ताप गरै गात की॥

बिटप - महीप सुरसरित - समीप सोहै,
सीताबट पेखत पुनीत होत पातकी।
बारिपुर दिगपुर बीच बिलसति भूमि,
अंकित जो जानकी - चरन - जलजात की ।१३८।
मरकत - बरन परन, फल मानिक - से,
लसै जटाजूट जनु रूख बेष हरु है।
सुखमा को ढेरु, कैधौं, सुकृत-सुमेरु, कैधौं
संपदा सकल मुद-मंगल को घरु है॥
देत अभिमत जो समेत - प्रीति सेइए,
प्रतीति मानि 'तुलसी' बिचारि काको थरु है।
सुरसरि निकट सोहावनी अवनि सोहै,
राम-रमनी को बट कलि कामतरु है।१३९।
देवधुनी पास, मुनिबास, सी-निवास जहाँ,
प्राकृतहूँ बट - बूट बसत पुरारि हैं।
जोग जप जाग को बिराग को पुनीत पीठ,
रागिन पै सीठि, डीठि बाहरी निहारिहैं॥
'आयसु' 'आदेस' 'बाबा' 'भलो भलो' 'भाव सिद्ध',
'तुलसी' बिचारि जोगी कहत पुकारि हैं।
राम-भगतन को तौ कामतरु तें अधिक,
सिय-बट सेए करतल फल चारि हैं।१४०।
जहाँ बन पावनो, सुहावने बिहंग-मृग,
देखि अति लागत अनंद खेत-खूँट-सो।

सीताराम-लखन-निवास, बास मुनिन को,
सिद्ध-साधु-साधक सबै बिवेक-बूट-सो ॥
झरना झरत झारि सीतल पुनीत बारि,
मंदाकिनी मंजुल महेस-जटाजूट-सो ।
'तुलसी' जौ राम सों सनेह साँचो चाहिए
तौ सेइए सनेह सों बिचित्र चित्रकूट सो ॥१४१॥
मोह-बन कलिमल-पल-पीन जानि जिय,
साधु गाय बिप्रन के भय को नेवारिहै ।
दीन्हीं है रजाइ राम, पाइ सो सहाइ, लाल
लषन समर्थ बीर हेरि-हेरि मारिहै ॥
मंदाकिनी मंजुल कमान असि, बान जहाँ
बारि-धार धरि-धरि सुकर सुधारिहै ।
चित्रकूट-अचल अहेरी बैठ्यो घात मानों,
पातक के ब्रात घोर सावज सँहारिहै ॥१४२॥

सवैया

लागि दवारि पहार ठही, लहकी कपि लंक जथा खर-खौकी ।
चारु चुवा चहुँ ओर चलैं, लपटैं झपटैं सो तमीचर तौंकी ।
क्यों कहि जात महा सुखमा, उपमा तकि ताकत है कबि कौ की ॥
मानों लसी 'तुलसी' हनुमान-हिये जगजीति जराय की चौकी।१४३।
देव कहैं अपनी-अपना अवलोकन तीरथराज चलो रे ।
देखि मिटैं अपराध अगाध, निमज्जत साधु-समाज भलो रे ॥

सोहैं सितासित को मिलिबो, 'तुलसी' हुलसै हिय हेरि हलोरे।
मानो हरे तृन चारु चरैं बगरे सुरधेनु के धौल कलोरे।१४४।
देवनदी कहँ जो जन जान किए मनसा कुल-कोटि उधारे।
देखि चले, झगरैं सुरनारि, सुरेस बनाइ बिमान सँवारे॥
पूजा को साज बिरंचि रचैं, 'तुलसी' जे महातम जाननहारे।
ओक की नींव परी हरिलोक बिलोकत गंग तरंग तिहारे।१४५।
ब्रह्म जो व्यापक बेद कहैं, गम-नाहिं गिरा गुन-ज्ञान गुनी को।
जो करता भरता हरता सुर साहिब, साहब दीन दुनी को॥
सोई भयो द्रवरूप सही जु है नाथ बिरंचि महेस मुनी को।
मानि प्रतीति सदा 'तुलसी' जल काहे न सेवत देवधुनी को।१४६।
बारि तिहारो निहारि मुरारि भए परसे पद पाप लहौंगो।
ईस ह्वै सीस धरौं पै डरौं, प्रभु की समता बड़ दोष दहौंगो॥
बरु बारहिं बार सरीर धरौं, रघुबीर को ह्वै तव तीर रहौंगो।
भागीरथी! बिनवौं करजोरि, बहोरि न खोरि लगै सो कहौंगो।१४७।

कवित्त

लालची ललात, बिललात द्वार-द्वार दीन,
बदन मलीन, मन मिटै न बिसूरना।
ताकत सराध कै बिवाह, कै उछाह कछू,
डोलै लोग बूझत सबद ढोल तूरना॥
प्यासे हू न पावै बारि, भूखे न चनक चारि,
चाहत अहारन पहार, दारि घूरना।
सोक को अगार दुख-भार-भरो तौ लौं जन,
जौ लौं देवी द्रवै न भवानी अन्नपूरना॥१४८॥

छप्पय

भस्म अंग, मर्दन अनंग, संतत असंग, हर ।
सीस-गंग, गिरिजा-अधंग, भूषन भुजंगवर ॥
मुंड-माल, बिधु बाल भाल, डमरू-कपाल कर ।
बिबुध-बृंद-नवकुमुद-चंद, सुखकंद, सूलधर ॥
त्रिपुरारि त्रिलोचन दिग्बसन बिष-भोजन भव-भय-हरंन ।
कह 'तुलसिदास' सेवत सुलभ, सिव सिव सिव संकर-सरन ।१४९

गरल-असन, दिग्बसन, ब्यसन-भंजन, जन-रंजन ।
कुंद-इंदु-कर्पूर-गौर, सच्चिदानंद-घन ॥
बिकट बेष, उर सेष, सीस सुरसरित सहज सुचि ।
सिव, अकाम, अभिराम धाम, नित रामनाम रुचि ॥
कंदर्प-दर्प-दुर्गम-दवन, उमारवन गुनभवन हर ।
तुलसीस त्रिलोचन, त्रिगुन-पर, त्रिपुर-मथन, जय त्रिदसबर ।१५०

अर्ध-अंग अंगना, नाम जोगीस जोगपति ।
बिषम असन, दिगबसन, नाम बिस्वेस बिस्वगति ॥
कर कपाल, सिर माल-ब्याल, बिष-भूति बिभूषन ।
नाम सुद्ध, अबिरुद्ध, अमर, अनवद्य, अदूषन ॥
बिकराल भूत-बैताल-प्रिय, भीम नाम भव-भय-दमन ।
सब बिधि समर्थ, महिमा अकथ, 'तुलसिदास' संसय-समन ।१५१

भूतनाथ भयहरन, भीम भय-भवन, भूमिधर ।
भानुमंत, भगवंत, भूति-भूषन-भुजंगवर ॥

भव्य, भाव वल्लभ, भवेस भव-भार-बिभंजन ।
भूरि-भोग, भैरव, कुजोग-गंजन, जन - रंजन ॥
भारती-बदन, बिष-अदन सिव, ससि-पतंग-पावक-नयन ।
कह 'तुलसिदास' किन भजसि मन, भद्रसदन मर्दनमयन ।१५२

सवैया

नाँगो फिरै, कहै माँगनो देखि 'न-खाँगो कछू, जनि माँगिए थोरो।'
राँकनि नाकप रीझि करै, 'तुलसी' जग जो जुरै जाचक जोरो ॥
'नाक सँवारत आयो हौं नाकहि, नाहिं पिनाकिहिं नेकु निहोरो' ।
ब्रह्म कहै 'गिरजा ! सिखवौ, पति रावरो दानि है बावरो भोरो ।१५३
बिष पावक, ब्याल कराल गरे, सरनागत तौ तिहुँ ताप न डाढ़े ।
भूत बेताल सखा, भव-नाम, दलै पल में भव के भय गाढ़े ॥
तुलसीस दरिद्र-सिरोमनि सो सुमिरे दुखदारिद होहिं न ठाढ़े ।
भौन में भाँग, धतूरोई आँगन, नाँगे के आगे हैं माँगने बाढ़े १५४
सीस बसै बरदा, बरदानि, चढ्यो बरदा, धरन्यो बरदा हैं ।
धाम धतूरो बिभूति को कूरो, निवास तहाँ शव लै मरे दाहैं ॥
ब्याली कपाली हैं ख्याली, चहूँ दिसि भाँग की टाटिन को परदा हैं ।
राँकसिरोमनि काकिनिभाग बिलोकत लोकप को ? करदा हैं ।१५५
दानी जो चारि पदारथ को त्रिपुरारि तिहूँ पुर में सिर-टीको ।
भोरो भलो भले भाय को भूखो, भलोई कियो सुमिरे 'तुलसी' को ॥
ता बिनु आस को दास भयो, कबहुँ न मिट्यो लघु लालच जी को ।
साधो कहा करि साधन तैं जोपै राधो नहीं पति पारबती को ।१५६

जात जरे सब लोक बिलोकि त्रिलोचन सो बिष लोकि लियो है।
पान कियो बिष भूषन भो, करुना बरुनालय साइँ-हियो है॥
मेरोई फोरिबे जोग कपार, किधौं कछु काहू लखाय दियो है।
काहे न कान करौ बिनती, 'तुलसी' कलिकाल बिहाल कियो है १५७

कवित्त

खायो कालकूट, भयो अजर अमर तनु,
भवन मसान, गथ गाँठरी गरद की।
डमरू कपाल कर, भूषन कराल ब्याल,
बावरे बड़े की रीझ बाहन-बरद की॥
'तुलसी' बिसाल गोरे गात बिलसति भूति,
मानों हिमगिरि चारु चाँदनी सरद की।
अर्थ धर्म काम मोक्ष बसत बिलोकनि में,
कासी करामाति जोगी जागत मरद की।१५८।
पिंगल-जटा-कलाप, माथे पै पुनीत आप,
पावक-नैना, प्रताप भ्रू पर बरत हैं।
लोचन बिसाल लाल, सोहै बालचंद्र भाल,
कंठ कालकूट, ब्याल भूषन धरत हैं॥
सुंदर दिगंबर बिभूति गात, भाँग खात,
रूरे सृंगी पूरे काल-कंटक हरत हैं।
देत न अघात, रीझि जात पात आक ही के,
भोलानाथ जोगी जब औढर ढरत हैं।१५९।

देत संपदा - समेत श्रीनिकेत जाचकनि,
भवन बिभूति, भाँग, बृषभ बहनु है।
नाम बामदेव, दाहिनो सदा-असंग-रंग,
अर्द्ध-अंग अंगना, अनंग को महनु है॥
'तुलसी' महेस को प्रभाव भाव ही सुगम,
निगम-अगम हूँ को जानिबो गहनु है।
बेष तौ भिखारि को, मयंक-रूप संकर,
दयालु दीनबंधु दानि दारिद-दहनु है।१६०।

चाहै न अनंग-अरि एकौ अंग मंगन को,
देबोई पै जानिए सुभाव-सिद्ध बानि सो।
बारिबुंद चारि त्रिपुरारि पर डारिए तौ
देत फल चारि, लेत सेवा साँची मानि सो॥
'तुलसी' भरोसो न भवेस भोलानाथ को तौ
कोटिक कलेस करौ मरौ छार छानि सो।
दारिद-दमन, दुख-दोष-दाह-दावानल,
दुनी न दयालु दूजो दानि सूलपानि-सो।१६१।

काहे को अनेक देव सेवत, जागै मसान,
खोवत अपान, सठ होत हठि प्रेत रे।
काहे को उपाय कोटि करत मरत धाय,
जाचत नरेस देस देस के, अचेत रे॥
'तुलसी' प्रतीति बिनु त्यागै तैं प्रयाग तनु,
धन ही के हेतु दान देत कुरुखेत रे।

पात द्वै धतूरे के दै, भोरे कै भवेस सों
सुरेस हू की संपदा सुभाय सों न लेत रे ।
स्यंदन, गयंद, बाजिराजि, भले-भले भट,
धन-धाम-निकर, करनि हू न पूजै कै ।
बनिता बिनीत, पूत पावन सोहावन, औ
बिनय, बिवेक, विद्या सुलभ, सरीर ज्वै ॥
इहाँ ऐसो सुख, परलोक सिवलोक ओक,
ताको फल'तुलसी'सो सुनौ सावधान ह्वै ।
जाने, बिनु जाने, कै रिसाने, केलि कबहुँक,
सिवहिं चढ़ाए ह्वैहैं बेल के पतौवा द्वै ।१६३।
रति-सी रवनि, सिंधु-मेखला-अवनिपति,
औनिप अनेक ठाढ़े हाथ जोरि हारि कै ।
संपदा-समाज देखि लाज सुरराज हू के,
सुख सब बिधि बिधि दीन्हें हैं सँवारि कै ॥
इहाँ ऐसो सुख, सुरलोक सुरनाथ-पद,
ताको फल'तुलसी'सो कहैगो बिचारि कै ।
आक के पतौवा चारि, फूल कै धतूरे के द्वै,
दीन्हें ह्वैहैं बारक पुरारि पर डारि कै ।१६४।
देवसरि सेवौं-बामदेव गाँव रावरे ही,
नाम राम ही के माँगि उदर भरत हौं ।
दीबे जोग 'तुलसी' न लेत काहू को कछुक,
लिखी न भलाई भाल, पोच न करत हौं ॥

एते पर हू जो कोऊ रावरो है जोर करै,
ताको जोर, देव दीन-द्वारे गुदरत हौं।
पाइकै उराहनो, उराहनो न दीजै मोहिं,
काल-कला कासीनाथ कहे निबरत हौं ।१६५।

चेरो राम राय को, सुजस सुनि तेरो, हर !
पाइँ तर आइ रह्यो सुरसरि-तीर हौं।
बामदेव, राम को सुभाव सील जानि जिय,
नातो नेह जानियत, रघुबीर भीर हौं॥
अधिभूत-बेदन बिषम होत, भूतनाथ !
'तुलसी' बिकल, पाहि, पचत कुपीर हौं।
मारिए तो अनायास कासीबास खास फल,
ज्याइए तौ कृपा करि निरुज सरीर हौं।१६६।

जीबे की न लालसा, दयालु महादेव ! मोहिं,
मालुम है तोहिं मरिबेई को रहतु हौं।
कामरिपु राम के गुलामनि को कामतरु,
अवलंब जगदंब-सहित चहतु हौं॥
रोग भयो भूत सो, कुसूत भयो 'तुलसी' को,
भूतनाथ पाहि पद-पंकज गहतु हौं।
ज्याइए तौ जानकी-रमन-जन जानि जिय,
मारिए तौ माँगी मीचु सूधियै कहतु हौं।१६७।

भूतभव ! भवत् पिसाच-भूत-प्रेत-प्रिय,
आपनी-समाज सिव ! आपु नीके जानिए।

नाना वेष, वाहन, बिभूषन, बसन, बास,
खान-पान, बलि-पूजा-बिधि को बखानिए ॥
राम के गुलामनि की रीति प्रीति सूधी सब,
सबसों सनेह सब ही को सनमानिए ।
'तुलसी' की सुधरै सुधारे भूतनाथ ही के,
मेरे माय बाप गुरु संकर भवानिए ।१६८।

गौरीनाथ, भोलानाथ, भवत भवानीनाथ,
बिस्वनाथ पुर फिरी आन कलिकाल की ।
संकर-से नर, गिरिजा-सी नारी कासी-बासी,
बेद कही सही ससिसेखर कृपाल की ॥
छमुख गनेस तें महेस के पियारे लोग,
बिकल बिलोकियत, नगरी बिहाल की ।
पुरी-सुरबेलि केलि काटत किरात-कलि,
निठुर ! निहारिए उघारि डीठि भाल की ।१६९।

ठाकुर महेस, ठकुराइन उमा-सी जहाँ,
लोक बेद हू बिदित महिमा ठहर की ।
भट रुद्रगन, पूत गनपति सेनापति,
कलिकाल की कुचाल काहू तौ न हरकी ॥
बीसी बिस्वनाथ की बिषाद बढ़ो बारानसी,
बूझिए न ऐसी गति संकर-सहर की ।
कैसे कहै 'तुलसी', बृषासुर के बरदानि !
बानि जानि सुधा तजि पियनि जहर की ।१७०।

लोक बेद हू बिदित बारानसी की बड़ाई,
बासी नरनारी ईस - अंबिका-सरूप हैं।
कालनाथ कोतवाल, दंडकारि दंडपानि,
सभासद गनप-से अमित अनूप हैं॥
तहाँऊ कुचालि कलिकाल की कुरीति, कैधौं
जानत न मूढ़, इहाँ भूतनाथ भूप हैं।
फलैं फूलैं फैलैं खल, सीदैं साधु पल-पल,
खाती दीपमालिका, ठठाइयत सूप हैं।१७१।

पंचकोस पुन्यकोस, स्वारथ परारथ को,
जानि आप आपने सुपास बास दियो है।
नीच नर-नारि न सँभारि सकैं आदर,
लहत फल कादर बिचारि जो न कियो है॥
बारी बारानसी बिनु कहे चक्रपानि चक्र,
मानि हितहानि सो मुरारि मन भियो है।
रोष में भरोसो एक, आसुतोष कहि जात,
बिकल बिलोकि लोक कालकूट पियो है।१७२।

रचत बिरंचि, हरि पालत, हरत हर,
तेरे ही प्रसाद जग, अगजग-पालिके।
तोहि में बिकास बिस्व, तोहि में बिलास सब,
तोहि में समात मातु भूमिधर-बालिके॥
दीजै अवलंब जगदंब न बिलंब कीजै,
करुना - तरंगिनी कृपा - तरंग - मालिके।

रोष महामारी, परितोष महतारी दुनी
देखिए दुखारी मुनि-मानस-मरालिके ।१७३।
निपट अनेरे, अघ औगुन बसेरे, नर-
नारि ये घनेरे जगदंब चेरी चेरे हैं।
दारिदी दुखारी देखि भूसुर भिखारी भीरु
लोभ मोह काम कोह कलिमल-घेरे हैं॥
लोकरीति राखी राम, साखी बामदेव जान,
जन की बिनति मानि, मातु ! कहि मेरे हैं।
महामायी, महेसानि, महिमा की खानि, मोद-
मंगल की रासि, दास कासीबासी तेरे हैं।१७४।
लोगन के पाप कैधौं, सिद्ध-सुर-साप, कैधौं
काल के प्रताप कासी तिहूँ ताप तई है।
ऊँचे, नीचे, बीच के, धनिक, रंक, राजा, राय,
हठनि बजाय, करि डीठि, पीठि दई है॥
देवता निहोरे, महामारिन्ह सों कर जोरे,
भोरानाथ जानि भोरे आपनी-सी ठई है॥
करुनानिधान हनुमान बीर बलवान,
जस-रासि जहाँ-तहाँ तैंही लूटि लई है॥१७५॥
संकर-सहर सर, नर-नारि बारिचर,
बिकल सकल महामारी माँजा भई है।
उछरत उतरात हहरात मरि जात,
भभरि भगात, जल-थल मीचुमई है॥

देव न दयालु, महिपाल न कृपालु-चित,
बारानसी बाढ़ति अनीति नित नई है।
पाहि रघुराज, पाहि कपिराज रामदूत,
रामहू की बिगरी तुहीं सुधारि लई है।१७६।

एक तो कराल कलिकाल सूल-मूल तामैं,
कोढ़ में की खाज-सी सनीचरी है मीन की।
बेद-धर्म दूरि गए, भूमि-चोर भूप भए,
साधु सीद्यमान, जानि रीति पाप-पीन की॥
दूबरे को दूसरो न द्वार, राम दया-धाम,
रावरी ही गति बल-बिभव-बिहीन की।
लागैगी पै लाज वा बिराजमान बिरुदहिं,
महाराज आजु जौ न देत दादि दीन की।१७७।

रामनाम मातु-पितु, स्वामि समरथ हितु,
आस रामनाम की, भरोसो रामनाम को।
प्रेम रामनाम ही सों, नेम रामनाम ही को,
जानौं न मरम पद दाहिनो न बाम को॥
स्वारथ सकल, परमारथ को रामनाम,
रामनामहीन 'तुलसी' न काहू काम को।
राम की सपथ, सरबस मेरे रामनाम,
कामधेनु कामतरु मो-से छीन-छाम को।१७८।

सवैया

मारग मारि, महीसुर मारि, कुमारग कोटिक कै धन लीयो ।
संकर कोप सों पाप को दाम परीच्छित जाहिगो जारि कै हीयो ॥
कासी मैं कंटक जेते भए ते गे पाइ अघाइ कै आपनो कीयो ।
आजु कि काल्हि परौं कि नरौं जड़ जाहिंगे चाटि दिवारी को दीयो १७६

कुंकुम-रंग सुअंग जितो, मुख-चंद सों चंद सों होड़ परी है ।
बोलत बोल समृद्धि चुवै, अवलोकत सोच-बिषाद-हरी है ॥
गौरी कि गंग बिहंगिनि बेष, कि मंजुल मूरति मोद-भरी है ।
पेखि सप्रेम पयान-समै सब सोच-बिमोचन छेमकरी है ।१८०।

घनाक्षरी

मंगल की रासि, परमारथ की खानि जानि,
बिरचि बनाई बिधि, केसव बसाई है ।
प्रलय हू काल राखी सूलपानि सूल पर,
मीचु-बस नीच सोऊ चहत खसाई है ॥
छाँड़ि छितिपाल जो परीछित भए कृपालु,
भलो कियो खल को, निकाई सो नसाई है ।
पाहि हनुमान ! करुनानिधान राम ! पाहि
कासी-कामधेनु कलि कुहत कसाई है ।१८१।

बिरची बिरंचि की, बसति बिस्वनाथ की जो,
प्रानहूँ तें प्यारी पुरी केसव कृपाल की ।
ज्योतिरूप-लिंगमई, अगनित-लिंगमई,
मोक्ष-बितरनि, बिदरनि जग-जाल की ॥

देवी देव देव-सरि सिद्ध मुनिबर बास,
लोपति बिलोकत कुलिपि भोंड़े भाल की ।
हा-हा करै 'तुलसी' दयानिधान राम ! ऐसी
कासी की कदर्थना कराल कलिकाल की ।१८२।

आश्रम बरन कलि-बिबस बिकल भए,
निज-निज मरजाद मोटरी-सी डार दी ।
संकर सरोष महामारि ही तें जानियत,
साहिब सरोष दुनी दिन-दिन दारदी ॥
नारि-नर आरत पुकारत, सुनै न कोऊ,
काहू देवतनि मिलि मोटी मूठि मार दी ।
'तुलसी' सभीत-पाल सुमिरे कृपालु राम,
समय सुकरुना सराहि सनकार दी ।१८३।

हनुमान बाहुक

छप्पय

सिंधु-तरन सिय-सोच-हरन रबि-बाल-बरन तनु।
भुज बिसाल, मूरति कराल, कालहु को काल जनु ॥
गहन-दहन-निरदहन-लंक, निःसंक, बंक-भुव।
जातुधान-बलवान-मान-मद-दवन पवनसुव ॥
कह 'तुलसिदास' सेवत सुलभ, सेवक-हित संतत निकट।
गुन गनत, नमत, सुमिरत, जपत समन सकल-संकट-बिकट। १।

स्वर्न-सैल-संकास कोटि-रबि-तरुन-तेज घन।
उर बिसाल, भुजदंड चंड नखबज्र बज्रतन ॥
पिंग नयन, भ्रकुटी कराल रसना दसनानन।
कपिस केस, करकस लँगूर, खल-दल-बल-भानन ॥
कह 'तुलसिदास' बस जासु उर, मारुतसुत मूरति बिकट।
संताप पाप तेहि पुरुष कहँ, सपनेहुँ नहिं आवत निकट। २।

झूलना

पंचमुख छमुख भृगुमुख्य भट असुर-सुर,
सर्व सरि समर समरत्थ सूरो।
बाँकुरो बीर बिरुदैत बिरुदावली,
बेद बंदी बदत पैजपूरो ॥

जासु गुनगाथ रघुनाथ कह, जासु बल
विपुलजल-भरित जगजलधि झूरो।
दीन-दुख-दमन को कौन तुलसीस है?
पवन को पूत रजपूत रूरो। ३।

घनाक्षरी

भानु सों पढ़न हनुमान गए भानु, मन
अनुमानि सिसुकेलि कियो फेरफार सो।
पाछिले पगनि गम गगन मगनमन,
क्रम को न भ्रम, कपि-बालक-बिहार सो॥
कौतुक बिलोकि सुरपाल हरि हर बिधि,
लोचननि चकाचौंधी चित्तनि खँभार सो।
बल कैधौं बीररस, धीरज कै, साहस, कै
'तुलसी' सरीर धरे सबनि को सार सो। ४।
भारत में पारथ के रथकेतु कपिराज,
गाज्यो सुनि कुरुराजदल हलबल भो।
कह्यो द्रोन भीषम समीरसुत महाबीर,
बीर-रस-बारि-निधि जाको बल जल भो॥
बानर सुभाय बालकेलि भूमि भानु
लगि फलँग फलाँग हू तें घाटि नभतल भो।
नाइ नाइ माथ जोरि जोरि हाथ जोधा जोहैं,
हनुमान देखे जगजीवन को फल भो। ५।

गोपद पयोधि करि, होलिका ज्यों लाइ लंक,
निपट निसंक परपुर गलबल भो।
द्रोन सो पहार लियो ख्याल ही उखारि कर,
कंदुक ज्यों कपि खेल बेल कैसो फल भो।
संकटसमाज असमंजस मैं रामराज,
काज जुग पूगनि को करतल पल भो।
साहसी समत्थ तुलसी को नाह जाकी बाँह,
लोकपाल पालन को फिरि थिर थल भो। ६।
कमठ की पीठि जाके गोड़नि की गाड़ैं मानो,
नाप के भाजन भरि जलनिधिजल भो।
जातुधानदावन, परावन को दुर्ग भयो,
महामीनबास तिमि-तोमनि को थल भो॥
कुंभकर्न - रावन - पयोदनाद - ईंधन को,
'तुलसी' प्रताप जाको प्रबल अनल भो।
भीषम कहत मेरे अनुमान हनुमान-
सारिखो त्रिकाल न त्रिलोक महाबल भो॥७॥
दूत रामराय को, सपूत पूत पौन को,
तू अंजनी को नंदन प्रताप भूरि भानु-सो।
सीय-सोच-समन, दुरित-दोष-दमन, सरन
आए अवन, लखनप्रिय प्रान सो॥
दसमुख दुसह दरिद्र दरिबे को भयो
प्रगट त्रिलोक ओक 'तुलसी' निधान सो।

ज्ञानगुनवान बलवान सेवा-सावधान,
साहेब सुजान उर आनु हनुमान सो। ८।
दवन - दुवन - दल भुवनबिदित बल,
बेद जस गावत बिबुध - बंदी - छोर को।
पाप - ताप - तिमिर - तुहिन - बिघटन-पटु,
सेवक - सरोरुह सुखद भानु भोर को।
लोक परलोक तें बिसोक, सपने न सोक,
'तुलसी' के हिए है भरोसो एक ओर को।
राम को दुलारो दास बामदेव को निवास,
नाम कलिकामतरु केसरी-किसोर को। ९।
महाबलसींव, महा भीम, महा बानइत,
महाबीर बिदित बरायो रघुबीर को।
कुलिस कठोरतनु, जोर परै रोर रन,
करुना-कलित मन धारमिक धीर को॥
दुर्जन को काल-सो कराल पाल सज्जन को,
सुमिरे हरनहार 'तुलसी' की पीर को।
सीय सुखदायक, दुलारो रघुनायक को,
सेवक सहायक है साहसी समीर को।१०।
रचिबे को बिधि जैसे पालिबे को हरि-हर
मीच मारिबे को, ज्यायबे को सुधापान भो।
धरिबे को धरनि, तरनि तम दलिबे को,
सोखिबे कृसानु, पोषिबे को हिमभानु भो॥

खल-दुख दोषिबे को, जन परितोषिबे को,
माँगिबो मलीनता को मोदक सुदान भो।
आरत की आरति निवारिबे को तिहूँ पुर
'तुलसी' को साहिब हठीलो हनुमान भो।११।
सेवक-सेवकाई जानि जानकीस मानै कानि,
सानुकूल सूलपानि नवै नाथ नाक को।
देवी-देव-दानव दयावने है जोरैं हाथ,
बापुरे बराक और राजा राना राँक को॥
जागत सोवत बैठे बागत बिनोद मोद,
ताकै जो अनर्थ सो समर्थ एक आक को।१२।
सानुग सगौरि सानुकूल सूलपानि ताहि,
लोकपाल सकल लषन-राम-जानकी।
लोक-परलोक को बिसोक सो बिलोक ताहि,
'तुलसी' तमाहि ताहि काहु बीर आन की!
केसरी-किसोर, बंदीछोर के निवाजे सब,
कीरति बिमल कपि करुनानिधान की।
बालक ज्यों पालिहैं कृपालु मुनि सिद्ध ताको
जाके हिये हुलसति हाँक हनुमान की।१३।
करुनानिधान, बलबुद्धि के निधान, मोद-
महिमानिधान, गुनज्ञान के निधान हौ।
बामदेवरूप, भूपराम के सनेही, नाम
लेत देत अर्थ-धर्म-काम-निरबान हौ॥

आपने प्रभाव, सीतानाथ के सुभाव सील,
लोक-बेद-बिधि के बिदुष हनुमान हौ।
मन की, बचन की, करम की तिहूँ प्रकार
'तुलसी' तिहारो तुम साहिब सुजान हौ।१४।
मन को अगम, तन सुगम किए कपीस,
काज महाराज के समाज साज साजे हैं।
देव बंदीछोर रनरोर केसरीकिसोर,
जुग जुग जग तेरे बिरद बिराजे हैं॥
बीर बरजोर, घटि जोर 'तुलसी' की ओर,
सुनि सकुचाने साधु, खलगन गाजे हैं।
बिगरी-सँवार अंजनीकुमार कीजे मोहिं,
जैसे होत आए हनुमान के निवाजे हैं।१५।

मत्तगयंद

सुजान-सिरोमनि हौ, हनुमान! सदा जन के मन बास तिहारो।
हारो बिगारो मैं काको कहा? केहि कारन खीझत हौं तो तिहारो॥
साहिब सेवक नाते तें हातो कियो तो तहाँ 'तुलसी' को न चारो।
दोष सुनाए तें आगेहुँ को हुसियार ह्वैहौं, मन तौ हिय हारो।१६।
तेरे थपे उथपै न महेस, थपै थिर को कपि जे घर घाले?
तेरे निवाजे गरीबनिवाज बिराजत बैरिन के उर साले॥
संकट सोच सबै 'तुलसी' लिए नाम फटैं मकरी के-से जाले।
बूढ़ भये, बलि, मेरेहि बार, कि हारि परे बहुतै नत पाले।१७।

सिंधु तरे, बड़े बीर दले खल, जारे हैं लंक-से बंक मवासे।
तैं रनकेहरि केहरि के बिदले अरि-कुंजर छैल छवा से॥
तोसों समत्थ सुसाहिब सेइ सहै 'तुलसी' दुख-दोष दवा-से।
बानर-बाज! बढ़े खल खेचर, लीजत क्यों न लपेटि लवा-से? ।१८।
अच्छ-बिमर्दन कानन-भानि दसानन आनन भाननिहारो।
बारिदनाद अकंपन कुंभकरन्न-से कुंजर केहरि-बारो॥
राम-प्रताप हुतासन, कच्छ बिपच्छ, समीर समीर-दुलारो।
पाप, तें साप तें, ताप तिहूँ तें सदा 'तुलसी' कहँ सो रखवारो ।१९।

घनाक्षरी

जानत जहान हनुमान को निवाज्यो जन,
मन अनुमानि, बलि, बोल न बिसारिए।
सेवा-जोग 'तुलसी' कबहुँ ! कहाँ चूक परी,
साहेब सुभाय कपि साहेब सँभारिए॥
अपराधी जानि कीजै साँसति सहस भाँति,
मोदक मरै जो ताहि माहुर न मारिए।
साहसी समीर के दुलारे रघुबीरजू के,
बाँहपीर महाबीर बेगि ही निवारिए ।२०।
बालक बिलोकि, बलि, बारे तें आपनो कियो,
दीनबंधु दया कीन्हीं निरुपाधि न्यारिए।
रावरो भरोसो 'तुलसी' के, रावरोई बल,
आस रावरीयै, दास रावरो बिचारिए॥

बड़ो बिकराल कलि, काको न बिहाल कियो ?
माथे पगु बली को, निहारि सो निवारिए।
केसरीकिसोर, रन-रोर, बरजोर बीर,
बाहुपीर राहुमातु ज्यों पछारि मारिए।२१।
उथपे - थपन, थिरथपे - उथपनहार,
केसरीकुमार बल आपनो सँभारिए।
राम के गुलामनि को कामतरु रामदूत,
मो-से दीन दूबरे को तकिया तिहारिए॥
साहिब समर्थ तो-सो 'तुलसी' के माथे पर,
सोऊ अपराध बिनु, बीर! बाँधि मारिए।
पोखरी बिसाल बाहु, बलि, बारिचर पीर,
मकरी ज्यों पकरि कै बदन बिदारिए।२२।
राम को सनेह, राम साहस, लखन सिय
राम की भगति, सोच संकट निवारिए।
मुदमरकट रोग - बारिनिधि हेरि हारे,
जीव जामवंत को भरोसो तेरो भारिए॥
कूदिए कृपाल 'तुलसी' सु - प्रेमपब्बइ तें,
सुथल सुबेल भाल बैठि कै बिचारिए।
महाबीर बाँकुरे बराकी बाहुपीर क्यों न
लंकिनी ज्यों लातघात ही मरोरि मारिए।२३।
लोक परलोक हूँ, तिलोक न बिलोकियत
तो सो समरथ चख चारिहूँ निहारिए।

कर्म काल, लोकपाल, अग जग जीवजाल,
नाथ-हाथ सब निज महिमा बिचारिए ॥
खास दास रावरो, निवास तेरो तासु उर,
'तुलसी' सो, देव ! दुखी देखियत भारिए ।
बाहु तरुमूल, बाहुसूल कपिकच्छु बेलि
उपजी, सकेलि, कपि, खेल ही उखारिए ।२४।
करम - कराल - कंस भूमिपाल के भरोसे
बकी बक भगिनी काहू तें कहा डरैगी ?
बड़ी बिकराल बालघातिनी न जात कहि,
बाहुबल बालक छबीले छोटे छरैगी ॥
आई है बनाइ बेष, आप तू बिचारि देख,
पाप जाय सबको गुनी के पाले परैगी ।
पूतना पिसाचिनी ज्यों कपिकान्ह 'तुलसी' की
बाहु-पीर, महाबीर, तेरे मारे मरैगी ।२५।
भाल की, कि काल की, कि रोष की, त्रिदोष की है
बेदन बिषम पाप-ताप छलछाइँ की ।
करमन कूट की, कि जंत्र-मंत्र बूट की,
पराहि जाहि, पापिनी ! मलीन मन माहँ की ॥
पैहहि सजाय, नतु कहत बजाय तोहि
बावरी न होहि बानि जानि कपिनाह की ।
आन हनुमान की, दोहाई बलवान की,
सपथ महाबीर की जो रहै पीर बाँह की ।२६।

सिंहिका सँहारि, बलि, सुरसा सुधारि छल,
लंकिनी पछारि मारि बाटिका उजारी है।
लंका परजारि, मकरी बिदारि, बार बार
जातुधान धारि धूरिधानी करि डारी है॥
तोरि जमकातरि मँदोदरी कढ़ोरि आनी,
रावन की रानी मेघनाद-महतारी है।
भीर बाहँपीर की निपट राखी महाबीर
कौन के सँकोच, 'तुलसी' के सोच भारी है।२७।
तेरी बालकेलि, बीर! सुनि सहमत धीर,
भूलत सरीर-सुधि सक्र रबि राहु की।
तेरी बाँह बसत बिसोक लोकपाल सब,
तेरो नाम लेत रहै आरति न काहु की॥
साम दाम भेद विधि, बेदहु लबेद सिद्धि,
हाथ कपिनाथ ही के चोटी चोर साहु की।
आलस, अनख, परिहास की सिखावन है?
एते दिन रही पीर 'तुलसी' के बाहु की!।२८।
टूकनि को घरघर डोलत कंगाल बोलि,
बाल ज्यों कृपाल नतपाल पालि पोसो है।
कीन्हीं है सँभार सार अंजनीकुमार बीर,
आपनो बिसारिहैं न मेरे हूँ भरोसो है॥
एतनो परेखो सब भाँति समरथ आजु,
कपिनाथ साँची कहौ को त्रिलोक तोसो है?

साँसति सहत दास कीजै पेखि परिहास,
चिरी को मरन खेल बालकनि को सो है ।२६।
आपने ही पाप तें त्रिताप तें, कि साप तें
बढ़ी है बाहुबेदन, कही न सहि जाति है ।
औषध अनेक जंत्र मंत्र टोटकादि किए,
बादि भए देवता, मनाए अधिकाति है ॥
करतार, भरतार, हरतार, कर्म, काल,
को है जगजाल जो न मानत इताति है ।
चेरो तेरो 'तुलसी' 'तू मेरो' कह्यो रामदूत,
ढील तेरी, बीर, मोहिं पीर तें पिराति है ।३०।
दूत रामराय को, सपूत पूत बाय को,
समत्थ हाथ-पाय को, सहाय असहाय को ।
बाँकी बिरुदावलि बिदित बेद गाइयत,
रावन सो भट भयो मूठिका के घाय को ॥
एते बड़े साहेब समर्थ को निवाजो आजु
सीदत सुसेवक बचन मन काय को ।
थोरि बाहुपीर की बड़ी गलानि 'तुलसी' को,
कौन पाप कोप, लोप प्रगट प्रभाय को ?।३१।
देवी-देव दनुज मनुज मुनि सिद्ध नाग,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत हैं ।
पूतना पिसाची जातुधानी जातुधान बाम
रामदूत को रजाइ माथे मानि लेत हैं ॥

घोर जंत्र मंत्र कूट कपट कुजोग रोग,
हनुमान आन सुनि छाँड़त निकेत हैं ॥
क्रोध कीजै कर्म को, प्रबोध कीजै 'तुलसी' को,
सोध कीजै तिनको जो दोष दुख देत हैं ।३२।
तेरे बल बानर जिताए रन रावन-से,
तेरे घाले जातुधान भए घर घर के ।
तेरे बल रामराज किए सब सुर काज,
सकल समाज साज साजे रघुबर के ॥
तेरे गुनगान सुनि गीरवान पुलकित,
सजल बिलोचन बिरंचि हरि हर के ॥
'तुलसी' के माथे पर हाथ फेरौ कीसनाथ,
देखिए न दास दुखी तो-से कनिगर के ।३३।
पालो तेरे टूक को, परे हूँ चूक मूकिए न,
कूर कौड़ी दू को हौं आपनी ओर हेरिए ।
भोरानाथ भोरे हौ, सरोष होत थोरे दोष,
पोषि तोषि थापि आपने न अवडेरिए ॥
अंबु तू हौं अंबुचर, अंब तू हौं डिंभ, सो न,
बूझिए बिलंब अवलंब मेरे तेरिए ।
बालक बिकल जानि, पाहि, प्रेम पहिचानि
'तुलसी' की बाहँ पर लामी लूम फेरिए ।३४।
घेरि लियो रोगनि कुलोगनि कुजोगनि ज्यौं
बासर जलद घनघटा धुकि धाई है ।

बरषत बारि पीर जारिए जवासे जस,
रोष बिनु दोष, धूम-मूल, मलिनाई है ॥
करुनानिधान हनुमान महा बलवान !
हेरि हँसि हाँकी फूँकि फौजैं तैं उड़ाई है ।
खायो हुतो 'तुलसी' कुरोग राढ़ राकसनि,
केसरी-किसोर राखे बीर बरियाई है ।३५।

सवैया

रामगुलाम तुही हनुमान गुसाईं सुसाईं सदा अनुकूलो ।
पाल्यो हौं बाल ज्यों आखर दू पितुमातु ज्यों मंगलमोद समूलो ॥
बाँह की बेदन, बाँहपगार ! पुकारत आरत आनँद भूलो ॥
श्रीरघुबीर निवारिए पीर, रहौं दरबार परो लटि लूलो ।३६।

घनाक्षरी

काल की करालता, करम-कठिनाई किधौं,
पाप के प्रभाव, की सुभाय बाय बावरे ।
बेदन कुभाँति सो सही न जाति रातिदिन,
सोई बाँह गही जो गही समीर-डावरे ॥
लायो तरु 'तुलसी' तिहारो, सो निहारि बारि
सींचिए मलीन भो, तयो है तिहुँ ताव रे !
भूतनि की, आपनी, पराई, हे कृपानिधान !
जानियत सबही की रीति राम रावरे ।३७।
पाँय-पीर, पेट-पीर बाहु-पीर, मुँह-पीर,
जरजर सकल सरीर पीरमई है ।

देव, भूत, पितर, करम, खल, काल, ग्रह,
मोहिं पर दवरि दमानक-सी दई है ॥
हौं तो बिन मोल ही बिकानो, बलि, बारे ही तें,
ओट रामनाम की ललाट लिखि लई है ।
कुंभज के किंकर बिकल बूड़े गोखुरनि,
हाय रामराय ! ऐसी हाल कहूँ भई है ? ।३८।
बाहुक - सुबाहु नीच, लीचर - मरीच मिलि,
मुँहपीर - केतुजा, कुरोग - जातुधान हैं ।
रामनाम जपजाग कियो चाहौं सानुराग,
काल कैसे दूतभूत कहा मेरे मान हैं ॥
सुमिरे सहाइ रामलषन आखर दोउ,
जिनके साके - समूह जागत जहान हैं ।
'तुलसी' सँभारि, ताड़का सँहारि, भारी भट
बेधे बरगद-से बनाइ बानबान हैं ।३६।
बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
रामनाम लेत, माँगि खात टूकटाक हौं ।
पस्यो लोकरीति में, पुनीत प्रीति रामराय
मोहबस बैठो तोरि तरकि तराक हौं ॥
खोटे खोटे आचरन आचरत अपनायो
अंजनीकुमार, सोध्यो रामपानि पाक हौं ।
'तुलसी' गुसाईं भयो, भोंड़े दिन भूलि गयो,
ताको फल पावत निदान परिपाक हौं ।४०।

असन - बसन - हीन, बिषम - बिषाद-लीन
देखि दीन दूबरो करै न हाय हाय को ? ।
'तुलसी' अनाथ सों सनाथ रघुनाथ कियो,
दियो फल सीलसिंधु आपने सुभाय को ॥
नीच यहि बीच पति पाइ भरुआइ गो
बिहाय प्रभुभजन बचन मन काय को ।
तातें तनु पेषियत घोर बरतोर मिस
फूटि फूटि निकसत लोन रामराय को ।४१।
जीवौं जग जानकीजीवन को कहाय जन,
मरिबे को बारानसी, बारि सुरसरि को ।
'तुलसी' के दुहूँ हाथ मोदक हैं ऐसे ठाउँ,
जाके जिए मुए सोच करिहैं न लरिको ॥
मोको झूठो साँचो लोग राम को कहत सब,
मेरे मन मान है न हर को, न हरि को ।
भारी पीर दुसह सरीर तें बिहाल होत,
सोऊ रघुबीर बिनु सकै दूरि करि को ? ।४२।
सीतापति साहेब, सहाय हनुमान नित,
हित उपदेस को महेस मानो गुरु कै ।
मानस बचन काय सरन तिहारे पायँ,
तुम्हरे भरोसे सुर मैं न जाने सुर कै ॥
ब्याधि भूत-जनित उपाधि काहू खल की,
समाधि कीजै 'तुलसी' को जानि जन फुर कै ।

कपिनाथ, रघुनाथ, भोलानाथ, भूतनाथ !
रोगसिंधु क्यों न डारियत गायखुर कै ? ।४३।
कहौं हनुमान सों, सुजान रामराय सों,
कृपानिधान संकर सों, सावधान सुनिए ।
हरष-बिषाद-राग रोष-गुन-दोष-मई,
बिरची बिरंचि सब देखियतु दुनिए ॥
माया जीव काल के, करम के, सुभाय के,
करैया राम, बेद कहैं, साँची मन गुनिए ।
तुमतें कहा न होय, हाहा ! सो बुझैये मोहिं,
हौंहूँ रहौं मौन ही, बयो सो जानि लुनिए ।४४।

श्रीकृष्णगीतावली

राग बिलावल

माता लै उछंग गोविंदमुख बार बार निरखै ।
पुलकित तनु आनंदघन छन छन मन हरषै ॥
पूछत तोतरात बात मातहिं जदुराई ।
अतिसय सुख जातें तोहिं मोहिं कहु समुझाई ॥
देखत तव बदन-कमल मन अनंद होई ।
कहै कौन रसन मौन जानै कोइ कोई ॥
सुंदर मुख मोहिं देखाउ, इच्छा अति मोरे ।
मम समान पुन्यपुंज बालक नहिं तोरे ॥
'तुलसी' प्रभु प्रेमबस्य मनुज-रूप धारी ।
बालकेलि लीलारस ब्रजजन-हितकारी ।१।

राग ललित

'छोटी मोटी मीसी रोटी चिकनी चुपरि कै तू दे री मैया'
'लै कन्हैया' 'सो कब ?' 'अबहिं तात' ।
'सिगरियै हौं हीं खैहौं, बलदाऊ को न देहौं,'
सो क्यों भट्ट तेरो कहा कहि इत उत जात ॥
बाल बोलि डहकि बिरावत, चरित लखि,
गोपीगन महरि मुदित पुलकित गात ।

नूपुर की धुनि किंकिनि के कलरव सुनि,
कूदि-कूदि किलकि किलकि ठाढ़े-ठाढ़े खात ॥
तनियाँ ललित कटि, बिचित्र टेपारो सीस,
मुनि-मन हरत बचन कहैं तोतरात ।
'तुलसी' निरखि हरषत बरषत फूल भूरिभागी,
ब्रजबासी बिबुध सिद्ध सिहात ।२।

राग आसावरी

तोहिं स्याम की सपथ जसोदा आइ देखु गृह मेरे ।
जैसी हाल करी यहि ढोटा छोटे निपट अनेरे ॥
गोरस-हानि सहौं न कहौं कछु यहि ब्रजबास बसेरे ।
दिनप्रति भाजन कौन बेसाहै ? घर निधि काहू केरे ॥
किए तिहारो हँसत, खिझे तें डाँटत नयन तरेरे ।
अबहीं तें ये सिखे कहा धौं चरित ललित सुत तेरे ॥
बैठो सकुचि साधु भयो चाहत मातुबदन तन हेरे ।
'तुलसिदास' प्रभु कहौं ते बातैं जे कहि भजे सबेरे ।३।

मोकहँ झूठेहु दोष लगावहिं ।
मैया ! इन्हहिं बानि परगृह की, नाना जुगुति बनावहिं ॥
इन्हके लिये खेलिबो छाँड़्यो तऊ न उबरन पावहिं ।
भाजन फोरि, बोरि कर गोरस देन उरहनो आवहिं ॥
कबहुँक बाल रोवाइ पानि गहि मिस करि उठि उठि धावहिं ॥
करहिं आपु सिर धरहिं आन के बचन बिरंचि हरावहिं ॥

मेरी टेव बूझि हलधर को, संतत संग खेलावहिं।
जे अन्याउ करहिं काहू को ते सिसु मोहिं न भावहिं॥
सुनि सुनि बचन-चातुरी ग्वालिनि हँसि-हँसि बदन दुरावहिं।
बाल गोपाल केलि-कल-कीरति 'तुलसिदास' मुनि गावहिं।४।

कबहुँ न जात पराये धामहिं।
खेलत ही देखौं निज आँगन सदा सहित बलरामहिं॥
मेरे कहाँ थाकु गोरस को नवनिधि मंदिर यामहिं।
ठाली ग्वालि ओरहने के मिस आइ बकहि बेकामहिं॥
हौं बलि जाउँ जाहु कितहूँ जनि मातु सिखावति स्यामहिं।
बिनु कारन हठि दोष लगावति तात गए गृह तामहिं॥
हरिमुख निरखि, परुष बानी सुनि अधिक अधिक अभिरामहिं।
'तुलसिदास' प्रभु देख्योइ चाहति श्रीउरललित-ललामहिं।५।

अब सब साँची कान्ह तिहारी।
जो हम तजे पाइ गौं मोहन गृह आए दै गारी॥
सुसुकि सभीत सकुचि रूखे मुख बातैं सकल सँवारी।
साधु जानि हँसि हृदय लगाए परम प्रीति महतारी॥
कोटि जतन करि सपथ कहैं हम मानै कौन हमारी?
तुमहिं बिलोकि आन की ऐसी क्यों कहिहै बर नारी॥
जैसे हौ तैसे सुखदायक ब्रजनायक बलिहारी।
'तुलसिदास' प्रभु मुख छबि निरखत मन सब जुगुति बिसारी। ६।

राग केदारा

महरि तिहारे पाँय परौं अपनो ब्रज लीजै।

सहि देख्यो, तुम्हसों कह्यो, अब नाकहि आई, कौन दिनहु दिन छीजै ?
ग्वालिनि तौ गोरस सुखी ता बिनु क्यों जीजै ।
सुत समेत पाउँ धारिए, आपुहि भवन मेरे देखिए जो न पतीजै ॥
अति अनीति नीकी नहीं अजहूँ सिख दीजै ।
'तुलसिदास' प्रभु सोंकहैउरलाइजसोमतिऐसीबलिकबहूँनहिंकीजै ७

अबहिं उरहनो दै गई, बहुरो फिरि आई ।
सुनु मैया ! तेरी सौं करौं याकी टेव लरन की, सकुच बेंचि सी खाई ॥
या ब्रज में लरिका घने, हौंही अन्याई ।
मुँह लाए मूड़हि चढ़ी अंतहु अहिरिनि तू सूधी करि पाई ॥
सुनि सुत की अति चातुरी, जसुमति मुसुकाई ।
'तुलसिदास' ग्वालिनी ठगी, आयो न उतर कछु, कान्ह ठगौरी लाई ८

राग गौरी

अब ब्रजबास महरि किमि कीबो ? ।
दूध दह्यो माखन ढारत हैं हुतो पोसात दान दिन दीबो ॥
अब तौ कठिन कान्ह के करतब, तुम्ह हौ हँसति कहा कहि लीबो ।
लीजै गाउँ, नाँउ लै रावरो है जग ठाउँ कहूँ है जीबो ॥
ग्वालिबचन सुनि कहत जसोमति 'भलो न भूमि पर बादर छीबो ।
दैअहि लागि कहौ 'तुलसी'-प्रभु अजहुँ न तजत पयोधर पीबो' ।९।

जानी है ग्वालि परी फिरि फीके ।
मातुकाज लागी लखि डाटत,' है बायनो दियो घर नीके ॥
अब कहि देउँ, कहति किन,' यों कहि माँगत दहिउ धर्यो जो है छीके ।
'तुलसी' प्रभुमुख निरखि रही चकि, रह्यो न सयानप तन मन ती के १०

जौलौं हौं कान्ह ! रहौं गुन गोए ।
तौलौं तुम्हहिं पत्यात लोग सब, सुसुकि सभीत साँचु सो रोए ॥
हौं भले नग-फँग परे गढ़ीबै, अब ए गढ़त महरि-मुख जोए ।
चुपकि न रहत, कह्यो कछु चाहत, ह्वैहैं कीच कोठिला धोए ॥
गरजति कहा तरजभिन्ह तरजति बरजति सैन नयन के कोए ।
'तुलसी' मुदित मातु सुतगति लखि बिथकी हैं ग्वालि मैन-मन-मोए ११

भूलि न जात हौं काहूके काऊ ।
साखि सखा सब सुबल, सुदामा, देखिधौं बूझि बोलि बलदाऊ ॥
यह तो मोहिं खिझाइ कोटि बिधि उलटि बिबादन आइ अगाऊ ।
याहि कहा मैया मुँह लावति, गनति कि ए लँगरि झगराऊ ॥
कहति परसपर बचन जसोमति, लखि नहिं सकति कपट सतिभाऊ ।
'तुलसिदास' ग्वालिनि अति नागरि, नट नागरमनि नंदललाऊ १२

छाँड़ो मेरे ललित ललन लरिकाई ।
ऐहैं सुत देखुवार कालि तेरे, बबै ब्याह की बात चलाई ॥
डरिहैं सासु ससुर चोरी सुनि, हँसिहैं नई दुलहिया सुहाई ।
उबटौं न्हाहु, गुहौं चोटिया, बलि, देखि भलो बर करिहिं बड़ाई ॥
मातु कह्यो करि कहत बोलि दै, भई बड़ि बार कालि तौ न आई ।
जब सोइबो तात यों हाँकहि, नयन मीचि रहे पौढ़ि कन्हाई ॥
उठि कह्यो भोर भयो झँगुली दै, मुदित महरि लखि आतुरताई ।
बिहँसी ग्वालि जानि 'तुलसी' प्रभु सकुचि लगे जननी उर धाई ।१३।

राग केदारा

हरि को ललित बदन निहारु ।

निपटहि डाँटति निठुर ज्यों, लकुट कर तें डारु ॥
मंजु अंजन सहित जल-कन चुवत लोचन चारु ।
स्यामसारस मग मनो ससि स्रवत सुधा-सिंगारु ॥
सुभग उर दधिबुंद सुंदर लखि अपनपौ बारु ।
मनहुँ मरकत-मृदु-सिखर पर लसत बिसद तुषारु ॥
कान्हहू पर सतर भौंहैं, महरि मनहिं बिचारु ।
'दास तुलसी' रहति क्यों रिस निरखि नंदकुमार ।१२।
लेत भरि भरि नीर कान्ह कमलनैन ।
फरक अधर डर निरखि लकुट कर, कहि न सकत कछु बैन ॥
दुसह दाँवरी छोरि, थोरी खोरि कहा कीन्हों,
चीन्हो री सुभाय तेरो आजु लगे माई मैं न ।
'तुलसिदास' नंदललन ललित लखि रिस क्यों रहति उर-ऐन ।१५
हाहा री महरि बारो, कहा रिसबस भई,
कोखि के जाए सों रोषु केतो बड़ो कियो है ।
ढीली करि दाँवरी, बावरी साँवरेहिं देखि,
सकुचि सहमि सिसु भारी भय भियो है ॥
दूध दधि माखन भो, लाखन गोधन धन
जब तें जनम हलधर हरि लियो है ।
खायो, कै खवायो, कै बिगास्यो, ढास्यो लरिका री,
ऐसे सुत पर कोह कैसो तेरो हियो है ॥
सुनि कहैं सुकृती न नंद जसुमति सम,
न भयो, न भावी, नहिं बिद्यमान बियो है ।

कौन जानै कौने तप, कौने जोग जाग जप
कान्ह-सो सुवन तोको महादेव दियो है ॥
इन्हहीं के आए तें बधाए व्रज नित नए,
नादत बाढ़त सब सब सुख जियो है ।
नंदलाल-बाल-जस संत-सुर-सरबस
गाइ सो अमिय रस तुलसिहु पियो है ।१६।

ललित लालन निहारि, महरि मन बिचारि,
डारि दे घर-बसी लकुटी बेगि कर तें ।
कछु न कहि सकत, सुसुकत सकुचत,
डरहूँ को डर, कान्ह डरै तेरे डर तें ॥
कह्यो मेरो मानि, हित जानि तू सयानी बड़ी,
बड़े भाग पायो पूत बिधि हरि हर तें ।
ताहि बाँधिबे को धाई, ग्वालिनी गोरसहाँई,
लै लै आईं बावरी दाँवरी घर घर तें ॥
कुल-गुरु-तिय के बचन कमनीय सुनि,
सुधि भए बचन जे सुने मुनिबर तें ।
छोरि लिये लाय उर, बरषैं सुमन सुर,
मंगल है तिहूँ पुर हरि हलधर तें ॥
आनंद-बधावनो मुदित गोप-गोपीगन
आजु परी कुसल कठिन करवर तें ।
'तुलसी' जे तोरे तरु किए देव, दिए बरु;
कै न लह्यो कौन फरु देव दामोदर तें ।१७।

राग मलार

ब्रज पर घन घमंड करि आए ।
अति अपमान बिचारि आपनो कोपि सुरेस पठाए ॥
दमकति दुसह दसहुँ दिसि दामिनि, भयो तम गगन गँभीर ।
गरजत घोर बारिधर धावत प्रेरित प्रबल समीर ॥
बार बार पबिपात, उपल घन बरषत बूँद बिसाल ।
सीत-सभीत पुकारत आरत गो गोसुत गोपी ग्वाल ॥
राखहु राम कान्ह यहि अवसर दुसह दसा भइ आइ ।
नंद बिरोध कियो सुरपति सों सो तुम्हरो बल पाइ ॥
सुनि हँसि उठ्यो नंद को नाहरु, लियो कर कुधर उठाइ ।
'तुलसिदास' मघवा अपने सों करि गयो गर्ब गँवाइ ॥१८॥

राग गौरी

टेरि कान्ह गोबर्धन चढ़ि गैया ।
मथि मथि पियो बारि चारिक में भूख न जाति अघाति न घैया ॥
सैल-सिखर चढ़ि चितै चकित चित अति हित बचन कह्यो बलभैया ।
बाँधि लकुट पट फेरि बोलाई सुनि कल बेनु धेनु धुकि धैया ॥
बलदाऊ देखियत दूरि तें आवति छाक पठाई मेरी मैया ।
किलकि सखा सब नचत मोर ज्यों, कूदत कपि कुरंग की नैया ॥
खेलत खात परसपर डहकत, छीनत कहत करत रोगदैया ।
'तुलसी'बालकेलि-सुख निरखत बरषत सुमन सहित सुरसैया ॥१९॥

राग नट

गावत गोपाललाल नीके राग नट हैं ।
चलि री आली देखन लोयन-लाहु पेखन ठाढ़े सुरतरु-तर तटिनीके तट हैं

मोरचंदाचारुसिर मंजुगुंजापुंजधरे बनि बन-धातुतनओढ़ेपीतपट हैं।
मुरलीतान-तरंगमोहे कुरंगबिहंग,जोहैंमूरति त्रिभंगनिपटनिकट हैं॥
अंबर अमर हरषत बरषत फूल,सनेह-सिथिलगोप गाइन्हके ठट हैं।
'तुलसी'प्रभु निहारि जहाँ तहाँ ब्रजनारि ठगी ठाढ़ी मगलिये रीते भरे घटहैं

राग बिलावल

देखु सखी हरिबदन इंदु-पर।
चिक्कन कुटिल अलक-अवली-छबि, कहि न जाइ सोभा अनूप बर॥
बाल-भुअंगिनि-निकर मनहुँ मिलि रहीं घेरि रस जानि सुधाकर।
तजि न सकहिं नहिं करहिं पान कहो कारन कौन बिचारि डरहिं डर॥
अरुन बनज-लोचन, कपोल सुभ, स्रुति मंडित कुंडल अति सुंदर।
मनहुँ सिंधु निज सुतहिं मनावन पठए जुगुल बसीठ बारिचर॥
नँदनंदन मुख की सुंदरता कहि न सकत स्रुति सेष उमावर।
'तुलसिदास' त्रैलोक्य-बिमोहन रूप कपट नर त्रिबिध सूलहर।२१।

आजु उनींदे आए मुरारी।
आलसवंत सुभग लोचन सखि छिन मूँदत, छिन देत उघारी॥
मनहुँ इंदु पर खंजरीट दोउ कछुक अरुन बिधि रचे सँवारी।
कुटिल अलक जनु मार फंद कर गहे सजग है रह्यो सँभारी॥
मनहुँ उड़न चाहत अति चंचल पलक पंख छिन देत पसारी।
नासिक कीर,बचन पिक सुनि करि संगति मनु गुनि रहति बिचारी॥
रुचिर कपोल, चारु कुंडल बर, भ्रुकुटि सरासन की अनुहारी।
परम चपल तेहि त्रास मनहुँ खग प्रगटत दुरत न मानत हारी॥
जदुपति मुखछबि कलप कोटि लगि कहि न जाइ जाके मुख चारी।

'तुलसिदास' जेहि निरखि ग्वालिनी भजीं तात पति तनय बिसारी २२

राग गौरी

गोपाल गोकुल-बल्लभी-प्रिय गोप-गोसुत-बल्लभं ।
चरनारबिंदमहं भजे भजनीय सुर-मुनि-दुर्ल्लभं ॥
घनश्याम काम अनेक छबि, लोकाभिराम मनोहरं ।
किंजल्क-बसन, किसोर मूरति, भूरि गुन करुनाकरं ॥
सिर केकि-पच्छ बिलोल कुंडल अरुन बनरुह-लोचनं ।
गुंजावतंस बिचित्र, सब अँग धातु भवभय-मोचनं ॥
कच कुटिल, सुंदर तिलक भ्रू राका-मयंक-समाननं ।
अपहरन 'तुलसीदास' त्रास बिहार बृंदाकाननं ॥२३॥

राग बिलावल

बिछुरत श्रीब्रजराज आजु इन नयनन की परतीति गई ।
उड़ि न लगे हरि संग सहज तजि, ह्वै न गए सखि स्याम मई ॥
रूपरसिक लालची कहावत, सो करनी कछु तौ न भई ।
साँचेहु क्रूर कुटिल, सित मेचक, बृथा मीन-छबि छीनि लई ॥
अब काहे सोचत मोचत जल, समय गए चित सूल नई ।
'तुलसिदास' तब अपहुँ से भए जड़, जब पलकनि हठ दगा दई ॥

राग कान्हरा

नहिं कछु दोष स्याम को माई !
जो दुख मैं पायो सजनी सो तो सबै मन की चतुराई ॥
निज हित लागि तबहिं ए बंचक सब अंगनि बसि प्रीति बढ़ाई ।
लियो जो सकल सुख हरि-अँग-सँग को जहँ जिहि बिधि तहँ सोइ बनाई

अब नँदलाल-गवन सुनि मधुबन तनहिं तजत नहिं बार लगाई ।
रुचिर रूप-जल मों रसेस ह्वै मिलि न फिरन की बात चलाई ॥
एहि सरीर बसि सखि वा सठ कहँ कहि न जाइ जो निधि फबि आई ।
तदपि कछू उपकार न कीन्हों निज मिलन्यो नहिं मोहिं सिखाई ॥
आपु मिल्यो यहि भाँति जाति तजि, तन मिलयो जल-पय की नाईं ।
ह्वै मराल आयो सुफलकसुत लै गयो छीर-नीर बिलगाई ॥
मन हौं तजी, कान्ह हौं त्यागी, मानौ चलिहैं परिमिति पाई ।
'तुलसिदास' रीतेहु तनु ऊपर नयननि की ममता अधिकाई २५

राग धनाश्री

करी है हरि बालक की-सी केलि ।
हरष न रचत, बिषाद न बिगरत, डगरि चले हँसि खेलि ॥
बई बनाइ बारि बृंदाबन प्रीति सजीवनि-बेलि ।
सींचि सनेहसुधा खनि काढ़ी लोक-बेद परहेलि ॥
तृन ज्यों तजी, पालि तनु ज्यों हम बिधि बासव बल पेलि ।
एतेहुँ पर भावत 'तुलसी' प्रभु गए मोहनी मेलि ॥२६॥

आली अब कहौ निज नेह निहारि ।
समुझे सहे हमारो है हित बिधि-बामता बिचारि ॥
सत्यसनेह सील सोभा सुख सब गुन-उदधि अपारि ।
देख्यो सुन्यो न कबहुँ काहु कहुँ मीन-बियोगी बारि ॥
कहियत काकु कूबरी हू को, सो कुबानि-बस नारि ।
बिष तें बिषम बिनय अनहित की, सुधा सनेही गारि ॥
मन फेरियत कुतर्क कोटि करि कुबल भरोसे भारि ।

'तुलसी' जग दूजो न देखियत कान्हकुवँर अनुहारि ।२७।

लागियै रहति, नयननि आगे तें न टरति मोहन मूरति ।
नीलनलिनस्याम,सोभा अगनित काम,पावन हृदय जेहि उर फूरति ॥
सारद अमित सेष नहिं कहि सकत अंग अँग सूरति ।
'तुलसिदास' बड़े भाग मन लागेहु तें सब सुख पूरति ।२८।

जब तें ब्रज तजि गए कन्हाई ।
तब तें बिरह-रबि उदित एकरस सखि बिछुरनि-बृष पाई ॥
घटत न तेज, चलत नाहिंन रथ, रह्यो उर-नभ पर छाई ।
इंद्रिय रूपरासि सोचहिं सुठि, सुधि सबकी बिसराई ॥
भयो सोक-भय-कोक-कोकनद भ्रम-भ्रमरनि सुखदाई ।
चित-चकोर, मन-मोर, कुमुद-मुद सकल बिकल अधिकाई ॥
तनु-तड़ाग बल-बारि सूखन लाग्यो परी कुरूपता-काई ।
प्रानमीन दिन दीन दूबरे, दसा दुसह अब आई ॥
'तुलसीदास' मनोरथ-मन-मृग मरत जहाँ तहँ धाई ।
राम स्याम सावन भादों बिनु जिय की जरनि न जाई ।२९।

ससि तें सीतल मोको लागै माई री ! तरनि ।
याके उए बरति अधिक अँगअँग दव,वाकेउएमिटति रजनि-जनितजरनि
सब बिपरीत भए माधव बिनु, हित जो करत अनहित की करनि ।
'तुलसिदास'स्यामसुंदर-बिरहकीदुसहदसासोमोपैपरतिनहींबरनि ३०

संतत दुखद सखी ! रजनीकर ।
स्वारथरत तब, अबहुँ एकरस, मोको कबहुँ न भयो तापहर ॥
निज अंसिक सुख लागि चतुर अति कीन्हीं है प्रथम निसा सुभ सुंदर

अब बिनु मन, तन दहत दया तजि, राखत रबि है नयन बारिधर ॥
जद्यपि हैं दारुन बड़वानल राख्यो है जलधि गँभीर धीरतर ।
ताहू तें परम कठिन जान्यो ससि तज्यो पिता तब भयो ब्योमचर ॥
सकल बिकार-कोस बिरहिनि-रिपु, कोहे तें याहि सराहत सुर-नर ?
'तुलसिदास' त्रैलोक्य मान्य भयो कारन इहै गह्यो गिरिजावर ।३१।

राग मलार

कोउ सखि नई चाह सुनि आई ।
यह ब्रजभूमि सकल सुरपति सों मदन मिलिक करि पाई ॥
घन-धावन, बगपाँति पटोसिर, बैरख-तड़ित सोहाई ।
बोलत पिक नकीब, गरजनि मिस मानहुँ फिरति दोहाई ॥
चातक मोर चकोर मधुप सुक सुमन समीर सहाई ।
चाहत कियो बास बृंदाबन बिधि सों कछु न बसाई ॥
सींव न चाँपि सको कोऊ तब जब हुते राम कन्हाई ।
अब 'तुलसी' गिरिधर बिनु गोकुल कौन करिहि ठकुराई ? ३२।

राग सोरठ

ऊधो या ब्रज की दसा बिचारो ।
ता पाछे यह सिद्धि आपनी जोग-कथा बिस्तारो ॥
जा कारन पठए तुम माधव सो सोचहु मन माहीं ।
केतिक बीच बिरह परमारथ जानत हौ किधौं नाहीं ? ।
परम चतुर निज दास स्याम के संतत निकट रहत हौ ।
जल बूड़त अवलंब फेन को फिरि फिरि कहा कहत हौ ? ।
वह अति ललित मनोहर आनन कौने जतन बिसारौं ।

जोग जुगुति अरु मुकुति बिबिध बिधि वा मुरली पर वारौं ॥
जेहि उर बसत स्यामसुंदर घन तेहि निर्गुन कस आवै ।
'तुलसिदास' सो भजन बहाओ जाहि दूसरो भावै ।३३।

मधुकर कहहु कहन जो पारो ।
नाहिंन, बलि, अपराध रावरो, सकुचि साध जनि मारो ॥
नहिं तुम ब्रज बसि नंदलाल को बालबिनोद निहारो ।
नाहिंन रासरसिक रस चाख्यो, तातें डेल सो डारो ॥
'तुलसी' जौ न गए प्रीतम सँग प्रान त्यागि तनु न्यारो ।
तौ सुनिबो देखिबो बहुत अब, कहा करम सों चारो ? ।३४।

ऊधोजू कह्यो तिहारोइ कीबो ।
नीके जिय की जानि अपनपौ समुझि सिखावन दीबो ॥
स्यामबियोगी ब्रज के लोगनि जोग जोग जो जानो ।
तौ सकोच परिहरि पा लागौं परमारथहि बखानो ॥
गोपी गाय ग्वाल गोसुत सब रहत रूप-अनुरागे ।
दीन-मलीन-छीन तनु डोलत मीन मजा सों लागे ॥
'तुलसी' है सनेह दुखदायक, नहिं जानत ऐसो को है ? ।
तऊ न होत कान्ह को सो मन, सबै साहिबहि सोहै ॥३५॥

राग बिलावल

सो कहौ मधुप जो मोहन कहि पठई ।
तुम सकुचत कत ? हौं ही नीके जानति, नंदनंदन हो निपट करी सठई ॥
हुतो न साँचो सनेह, मिट्यो मन को संदेह, हरि परे उघरि, संदेसहु ठठई
'तुलसिदास' कौन आस मिलन की, कहिगए सो तौ कछु एकौ न चितठई

मेरे जान और कछु न मन गुनिए ।
कूबरीरवन कान्ह कही जो मधुप सों सोई सिख सजनी सुचित दै सुनिए
काहेकोकरतिरोष,देहिधौं कौनेकोदोष, निजनयननिकोबयोसबलुनिए
दारु सरीर, कीट पहिले सुख, सुमिरि सुमिरि बासर निसि घुनिए
ये सनेह सुचि अधिक अधिक रुचि, बरज्यो न करत कितो सिर धुनिए
'तुलसिदास' अब नंदसुवन-हित विषम-बियोग-अनल तनुहुनिए३७

भली कही, आली ! हमहुँ पहिचाने ।
हरि निर्गुन निर्लेप निरपने निपट निठुर निज काज सयाने ॥
ब्रज को बिरह, अरु संग महर को, कुबरिहि बरत न नेकु लजाने ।
समुझि सो प्रीति की रीति स्याम की सोइ बावरि जो परेखो उर आने ॥
सुनत न सिख लालची बिलोचन एतेहु पर रुचि रूप लोभाने ।
'तुलसिदास'इहै अधिक कान्ह पहिं, नीके ई लागत मन रहत समाने३८

राग मलार

जोपै अलि ! अंत इहै करिबे हो ।
तौ अतुलित अहीर अबलनि को हठि न हियो हरिबे हो ॥
जौ प्रपंच परिनाम प्रेम फिरि अनुचित आचरिबे हो ।
तौ मथुराहि महामहिमा लहि सकल ढरनि ढरिबे हो ॥
दै कूबरिहि रूप ब्रजसुधि भए लौकिक डर डरिबे हो ।
ज्ञान बिराग काल कृत करतब हमरेहि सिर धरिबे हो ॥
उन्हहिं राग रबि नीरद-जल ज्यों, प्रभु-परमिति परिबे हो ।
हमहुँ निठुर-निरुपाधि-नेहनिधि निज भुजबल तरिबे हो ॥
भलो भयो सब भाँति हमारो एकबार मरिबे हो ।

'तुलसी' कान्ह-बिरह नित नव जर जरि जीवन भरिबे हो ॥३९॥

ऊधो ! यह ह्याँ न कछू कहिबे ही ।
ज्ञानगिरा कूबरीरवन की सुनि बिचारि गहिबे ही ॥
पाइ रजाइ नाइ सिर गृह है गति परमिति लहिबे ही ।
मति-मटुकी मृगजल भरि घृतहित मनहीं मन महिबे ही ॥
गाड़े भली, उखारे अनुचित, बनि आए बहिबे ही ।
'तुलसी' प्रभुहिं तुम्हहिं हमहूँ हिय साँसति-सी सहिबे ही ॥४०॥

मधुकर ! कान्ह कहा ते न होंहीं ।
कै ये नई सिखी सिखई हरि निज-अनुराग-बिछोहीं ॥
राखी सखि कूबरी पीठ पर ये बातैं बकुचौहीं ।
स्याम सो गाहक पाइ सयानी खोलि देखाई है गौं हीं ॥
नागरमनि सोभासागर जेहि जग जुवती हँसि मोही ।
लियो रूप दै ज्ञान-गाँठरी भलो ठग्यो ठगु ओही ॥
है निर्गुन सारी बारिक, बलि, घरी करौ, हम जोही ।
'तुलसी' ये नागरिन्ह जोगपट जिन्हहिं आजु सब सोही ४१।

मधुप तुम्ह कान्ह ही की कही क्यों न कही है ?
यह बतकही चपल चेरी की निपट चरेरीऐ रही है ॥
कब ब्रज तज्यो, ज्ञान कब उपज्यो ? कब बिदेहता लही है ।
गए बिसारि रीति गोकुल की, अब निर्गुन गति गही है ॥
आयसु देहु करहिं सोइ सिर धरि प्रीति-परमिति निरबही है ।
'तुलसी' परमेस्वर न सहैगो, हम अबलनि सब सही है ।४२।

दीन्हीं है मधुप सबहि सिख नीकी ।

सोइ आदरौ आस जाके जिय बारि बिलोवत घी की ॥
बूझी बात कान्ह कुबरी की, मधुकर कछु जनि पूछौ ।
ठालीं ग्वालि जानि पठए, अलि, कह्यो है पछोरन छूछो ॥
हमहूँ कछुक लखी ही तब की औरेबैं नंदलला की ।
ये अब लही चतुर चेरी पै चोखी चालि चलाकी ॥
गए कूर तें, घर तें, आँगन तें ब्रजहू तें ब्रजनाथ ।
तुलसी प्रभु गयो चहत मनहुँ तें सो तो है हमारे हाथ ॥४३।

ताकी सिख ब्रज न सुनैगो कोउ भोरे ।
जाकी कहनि रहनि अनमिल, अलि, सुनत समुझियत थोरे ॥
आपु कंजमकरंद सुधाहृद हृदय रहत नित बोरे ।
हम सों कहत बिरह-स्रम जैहै गगन कूप खनि खोरे ॥
धान को गाँव पयार तें जानिय ज्ञान बिषय मन मोरे ।
'तुलसी' अधिक कहे न रहै रस गूलरि को सो फल फोरे ।४४।

आली ! अति अनुचित उतरु न दीजे ।
सेवक सखा सनेही हरि के जो कुछ कहैं सो कीजे ॥
देसकाल उपदेस सँदेसो सादर सब सुनि लीजे ।
कै समुझिबो, कै ये समुझैहैं हारेहु मानि सहीजे ॥
सखि सरोष प्रियदोष बिचारत प्रेम पीन पन छीजे ।
खग मृग मीन सलभ सरसिज गति सुनि पाहनौ पसीजै ॥
ऊधो परम हितू हित सिखवत परमिति पहुँचि पतीजे ।
'तुलसिदास' अपराध आपनो, नंदलाल बिनु जीजे ।४५।

ऊधो हैं बड़े, कहैं सोइ कीजे ।

अलि, पहिचानि प्रेम की परमिति उतरु फेरि नहिं दीजै ॥
जननी जनक जरठ जाने जन परिजन लोगु न छीजै ।
दै पठयो पहिलो बिढ़तो ब्रज सादर सिर धरि लीजै ॥
कंस मारि जदुबंस सुखी कियो, स्त्रवन सुजस सुनि जीजै ।
'तुलसी' त्यों त्यों होइगी गरुई ज्यों ज्यों कामरि भीजै ।४६।

कान्ह, अलि ! भए नये गुरु ज्ञानी ।
तुम्हरे कहत आपने समुझत, बात सही उर आनी ॥
लिए अपनाइ लाइ चंदन तन, कछु कटु चाह उड़ानी ।
जरी सुँघाइ कूबरी कौतुक करि जोगी बधा-जुड़ानी ॥
ब्रज बसि रास-बिलास, मधुपुरी चेरी सों रति मानी ।
जोग-जोग ग्वालिनी बियोगिनि जान-सिरोमनि जानी ॥
कहिबे कछू कछू कहि जैहै, रहौ, आलि ! अरगानी ।
'तुलसी' हाथ पराए प्रीतम, तुम्ह प्रिय-हाथ बिकानी ।४७।

सब मिलि साहस करिय सयानी ।
ब्रज आनियहि मनाइ पाँय परि कान्ह कूबरी रानी ॥
बसैं सुबास, सुपास होहि सब फिरि गोकुल रजधानी ।
महरि महर जीवहिं सुख-जीवन खुलहि मोद-मनि-खानी ॥
तजि अभिमान अनख अपनो हित कीजिय मुनिबर बानी ।
देखिबो दरस दूसरेहु चौथेहु बड़ो लाभ, लघु हानी ॥
पावक परत निषिद्ध लाकरी होति अनल जग जानी ।
'तुलसी' सो तिहुँ भुवन गाइबो नंदसुवन सनमानी ॥४८॥

कही है भली बात सबके मन मानी ।

प्रियसम प्रियसनेह-भाजन, सखि! प्रीति-रीति जग जानी ॥
भूषन भूति गरळ परिहरि कै हरमूरति उर आनी?
मज्जन पान कियो कै सुरसरि कर्मनास-जळ छानी?
पूँछ सो प्रेम, बिरोध सींग सों, यहि बिचार हित-हानी।
कीजै कान्ह-कूबरी सों नित नेह करम मन बानी ॥
'तुलसी' तजिय कुचालि आलि अब सुधरै सबइ नसानी।
आगे करि मधुकर मथुरा कहँ सोधिय सुदिन सयानी ॥४९॥

राग कान्हरा

हे हम समाचार सब पाए।
अब बिसेष देखे तुम्ह देखे हैं कूबरी हाँक से लाए ॥
मथुरा बड़ो नगर नागर जन जिन्ह जातहिं जदुनाथ पढ़ाए।
समुझि रहनि, सुनि कहनि बिरह ब्रन अनख अमिय औषध सरुहाए
मधुकर रसिक-सिरोमनि कहियत कौने यह रसरीति सिखाए।
बिनु आखर को गीत गाइ गाइ चाहत ग्वालिनि ग्वाल रिझाए ॥
फल पहिले ही लह्यो ब्रजबासिन्ह, अब साधन उपदेसन आए!
'तुलसी' अलि, अजहूँ नहिं बूझत, कौन हेतु नंदलाल पठाए ५०

कौन सुनै अलि की चतुराई।
अपनिहि मतिबिलास अकास महँ चाहत सियनि चलाई ॥
सरल सुलभ हरिभगति-सुधाकर निगम पुराननि गाई।
तजि सोइ सुधा मनोरथ करि करि को मरिहै, री माई ॥
जद्यपि ताको सोइ मारगप्रिय जाहि जहाँ बनि आई।
मैन के दसन, कुलिस के मोदक कहत सुनत बौराई ॥

सगुन छीरनिधि-तीर बसत ब्रज तिहुँ पुर बिदित बड़ाई।
आक दुहन तुम्ह कह्यो सो परिहरि हम यह मति नहिं पाई॥
जानत हैं जदुनाथ सबन की बुधि बिबेक जड़ताई।
'तुलसिदास' जनि बकहि, मधुप सठ! हठ निसि दिन अँवराई ५१

राग केदारा

गोकुल प्रीति नित नई जानि।
जाइ अनत सुनाइ मधुकर ज्ञानगिरा पुरानि॥
मिलहिं जोगी जरठ तिन्हहिं दिखाउ निरगुन-खानि।
नवल नंदकुमार के ब्रज सगुन सुजस बखानि॥
तू जो हम आदस्यो सो तो नव कमल की कानि।
तजहि 'तुलसी' समुझि यह उपदेसिबे की बानि॥५२॥

काहे को कहत बचन सँवारि।
ज्ञानगाहक नाहिनै ब्रज मधुप अनत सिधारि॥
जुगुति धूम बघारिबे की समुझिहैं न गँवारि।
जोगिजन मुनिमंडली मों जाइ रीती ढारि॥
सुनै तिन्ह की कौन 'तुलसी' जिन्हहिं जीति न हारि।
सकति खारो कियो चाहत मेघहू को बारि॥५३॥

ऐसे हौं हूँ जानति भृंग।
नाहिनै काहू लह्यो सुख प्रीति करि इक अंग॥
कौन भीर जो नीरदहि जेहि लागि रटत बिहंग?
मीन जल बिनु तलफि तनु तजै, सलिल सहज असंग॥
पीर कछू न मनिहिं जाके बिरह-बिकल भुअंग।

ब्याध-बिसिष बिलोक नहिं कलगान-लुबुध कुरंग ॥
स्यामघन गुनबारि छबिमनि मुरलि-तान-तरंग ।
लग्यो मन बहु भाँति 'तुलसी' होइ क्यों रसभंग ? ॥५४॥
ऊधो ! प्रीति करि निरमोहियन सों को न भयो दुखदीन ?
सुनत समुझत कहत हम सब भईं अति अप्रबीन ॥
अहि कुरंग पतंग पंकज चारु चातक मीन ।
बैठि इनकी पाँति अब सुख चहत मन मतिहीन ॥
निठुरता अरु नेह की गति कठिन परति कही न ।
'दास तुलसी' सोच नित निज प्रेम जानि मलीन ॥५५॥

राग गौरी

सुनत कुलिस-सम बचन तिहारे ।
चित दै मधुप सुनहु सोउ कारन जातें जात न प्रान हमारे ॥
ज्ञान कृपान समान लगत उर, बिहरत छिन छिन होत निनारे ।
अवधि-जरा जोरति हठि पुनि पुनि, यातें तनु रहत सहत दुख भारे ॥
पावक-बिरह समीर-स्वास तनु-तूल मिले तुम्ह जारनिहारे ।
तिन्हहिं निदरि अपने हित कारन राखत नयन निपुन रखवारे ॥
जीवन कठिन, मरन की यह गति दुसह बिपति ब्रजनाथ निवारे ।
'तुलसिदास' यह दसा जानि जिय उचित होइ सो कहौ अलि, प्यारे५६
छपद ! सुनहु बर बचन हमारे ।
बिनु ब्रजनाथ ताप नयनन की कौन हरै, हरि अंतर-कारे ॥
कनककुंभ भरि भरि पियूषजल बरषत सक्र कल्पसत हारे ।
कदलि सीप चातक को कारज स्वाति-बारि बिनु कोउ न सँवारे ॥

सबअँगरुचिर किसोर स्यामघन जेहि हृदि-जलज बसत हरि प्यारे।
तेहि उर क्यों समात बिराट बपु स्यों महि सरित सिंधु गिरि भारे ॥
बढ्यो अति प्रेम प्रलय के बट ज्यों बिपुल जोग-जल बोरि न पारे।
'तुलसिदास' ब्रजबनितन को ब्रत समरथ को करि जतन निवारे ५६

मधुप ! समुझि देखहु मन माहीं।
प्रेमपियूषरूप उडुपति बिनु कैसे हौं अलि पैयत रबि पाहीं ॥
जद्यपि तुम हित लागि कहत सुनि स्रवन बचन नहिं हृदय समाहीं।
मिलहिं न पावक महँ तुषार कन जौं खोजत सत कलप सिराहीं ॥
तुम कहि रहे, हमहुँ पचि हारी, लोचन हठी तजत हठ नाहीं।
'तुलसिदास' सोइ जतन करहु कछु बारक स्याम इहाँ फिरि जाहीं५८

मोको अब नयन भए रिपु माई।
हरि-बियोग तनु तजेहि परमसुख ए राखहि सोइ है बरियाई ॥
बरु मन कियो बहुत हित मेरो बारहि बार काम दव लाई।
बरषि नीर ये तबहिं बुझावहिं स्वारथ निपुन अधिक चतुराई ॥
ज्ञानपरसु दै मधुप पठायो बिरहबेलि कैसेहु कठिनाई।
सो थाक्यो बरह्यों एकहि तक देखत इनकी सहज सिंचाई ॥
हारत हू न हारि मानत, सखि, सठ सुभाव कंदुक की नाईं।
चातक जलज मीनहुँ ते भोरे समुझत नहिं उन्हकी निठुराई ॥
ए हठ-निरत दरस लालचबस परे जहाँ बुधिबल न बसाई।
'तुलसिदास' इन्हपर जो द्रवहिं हरि तौ पुनि मिलौं बैरु बिसराई ५६

राग आसावरी

कहा भयो कपट जुआ जो हौं हारी ?

समरधीर महाबीर पाँच पति क्यों दैहैं मोहिं होन उघारी ॥
राजसमाज सभासद समरथ भीषम द्रोन धर्मधुरधारी ।
अबला अनघ अनवसर अनुचित होति, हेरि करिहैं रखवारी ॥
यों मन गुनति दुसासन दुरजन तमक्यो तकि गहि दुहुँ कर सारी ।
सकुचि गात गोवति कमठी ज्यों हहरी हृदय, बिकल भइ भारी ॥
अपनेनि को अपनो बिलोकि बल सकल आस बिस्वास बिसारी ।
हाथ उठाइ अनाथ नाथ सो 'पाहि पाहि, प्रभु, पाहि!' पुकारी ॥
'तुलसी' परखि प्रतीति प्रीतिगति आरतपाल कृपालु मुरारी ।
बसनबेष राखी बिसेषि लखि बिरदावलि मूरति नरनारी ६०

गहगह गगन दुंदुभी बाजी ।
बरषि सुमन सुरगन गावत जस हरष-मगन मुनि सुजन समाजी ॥
सानुज सगन ससचिव सुजोधन भए मुख मलिन खाइ खल खाजी ।
लाज गाज उनवनि कुचाल कलि परी बजाइ कहूँ कहुँ गाजी ॥
प्रीति प्रतीति द्रुपदतनया की भली भूरि भय भभरि न भाजी ।
कहि पारथ-सारथिहि सराहत गई-बहोरि गरीब-निवाजी ॥
सिथिल-सनेह मुदित मन ही मन बसन बीच बिच बधू बिराजी ।
सभासिंधु जदुपति जय मय जनु रमा प्रगटि त्रिभुवनभरि भ्राजी ॥
जुग जुग जग साके केसव के समन-कलेस कुसाज-सुसाजी ।
'तुलसी' को न होइ सुनि कीरति कृष्नकृपालु-भगतिपथ राजी ६१

दोहावली

दोहा

राम बाम दिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥१॥
सीता लखनु समेत प्रभु, सोहत तुलसीदास ।
हरषत सुर, बरषत सुमन, सगुन सुमंगलबास ॥२॥
पंचबटी बटबिटप-तर, सीता-लखन-समेत ।
सोहत तुलसीदास प्रभु, सकल सुमंगल देत ॥३॥
चित्रकूट सब दिन बसत, प्रभु सिय-लखन-समेत ।
रामनाम-जप जापकहि, तुलसी अभिमत देत ॥४॥
पय अन्हाइ फल खाइ जपु, रामनाम षट मास ।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल तुलसीदास ॥५॥
रामनाम-मनि-दीप धरु, जीह देहरी द्वार ।
तुलसी भीतर बाहिरौ, जौं चाहसि उजियार ॥६॥
हिय निरगुन नयनन्हि सगुन, रसना राम सुनाम ।
मनहुँ पुरट-संपुट लसत, तुलसी ललित ललाम ॥७॥
सगुन ध्यान रुचि सरस नहिं, निरगुन मन तें दूरि ।
तुलसी सुमिरहु राम को, नाम सजीवन-मूरि ॥८॥

एक छत्र, एक मुकुटमनि, सब बरनन पर जोउ ।
तुलसी रघुबर-नाम के, बरन बिराजत दोउ ॥९॥
नाम राम को अंक है, सब साधन हैं सून ।
अंक गये कछु हाथ नहिं, अंक रहे दसगून ।१०।
नाम राम को कलपतरु, कलि कल्यान-निवास ।
जो सुमिरत भयो भाँग तें, 'तुलसी' तुलसीदास ।११।
रामनाम जपि जीह जन, भए सुकृत सुखसालि ।
तुलसी इहाँ जो आलसी, गयो आजु की कालि ।१२।
नाम गरीबनिवाज को, राज देत जन जानि ।
तुलसी मन परिहरत नहिं, घुरबिनिआ की बानि ।१३।
कासी बिधि बसि तनु तजै, हठि तन तजै प्रयाग ।
तुलसी जो फल सो सुलभ, रामनाम-अनुराग ।१४।
मीठो अरु कठवति भरो, रौताई अरु खेम ।
स्वारथ परमारथ सुलभ, रामनाम के प्रेम ।१५।
रामनाम सुमिरत सुजस-भाजन भए कुजाति ।
कुतरु कुसर, पुर राजमग, लहत भुवन-बिख्याति ।१६।
स्वारथ सुख सपनेहुँ अगम, परमारथ न प्रबेस ।
रामनाम सुमिरत मिटहिं, तुलसी कठिन कलेस ।१७।
'मोर मोर' सब कहँ कहसि, तू को ? कहु निज नाम ।
कै चुप साधहि सुनि समुझि, कै तुलसी जपु राम ।१८।
हम लखि लखहि हमार, लखि हम हमार के बीच ।
तुलसी अलखहि का लखहि ? रामनाम जपु नीच ।१९।

रामनाम-अवलंब बिनु, परमारथ की आस ।
बरषत बारिद-बूँद गहि, चाहत चढ़त अकास ॥२०॥
तुलसी हठि हठि कहत नित, चित सुनि हित करि मानि ।
लाभ राम सुमिरन बड़ो, बड़ी बिसारे हानि ॥२१॥
बिगरी जनम अनेक की, सुधरै अबहीं आजु ।
होहि राम को, नाम जपु, तुलसी तजि कुसमाजु ॥२२॥
प्रीति प्रतीति सुरीति सों, रामनाम जपु राम ।
तुलसी तेरो है भलो, आदि मध्य परिनाम ॥२३॥
दंपति-रस रसना, दसन, परिजन, बदन सुगेह ।
तुलसी हरहित बरन सिसु, संपति सहज सनेह ॥२४॥
बरषा रितु रघुपति-भगति, तुलसी सालि सुदास ।
रामनाम बर बरन जुग, सावन भादौं मास ॥२५॥
रामनाम नर-केसरी, कनककसिपु कलिकालु ।
जापकजन प्रह्लाद जिमि, पालिहि दलि सुरसालु ॥२६॥
रामनाम कलि कामतरु, सकल सुमंगल कंद ।
सुमिरत करतल सिद्ध सब, पग-पग परमानंद ॥२७॥
रामनाम कलि कामतरु, रामभगति सुरधेनु ।
सकल सुमंगल मूल जग, गुरुपद-पंकज-रेनु ॥२८॥
यथा भूमि सब बीज मय, नखत-निवास अकास ।
रामनाम सब धरम मय, जानत तुलसीदास ॥२९॥
सकल कामनाहीन जे, रामभगति-रसलीन ।
नामप्रेम-पीयूष-हृद, तिनहुँ किए मन मीन ॥३०॥

ब्रह्मराम तें नाम बड़, बरदायक बरदानि।
रामचरित सतकोटि महँ, लिय महेस जिय जानि ॥३१॥
सबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्हि रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल, बेद-बिदित गुननाथ ॥३२॥
रामनाम पर राम तें, प्रीति प्रतीति भरोस।
सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुन-सुमंगल-कोस ॥३३॥
लंक बिभीषन, राज कपि, पति मारुति, खग मीच।
लही राम सों नामरति, चाहत तुलसी नीच ॥३४॥
हरन अमंगल अघ अखिल, करन सकल कल्यान।
रामनाम नित कहत हर, गावत बेद पुरान ॥३५॥
तुलसी प्रीति प्रतीति सों, रामनाम-जप-जाग।
किए होय बिधि दाहिनो, देइ अभागेहि भाग ॥३६॥
जल थल नभ गति अमित अति, अग जग जीव अनेक।
तुलसी तो-से दीन कहुँ, रामनाम-गति एक ॥३७॥
राम भरोसो, राम बल, रामनाम बिस्वास।
सुमिरन सुभ मंगल कुसल, माँगत 'तुलसीदास' ॥३८॥
रामनाम रति, राम गति, रामनाम बिस्वास।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, दहुँ दिसि तुलसीदास ॥३९॥
रसना साँपिनि, बदन बिल, जे न जपहिं हरिनाम।
तुलसी प्रेम न राम सों, ताहि बिधाता बाम ॥४०॥
हिय फाटहु, फूटहु नयन, जरउ सो तन केहि काम।
द्रवहिं, स्रवहिं, पुलकहिं नहीं, तुलसी सुमिरत राम ॥४१॥

रामहिं सुमिरत, रन भिरत, देत, परत गुरु पाय ।
तुलसी जिनहिं न पुलक तनु, ते जग जीवत जाय ॥४२॥

सोरठा

हृदय सो कुलिस समान, जो न द्रवहि हरिगुन सुनत ।
कर न रामगुन-गान, जीह सो दादुरजीह सम ॥४३॥
स्रवै न सलिल सनेह, तुलसी सुनि रघुबीर-जस ।
ते नैना जनि देहु, राम करहु बरु आँधरो ॥४४॥
रहैं न जल भरि पूरि, राम ! सुजस सुनि रावरो ।
तिन आँखिन में धूरि, भरि भरि मूठी मेलिए ॥४५॥
बारक सुमिरत तोहिं, होहिं तिनहिं सन्मुख सुखद ।
क्यों न सँभारहि मोहिं, दयासिंधु दसरत्थ के ? ॥४६॥
साहिब होत सरोष, सेवक को अपराध सुनि ।
अपने देखे दोष, सपनेहुँ राम न उर धरेउ ॥४७॥

दोहा

तुलसी रामहिं आपु तें, सेवक की रुचि मीठि ।
सीतापति-से साहिबहि, कैसे दीजै पीठि ॥४८॥
तुलसी जाके होयगी, अंतर-बाहिर दीठि ।
सो कि कृपालुहि देइगो, केवटपालहि पीठि ? ॥४९॥
प्रभु तरुतर, कपि डार पर, ते किए आपु समान ।
तुलसी कहूँ न राम सों, साहिब सीलनिधान ॥५०॥
रे मन ! सब सों निरस ह्वै, सरस राम सों होहि ।
भलो सिखावन देत है, निसि-दिन तुलसी तोहि ॥५१॥

हरे चरहिं, तापहिं बरे, फरे पसारहिं हाथ।
तुलसी स्वारथमीत सब, परमारथ रघुनाथ ॥५२॥
स्वारथ सीतानाथ सों, परमारथ सियराम।
तुलसी तेरो दूसरे, द्वार कहा कहु काम ॥५३॥
स्वारथ परमारथ सकल, सुलभ एक ही ओर।
द्वार दूसरे दीनता, उचित न तुलसी तोर ॥५४॥
तुलसी स्वारथ रामहित, परमारथ रघुबीर।
सेवक जाके लषन-से, पवनपूत रनधीर ॥५५॥
ज्यों जग बैरी मीन को, आपु सहित, बिनु बारि।
त्यों तुलसी रघुबीर बिनु, गति आपनि बिचारि ॥५६॥
रामप्रेम बिनु दूबरो, रामप्रेम ही पीन।
रघुबर कबहुँक करहुगे, तुलसी ज्यों जल मीन ॥५७॥
राम सनेही, राम गति, रामचरन-रति जाहि।
तुलसी फल जग-जनम को, दियो बिधाता ताहि ॥५८॥
आपु आपने तें अधिक, जेहि प्रिय सीताराम।
तेहिके पग की पानहीं, तुलसी तनु को चाम ॥५९॥
स्वारथ-परमारथ-रहित, सीताराम-सनेहु।
तुलसी सो फल चारि को, फल हमार मत एहु ॥६०॥
जे जन रूखे बिषयरस, चिकने रामसनेह।
तुलसी ते प्रिय राम के, कानन बसहिं कि गेह ॥६१॥
जथा लाभ संतोष सुख, रघुबर-चरन-सनेह।
तुलसी जौ मन खूँद सम, कानन बसहु कि गेह ॥६२॥

'तुलसी' जोपै राम सों, नाहिंन सहज सनेह ।
मूँड़ मुड़ायो बादि ही, भाँड़ भयो तजि गेह ॥६३॥
तुलसी श्रीरघुबीर तजि, करै भरोसो और ।
सुख संपति की का चली, नरकहु नाहीं ठौर ॥६४॥
तुलसी परिहरि हरि, हरहि पाँवर पूजहिं भूत ।
अंत फजीहति होहिंगे, गनिका के-से पूत ॥६५॥
सेए सीताराम नहिं, भजे न संकर-गौरि ।
जनम गँवायो बादि ही, परत पराई पौरि ॥६६॥
तुलसी हरि अपमान तें, होइ अकाज समाज ।
राज करत रज मिलि गए, सदल सकुल कुरुराज ॥६७॥
तुलसी रामहिं परिहरे, निपट हानि सुनु ओझ ।
सुरसरि-उर-गत सोइ सलिल, सुरा-सरिस गंगोझ ॥६८॥
राम दूरि माया बढ़ति, घटति जानि मन माँह ।
भूरि होति रवि दूरि लखि, सिर पर पगतर छाँह ॥६९॥
साहिब सीतानाथ सों, जब घटिहै अनुराग ।
तुलसी तबहीं भाल तें, भभरि भागिहै भाग ॥७०॥
करिहौ कोसलनाथ तजि, जबहिं दूसरी आस ।
जहाँ तहाँ दुख पाइहौ, तबहीं तुलसीदास ॥७१॥
बिंध न ईंधन पाइए, सायर जुरै न नीर ।
परै उपास कुबेरघर, जो बिपच्छ रघुबीर ॥७२॥
बरषा को गोबर भयो, को चहै, को करै प्रीति ?
तुलसी तू अनुभवहि अब, राम-बिमुख की रीति ॥७३॥

सबहि समरथहि सुखद प्रिय, अच्छम प्रिय हितकारि ।
कबहुँ न काहुहि राम प्रिय, तुलसी कहा बिचारि । ७४॥
तुलसी उद्यम करम जुग, जब जेहि राम सुडीठि ।
होइ सुफल सोइ, ताहि सब, सनमुख, प्रभु तन पीठि ॥७५॥
प्रेम-कामतरु परिहरत, सेवत कलितरु ठूँठ ।
स्वारथ परमारथ चहत, सकल मनोरथ झूँठ ॥७६॥
निज दूषनु, गुन राम के, समुझे तुलसीदास ।
होय भलो कलिकाल हू, उभय लोक अनयास ॥७७॥
कै तोहिं लागहिं राम प्रिय, कै तू प्रभु-प्रिय होहि ।
दुइ महँ रुचै जो सुगम सो, कीबे तुलसी तोहि ॥७८॥
तुलसी दुइ महँ एक ही, खेल छाँड़ि छल खेलु ।
कै करु ममता राम सों, कै ममता परहेलु ॥७९॥
निगम अगम, साहेब सुगम, राम साँचिली चाह ।
अंबु असन अवलोकियत, सुलभ सबै जग माह ॥८०॥
सनमुख आवत पथिक ज्यों, दिए दाहिनो बाम ।
तैसोइ होत सु आपको, त्यों ही तुलसी राम ॥८१॥
राम-प्रेम-पथ पेखिये, दिए बिषय तनु पीठि ।
तुलसी केंचुरि परिहरे, होत साँपहूँ डीठि ॥८२॥
तुलसी जौलौं बिषय की, मुधा माधुरी मीठि ।
तौलौं सुधा सहस्र सम, रामभगति सुठि सीठि ॥८३॥
जैसो तैसो रावरो, केवल कोसलपाल ।
तौ तुलसी को है भलो, तिहूँ लोक तिहुँ काल ॥८४॥

है तुलसी के एक गुन, अवगुननिधि कहैं लोग ।
भलो भरोसो रावरो, राम रीझिबे जोग ॥८५॥
प्रीति राम सों, नीतिपथ, चलिय राग रिस जीति ।
तुलसी संतन के मते, इहै भगति की रीति ॥८६॥
सत्य बचन, मानस बिमल, कपटरहित करतूति ।
तुलसी रघुबर सेवकहि, सकै न कलिजुग धूति ॥८७॥
तुलसी सुखी जो राम सों, दुखी सो निज करतूति ।
करम बचन मन ठीक जेहि, तेहि न सकै कलि धूति ॥८८॥
नातो नाते राम के, रामसनेह सनेहु ।
तुलसी माँगत जोरि कर, जनम जनम सिव देहु ॥८९॥
सब साधन को एक फल, जेहि जान्यो सोइ जान ।
ज्यों त्यों मन-मंदिर बसहिं, राम धरे धनु बान ॥९०॥
जौ जगदीस तौ अति भलो, जौ महीस तौ भाग ।
तुलसी चाहत जनम भरि, रामचरन-अनुराग ॥९१॥
परहुँ नरक, फलचारि-सिसु, मीच डाकिनी खाउ ।
तुलसी राम सनेह को, जो फल सो जरि जाउ ॥९२॥
हित सों हित, रति राम सों, रिपु सों बैर बिहाउ ।
उदासीन सब सों सरल, तुलसी सहज सुभाउ ॥९३॥
तुलसी ममता राम सों, ममता सब संसार ।
राग न रोष न दोष दुख, दास भये भवपार ॥९४॥
रामहिं डरु, करु राम सों, ममता, प्रीति प्रतीति ।
तुलसी निरुपधि राम को, भये हार हू जीति ॥९५॥

तुलसी राम कृपालु सों, कहि सुनाउ गुन-दोष ।
होय दूबरी दीनता, परम पीन संतोष ॥९६॥
सुमिरन सेवा राम सों, साहब सों पहिचानि ।
ऐसेहु लाभ न ललक जो, तुलसी नित हित हानि ॥९७॥
जाने जान न जोइए, बिनु जाने को जान ?
तुलसी यह सुनि समुझि हिय, आनु धरे धनुबान ॥९८॥
करमठ कठमलिया कहैं, ज्ञानी ज्ञानबिहीन ।
तुलसी त्रिपथ बिहाइ गो, रामदुआरे दीन ॥९९॥
बाधक सब सबके भए, साधक भए न कोइ ।
तुलसी राम कृपालु तें, भलो होइ सो होइ ॥१००॥
संकरप्रिय मम द्रोही, सिवद्रोही मम दास ।
ते नर करहिं कलपभरि, घोर नरक महँ बास ॥१०१॥
बिलग बिलग सुख संग दुख, जनम मरन सोइ रीति ।
रहियत राखे राम के, गए ते उचित अनीति ॥१०२॥
जाय कहब करतूति बिनु, जाय जोग बिनु छेम ।
तुलसी जाय उपाय सब, बिना रामपद-प्रेम ॥१०३॥
लोग मगन सब जोग ही, जोग जाय बिनु छेम ।
त्यों तुलसी के भावगत, रामप्रेम बिनु नेम ॥१०४॥
राम निकाई रावरी, है सब ही को नीक ।
जो यह साँची है सदा, तौ नीको तुलसीक ॥१०५॥
तुलसी राम जो आदर्‌यो, खोटो खरो खरोइ ।
दीपक काजर सिर धर्‌यो, धर्‌यो सु धर्‌यो धरोइ ॥१०६॥

तनु बिचित्र, कायर बचन, अहि अहार, मन घोर ।
तुलसी हरि भए पच्छधर, ताते कह सब मोर ।१०७।
लहै न फूटी कौड़िहू, को चाहै केहि काज ?
सो तुलसी महँगो कियो, राम गरीबनिवाज ।१०८।
घर घर माँगे टूक पुनि, भूपनि पूजे पाय ।
जे तुलसी तब राम बिनु, ते अब राम सहाय ।१०९।
तुलसी राम सुदीठि तें, निबल होत बलवान ।
बैर बालि सुग्रीव के, कहा कियो हनुमान ? ।११०।
तुलसी रामहु तें अधिक, रामभक्त जिय जानु ।
रिनिया राजा राम-से, धनिक भए हनुमानु ।१११।
कियो सुसेवक-धरम कपि, प्रभु कृतज्ञ जिय जानि ।
जोरि हाथ ठाढ़े भए, बरदायक बरदानि ।११२।
भगत-हेतु भगवान प्रभु, राम धरेउ तनु भूप ।
किए चरित पावन परम, प्राकृत-नर-अनुरूप ।११३।
ज्ञान - गिरा - गोतीत, अज, माया - गुन - गोपार ।
सोइ सच्चिदानंदघन, करत चरित्र उदार ।११४।
हिरन्याक्ष भ्राता सहित, मधुकैटभ बलवान ।
जेहि मारे सोइ अवतरे, कृपासिंधु भगवान ।११५।
सुद्ध सच्चिदानंदमय, कंद भानु - कुलकेतु ।
चरित करत नर अनुहरत, संसृति - सागरसेतु ।११६।
बाल - बिभूषन बसन बर, धूर - धूसरित अंग ।
बालकेलि रघुबर करत, बाल - बंधु सब संग ।११७।

अनुदिन अवध बधावने, नित नव मंगल मोद ।
मुदित मातु पितु लोग लखि, रघुबर बाल-बिनोद ।११८।
राज-अजिर राजत रुचिर, कोसलपालक-बाल ।
जानु-पानि-चर चरित बर, सगुन-सुमंगल-माल ।११९।
नाम ललित, लीला ललित, ललित रूप रघुनाथ ।
ललित बसन, भूषन ललित, ललित अनुज सिसु साथ ।१२०।
राम, भरत, लछिमन ललित, सत्रुसमन सुभनाम ।
सुमिरत दसरथ-सुवन सब, पूजहिं सब मन-काम ।१२१।
बालक कोसलपाल के, सेवकपाल कृपाल ।
तुलसी मन-मानस बसत, मंगल मंजु मराल ।१२२।
भगत, भूमि, भूसुर, सुरभि, सुर हित लागि कृपाल ।
करत चरित धरि मनुज-तनु, सुनत मिटहिं जगजाल ।१२३।
निज इच्छा प्रभु अवतरइ, सुर, महि, गो, द्विज, लागि ।
सगुन-उपासक संग तहँ, रहे मोक्ष सब त्यागि ।१२४।
परमानंद कृपायतन, मन परिपूरन - काम ।
प्रेमभगति अनपायनी, देहु हमहिं श्रीराम ।१२५।
बारि मथे घृत होइ बरु, सिकता तें बरु तेल ।
बिनु हरि-भजन न भव तरिय, यह सिद्धांत अपेल ।१२६।
हरिमाया-कृत दोष गुन, बिनु हरिभजन न जाहिं ।
भजिय राम सब काम तजि, अस बिचारि मन माहिं ।१२७।
जो चेतन कहँ जड़ करइ, जड़हिं करइ चैतन्य ।
अस समर्थ रघुनायकहि, भजहिं जीव ते धन्य ।१२८।

श्रीरघुबीर-प्रताप तें, सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमंद जे राम तजि, भजहिं जाय प्रभु आन।१२९।
लव निमेष परमान जुग, बरष कलप सर चंड।
भजहि न मन तेहि राम कहँ, काल जासु कोदंड।१३०।
तब लगि कुसल न जीव कहँ, सपनेहुँ मन बिस्राम।
जब लगि भजत न राम कहँ, सोक-धाम तजि काम।१३१।
बिनु सतसंग न हरिकथा, तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गए बिनु रामपद, होय न दृढ़ अनुराग।१३२।
बिनु बिस्वास भगति नहिं, तेहि बिनु द्रवहिं न राम।
रामकृपा बिनु सपनेहुँ, जीव न लह बिस्राम।१३३।

सोरठा

अस बिचारि मन धीर तजि, कुतर्क संसय सकल।
भजहु राम रघुबीर, करुनाकर सुंदर सुखद।१३४।
भावबस्य भगवान, सुखनिधान करुनाभवन।
तजि ममता, मद, मान, भजिय सदा सीतारवन।१३५।
कहहिं बिमलमति संत, बेद पुरान बिचारि अस।
द्रवैं जानकीकंत, तब छूटै संसार-दुख।१३६।
बिनु गुरु होइ कि ज्ञान, ज्ञान कि होइ बिराग बिनु?
गावहिं बेद पुरान, सुख कि लहिय हरिभगति बिनु।१३७।

दोहा

रामचंद्र के भजन बिनु, जो चहै पद निर्बान।
ज्ञानवंत अपि सोइ नर, पसु बिनु पूँछ बिखान।१३८।

जरउ सो संपति, सदन, सुख, सुहृद, मातु, पितु, भाइ ।
सनमुख होत जो रामपद, करइ न सहज सहाइ ॥१३९॥
सेइ साधु गुरु, समुझि, सिखि, रामभगति थिरताइ ।
लरिकाईं को पैरिबो, तुलसी बिसरि न जाइ ॥१४०॥
सबै कहावत राम के, सबहि राम की आस ।
राम कहैं जेहि आपनो, तेहि भजु तुलसीदास ॥१४१॥
जेहि सरीर रति राम सों सोइ आदरैं सुजान ।
रुद्रदेह तजि नेह-बस, बानर भे हनुमान ॥१४२॥
जानि रामसेवा सरस, समुझि करब अनुमान ।
पुरुखा तें सेवक भए, हर तें भे हनुमान ॥१४३॥
तुलसी रघुबर-सेवकहि खल डाँटत मन माखि ।
बाजराज के बालकहि लवा दिखावत आँखि ॥१४४॥
रावनरिपु के दास तें कायर करहिं कुचालि ।
खर दूषन मारीच ज्यों, नीच जाहिंगे कालि ॥१४५॥
पुन्य, पाप, जस, अजस के भावी भाजन भूरि ।
संकट तुलसीदास को, राम करहिंगे दूरि ॥१४६॥
खेलत बालक ब्याल सँग, मेलत पावक हाथ ।
तुलसी सिसु पितु-मातु ज्यों, राखत सिय रघुनाथ ॥१४७॥
तुलसी दिन भल साहु कहँ, भली चोर कहँ राति ।
निसि-बासर ताकहँ भलो, मानै राम-इताति ॥१४८॥
तुलसी जाने सुनि समुझि, कृपासिंधु रघुराज ।
महँगे मनि कंचन किए, सौंघे जग, जल नाज ॥१४९॥

सेवा, सील, सनेह, बस करि, परिहरि प्रिय लोग ।
तुलसी ते सब राम सों, सुखद सुजोग बियोग ॥१५०॥
चारि चहत मानस अगम, चनक चारि को लाहु ।
चारि परिहरे चारि को दानि, चारि चख चाहु ॥१५१॥
सूधे मन, सूधे बचन, सूधी सब करतूति ।
तुलसी सूधी सकल बिधि, रघुबर-प्रेम-प्रसूति ॥१५२॥
बेष बिसद, बोलनि मधुर, मन कटु, करम मलीन ।
तुलसी राम न पाइए, भए बिषय-जल-मीन ॥१५३॥
बचन-बेष तें जो बनै, सो बिगरै परिनाम ।
तुलसी मन तें जो बनै, बनी बनाई राम ॥१५४॥
नीच मीचु लै जाइ जो, राम-रजायसु पाइ ।
तौ तुलसी तेरो भलो, नतु अनभलो अघाइ ॥१५५॥
जातिहीन, अघ-जनम महि, मुकुति कीन्ह अस नारि ।
महामंद मन सुख चहसि, ऐसे प्रभुहि बिसारि ? ॥१५६॥
बंधु-बधू-रत कहि कियो, बचन निरुत्तर बालि ।
तुलसी प्रभु सुग्रीव की, चितइ न कछू कुचालि ॥१५७॥
बालि बली बलसालि दलि, सखा कीन्ह कपिराज ।
तुलसी राम कृपालु को, बिरद गरीबनिवाज ॥१५८॥
कहा बिभीषन लै मिल्यो, कहा बिगार्‍यो बालि ?
तुलसी प्रभु सरनागतहि, सब दिन आए पालि ॥१५९॥
तुलसी कोसलपाल सो, को सरनागत-पाल ?
भञ्यो बिभीषन बंधु-भय, भंज्यो दारिद-काल ॥१६०॥

कुलिसहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि ।
चित खगेस अस राम कर, समुझि परै कहु काहि ?॥ १६१॥
बलकल भूषन, फल असन, तृन सय्या, द्रुम प्रीति ।
तिन्ह समयन लंका दई, यह रघुबर की रीति ॥१६२॥
जो संपति सिव रावनहिं, दीन्हि दिए दस माथ ।
सोइ संपदा बिभीषनहिं, सकुचि दीन्हि रघुनाथ ॥१६३॥
अबिचल राज बिभीषनहिं, दीन्ह राम रघुराज ।
अजहुँ बिराजत लंक पर, तुलसी सहित समाज ॥१६४॥
कहा बिभीषन लै मिल्यो, कहा दियो रघुनाथ ।
तुलसी यह जाने बिना, मूढ़ मीजिहैं हाथ ॥१६५॥
बैरिबंधु निसिचर अधम, तज्यो न भरे कलंक ।
झूठे अघ सिय परिहरी, तुलसी साइँ ससंक ॥१६६॥
तेहि समाज कियो कठिन पन, जेहि तौल्यो कैलास ।
तुलसी प्रभु-महिमा कहौं, कि सेवक को बिस्वास ॥१६७॥
सभा सभासद निरखि पट पकरि, उठायो हाथ ।
तुलसी कियो इगारहौं, बसनबेष जदुनाथ ॥१६८॥
त्राहि तीनि कह्यो द्रौपदी, तुलसी राजसमाज ।
प्रथम बढ़े पट, बिय बिकल, चहत चकित निज काज ॥१६९॥
सुखजीवन सब कोउ चहत, सुखजीवन हरिहाथ ।
तुलसी दाता माँगनेउ, देखियत अबुध अनाथ ॥१७०॥
कृपिन देइ, पाइय परो, बिनु साधे सिधि होइ ।
सीतापति सनमुख समुझि, जो कीजै सुभ सोइ ॥१७१॥

दंडकबन-पावन-करन, चरन-सरोज प्रभाउ ।
ऊसर जामहि, खल तरहि, होइ रंक तें राउ ॥१७२॥
बिन हीं रितु तरुवर फरत, सिला द्रवति जलजोर ।
राम लखन सिय करि कृपा, जब चितवत जेहि ओर ॥१७३॥
सिला सु तिय भइ, गिरि तरे, मृतक जिए जग जान ।
राम-अनुग्रह सगुन सुभ, सुलभ सकल कल्यान ॥१७४॥
सिलासाप-मोचन चरन, सुमिरहु तुलसीदास ।
तजहु सोच, संकट मिटिहिं, पूजिहि मन की आस ॥१७५॥
मुए जिआए भालु कपि, अवध बिप्र को पूत ।
सुमिरहु तुलसी ताहि तू, जाको मारुति दूत ॥१७६॥
काल करम गुन दोष जग, जीव तिहारे हाथ ।
तुलसी रघुबर रावरो, जान जानकीनाथ ॥१७७॥
रोगनिकर तनु, जरठपनु, तुलसी संग कुलोग ।
रामकृपा लै पालिये, दीन पालिबे जोग ॥१७८॥
मो-सम दीन न, दीनहित, तुम समान रघुबीर ।
अस बिचारि, रघुबंसमनि, हरहु बिषम भवभीर ॥१७९॥
भवभुअंग तुलसी नकुल, डसत ग्यान हरि लेत ।
चित्रकूट इक औषधी, चितवत होत सचेत ॥१८०॥
हौंहु कहावत, सब कहत, राम सहत उपहास ।
साहिब सीतानाथ-से, सेवक तुलसीदास ॥१८१॥
रामराज राजत सकल, धरम-निरत नर-नारि ।
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि ॥१८२॥

रामराज संतोष सुख, घर बन सकल सुपास ।
तरु सुरतरु, सुरधेनु महि, अभिमत भोग बिलास ॥१८३॥
खेती, बनि, बिद्या, बनिज, सेवा, सिलिपि सुकाज ।
तुलसी सुरतरु सरिस सब, सुफल राम के राज ॥१८४॥
दंड जतिन कर, भेद जहँ नरतक नृत्य समाज ।
जीतहु मनहीं सुनिय अस, रामचंद्र के राज ॥१८५॥
कोपे सोच न पोच कर, करिय निहोरन काज ।
तुलसी परमिति प्रीति की, रीति राम के राज ॥१८६॥
मुकुर निरखि मुख रामभ्रू, गनत गुनहिं दै दोष ।
तुलसी-से सठ सेवकनि, लखि जनि परहि सरोष ॥१८७॥
सहसनाम मुनि-भनित सुनि, तुलसी-बल्लभ नाम ।
सकुचत हिय हँसि, निरखि सिय, धरमधुरंधर राम ॥१८८॥
गौतम-तिय-गति सुरति करि, नहिं परसति पग पानि ।
हिय हरषे रघुबंसमनि, प्रीति अलौकिक जानि ॥१८९॥
तुलसी बिलसत नखत निसि, सरद-सुधाकर साथ ।
मुकुता झालरि झलक जनु, रामसुजस-सिसु हाथ ॥१९०॥
रघुबर कीरति-कामिनी, क्यों कहै तुलसीदास ?
सरद-अकास प्रकास ससि, चारु चिबुक-तिल जासु ॥१९१॥
प्रभु गुनगन भूषन बसन, बिसद बिसेष सुदेस ।
राम-सुकीरति-कामिनी, तुलसी करतब केस ॥१९२॥
रामचरित राकेसकर-सरिस सुखद सब काहु ।
सज्जन-कुमुद चकोर चित, हित बिसेष बड़ लाहु ॥१९३॥

रघुबरकीरति सज्जननि, सीतल, खलनि सुताति ।
ज्यों चकोर-चय चक्कवनि, तुलसी चाँदनि राति ॥१९४॥
रामकथा मंदाकिनी, चित्रकूट चित चारु ।
तुलसी सुभग सनेह बन, सिय-रघुबीर-बिहारु ॥१९५॥
स्याम-सुरभि-पय बिसद अति, गुनद करहिं सब पान ।
गिरा ग्राम्य सियराम जस, गावहिं सुनहिं सुजान ॥१९६॥
हरि-हर-जसु सुर-नर-गिरहु, बरनहिं सुकबि-समाज ।
हाँड़ी हाटक घटित चरु, राँधे स्वाद सुनाज ॥१९७॥
तिल पर राखेउ सकल जग, बिदित, बिलोकत लोग ।
तुलसी महिमा राम की, कौन जानिबे जोग ? ॥१९८॥

सोरठा

राम ! सरूप तुम्हार, बचन अगोचर बुद्धिपर ।
अबिगत अकथ अपार, नेति नेति नित निगम कह ॥१९९॥

दोहा

मायाजीव, सुभाउ, गुन, काल करम, महदादि ।
ईस-अंक तें बढ़त सब, ईस-अंक बिनु बादि ॥२००॥
हित उदास रघुबर-बिरह, बिकल सकल नर-नारि ।
भरत लखन-सियगति समुझि, प्रभु-चख सदा सुबारि ॥२०१॥
सीय, सुमित्रासुवन-गति, भरत-सनेह सुभाउ ।
कहिबे कों सारद सरस, जनिबे को रघुराउ ॥२०२॥
जानी राम, न कहि सके, भरत-लखन-सिय-प्रीति ।
सो सुनि गुनि तुलसी कहत, हठ सठता की रीति ॥२०३॥

सब बिधि समरथ सकल कह, सहि साँसति दिन-राति।
भलो निबाहेउ सुनि समुझि, स्वामिधरम सब भाँति ॥२०४॥
भरतहि होइ न राजमद, बिधि-हरि-हर-पद पाइ।
कबहुँ कि काँजी-सीकरनि, छीरसिंधु बिनसाइ ॥२०५॥
संपति चकई, भरत चक, मुनि-आयसु खिलवार।
तेहि निसि आस्रम-पींजरा, राखे भा भिनुसार ॥२०६॥
सधन चोर मग मुदित मन, धनी गही ज्यों फेंट।
त्यों सुग्रीव बिभीषनहिं, भई भरत की भेंट ॥२०७॥
राम सराहे, भरत उठि, मिले राम सम जानि।
तदपि बिभीषन कीसपति, तुलसी, गरत गलानि ॥२०८॥
भरत स्यामतन रामसम, सब गुन रूप-निधान।
सेवक-सुखदायक सुलभ, सुमिरत सब कल्यान ॥२०९॥
ललित लखन मूरति मधुर, सुमिरहु सहित सनेह।
सुख-संपति-कीरति-बिजय-सगुन-सुमंगल-गेह ॥२१०॥
नाम सत्रुसूदन सुभग, सुखमासील-निकेत।
सेवत सुमिरत सुलभ सुख, सकल सुमंगल देत ॥२११॥
कौसल्या कल्यानमयि, मूरति करत प्रनाम।
सगुन सुमंगल काज सुभ, कृपा करहिं सियराम ॥२१२॥
सुमिरि सुमित्रानाम जग, जे तिय लेहिं सनेम।
सुवन लखन रिपुदवन-से, पावहिं पति-पद-प्रेम ॥२१३॥
सीता-चरन प्रनाम करि, सुमिरि सुनाम सनेम।
होहिं तीय पतिदेवता, प्राननाथ प्रिय प्रेम ॥२१४॥

तुलसी केवल कामतरु, रामचरित-आराम ।
कलितरु कपि निसिचर कहत, हमहिं किए बिधि बाम ॥२१५॥
मातु सकल, सानुज भरत, गुरु पुरलोग सुभाउ ।
देखत देख न कैकइहि, लंकापति कपिराउ ॥२१६॥
सहज सरल रघुबर बचन, कुमति कुटिल करि जान ।
चलै जोंक जल बक्रगति, जद्यपि सलिल समान ॥२१७॥
दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान ।
धरनि, धाम, धन, धरमसुत, सद्गुन रूपनिधान ॥२१८॥
तुलसी जान्यो दसरथहि 'धरमु न सत्य-समान' ।
रामु तजे जेहि लागि, बिनु रामु परिहरे प्रान ॥२१९॥
रामबिरह दसरथ-मरन, मुनिमन अगम सु मीचु ।
तुलसी मंगल-मरन-तरु, सुचि सनेह-जल सींचु ॥२२०॥

सोरठा

जीवन मरन सुनाम, जैसे दसरथ राय को ।
जियत खेलायो राम, रामबिरह तनु परिहरेउ ॥२२१॥

दोहा

प्रभुहि बिलोकत गोदगत, सिय-हित घायल नीचु ।
तुलसी पाई गीधपति, मुकुति मनोहर मीचु ॥२२२॥
बिरत, करमरत, भगत, मुनि, सिद्ध, ऊँच अरु नीचु ।
तुलसी सकल सिहात सुनि, गीधराज की मीचु ॥२२३॥
मुए, मरत, मरिहैं सकल, घरी पहर के बीच ।
लही न काहू आजु लौं, गीधराज की मीच ॥२२४॥

मुए मुकुत, जीवत मुकुत, मुकुत मुकुतहूँ बीच ।
तुलसी सबही तें अधिक, गीधराज की मीच ॥२२५॥
रघुबर बिकल बिहंग लखि, सो बिलोकि दोउ बीर ।
सिय-सुधि कहि, सियराम कहि, देह तजी मतिधीर ॥२२६॥
दसरथ तें दसगुन भगति, सहित तासु कर काजु ।
सोचत बंधु-समेत प्रभु, कृपासिंधु रघुराजु ॥२२७॥
केवट निसिचर बिहग मृग, किए साधु सनमानि ।
तुलसी रघुबर की कृपा, सकल सुमंगलखानि ॥२२८॥
मंजुल मंगल मोदमय, मूरति मारुतपूत ।
सकल सिद्धि कर-कमल-तल, सुमिरत रघुबर-दूत ॥२२९॥
धीर, बीर, रघुबीर-प्रिय, सुमिरि समीरकुमार ।
अगम सुगम सब काज करु, करतल सिद्धि बिचार ॥२३०॥
सुख-मुद-मंगल-कुमुद-बिधु, सगुन-सरोरुह-भानु ।
करहु काज सब सिद्धि सुभ, आनि हिए हनुमानु ॥२३१॥
सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमंगल जानु ।
कीरति बिजय बिभूति भलि, हिय हनुमानहि आनु ॥२३२॥
सूर-सिरोमनि, साहसी, सुमति समीरकुमार ।
सुमिरत सब सुख-संपदा-मुदमंगल-दातार ॥२३३॥
तुलसी-तनु सर, सुख-जलज, भुज-रुज गज बरजोर ।
दलत दयानिधि देखिए, कपि केसरीकिसोर ॥२३४॥
भुज-तरु-कोटर रोग-अहि, बरबस कियो प्रबेस ।
बिहँगराज-बाहन तुरत, काढ़िय, मिटइ कलेस ॥२३५॥

बाहु-बिटप सुख-बिहँग-थळ लगी कुपीर कुआगि ।
रामकृपा जल सींचिए, बेगि दीनहित लागि ॥२३६॥

सोरठा

मुकुति जनम महि जानि,ज्ञानखानि, अघहानिकर ।
जहँ बस संभु भवानि,सो कासी सेइय कस न ? ॥२३७॥
जरत सकलसुरबृंद, बिषमगरल जेहि पान किय ।
तेहि न भजसि मतिमंद, को कृपालु संकर-सरिस ॥२३८॥

दोहा

बासर ढासनि के ढका, रजनी चहुँ दिसि चोर ।
संकर निज पुर राखिए, चितै सुलोचन-कोर ॥२३९॥
अपनी बीसी आपुहीं, पुरिहि लगाये हाथ ।
केहि बिधि बिनती बिस्व की, करौं बिस्व के नाथ ॥२४०॥
और करै अपराध कोउ, और पाव फल-भोग ।
अति बिचित्र भगवंतगति, कोउ न जानिबे जोग ॥२४१॥
प्रेमसरीर प्रपंच-रुज, उपजी अधिक उपाधि ।
तुलसी भली सुबैदई, बेगि बाँधिए ब्याधि ॥२४२॥
हम हमार आचार बड़, भूरि भार धरि सीस ।
हठि सठ परबस परत जिमि,कीर,कोस-कृमि,कीस ॥२४३॥
केहि मग प्रबिसति जाति कहँ, ज्यों दरपन में छाँह ।
तुलसी त्यों जग-जीवगति, करी जीव के नाँह ॥२४४॥
सुखसागर सुखनींदबस, सपने सब करतार ।
माया मायानाथ की, को जग जाननहार ? ॥२४५॥

जीव सोव सम सुख सयन, सपने कछु करतूति ।
जागत दीन मलीन सोइ, बिकल बिषाद बिभूति ॥२४६॥
सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ ।
जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ ॥२४७॥
तुलसी देखत, अनुभवत, सुनत न समुझत नीचु ।
चपरि चपेटे देत नित, केस गहे कर मीचु ॥२४८॥
करम खरी कर, मोह थल, अंक चराचर-जाल ।
हनत गुनत, गनि गुन हनत, जगत ज्योतिषी-काल ॥२४९॥
कहिबे कहँ रसना रची, सुनिबे कहँ किय कान ।
धरिबे कहँ चित हित सहित, परमारथहि सुजान ॥२५०॥
ज्ञान कहै अज्ञान बिनु, तम बिनु कहै प्रकास ।
निरगुन कहै जो सगुन बिनु, सो गुरु, तुलसीदास ॥२५१॥
अंक अगुन, आखर सगुन, समुझि उभय प्रकार ।
खोए राखे आपु भल, तुलसी चारु बिचार ॥२५२॥
परमारथ-पहिचानि-मति, लसति बिषय लपटानि ।
निकसि चिता तें अधजरति, मानहुँ सती परानि ॥२५३॥
सीस उघारन किन कह्यो, बरजि रहे प्रिय लोग ।
घरहीं सती कहावती, जरती नाह-बियोग ॥२५४॥
खरिया,खरी,कपूर सब,उचित न पिय ! तियत्याग ।
कै खरिया मोहिं मेलि, कै बिमल बिबेक बिराग ॥२५५॥
घर कीन्हें घर जात है, घर छाँड़े घर जाइ ।
तुलसी घर बन बीच ही, राम-प्रेमपुर छाइ ॥२५६॥

दिए पीठि पाछे लगै, सनमुख होत पराइ।
तुलसी संपति छाँह ज्यों, लखि दिन बैठि गँवाइ ॥२५७॥
तुलसी अद्भुत देवता, आसादेवी नाम।
सेए सोक समर्पई, बिमुख भए अभिराम ॥२५८॥
सोई सेंवर तेइ सुवा, सेवत सदा बसंत।
तुलसी महिमा मोह की, सुनत सराहत संत ॥२५९॥
करत न समुझत झूठ-गुन, सुनत होत मतिरंक।
पारद प्रगट प्रपंचमय, सिद्धिहिं नाउँ कलंक ॥२६०॥
ज्ञानी, तापस, सूर, कबि, कोबिद गुनआगार।
केहि कै लोभ बिडंबना, कीन्हि न यहि संसार ॥२६१॥
श्रीमद बक्र न कीन्ह केहि, प्रभुता बधिर न काहि।
मृगनयनी के नैनसर, को अस लाग न जाहि ? ॥२६२॥
व्यापि रहेउ संसार महँ, माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट, दंभ, कपट पाखंड ॥२६३॥
तात तीन अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिज्ञान-धाम मन, करहिं निमिष महँ छोभ ॥२६४॥
लोभ के इच्छा दंभ बल, काम के केवल नारि।
क्रोध के परुष बचन बल, मुनिबर कहहिं बिचारि ॥२६५॥
काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद, मायारूपी नारि ॥२६६॥
काह न पावक जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल, केहि जग काल न खाय ॥२६७॥

जनम-पत्रिका बरति कै, देखहु मनहिं बिचारि ।
दारुन बैरी मीचु के बीच बिराजति नारि ॥२६८॥
दीपसिखा सम जुबति-तन, मनु जनि होसि पतंग ।
भजहि राम तजि काममद, करहि सदा सतसंग ॥२६९॥
काम - क्रोध - मद - लोभरत, गृहासक्त दुखरूप ।
ते किमि जानहिं रघुपतिहिं, मूढ़ परे भवकूप ॥२७०॥
ग्रहग्रहीत पुनि बातबस, तेहि पुनि बीछी मार ।
ताहि पियाई बारुनी, कहहु कौन उपचार ? ॥२७१॥
ताहि कि संपति सगुन सुभ, सपनेहु मन बिस्राम ।
भूतद्रोहरत, मोहबस, रामबिमुख, रतकाम ॥२७२॥
कहत कठिन,समुझत कठिन,साधत कठिन बिबेक ।
होइ घुनाक्षरन्याय जौं, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥२७३॥
खल प्रबोध, जगसोध, मन को निरोध, कुल सोध ।
करहिं ते फोकट पचि मरहिं, सपनेहु सुख न सुबोध ॥२७४॥

सोरठा

कोउ बिस्राम कि पाव, तात, सहज संतोष बिनु ?
चलै कि जल बिनु नाव,कोटि जतन पचि पचि मरिय ॥२७५॥
सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह माया प्रबल ।
अस बिचारि मन माहिं, भजिय महा मायापतिहि ॥२७६॥

दोहा (चातक छत्तीसी)

एक भरोसो, एक बल, एक आस बिस्वास ।
एक राम-घनस्याम हित, चातक तुलसीदास ॥२७७॥

जौं घन बरषै समय सिर, जौं भरि जनम उदास ।
तुलसी या चित-चातकहि, तऊ तिहारी आस ॥२७८॥
चातक तुलसी के मते, स्वातिहुँ पियै न पानि ।
प्रेमतृषा बाढ़ति भली, घटे घटैगी कानि ॥२७९॥
रटत रटत रसना लटी, तृषा सूखि गए अंग ।
तुलसी चातक-प्रेम को, नित नूतन रुचिरंग ॥२८०॥
चढ़त न चातक-चित कबहुँ, प्रिय पयोद के दोख ।
तुलसी प्रेमपयोधि की, तातें नाप न जोख ॥२८१॥
बरषि परुष पाहन पयद, पंख करौ टुक टूक ।
तुलसी परी न चाहिए, चतुर चातकहि चूक ॥२८२॥
उपल बरषि गरजत तरजि, डारत कुलिस कठोर ।
चितव कि चातक मेघ तजि, कबहुँ दूसरी ओर ? ॥२८३॥
पवि,पाहन,दामिनि,गरज,झरि,झकोर खरि खीझि ।
रोष न प्रीतम-दोष लखि, तुलसी, रागहि रीझि ॥२८४॥
मान राखिबो, माँगिबो, पिय सों नित नव नेहु ।
तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौं चातक मत लेहु ॥२८५॥
तुलसी चातक ही फबै, मान राखिबो प्रेम ।
बक्र बुंद लखि स्वातिहूँ, निदरि निबाहत नेम ॥२८६॥
तुलसी चातक माँगने एक, एक घन दानि ।
देत जो भूभाजन भरत, लेत जो घूँटक पानि ॥२८७॥
तीनि लोक तिहुँ काल जस, चातक ही के माथ ।
तुलसी जासु न दीनता, सुनी दूसरे नाथ ॥२८८॥

प्रीति पपीहा पयद की, प्रगट नई पहचानि ।
जाचक जगत कनाउड़ो, कियो कनौड़ो दानि ॥२८९॥
नहिं जाचत, नहिं संग्रही, सीस नाइ नहिं लेइ ।
ऐसे मानी माँगनेहि, को बारिद बिन देइ ? ॥२९०॥
को को न ज्यायो जगत में, जीवन-दायक दानि ।
भयो कनौड़ो जाचकहि, पयद प्रेम पहिचानि ॥२९१॥
साधन साँसति सब सहत, सबहिं सुखद फल लाहु ।
तुलसी चातक जलद की, रीझि-बूझि बुध काहु ॥२९२॥
चातक जीवन-दायकहि, जीवन समय सुरीति ।
तुलसी अलख न लखि परै, चातक प्रीति प्रतीति ॥२९३॥
जीव चराचर जहँ लगे, है सबको हित मेह ।
तुलसी चातक मन बस्यो, घन सों सहज सनेह ॥२९४॥
डोलत बिपुल बिहंग बन, पियत पोखरिन बारि ।
सुजस-धवल, चातक नवल ! तुही भुवन दसचारि ॥२९५॥
मुख-मीठे, मानस-मलिन, कोकिल मोर चकोर ।
सुजस-धवल, चातक नवल ! रह्यो भुवन भरि तोर ॥२९६॥
बास, बेष, बोलनि, चलनि, मानस मंजु मराल ।
तुलसी चातक-प्रेम की, कीरति बिसद बिसाल ॥२९७॥
प्रेम न परखिय परुषपन, पयद-सिखावन एह ।
जग कह चातक पातकी, ऊसर बरसै मेह ॥२९८॥
होइ न चातक पातकी, जीवनदानि न मूढ़ ।
तुलसी गति प्रहलाद की, समुझि प्रेम-पथ गूढ़ ॥२९९॥

गरज आपनी सबन को, गरज करत उर आनि ।
तुलसी चातक चतुर भो, जाचक जानि सुदानि ॥३००॥
चरग चंगुगत चातकहि, नेम प्रेम की पीर ।
तुलसी परबस हाड़ पर, परिहै पुहुमीनीर ॥३०१॥
बध्यो बधिक पस्यो पुन्यजल, उलटि उठाई चोंच ।
तुलसी चातक प्रेमपट, मरतहु लगी न खोंच ॥३०२॥
अंड फोरि कियो चेटुवा, तुष पस्यो नीर निहारि ।
गहि चंगुल चातक चतुर, डास्यो बाहिर बारि ॥३०३॥
तुलसी चातक देत सिख, सुतहि बार ही बार ।
तात न तरपन कीजिए, बिना बारिधर-धार ॥३०४॥

सोरठा

जियत न नाई नारि, चातक घन तजि दूसरहि ।
सुरसरि हू को बारि, मरत न माँगेउ अरधजल ॥३०५॥
सुन रे तुलसीदास, प्यास पपीहहि प्रेम की ।
परिहरि चारिउ मास, जो अँचवै जल स्वाति को ॥३०६॥
जाचै बारहमास, पियै पपीहा स्वातिजल ।
जान्यो तुलसीदास, जोगवत नेही मेह-मन ॥३०७॥

दोहा

तुलसी के मत चातकहि, केवल प्रेमपियास ।
पियत स्वातिजल जान जग, जाचक बारह मास ॥३०८॥
आलबाल मुकुताहलनि हिय, सनेह-तरु-मूल ।
होइ हेतु चित चातकहि, स्वाति-सलिल अनुकूल ॥३०९॥

बिबि रसना, तनु स्याम है, बंक चलनि, बिषखानि ।
तुलसी जस स्रवननि सुन्यो, सीस समरप्यो आनि ॥३१०॥
उष्णकाल अरु देह खिन, मगपंथी, तन ऊख ।
चातक बतियाँ ना रुचीं, अन जल सींचे रूख ॥३११॥
अन जल सींचे रूख की, छाया तें बरु घाम ।
तुलसी चातक बहुत हैं, यह प्रबीन को काम ॥३१२॥
एक अंग जो सनेहता, निसिदिन चातकनेह ।
तुलसी जासों हित लगै, वहि अहार, वहि देह ॥३१३॥
आपु ब्याध को रूप धरि, कुहो कुरंगहि राग ।
तुलसी जो मृगमन मुरै, परै प्रेमपट दाग ॥३१४॥
तुलसी मनि निज दुति फनिहि, ब्याधहि देउ दिखाइ ।
बिछुरत होइ न आँधरो, तातें प्रेम न जाइ ॥३१५॥
जरत तुहिन लखि बनजबन, रबि दै पीठि पराउ ।
उदय बिकस, अथवत सकुच, मिटै न सहज सुभाउ ॥३१६॥
देउ आपने हाथ जल, मीनहिं माहुर घोरि ।
तुलसी जियै जो बारि बिनु, तौ तु देहि कबि खोरि ॥३१७॥
मकर, उरग, दादुर, कमठ जलजीवन जलगेह ।
तुलसी एकै मीन को, है साँचिलो सनेह ॥३१८॥
तुलसी मिटै न मरि मिटेहु, साँचो सहज सनेह ।
मोरसिखा बिनु मूरि हू, पलुहत गरजत मेह ॥३१९॥
सुलभ प्रीति प्रीतम सबै कहत, करत सब कोइ ।
तुलसी मीन पुनीत तें, त्रिभुवन बड़ो न कोइ ॥३२०॥

तुलसी जप तप नेम ब्रत, सब सब ही तें होइ ।
लहै बड़ाई देवता, इष्टदेव जब होइ ॥३२१॥
कुदिन हितू सो हित सुदिन, हित अनहित किन होइ ।
ससिछबि हर रबिसदन तउ, मित्र कहत सब कोइ ॥३२२॥
कै लघु कै बड़ मीत भल, सम सनेह दुख सोइ ।
तुलसी ज्यों घृत मधु सरिस, मिले महाबिष होइ ॥३२३॥
मान्य मीत सों सुख चहै, सो न छुवै छलछाँह ।
ससि, त्रिसंकु, कैकेइ गति, लखि तुलसी मन माँह ॥३२४॥
कही कठिन कृत कोमलहु, हित हठि होइ सहाइ ।
पलक पानि पर ओड़िअत, समुझि कुघाइ सुघाइ ॥३२५॥
तुलसी बैर सनेह दोउ, रहित बिलोचन चारि ।
सुरा सेवरा आदरहिं, निंदहिं सुरसरि-बारि ॥३२६॥
रुचै माँगनेहि माँगिबो, तुलसी दानिहि दानु ।
आलस, अनख न आचरज, प्रेमपिहानी जानु ॥३२७॥
अमिय गारि गारेउ गरल, गारि कीन्ह करतार ।
प्रेम बैर की जननि जुग, जानहिं बुध, न गँवार ॥३२८॥
सदा न जे सुमिरत रहहिं, मिलि न कहहिं प्रिय बैन ।
तेपै तिन्हके जाहिं घर, जिनके हिये न नैन ॥३२९॥
हित पुनीत सब स्वारथहि, अरि असुद्ध बिनु चाँड़ ।
निज मुख मानिक सम दसन, भूमि परे तें हाड़ ॥३३०॥
माखी, काक, उलूक, बक, दादुर से भए लोग ।
भले ते सुख, पिक, मोर-से, कोउ न प्रेमपथ जोग ॥३३१॥

हृदय कपट, बर बेष धरि, बचन कहैं गढ़ि छोलि ।
अब के लोग मयूर ज्यों, क्यों मिलिए मन खोलि ॥३३२॥
चरन चोंच लोचन रँगौ, चलौ मराली चाल ।
छीर-नीर-बिबरन समय, बक उघरत तेहि काल ॥३३३॥
मिलै जो सरलहि सरल ह्वै, कुटिल न सहज बिहाइ ।
सो सहेतु, ज्यों बक्रगति, ब्याल न बिलै समाइ ॥३३४॥
कृसधन सखहि न देब दुख, मुएहु न माँगब नीच ।
तुलसी सज्जन की रहनि, पावक पानी बीच ॥३३५॥
संग सरल कुटिलहि भए, हरिहर करहिं निबाहु ।
ग्रह गनती गनि चतुर बिधि, कियो उदर-बिनु राहु ॥३३६॥
नीच निचाई नहिं तजै, सज्जन हू के संग ।
तुलसी चंदन-बिटप बसि, बिनु बिष भए न भुअंग ॥३३७॥
भलो भलाई पै लहै, लहै निचाई नीचु ।
सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीचु ॥३३८॥
मिथ्या माहुर सज्जनहिं, खलहिं गरल सम साँच ।
तुलसी छुवत पराइ ज्यों, पारद पावक-आँच ॥३३९॥
संत-संग अपवर्गकर, कामी भवकर पंथ ।
कहहिं साधु, कबि, कोबिद, स्रुति, पुरान, सदग्रंथ ॥३४०॥
सुकृत न सुकृती परिहरै, कपट न कपटी नीच ।
मरत सिखावन देइ चले, गीधराज मारीच ॥३४१॥
सुजन, सुतरु, बन ऊख सम, खल, टंकिका, रुखान ।
परहित अनहित लागि सब, साँसति सहत समान ॥३४२॥

पियहिं सुमनरस अलि बिटप, काटि कीर फल खात ।
तुलसी तरु जीवी जुगल, सुमति कुमति की बात ॥३४३॥
औसर कौड़ी जो चुकै, बहुरि दिए का लाख ?
दुइज न चंदा देखिए, उदौ कहा भरि पाख ॥३४४॥
ज्ञान अनभले को सबहि, भले भलेहू काउ ।
सींग, सूँड़, रद, लूम, नख, करत जीव जड़ घाउ ॥३४५॥
तुलसी जगजीवन अहित, कतहुँ कोउ हित जानि ।
सोषक भानु कृसानु महि, पवन, एक घनदानि ॥३४६॥
सुनिय सुधा देखिय गरल, सब करतूति कराल ।
जहँ तहँ काक उलूक बक, मानस सकृत मराल ॥३४७॥
जलचर, थलचर, गगनचर, देव, दनुज, नर, नाग ।
उत्तम मध्यम अधम खल, दस गुन बढ़त बिभाग ॥३४८॥
बलि मिस देखे देवता, कर मिस मानवदेव ।
मुए मार, सुबिचार हत, स्वारथ-साधन एव ॥३४९॥
सुजन कहत भल पोच पथ, पाप न परखै भेद ।
करमनास सुरसरित मिस, बिधि निषेध बद बेद ॥३५०॥
मनि भाजन मधु, पारई, पूरन अमी निहारि ।
का छाँड़िय का संग्रहिय, कहहु बिबेक बिचारि ॥३५१॥
उत्तम मध्यम नीच गति, पाहन, सिकता, पानि ।
प्रीति परिच्छा तिहुँन की; बैर बितिक्रम जानि ॥३५२॥
पुन्य, प्रीति, पति, प्रापतिउ, परमारथ-पथ पाँच ।
लहहिं सुमति, परिहरहिं खल, सुनहु सिखावन साँच ॥३५३॥

नीच निरादर ही सुखद, आदर सुखद बिसाल ।
कदली बदली बिटप गति, पेखहु पनस रसाल ॥३५४॥
तुलसी अपनो आचरन, भलो न लागत कासु ।
तेहि न बसात जो खात नित, लहसुनहू को बासु ॥३५५॥
बुध सो बिबेकी बिमलमति, जिनके रोष न राग ।
सुहृद सराहत, साधु जेहि, तुलसी ताको भाग ॥३५६॥
आपु आपु कहँ सब भलो, अपने कहँ कोइ कोइ ।
तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ॥३५७॥
तुलसी भलो सुसंग तें, पोच कुसंगति होइ ।
नाउ, किन्नरी, तीर, असि लोह बिलोकहु लोइ ॥३५८॥
गुर-संगति गुरु होइ सो, लघु-संगति लघु नाम ।
चार पदारथ में गनैं, नरकद्वार हू काम ॥३५९॥
तुलसी गुरु लघुता लहत, लघु-संगति परिनाम ।
देवी देव पुकारियत, नीच नारिनर-नाम ॥३६०॥
तुलसी किये कुसंग-थिति, होहिं दाहिने बाम ।
कहि सुनि सकुचिय सूम खल, गत हरि-संकर-नाम ॥३६१॥
बसि कुसंग चह सुजनता, ताकी आस निरास ।
तीरथहू को नाम भो, 'गया' मगह के पास ॥३६२॥
राम-कृपा तुलसी सुलभ, गंग सुसंग समान ।
जो जल परै जो जन मिलै, कीजै आपु समान ॥३६३॥
ग्रह, भेषज, जल, पवन, पट, पाइ कुजोग सुजोग ।
होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलच्छन लोग ॥३६४॥

जनम जोग तें जानियत, जग बिचित्र गति देखि ।
तुलसी आखर, अंक, रस, रंग बिभेद बिसेखि ॥३६५॥
आखर जोरि बिचार करु, सुमति अंक लिखि लेखु ।
जोग-कुजोग-सुजोग-मय, जगगति समुझि बिसेखु ॥३६६॥
करु बिचार, चलु सुपथ, भल आदि मध्य परिनाम ।
उलटे जपे 'जरा मरा', सूधे 'राजा राम' ॥३६७॥
होइ भले के अनभलो, होइ दानि के सूम ।
होइ कुपूत सुपूत के, ज्यों पावक में धूम ॥३६८॥
जड़ चेतन गुन-दोष-मय, बिस्व कीन्ह करतार ।
संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि बारि-बिकार ॥३६९॥

सोरठा

पाट कीट तें होइ, तातें पाटंबर रुचिर ।
कृमि पालै सब कोइ, परम अपावन प्रान-सम ॥३७०॥

दोहा

जो जो जेहि जेहि रसमगन, तहँ सो मुदित मन मानि ।
रसगुन-दोष बिचारिबो, रसिकरीति पहिचानि ॥३७१॥
सम प्रकास तम पाख दुहुँ, नामभेद बिधि कीन्ह ।
ससि पोषक सोषक समुझि, जग जस अपजस दीन्ह ॥३७२॥
लोक बेद हूँ लौं दगो, नाम भले को पोच ।
धरमराज जम, गाज पबि, कहत सकोच न सोच ॥३७३॥
बिरुचि परखिए सुजन जन, राखि परखिए मंद ।
बड़वानल सोखत उदधि, हरष बढ़ावत चंद ॥३७४॥

प्रभु सनमुख भए नीच नर, निपट होत बिकराल ।
रबि-रुख लखि दरपन फटिक, उगिलत ज्वालाजाल ॥३७५॥
प्रभु-समीप-गत सुजन जन, होत सुखद सुबिचारि ।
लवन-जलधि-जीवन जलद, बरषत सुधा सुबारि ॥३७६॥
नीच निरावहिं निरस तरु, तुलसी सींचहिं ऊख ।
पोषत पयद समान सब, विष पियूष के रूख ॥३७७॥
बरषि बिस्व हरषित करत, हरत ताप अघ प्यास ।
तुलसी दोष न जलद को, जो जल जरै जवास ॥३७८॥
अमरदानि, जाचक मरहिं, मरि मरि फिरि फिरि लेहिं ।
तुलसी जाचक पातकी, दातहिं दूषन देहिं ॥३७९॥
लखि गयंद लै चलत भजि, स्वान सुखानो हाड़ ।
गज-गुन, मोल, अहार, बल, महिमा जान कि राड़ ? ॥३८०॥
कै निदरहु कै आदरहु, सिंहहिं स्वान सियार ।
हरष बिषाद न केसरिहि, कुंजर-गंजनिहार ॥३८१॥
ठाढ़ो द्वार न दै सकैं, तुलसी जे नर नीच ।
निंदहिं बलि हरिचंद को, 'का कियो करन दधीच ?' ॥३८२॥
ईस-सीस बिलसत बिमल, तुलसी तरल तरंग ।
स्वान सरावग के कहे, लघुता लहै न गंग ॥३८३॥
तुलसी देवल देव को, लागे लाख करोरि ।
काक अभागे हगि भर्‍यो, महिमा भई कि थोरि ? ॥३८४॥
निज गुन घटत न नागनग, परखि परिहरत कोल ।
तुलसी प्रभु भूषन किए, गुंजा बढ़े न मोल ॥३८५॥

राकापति षोड़स उवहिं, तारागन समुदाइ ।
सकल गिरिन्ह दव लाइए, बिनु रबि राति न जाइ ॥३८६॥
भलो कहै बिन जानेहू, बिनु जाने अपवाद ।
ते नर गादुर जानि जिय, करिय न हरष बिषाद ॥३८७॥
पर-सुख-संपति देखि सुनि, जरहिं जे जड़ बिनु आगि ।
तुलसी तिनके भाल तें, चलै भलाई भागि ॥३८८॥
तुलसी जे कीरति चहहिं, पर की कीरति खोइ ।
तिन्हके मुंह मसि लागिहै, मिटिहि न मरिहैं धोइ ॥३८९॥
तनु, गुन, धन, महिमा, धरम, तेहि बिनु जेहि अभिमान ।
तुलसी जियत बिडंबना, परिनामहु गत जान ॥३९०॥
सासु, ससुर, गुर, मातु, पितु, प्रभु भयो चहै सबु कोइ ।
होनो दूजी ओर को, सुजन सराहिय सोइ ॥३९१॥
सठ सहि साँसति पति लहत, सुजन कलेस न काय ।
गढ़ि गुढ़ि पाहन पूजिए, गंडकि-सिला सुभाय ॥३९२॥
बड़े बिबुध-दरबार तें, भूमि-भूप-दरबार ।
जापक पूजक पेखियत, सहत निरादर भार ॥३९३॥
बिनु प्रपंच छल भीख भलि, लहिय न किए कलेस ।
बावन बलि सों छल कियो, दियो उचित उपदेस ॥३९४॥
भलो भले सों छल किए, जनम कनौड़ो होइ ।
श्रीपति सिर तुलसी लसति, बलि-बावनगति सोइ ॥३९५॥
बिबुध-काज बावन बलिहि छलो, भलो जिय जानि ।
प्रभुता तजि बस भे, तदपि मन की गइ न गलानि ॥३९६॥

सरल-बक्रगति पंचग्रह, चपरि न चितवत काहु ।
तुलसी सूधे सूर ससि, समय बिडंबित राहु ॥३९७॥
खल-उपकार बिकार-फल, तुलसी जान जहान ।
मेंडुक मर्कट बनिक बक, कथा सत्य-उपखान ॥३९८॥
तुलसी खल-बानी मधुर, सुनि समुझिय हिय हेरि ।
रामराज बाधक भई, मूढ़ मंथरा चेरि ॥३९९॥
जोंक सूधिमन कुटिलगति, खल बिपरीत बिचारु ।
अनहित सोनित सोष सो, सो हित सोषनहारु ॥४००॥
नीच गुडी ज्यों जानिबो, सुनि लखि तुलसीदास ।
ढीलि दिये गिरि परत महि, खैंचत चढ़त अकास ॥४०१॥
भरदर बरषत कोससत, बचे जे बूँद बराइ ।
तुलसी तेउ खल-बचन-सर, हये गए न पराइ ॥४०२॥
पेरत कोल्हू मेलि तिल, तिली सनेही जानि ।
देखि प्रीति की रीति यह, अब देखिबी रिसानि ॥४०३॥
सहबासी काचो गिलहि, पुरजन पाक-प्रबीन ।
कालछेप केहि मिलि करहिं तुलसी खग मृग मीन ॥४०४॥
जासु भरोसे सोइए, राखि गोद में सीस ।
तुलसी तासु कुचालि तें, रखवारो जगदीस ॥४०५॥
मार खोज लै सौंह करि, करि मत, लाज न त्रास ।
मुए नीच ते मीच बिनु, जे इनके बिस्वास ॥४०६॥
परद्रोही, परदार-रत, परधन, पर-अपवाद ।
ते नर पाँवर पापमय, देह धरे मनुजाद ॥४०७॥

बचन बेष क्यों जानिए, मन मलीन नर-नारि ।
सूपनखा, मृग, पूतना, दसमुख प्रमुख बिचारि ॥४०८॥
हँसनि, मिलनि, बोलनि मधुर,कटु करतब मन माँह ।
छुअत जो सकुचहि सुमति सो, तुलसी तिन्हकी छाँह ॥४०८॥
कपटसार सूची सहस, बाँधि बचन-परवास ।
कियो दुराउ चहै चातुरी, सो सठ तुलसीदास ॥४१०॥
बचन बिचार, अचार तन, मन, करतब छल छूति ।
तुलसी क्यों सुख पाइए, अंतरजामिहि धूति ? ॥४११॥
सारदूल को स्वाँग कर, कूकर की करतूति ।
तुलसी तापर चाहिए, कीरति बिजय बिभूति ॥४१२॥
बड़े पाप बाढ़े किए, छोटे किए लजात ।
तुलसी तापर सुख चहत, बिधि सों बहुत रिसात ॥४१३॥
देस-काल-करता-करम-बचन-बिचार-बिहीन ।
ते सुरतरु-तर दारिदी, सुरसरि-तीर मलीन ॥४१४॥
साहसही, कै कोपबस, किए कठिन परिपाक ।
सठ संकट-भाजन भए, हठि कुजाति कपि काक ॥४१५॥
राज करत बिनु काजही, करैं कुचालि कुसाज ।
तुलसी ते दसकंध ज्यों, जइहैं सहित समाज ॥४१६॥
राज करत बिनु काज ही, ठटहिं जे कूर कुठाट ।
तुलसी ते कुरुराज ज्यों, जइहैं बारहबाट ॥४१७॥
सभा सुजोधन की सकुनि, सुमति सराहन जोग ।
द्रोन बिदुर भीषम हरिहि, कहैं प्रपंची लोग ॥४१८॥

पांडुसुवन की सदसि तें, नीको रिपु हित जानि ।
हरि हर सम सब मानियत, मोह ज्ञान की बानि ॥४१९॥
हित पर बढ़ै बिरोध जब, अनहित पर अनुराग ।
राम-बिमुख बिधि बामगति, सगुन अघाइ अभाग ॥४२०॥
सहज सुहृद गुरु स्वामि सिख, जो न करै सिर मानि ।
सो पछिताइ अघाइ उर, अवसि होइ हितहानि ॥४२१॥
भरुहाए नट भाँट के, चपरि चढ़े संग्राम ।
कै वै भाजे आइहैं, कै बाँधे परिनाम ॥४२२॥
लोकरीति फूटी सहैं, आँजी सहै न कोइ ।
तुलसी जो आँजी सहै, सो आँधरो न होइ ॥४२३॥
आगे भल, आड़ेहु भलो, भलो न घाले घाउ ।
तुलसी सबके सीस पर, रखवारो रघुराउ ॥४२४॥
सुमति बिचारहिं, परिहरहिं, दल-सुमनहु संग्राम ।
सकुल गए, तनु बिनु भए, साखी जादौ काम ॥४२५॥
कलह न जानब छोट करि, कलह कठिन परिनाम ।
लगति अगिनि लघु नीचगृह, जरत धनिक-धन धाम ॥४२६॥
छमा रोष के दोष गुन, सुनि मनु ! मानहि सीख ।
अबिचल श्रीपति हरि भए, भूसुर लहै न भीख ॥४२७॥
कौरव पांडव जानिए, क्रोध छमा के सीम ।
पाँचहि मारि न सौ सके, सयो सँहारे भीम ॥४२८॥
बोल न मोटे मारिये, मोटी रोटी मारु ।
जीति सहस सम हारिबो, जीते हारि निहारु ॥४२९॥

जो परि पाइ मनाइए, तासों रूठि बिचारि ।
तुलसी तहाँ न जीतिये, जहँ जीतेहू हारि ॥४३०॥
जूझे तें भल बूझिबो, भली जीति तें हारि ।
डहके तें डहकाइबो भलो, जो करिअ बिचारि ॥४३१॥
जा रिपु सों हारेहु हँसी, जिते पाप परितापु ।
तासों रारि निवारिए, समय सँभारिय आपु ॥४३२॥
जो मधु मरै न मारिए, माहुर देइ सो काउ ।
जग जिति हारे परसुधर, हारि जिते रघुराउ ॥४३३॥
बैर-मूल-हर हित-बचन, प्रेममूल उपकार ।
दो 'हा' सुभ-संदोह सो, तुलसी किये बिचार ॥४३४॥
रोष न रसना खोलिए, बरु खोलिय तरवारि ।
सुनत मधुर, परिनाम हित, बोलिय बचन बिचारि ॥४३५॥
मधुर बचन कटु बोलिबो, बिनु स्रम भाग अभाग ।
कुहू कुहू कलकंठ रव, काका कररत काग ॥४३६॥
पेट न फूलत बिनु कहे, कहत न लागै ढेर ।
सुमति बिचारे बोलिए, समुझि कुफेर सुफेर ॥४३७॥
छिद्यो न तरुनि-कटाछ सर, करेउ न कठिन सनेहु ।
तुलसी तिनकी देह को, जगत कवच करि लेहु ॥४३८॥
सूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आपु ।
बिद्यमान रन पाइ रिपु, कायर करहिं प्रलापु ॥४३९॥
बचन कहे अभिमान के, पारथ पेखत सेतु ।
प्रभुतिय लूटत नीच भर, जय न, मीचु तेहि हेतु ॥४४०॥

राम लखन बिजयी भए, बनहु गरीबनिवाज ।
मुखर बालि रावन गए, घर ही सहित समाज ॥४४१॥
खग मृग मीत पुनीत किय, बनहु राम नयपाल ।
कुमति बालि दसकंठ घर, सुहृद बंधु किए काल ॥४४२॥
लखै अघाने भूख ज्यों, लखै जीति में हारि ।
तुलसी सुमति सराहिए, मग पग धरै बिचारि ॥४४३॥
लाभ समय को पालिबो, हानि समय की चूक ।
सदा बिचारहिं चारुमति, सुदिन कुदिन दिन दूक ॥४४४॥
सिंधुतरन कपि गिरिहरन, काज साइँ हित दोउ ।
तुलसी समयहि सब बड़ो, बूझत कहुँ कोउ कोउ ॥४४५॥
तुलसी मीठी अमी तें, माँगी मिलै जो मीच ।
सुधा सुधाकर समय बिनु, कालकूट तें नीच ॥४४६॥
तुलसी असमय के सखा, धीरज, धरम, बिबेक ।
साहित, साहस, सत्यब्रत, राम-भरोसो एक ॥४४७॥
समरथ कोउ न राम सों, तीय-हरन अपराधु ।
समयहि साधे काज सब, समय सराहहिं साधु ॥४४८॥
तुलसी तीरहु के चले, समय पाइबी थाह ।
धाइ न जाइ थहाइबी, सर सरिता अवगाह ॥४४९॥
तुलसी जस भवितव्यता, तैसी मिलै सहाय ।
आपु न आवै ताहि पै, ताहि तहाँ लै जाय ॥४५०॥
कै जूझिबो कै बूझिबो, दान कि काय-कलेस ।
चारि चारु परलोक-पथ, जथाजोग उपदेस ॥४५१॥

पात पात को सींचिबो, न करु सरग-तरु हेत ।
कुटिल कटुक फर फरैगो, तुलसी करत अचेत ॥४५२॥
गठिबँध तें परतीति बड़ि, जेहि सबको सब काज ।
कहब थोर समुझब बहुत, गाड़े बढ़त अनाज ॥४५३॥
अपनो ऐपन निजहथा, तिय पूजहिं निज भीति ।
फलै सकल मनकामना, तुलसी प्रीति प्रतीति ॥४५४॥
बरषत करषत आपु जल, हरषत अरघनि भानु ।
तुलसी चाहत साधु सुर, सब सनेह सनमानु ॥४५५॥
स्रुति-गुन कर-गुन, पु-जुग-मृग हय, रेवती,सखाउ ।
देहि लेहि धन धरनि धरु, गएहु न जाइहि काउ ॥४५६॥
ऊगुन पूगुन वि अज कृ म, आ भ अ मू गुनु साथ ।
हरो धरो गाड़ो दियो, धन फिरि चढ़ै न हाथ ॥४५७॥
रबि हर दिसि गुन रस नयन,मुनि प्रथमादिक बार ।
तिथि सब-काज-नसावनी, होइ, कुजोग बिचार ॥४५८॥
ससि सर नव दुइ छ दस गुन,मुनिफल बसु हर भानु ।
मेषादिक क्रम तें गनहिं, घात चंद्र जिय जानु ॥४५९॥
नकुल सुदरसन दरसनी, छेमकरी चुप चाष ।
दस दिसि देखत सगुन सुभ, पूजहिं मन अभिलाष ॥४६०॥
सुधा साधु सुरतरु सुमन, सुफल सुहावनि बात ।
तुलसी सीतापति भगति सगुन सुमंगल सात ॥४६१॥
भरत सत्रुसूदन लखन, सहित सुमिरि रघुनाथ ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलहिं सुमंगल साथ ॥४६२॥

राम लखन कौसिक सहित, सुमिरहु करहु पयान ।
लच्छिलाभ लै जगत जसु, मंगल सगुन प्रमान ।।४६३।।
अतुलित महिमा बेद की, तुलसी किए बिचार ।
जो निंदत निंदित भयो, बिदित बुद्ध अवतार ।।४६४।।
बुध किसान सर-बेद निज, मते खेत सब सींच ।
तुलसी कृषि लखि जानिबो, उत्तम, मध्यम, नीच ।।४६५।।
सहि कुबोल, साँसति सकल, अँगइ अनट अपमान ।
तुलसी धरम न परिहरिय, कहि करि गए सुजान ।।४६६।।
अनहित-भय परहित किये, पर-अनहित हितहानि ।
तुलसी चारु बिचार भल, करिय काज सुनि जानि ।।४६७।।
पुरुषारथ, पूरब करम, परमेस्वर परधान ।
तुलसी पैरत सरित ज्यों, सबहि काज अनुमान ।।४६८।।
चलब नीतिमग, रामपग नेह निबाहब नीक ।
तुलसी पहिरिय सो बसन, जो न पखारे फीक ।।४६९।।
दोहा चारु बिचारु चलु, परिहरि बाद बिबाद ।
सुकृत-सीवँ, स्वारथ-अवधि, परमारथ-मरजाद ।।४७०।।
तुलसी सो समरथ सुमति, सुकृती, साधु, सयान ।
जो बिचारि ब्यवहरइ जग, खरच लाभ अनुमान ।।४७१।।
जाइ जोग जग छेम बिनु, तुलसी के हित राखि ।
बिनु ऽपराध भृगुपति, नहुष, बेनु, बृकासुर साखि ।।४७२।।
बड़ि प्रतीति गठिबंध तें, बड़ो जोग तें छेम ।
बड़ो सुसेवक साइँ तें, बड़ो नेम तें प्रेम ।।४७३।।

सिष्य, सखा, सेवक, सचिव, सुतिय सिखावन साँच ।
सुनि समुझिय, पुनि परिहरिय पर-मन-रंजन पाँच ॥४७४॥
नारि, नगर, भोजन, सचिव, सेवक, सखा, अगार ।
सरस, परिहरे रंगरस, निरस बिषाद बिकार ॥४७५॥
तूठहिं निज रुचि काज करि, रूठहिं काज बिगारि ।
तीय, तनय, सेवक, सखा, मन के कंटक चारि ॥४७६॥
दीरघ रोगी, दारिदी, कटुबच लोलुप लोग ।
तुलसी प्रान समान तउ, होहिं निरादर-जोग ॥४७७॥
पाही खेती, लगनबट, रिनि कुब्याज, मग-खेत ।
बैर बड़े सों आपने, किये पाँच दुख हेत ॥४७८॥
धाइ लगे लोहा ललकि, खैंचि लेइ नइ नीचु ।
समरथ पापी सों बयर, जानि बिसाही मीचु ॥४७९॥
सोचिय गृही जो मोहबस, करै कर्मपथ-त्याग ।
सोचिय जती प्रपंच-रत, बिगत बिबेक बिराग ॥४८०॥
तुलसी स्वारथ सामुहो, परमारथ तनु पीठि ।
अंध कहे दुख पाइहै, डिठियारो केहि डीठि ? ॥४८१॥
बिनु आँखिन की पानहीं, पहिचानत लखि पाइ ।
चारि नयन के नारि नर, सूझत मीचु न माय ॥४८२॥
जौपै मूढ़ उपदेस के, होते जोग जहान ।
क्यों न सुजोधन बोधि कै, आए स्यामसुजान ? ॥४८३॥

सोरठा

फूलै फरै न बेंत, जदपि सुधा बरषहिं जलद ।

मूरुखहृदय न चेत, जौं गुरु मिलैं बिरंचि सिव ॥४८४॥

दोहा

रीझि आपनी बूझि पर, खीझि बिचार-बिहीन ।
ते उपदेस न मानहीं, मोह-महोदधि-मीन ॥४८५॥

अनसमुझे अनुसोचनो, अवसि समुझिए आपु ।
तुलसी आपु न समुझिए, पलपल पर परितापु ॥४८६॥

कूप खनत मंदिर जरत, आए धारि बबूर ।
बवहिं,नवहिं निज काज सिर,कुमति-सिरोमनि कूर ॥४८७॥

निडर ईस तें बीसकै, बीसबाहु-सो होइ ।
गयो गयो कहैं सुमति सब, भयो कुमति कह कोइ ॥४८८॥

जो सुनि समुझि अनीतिरत, जागत रहै जु सोइ ।
उपदेसिबो जगाइबो, तुलसी उचित न होइ ॥४८९॥

बहु सुख,बहु रुचि, बहु बचन,बहु अचार ब्यवहार ।
इन्हको भलो मनाइबो, यह अज्ञान अपार ॥४९०॥

लोगनि भलो मनाव जो, भलो होन की आस ।
करत गगन को गेंडुआ, सो सठ तुलसीदास ॥४९१॥

अपजस-जोग कि जानकी, मनिचोरी की कान्ह ?
तुलसी लोग रिझाइबो, करषि कातिबो नान्ह ॥४९२॥

तुलसी जुपै गुमान को, होतो कछू उपाउ ।
तौ कि जानिकिहि जानि जिय, परिहरते रघुराउ ? ॥४९३॥

माँगि मधुकरी खात ते, सोवत गोड़ पसारि ।
पाप-प्रतिष्ठा बढ़ि परी, तातें बाढ़ी रारि ॥४९४॥

तुलसी भेड़ी की धँसनि, जड़-जनता-सनमान ।
उपजत ही अभिमान भो, खोवत मूढ़ अपान ॥४९५॥
लही आँखि कब आँधरे, बाँझ पूत कब पाइ ।
कब कोढ़ी काया लही ?, जग बहराइच जाइ ॥४९६॥
तुलसी निरभय होत नर, सुनियत सुरपुर जाइ ।
सो गति देखियत अछत तनु, सुख संपति गति पाइ ॥४९७॥
तुलसी तोरत तीरतरु, बकहित हंस बिडारि ।
बिगत-नलिन-अलि,मलिनजल, सुरसरिहू बढ़ियारि ॥४९८॥
अधिकारी बस औसरा, भलेउ जानिबे मंद ।
सुधासदन बसु, बारहें, चउथे चउथिउ चंद ॥४९९॥
त्रिबिध एक बिधि प्रभु-अनुग,अवसर करहिं कुठाट ।
सूधे टेढ़े, सम बिषम, सब महँ बारहबाट ॥५००॥
प्रभु तें प्रभु-गन दुखद लखि, प्रजहिं सँभारै राउ ।
कर तें होत कृपान को, कठिन घोर घन घाउ ॥५०१॥
ब्यालहु तें बिकराल बड़, ब्यालफेन जिय जानु ।
वहि के खाए मरत है, वह खाए बिनु प्रानु ॥५०२॥
कारन तें कारज कठिन, होइ दोष नहिं मोर ।
कुलिस अस्थि तें, उपल तें, लोह कराल कठोर ॥५०३॥
काल बिलोकत ईस-रुख, भानु काल-अनुहारि ।
रबिहि राउ, राजहि प्रजा, बुध ब्यवहरहिं बिचारि ॥५०४॥
जथा अमल पावन पवन, पाइ कुसंग सुसंग ।
कहिय कुबास सुबास तिमि, काल महीस प्रसंग ॥५०५॥

भलेहु चलत पथ पोच भय, नृप-नियोग नय नेम ।
सुतिय सुभूपति भूषियत, लोह-सँवारित हेम ॥५०६॥
माली भानु किसान सम, नीतिनिपुन नरपाल ।
प्रजा-भागबस होहिंगे, कबहुँ कबहुँ कलिकाल ॥५०७॥
बरषत हरषत लोग सब, करषत लखै न कोइ ।
तुलसी प्रजा-सुभाग तें, भूप भानु-सो होइ ॥५०८॥
सुधा सुनाज, कुनाज फल, आम असन सम जानि ।
सुप्रभु प्रजाहित लेहिं कर, सामादिक अनुमानि ॥५०९॥
पाके, पकये बिटप-दल, उत्तम मध्यम नीच ।
फल नर लहैं, नरेस त्यों, करि बिचार मन बीच ॥५१०॥
रीझि खीझि गुरु देत सिख, सखा सुसाहिब साधु ।
तोरि खाइ फल होइ भल, तरु काटे अपराधु ॥५११॥
धरनि-धेनु चारितु चरत, प्रजा सुबच्छ पेन्हाइ ।
हाथ कछू नहिं लागिहै, किए गोड़ की गाइ ॥५१२॥
चढ़े बधूरे चंग ज्यों, ज्ञान ज्यों सोक-समाज ।
करम, धरम, सुख संपदा, त्यों जानिबे कुराज ॥५१३॥
कंटक करि करि परत गिरि, साखा सहस खजूरि ।
मरहिं कुनृप करि करि कुनय, सो कुचालि भव भूरि ॥५१४॥
काल तोपची, तुपक महि, दारू-अनय कराल ।
पाप पलीता, कठिन गुरु, गोला पुहुमीपाल ॥५१५॥
भूमि रुचिर रावन-सभा, अंगद-पद महिपाल ।
धरम राम, नय सीय बल, अचल होत सुभ काल ॥५१६॥

प्रीति-रामपद, नीतिरति, धरम प्रतीति सुभाइ ।
प्रभुहि न प्रभुता परिहरै, कबहुँ बचन मन काइ ॥५१७॥
कर के कर, मन के मनहिं, बचन बचन गुन जानि ।
भूपहिं भूलि न परिहरै, बिजय बिभूति सयानि ॥५१८॥
गोली बान सुमंत्र सर, समुझि उलटि मन देखु ।
उत्तम मध्यम नीच प्रभु, बचन बिचारि बिसेखु ॥५१६॥
सत्रु सयानो सलिल ज्यों, राख सीस रिपुनाउ ।
बूड़त लखि, पग डगत लखि, चपरि चहूँ दिसि धाउ ॥५२०॥
रैयत, राज-समाज, घर, तन धन, धरम, सुबाहु ।
शांत सुसविनन सौंपि सुख, बिलसहि नित नरनाहु ॥५२१॥
मुखिया मुख सो चाहिए, खान, पान को एक ।
पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित बिबेक ॥५२२॥
सेवक कर पद नयन-से, मुख सो साहिब होइ ।
तुलसी प्रीति कि रीति सुनि, सुकबि सराहहिं सोइ ॥५२३॥
मंत्री, गुरु अरु बैद जो, प्रिय बोलहिं भय-आस ।
राज, धरम, तन तीनि कर, होइ बेगिही नास ॥५२४॥
रसना मंत्री, दसन जन, तोष पोष निज काज ।
प्रभु-कर सेन पदादिका, बालक राज-समाज ॥५२५॥
लकड़ी डौआ करछुली, सरस काज अनुहारि ।
सुप्रभु संग्रहहिं परिहरहिं, सेवक सखा बिचारि ॥५२६॥
प्रभु समीप छोटे, बड़े, निबल, होत बलवान ।
तुलसी प्रगट बिलोकिए, कर अँगुली अनुमान ॥५२७॥

साहब तें सेवक बड़ो, जो निज धरम सुजान ।
राम बाँधि उतरे उदधि, लाँघि गए हनुमान ॥५२८॥
तुलसी भल बरतरु बढ़त, निज मूलहि अनुकूल ।
सबहि भाँति सब कहँ सुखद, दलनि-फलनि-बिनु फूल ॥५२९॥
सधन, सगुन, सधरम, सगन, सबल सुसाइँ महीप ।
तुलसी जे अभिमान बिनु ते, त्रिभुवन के दीप ॥५३०॥
तुलसी निज करतूति बिनु, मुकत जात जब कोइ ।
गयो अजामिल लोकहरि, नाम सक्यो नहिं धोइ ॥५३१॥
बड़ो गहे तें होत बड़, ज्यों बावन-कर-दंड ।
श्रीप्रभु के सँग सों बढ़ो, गयो अखिल ब्रह्मंड ॥५३२॥
तुलसी दान जो देत हैं, जल में हाथ उठाय ।
प्रतिग्राही जीवै नहीं, दाता नरकै जाय ॥५३३॥
आपन छोड़ो साथ जब, ता दिन हितू न कोइ ।
तुलसी अंबुज अंबु-बिनु, तरनि तासु रिपु होइ ॥५३४॥
उरबी परि कुलहीन होइ, ऊपर कलाप्रधान ।
तुलसी देखु कलापगति, साधन-धन पहिचान ॥५३५॥
तुलसी संगति पोच की, सुजनहिं होति मदानि ।
ज्यों हरि रूप सुताहि तें, कीन्हों गो हरिआनि ॥५३६॥
कलि-कुचालि सुभमति-हरनि, सरलै दंडै चक्र ।
तुलसी यह निहचय भई, बाढ़ि लेति नवचक्र ॥५३७॥
गोखग, खेखग, बारिखग, तीनों माहिं बिसेक ।
तुलसी पीवैं, फिरि चलैं, रहैं फिरैं सँग एक ॥५३८॥

साधन-समय, सुसिद्धि लहि, उभय मूल अनुकूल ।
तुलसी तीनिउ समय सम, ते महि मंगल-मूल ॥५३९॥
मातु-पिता-गुरु-स्वामि-सिख, सिर धरि करहिं सुभाय ।
लहेउ लाभ तिन्ह जनम कर, नतरु जनम जग जाय ॥५४०॥
अनुचित उचित बिचार तजि, जे पालहिं पितु बैन ।
ते भाजन सुख सुजस के, बसहिं अमरपति-ऐन ॥५४१॥

सोरठा

सहज अपावनि नारि, पति सेवत सुभगति लहै ।
जस गावत स्रुति चारि, अजहुँ तुलसिका हरिहि प्रिय ॥५४२॥

दोहा

सरनागत कहँ जे तजहिं, निज अनहित अनुमानि ।
ते नर पाँवर पापमय, तिनहिं बिलोकत हानि ॥५४३॥
तुलसी तृन जल-कूल को, निरबल, निपट निकाज ।
कै राखै, कै सँग चलै, बाँह गहे की लाज ॥५४४॥
रामायन-अनुहरत सिख, जग भयो भारत रीति ।
तुलसी सठ की को सुनै ? कलि-कुचालि पर प्रीति ॥५४५॥
पात पात कै सींचिबो, बरी बरी कै लोन ।
तुलसी खोटे चतुरपन, कलि डहके कहु को न ?॥५४६॥
प्रीति, सगाई, सकल गुन, बनिज, उपाय अनेक ।
कल बल छल कलिमल-मलिन, डहकत एकहि एक ॥५४७॥
दंभ सहित कलिधरम सब, छल-समेत ब्यवहार ।
स्वारथ-सहित सनेह सब, रुचि-अनुहरत अचार ॥५४८॥

चोर, चतुर, बटपार, नट, प्रभुप्रिय भँडुआ, भंड।
सब-भच्छक परमारथी, कलि सुपंथ पाखंड ॥५४९॥
असुभ बेष भूषन धरें, भच्छ अभच्छ जे खाहिं।
ते जोगी, ते सिद्ध नर, पूजित कलिजुग माहिं ॥५५०॥

सोरठा

जे अपकारी चार, तिनकर गौरव, मान्य तेइ।
मन बच करम लबार, ते बकता कलिकाल महँ ॥५५१॥

दोहा

ब्रह्म-ज्ञान बिनु नारि-नर, कहहिं न दूसरि बात।
कौड़ी लागि ते मोहबस, करहिं बिप्र-गुरु-घात ॥५५२॥
बादहिं सूद्र द्विजन सन "हम तुम तें कछु घाटि ?
जानहिं ब्रह्म सो बिप्रवर", आँखि दिखावहिं डाँटि ॥५५३॥
साखी सबदी दोहरा, कहि किहनी उपखान।
भगति निरूपहिं भगत कलि, निंदहिं बेद पुरान ॥५५४॥
स्रुति-संमत हरि-भक्तिपथ, संजुत-बिरति-बिबेक।
तेहि परिहरिहिं बिमोहबस, कल्पहिं पंथ अनेक ॥५५५॥
सकल धरम बिपरीत कलि, कल्पित कोटि कुपंथ।
पुन्य पराय पहार बन, दुरे पुरान सुभ ग्रंथ ॥५५६॥
धातुवाद, निरुपाधि बर, सदगुरु-लाभ, सुमीत।
देव-दरस कलिकाल मैं, पोथिन दुरे सभीत ॥५५७॥
सुर-सदननि तीरथ, पुरिन, निपट कुचालि कुसाज।
मनहुँ मवासे मारि कलि, राजत सहित समाज ॥५५८॥

गोंड़ गँवार नृपाल महि, यमन महा-महिपाल ।
साम न दाम न भेद कलि, केवल दंड कराल ॥५५९॥
फोरहिं सिल लोढ़ा सदन, लागे अढ़ुक पहार ।
कायर कूर कुपूत कलि, घर घर सहस डहार ॥५६०॥
प्रगट चारि पद धरम के, कलि महँ एक प्रधान ।
येन केन बिधि दीन्हें, दान करै कल्यान ॥५६१॥
कलिजुग समजुग आन नहिं, जो नर कर बिस्वास ।
गाइ रामगुन-गन बिमल, भव तर बिनहिं प्रयास ॥५६२॥
स्रवन घटहु, पुनि दृग घटहु, घटहु सकल बल देह ।
इते घटे घटिहै कहा, जो न घटै हरि-नेह ॥५६३॥
तुलसी पावस के समय, धरी कोकिलन मौन ।
अब तौ दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहै कौन ॥५६४॥
कुपथ कुतर्क कुचालि कलि, कपट दंभ पाखंड ।
दहन रामगुन-ग्राम जिमि, ईंधन अनल प्रचंड ॥५६५॥

सोरठा

कलि पाखंड-प्रचार, प्रबल पाप पाँवर पतित ।
तुलसी उभय अधार, रामनाम, सुरसरि-सलिल ॥५६६॥

दोहा

रामचंद्र-मुख-चंद्रमा, चित चकोर जब होइ ।
रामराज सब काज सुभ, समय सुहावन सोइ ॥५६७॥
बीज राम-गुनगन, नयन जल, अंकुर पुलकालि ।
सुकृती-सुतन सुखेत बर, बिलसत तुलसी सालि ॥५६८॥

तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम ।
सगुन सुमंगल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम ॥५६९॥

पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सब साहिबी, सुमिरत सीताराम ॥५७०॥

मनिमय दोहा दीप जहँ, उर-घर प्रगट प्रकास ।
तहँ न मोह भय-तम तमी, कलि कज्जली बिलास ॥५७१॥

का भाषा का संस्कृत, प्रेम चाहिए साँच ।
काम जु आवै कामरी, का लै करै कुमाच ॥५७२॥

मनि मानिक महँगे किए, सहँगे तृन जल नाज ।
तुलसी एतो जानिए, राम गरीब-नेवाज ॥५७३॥



रामाज्ञा-प्रश्न

अष्टोत्तर सत कमल फल, मुष्टी तीनि प्रमान।
सप्त सप्त तजि सेष को, राखै सब बिलगान॥
प्रथम सर्ग जो सेष रह, दूजे सप्तक होइ।
तीजे दोहा जानिए, सगुन बिचारब सोइ॥

प्रथम सर्ग

बानि बिनायकु अंब रबि, गुरु हर रमा रमेस।
सुमिरि करहु सब काज सुभ, मंगल देस बिदेस॥ १॥
गुरु सरसइ सिंधुरबदन, ससि सुरसरि सुरगाइ।
सुमिरि चलहु मग मुदित मन, होइहि सुकृत सहाइ॥ २॥
गिरा गौरि गुरु गनप हर, मंगल मंगलमूल।
सुमिरत करतल सिद्धि सब, होइ ईस अनुकूल॥ ३॥
भरत भारती रिपुदवनु, गुरु गनेस बुधवारु।
सुमिरत सुलभ सुधरम फल, बिद्या बिनय बिचारु॥ ४॥
सुरगुरु गुरु सिय राम गन, राउ गिरा उर आनि।
जो कछु करिय सो होइ सुभ, खुलहिं सुमंगल खानि॥ ५॥
सुक्र सुमिरि गुरु सारदा, गनपु लखनु हनुमानु।
करिय काज सबु साजु भल, निपटहि नीक निदानु॥ ६॥

तुलसी तुलसी राम सिय, सुमिरि लखनु हनुमान।
काजु बिचारेहु सो करहु, दिनु दिनु बड़ कल्यान ॥ ७ ॥
दसरथ राज न ईति-भय, नहिं दुख दुरित दुकाल।
प्रमुदित प्रजा प्रसन्न सब, सब सुख सदा सुकाल ॥ ८ ॥
कौसल्यापद नाइ सिरु, सुमिरि सुमित्रापाय।
करहु काज मंगल कुसल, बिधि हरि संभु सहाय ॥ ९ ॥
बिधिबस बन मृगया फिरत, दीन्ह अंध मुनि साप।
सो सुनि बिपति बिषाद बड़, प्रजहि सोकु संताप ॥ १० ॥
सुतहित बिनती कीन्हि नृप, कुलगुरु कहा उपाउ।
होइहि भल संतान सुनि, प्रमुदित कोसलराउ ॥ ११ ॥
पुत्रजागु करवाइ रिषि, राजहिं दीन्ह प्रसाद।
सकल-सुमंगल-मूल जग, भूसुर-आसिरबाद ॥ १२ ॥
रामजनम घर घर अवध, मंगल गान निसान।
सगुन सुहावन होइ सुत, मंगल-मोद-निधान ॥ १३ ॥
रामु भरतु सानुज लखन, दसरथ बालक चारि।
तुलसी सुमिरत सगुन सुभ, मंगल कहब पचारि ॥ १४ ॥
भूप भवन भाइन्ह सहित, रघुबर बाल बिनोद।
सुमिरत सब कल्यान जग, पग पग मंगल मोद ॥ १५ ॥
करनबेध, चूड़ाकरन, श्रीरघुबर-उपबीत।
समय सकल कल्यानमय, मंजुल मंगल गीत ॥ १६ ॥
भरत सत्रुसूदन लखन, सहित सुमिरि रघुनाथ।
करहु काज सुभ साज सब, मिलहि सुमंगल साथ ॥ १७ ॥

रामु लखनु कौसिक सहित, सुमिरहु करहु पयान ।
लच्छि-लाभ जय जगत जसु, मंगल सगुन प्रमान ॥ १८ ॥
मुनि मखपाल कृपाल प्रभु, चरनकमल उर आनु ।
तजहु सोच संकट मिटिहि, सत्य सगुन जिय जानु ॥ १९ ॥
हानि मीचु दारिद दुरित, आदि-अंत-गत-बीच ।
राम बिमुख अघ आपने, गए निसाचर नीच ॥ २० ॥
सिला-साप-मोचन चरन, सुमिरहु तुलसीदास ।
तजहु सोच संकट मिटिहि पूजिहि मन कै आस ॥ २१ ॥
सीय स्वयंबर समउ भल, सगुन साध सब काज ।
कीरति बिजय बिबाह बिधि, सकल सुमंगल साज ॥ २२ ॥
राजत राजसमाज महँ, राम भंजि भवचापु ।
सगुन सुहावन लाभु बड़, जय पर-सभा प्रतापु ॥ २३ ॥
लाभ मोद मंगल अवधि, सिय रघुबीर बिबाहु ।
सकल सिद्धिदायक समउ, सुभ सब काज उछाहु ॥ २४ ॥
कोसल-पालक बाल उर, सिय मेली जयमाल ।
समउ सुहावन सगुन भल, मुद मंगल सब काल ॥ २५ ॥
हरषि बिबुध बरषहिं सुमन, मंगल गान निसान ।
जय जय रबिकुल-कमल-रबि, मंगल-मोद-निधान ॥ २६ ॥
सतानंद पठए जनक, दसरथु सहित समाज ।
आए तिरहुति सगुन सुभ, भए सिद्ध सब काज ॥ २७ ॥
दसरथ पूरन परब-बिधु, उदित समय संजोग ।
जनकनगर सर कुमुदगन, तुलसी प्रमुदित लोग ॥ २८ ॥

मन मलीन मानी महिप, कोक कोकनद बृंद।
सुहृद समाज चकोर चित, प्रमुदित परमानंद ॥ २९ ॥
तेहि अवसर रावन-नगर, असगुन असुभ अपार।
होहिं हानि-भय-मरन-दुख-सूचक बारहिं बार ॥ ३० ॥
मधु माधव दसरथ जनक, मिलब राज रितुराज।
सगुन सुबन नव दल सुतरु, फूलत फलत सुकाज ॥ ३१ ॥
बिनय-पराग सुप्रेम रस, सुमन सुभग संबाद।
कुसुमित काज रसाल तरु, सगुन सुकोकिल-नाद ॥ ३२ ॥
उदित भानुकुल-भानु लखि, लुके उलूक नरेस।
गए गँवाइ गरुर पति, धनु मिस हये महेस ॥ ३३ ॥
चारि चारु दसरथ कुँवर, निरखि मुदित पुर लोगु।
कोसलेस मिथिलेस को, समउ सराहन जोगु ॥ ३४ ॥
एक बितान बिवाहि सब, सुवन सुमंगल रूप।
तुलसी सहित समाज सुख, सुकृत-सिंधु दोउ भूप ॥ ३५ ॥
दाइज भयउ अनेक बिधि, सुनि सिहाहिं दिसिपाल।
सुख संपति संतोषमय, सगुन सुमंगल-माल ॥ ३६ ॥
बर दुलहिनि सब परसपर, मुदित पाइ मनकाम।
चारु चारि जोरी निरखि, दुहुँ समाज अभिराम ॥ ३७ ॥
चारिउ कुँवर बियाहि पुर, गवने दसरथ राउ।
भए मंजु मंगल सगुन, गुरु-सुर-संभु-पसाउ ॥ ३८ ॥
पंथ परसुधर आगमनु, समय सोचु सब काहु।
राजसमाज बिषादु बड़, भयबस मिटा उछाहु ॥ ३९ ॥

रोष कलुष लोचन भ्रुकुटि, पानि परसु धनु बान ।
काल कराल बिलोकि मुनि, सबु समाज बिलखान ॥ ४० ॥
प्रभुहिं सौंपि सारंग मुनि, दीन्ह सुआसिरबाद ।
जय मंगलसूचक सगुन, राम-राम-संबाद ॥ ४१ ॥
अवध अनंद बधावनो, मंगल गान निसान ।
तुलसी तोरन कलस पुर, चँवर पताक बितान ॥ ४२ ॥
साजि सुमंगल आरती, रहस बिबस रनिवासु ।
मुदित मातु परिछन चलीं, उमगत हृदय हुलासु ॥ ४३ ॥
करहिं निछावरि आरती, उमगि उमगि अनुराग ।
बर दुलहिनि अनुरूप लखि, सखी सराहहिं भाग ॥ ४४ ॥
मुदित नगर नर नारि सब, सगुन सुमंगल मूल ।
जय धुनि मुनि सुर दुंदुभी, बाजहिं बरषहिं फूल ॥ ४५ ॥
आए कोसलपाल पुर, कुसल समाज समेत ।
समउ सुनत सुमिरत सुखद, सकल सिद्धि सुभ देत ॥ ४६ ॥
रूप सील बय बंसगुन, सम बिबाह भए चारि ।
मुदित राउ रानी सकल, सानुकूल त्रिपुरारि ॥ ४७ ॥
बिधि हरि हर अनुकूल अति, दसरथ राजहिं आजु ।
देखि सराहत सिद्ध सुर, संपति समउ समाजु ॥ ४८ ॥
सगुन प्रथम उनचास सुभ, तुलसी अति अभिरामु ।
सब प्रसन्न सुर भूमिसुर, गोगन गंगा रामु ॥ ४९ ॥

द्वितीय सर्ग

समउ राम-जुवराज कर, मंगल-मोद-निकेतु ।
सगुन सुहावन संपदा, सिद्धि सुमंगल हेतु ॥ १ ॥
सुर-माया-बस केकयी, कुसमय कीन्हि कुचालि ।
कुटिल नारि मिस होइ छलु अनभल आजु कि कालि ॥ २ ॥
कुसमय कुसगुन कोटि सम, राम सीय-बनबास ।
अनरथ अनभल-अवधि जग, जानब सरबस-नास ॥ ३ ॥
सोचत पुर परिजन सकल, बिकल राउ रनिवासु ।
छल-मलीन मन तीय मिस, बिपति बिषाद बिनासु ॥ ४ ॥
लखन-राम-सिय-बनगमनु, सकल अमंगल मूल ।
सोच पोच संताप बस, कुसमय संसय सूल ॥ ५ ॥
प्रथम बास सुरसरि-निकट, सेवा कीन्हि निषाद ।
कहब सुभासुभ सगुन फल, बिसमय हरष बिषाद ॥ ६ ॥
चले नहाइ प्रयाग प्रभु, लखन सीय रघुराज ।
तुलसी जानब सगुन फल, होइहि साधु समाज ॥ ७ ॥
सीय रामु लोने लखनु, तापस-बेष अनूप ।
तप तीरथ जप जाग हित, सगुन सुमंगल रूप ॥ ८ ॥
सीता लखन समेत प्रभु, जमुना उतरि नहाइ ।
चले सकल संकट समन, सगुन सुमंगल पाइ ॥ ९ ॥
अवध-सोक-संताप बस, बिकल सकल नर नारि ।
बाम बिधाता राम बिनु, माँगत मीचु पुकारि ॥ १० ॥

लखन सीय रघुबंसमनि, पथिक पाय उर आनि ।
चलहु अगम मग सुगम सुभ, सगुन सुमंगल खानि ॥ ११ ॥
ग्राम-नारि-नर मुदित मन, लखन राम सिय देखि ।
होइ प्रीति पहिचान बिनु, मानु बिदेस बिसेखि ॥ १२ ॥
बन मुनिगन रामहिं मिलहिं, मुदित सुकृत फल पाइ ।
सगुन सिद्ध साधक दरस, अभिमत होइ अघाइ ॥ १३ ॥
चित्रकूट पयतीर प्रभु, बसे भानुकुल-भानु ।
तुलसी तप जप जोग हित, सगुन सुमंगल जानु ॥ १४ ॥
हंसबंस-अवतंस जब, कीन्ह बास पय पास ।
तापस साधक सिद्ध मुनि, सब कहँ सगुन सुपास ॥ १५ ॥
बिटप बेलि फूलहिं फलहिं, जल थल बिमल बिसेखि ।
मुदित किरात बिहंग मृग, मंगल-मूरति देखि ॥ १६ ॥
सींचति सीय सरोज-कर, बये बिटप बट बेलि ।
समउ सुकालु किसानहित, सगुन सुमंगल केलि ॥ १७ ॥
हय हाँके फिरि दखिन दिसि, हेरि हेरि हिहिनात ।
भये निषाद बिषाद-बस, अवध सुमंतहि जात ॥ १८ ॥
सचिव सोच ब्याकुल सुनत, असगुन अवध प्रवेस ।
समाचार सुनि सोकबस, माँगी मीचु नरेस ॥ १९ ॥
राम राम कहि राम सिय, रामसरन भये राउ ।
सुमिरहु सीताराम अब, नाहिंन आन उपाउ ॥ २० ॥
रामबिरह दसरथमरनु, मुनि मन अगम सुमीचु ।
तुलसी मंगल मरन-तरु, सुचि सनेह जल सींचु ॥ २१ ॥

धीर बीर रघुबीर प्रिय, सुमिरि समीरकुमारु ।
अगम सुगम सब काज करु, करतल सिद्धि बिचारु ॥ २२ ॥
सुमिरि सत्रुसूदन-चरन, सगुन सुमंगल मानि ।
परपुर बाद-बिबाद-जय, जूझ जुआ जय जानि ॥ २३ ॥
सेवक सखा सुबंधु हित, सगुन बिचारु बिसेखि ।
भरत नामु गुनगन बिमल, सुमिरि सत्य सब लेखि ॥ २४ ॥
साहिब समरथ सीलनिधि, सेवत सुलभ सुजानु ।
राम सुमिरि सेइय सुप्रभु, सगुन कहब कल्यानु ॥ २५ ॥
सुकृत-सील-सोभा-अवधि, सीय सुमंगल-खानि ।
सुमिरि सगुन तियधरम हित, कहब सुमंगल जानि ॥ २६ ॥
ललित लखनमूरति हृदय, आनि धरे धनुबान ।
करहु काज सुभ सगुन सब, मुद मंगल कल्यान ॥ २७ ॥
रामनाम पर राम तें, प्रीति प्रतीति भरोस ।
सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुन सुमंगल कोस ॥ २८ ॥
गुरु आयसु आए भरत, निरखि नगर-नर-नारि ।
सानुज सोचत पोच बिधि, लोचन मोचत बारि ॥ २९ ॥
भूप-मरन प्रभु-बन-गवनु, सब बिधि अवध अनाथ ।
रोवत समुझि कुमातु-कृत, मींजि हाथ धुनि माथ ॥ ३० ॥
बेद-बिहित पितु-करम करि, लिये संग सब लोग ।
चले चित्रकूटहिं भरत, ब्याकुल राम-बियोग ॥ ३१ ॥
रामदरसु हिय हरषु बड़, भूपति मरन बिषादु ।
सोचत सकल समाजु सुनि, राम-भरत-संबादु ॥ ३२ ॥

मुनि सिख आसिष, पाँवरी, पाइ, नाइ पद माथ ।
चले अवध संतापबस, बिकल लोग सब साथ ॥ ३३ ॥
भरत-नेम ब्रत धरम सुभ, रामचरन-अनुरागु ।
सगुन समुझि साहस करिय, सिद्ध होइ जप जागु ॥ ३४ ॥
चित्रकूट सब दिन बसत, प्रभु सिय लखन समेत ।
रामनाम-जप जापकहि, तुलसी अभिमत देत ॥ ३५ ॥
पय पावनि, बनभूमि भलि, सैल सुहावन पीठ ।
रागिहि सीठ बिसेषि थलु, बिषय-बिरागिहि मीठ ॥ ३६ ॥
फटिक-सिला मंदाकिनी, सिय-रघुबीर-बिहारु ।
रामभगत हित सगुन सुभ, भूतल भगतिभँडारु ॥ ३७ ॥
सगुन सकल-संकट-समन, चित्रकूट चलि जाहु ।
सीता-राम-प्रसाद सुभ, लघु साधन बड़ लाहु ॥ ३८ ॥
दिये अत्रितिय जानिकिहिं, बसन बिभूषन भूरि ।
रामकृपा संतोष सुख, होहिं सकल दुख दूरि ॥ ३९ ॥
काककुचालि, बिराधबध, देह तजी सरभंग ।
हानि-मरन-सूचक सगुन, अनरथ-असुभ-प्रसंग ॥ ४० ॥
राम लखन मुनिगन मिलन, मंजुल मंगल-मूल ।
सत समाज तब होइ जब, रमा-रामु अनुकूल ॥ ४१ ॥
मिले कुंभसंभव मुनिहि, लखनु सीय रघुराजु ।
तुलसी साधु-समाज-सुख, सिद्ध दरस सुभ काजु ॥ ४२ ॥
सुनि मुनि आयसु प्रभु कियो, पंचबटी बसबासु ।
भइ महि पावनि परसि पद, भा सब भाँति सुपासु ॥ ४३ ॥

सरित सरोवर सजल सब, जलज बिपुल बहुरंग ।
समउ सुहावन सगुन सुभ, राजा प्रजा प्रसंग ॥४४॥
बिटप बेलि फूलहिं फलहिं, सीतल सुखद समीर ।
मुदित बिहँग मृग मधुप गन, बनपालक दोउ बीर ॥४५॥
मोदाकर गोदावरी, बिपिन सुखद सब काल ।
निरभय मुनि जप तप करहिं, पालक राम कृपाल ॥४६॥
भेंट गीध रघुराज सन, दुहुँ दिसि हृदय हुलासु ।
सेवक पाइ सुसाहिबहिं, साहिब पाइ सुदासु ॥४७॥
पढ़हिं पढ़ावहिं मुनितनय, आगम निगम पुरान ।
सगुन सुबिद्या लाभहित, जानब समय समान ॥४८॥
निज कर सींचति जानकी, तुलसी लाइ रसाल ।
सुभ दूती उनचास भलि, बरषा कृषी सुकाल ॥४९॥

तृतीय सर्ग

दंडकबन पावन-करन, चरन-सरोज प्रभाउ ।
ऊसर जामहिं, खल तरहिं, होइँ रंक तें राउ ॥ १ ॥
कपटरूप मन-मलिन गइ, सूपनखा प्रभु पास ।
कुसगुन कठिन कुनारि-कृत, कलह कलुष उपहास ॥ २ ॥
नाक कान बिनु बिकल भइ, बिकट कराल कुरूप ।
कुसगुन, पाउ न देब मग, पग पग कंटक कूप ॥ ३ ॥
खर दूषन देखी दुखित, चले साजि सब साज ।
अनरथ असगुन अघ असुभ, अनभल अखिल अकाज॥ ४ ॥

कटु कुठाय करटा रटहिं, फेकरहिं फेरु कुभाँति ।
नीच निसाचर मीचु-बस, अनी मोहमद माति ॥ ५ ॥
राम-रोष-पावक प्रबल, निसिचर सलभ समान ।
झरत परत जरि जरि मरत, भये भसम जगु जान ॥ ६ ॥
सीता लखन समेत प्रभु, सोहत तुलसीदास ।
हरषत सुर बरषत सुमन, सगुन सुमंगल बास ॥ ७ ॥
सुभट सहस चौदह सहित, भाइ कालबस जानि ।
सूपनखा लंकहिं चली, असुभ अमंगल-खानि ॥ ८ ॥
बसन सकल सोनित-समल, बिकट बदनु गत गात ।
रोवति रावन की सभा, तात मात, हा ! भ्रात ॥ ९ ॥
काल कि मूरति कालिका, कालराति बिकराल ।
बिनु पहिचाने लंकपति, सभा सभय तेहि काल ॥१०॥
सूपनखा सब भाँति गत, असुभ अमंगल-मूल ।
समय साढ़साती सरिस, नृपहिं प्रजहिं प्रतिकूल ॥११॥
बरबस गवनत रावनहिं, असगुन भए अपार ।
नीचु गनत नहिं मीचुबस, मिलि मारीच बिचार ॥१२॥
इत रावन, उत राम-कर, मीचु जानि मारीच ।
कपट कनक-मृग-बेष तब, कीन्ह निसाचर नीच ॥१३॥
पंचबटी बट बिटपतर, सीता लखन समेत ।
सोहत तुलसीदास प्रभु, सकल सुमंगल देत ॥१४॥
मायामृग पहिचानि प्रभु, चले सीयरुचि जानि ।
बंचक चोर प्रपंचकृत, सगुन कहब हितहानि ॥१५॥

सीयहरन अवसर सगुन, भय संसय संताप ।
नारि काजहित निपट गत, प्रगट पराभव पाप ॥१६॥
गीधराज रावन समर, घायल बीर बिराज ।
सूर सुजसु संग्राम महि, मरनु सुसाहिब काज ॥१७॥
राम लखनु बन बन बिकल, फिरत सीय सुधि लेत ।
सूचत सगुन बिषादु बड़, असुभ अरिष्ट अचेत ॥१८॥
रघुबर बिकल बिहंग लखि, सो बिलोकि दोउ बीर ।
सिय सुधि कहि 'सिय राम' कहि, तजी देह मतिधीर ॥१९॥
दसरथ तें दसगुन भगति, सहित तासु करि काज ।
सोचत बंधुसमेत प्रभु, कृपासिंधु रघुराज ॥२०॥
तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम ।
सगुन सुमंगल सुभ सदा, आदि मध्य परिनाम ॥२१॥
सकल काज सुभ समउ भल, सगुन सुमंगल जानु ।
कीरति बिजय बिभूति भलि, हिय हनुमानहिं आनु ॥२२॥
सुमिरि सत्रुसूदन चरन, चलहु करहु सब काज ।
सत्रु-पराजय निज बिजय, सगुन सुमंगल साज ॥२३॥
भरत नाम सुमिरत मिटहिं, कपट कलेस कुचालि ।
नीति प्रीति परतीति हित, सगुन सुमंगल सालि ॥२४॥
रामनामु कलि कामतरु, सकल सुमंगल-कंद ।
सुमिरत करतल सिद्धि जग, पग-पग परमानंद ॥२५॥
सीताचरन प्रनामु करि, सुमिरि सुनामु सनेम ।
सुतिय होहिं पतिदेवता, प्राननाथ प्रिय प्रेम ॥२६॥

लखन ललित मूरति मधुर, सुमिरहु सहित सनेह ।
सुख संपति कीरति बिजय, सगुन सुमंगल गेह ॥२७॥
तुलसी तुलसी मंजरी, मंगल मंजुल मूल ।
देखत सुमिरत सगुन सुभ, कलपलता फल फूल ॥२८॥
खलबल अंध कबंध बस, परे सुबंधु समेत ।
सगुन सोच संकट कहब, भूत प्रेत दुख देत ॥२९॥
पाई नीच सुमीचु भलि, मिटा महामुनि सापु ।
बिहँगमरनु, सिय सोचु मन, सगुन सभय संतापु ॥३०॥
कहि सबरी सब सीय सुधि, प्रभु सराहि फल खात ।
सोच समय संतोष सुनि, सगुन सुमंगल बात ॥३१॥
पवनसुवन सन भेंट भइ, भूमिसुता सुधि पाइ ।
सोचबिमोचन सगुन सुभ, मिला सुसेवक आइ ॥३२॥
राम लखन हनुमान मन, दुहुँ दिसि परम उछाहु ।
मिला सुसाहिब सेवकहि, प्रभुहि सुसेवक लाहु ॥३३॥
कीन्ह सखा सुग्रीव प्रभु, दीन्हि बाहँ रघुबीर ।
सुभ सनेह हित सगुन फलु, मिटइ सोच भयभीर ॥३४॥
बली बालि बलसालि दलि, सखा कीन्ह कपिराज ।
तुलसी राम कृपालु को, बिरद गरीबनेवाज ॥३५॥
बंधुबिरोध न कुसल कुल, कुसगुन कोटि कुचालि ।
रावनरबि को राहु सो, भयो कालबस बालि ॥३६॥
कीन्ह बास बरषा निरखि, गिरिबर सानुज रामु ।
काजु बिलंबित सगुन फलु, होइहि भल परिनामु ॥३७॥

सीय-सोध कपि भालु सब, बिदा किये कपिनाथ।
जतन करहु आलसु तजहु, नाइ रामपद माथ ॥३८॥
हनूमान हिय हरषि तब, राम जोहारे जाइ।
मंगलमूरति मारुतिहि, सादर लीन्ह बुलाइ ॥३९॥
डाँटे बानर भालु सब, अवधि गये बिन काज।
जो आइहि सो कालबस, कोपि कहा कपिराज ॥४०॥
जान-सिरोमनि जानि जिय, कपि बल-बुद्धि-निधानु।
दीन्हि मुद्रिका मुदित प्रभु, पाइ मुदित हनुमानु ॥४१॥
तुलसी करतल सिद्धि सब, सगुन सुमंगल साजु।
करि प्रनाम रामहिं चलहु, साहस सिद्ध सुकाजु ॥४२॥
नाथ हाथ माथे धरेउ, प्रभु-मुँदरी मुहँ मेलि।
चलेउ सुमिरि सारंगधर, आनिहि सिद्धि सकेलि ॥४३॥
संग नील नल कुमुद गद, जामवंतु जुवराजु।
चले रामपद नाइ सिर, सगुन सुमंगल साजु ॥४४॥
पैठि बिवर मिलि तापसिहि, अँचइ पानि, फलु खाइ।
सगुन सिद्ध साधक दरस, अभिमत होइ अघाइ ॥४५॥
बनचर बिकल बिषाद-बस, देखि उदधि अवगाह।
असमंजस बड़ सगुन गत, बिधिबस होइ निबाह ॥४६॥
सब सभीत संपाति लखि, हहरे हृदय हरास।
कहत परस्पर गीध-गति, परिहरि जीवन-आस ॥४७॥
नव तनु पाइ देखाइ प्रभु, महिमा कथा सुनाइ।
धरहु धीर साहसु करहु, मुदित सीय-सुधि पाइ ॥४८॥

तुलसी रामप्रभाउ कहि, मुदित चले संपाति ।
सुभ तीसर उनचास भल, सगुन सुमंगल पाँति ॥४६॥

चतुर्थ सर्ग

रामजनम सुभ सगुन भल, सकल सुकृत सुखसारु ।
पुत्रलाभ कल्यानु बड़, मंगलचारु बिचारु ॥ १ ॥
दसरथ कुलगुरु की कृपा, सुतहित जाग कराइ ।
पायस पाइ बिभाग करि, रानिन्ह दीन्ह बुलाइ ॥ २ ॥
सब सगरभ सोहहिं सदन, सकल सुमंगलखानि ।
तेज प्रताप प्रसन्नता, रूप न जाहिं बखानि ॥ ३ ॥
देखि सुहावन सपन सुभ, सगुन सुमंगल पाइ ।
कहहिं भूप सन मुदित मन, हरषु न हृदय समाइ ॥ ४ ॥
सपन सगुन सुनि राउ कह, कुलगुरु-आसिरबाद ।
पूजिहि सब मनकामना, संकर गौरिप्रसाद ॥ ५ ॥
मास पाख तिथि जोग सुभ, नखत लगन ग्रह बार ।
सकल सुमंगल मूल जग, राम लीन्ह अवतार ॥ ६ ॥
भरतु लखनु रिपुदवनु सब, सुवन सुमंगल मूल ।
प्रगट भये नृप सुकृतफल, तुलसी बिधि अनुकूल ॥ ७ ॥
घर घर अवध बधावने, मुदित नगर-नर-नारि ।
बरषि सुमन हरषहिं बिबुध,बिधि त्रिपुरारि मुरारि ॥ ८ ॥
मंगलगान निसान नभ, नगर मुदित नरनारि ।
भूप-सुकृत-सुरतरु निरखि, फरे चा फल चारि ॥ ९ ॥

पुत्रकाज कल्यान नृप, दिये दान बहु भाँति ।
रहस बिबस दिनरास सब, मुद मंगल दिन-राति ॥१०॥
अनुदिन अवध बधावने, नित नव मंगल मोद ।
मुदित मातु पितु लोग लखि, रघुबर बालबिनोद ॥११॥
करनबेध चूड़ाकरन, लौकिक बैदिक काज ।
गुरु-आयसु भूपति करत, मंगल साज समाज ॥१२॥
राज-अजिर राजत रुचिर, कोसलपालक बाल ।
जानु-पानि-चर चरित बर, सगुन सुमंगल माल ॥१३॥
लहैं मातु पितु भागबस, सुत जग जलधि ललाम ।
पुत्र-लाभ-हित सगुन सुभ, तुलसी सुमिरहु राम ॥१४॥
बाल-बिभूषन बसन धर, धूरि-धूसरित अंग ।
बालकेलि रघुबर करत, बालबंधु सब संग ॥१५॥
राम भरत लछिमन ललित, सत्रुसमन सुभ नाम ।
सुमिरत दसरथसुवन सब, पूजिहिं सब मनकाम ॥१६॥
नाम ललित, लीला ललित, ललित रूप रघुनाथ ।
ललित बसन, भूषन ललित, ललित अनुज-सिसुसाथ ॥१७॥
सुदिन साधि मंगल किये, दिये भूप ब्रतबंध ।
अवध बधाव बिलोकि सुर, बरषत सुमन सुगंध ॥१८॥
भूपति भूसुर भाट नट, जाचक पुर-नर-नारि ।
दिये दान सनमानि सब, पूजे कुल-अनुहारि ॥१९॥
सखी सुआसिनि बिप्रतिय, सनमानी सब राय ।
ईस मनाय असीस सुभ, देहिं सनेह सुभाय ॥२०॥

रामकाज कल्यान सब, सगुन सुमंगल मूल ।
चिरजीवहु तुलसीस सब, कहि सुर बरषहिं फूल ॥२१॥
रामजनम सुभकाज सब, कहत देवरिषि आइ ।
सुनि सुनि मन हनुमान के, प्रेम उमँग न अमाइ ॥२२॥
भरतु स्यामतन राम सम, सब गुन रूपनिधान ।
सेवक सुखदायक सुलभ, सुमिरत सब कल्यान ॥२३॥
ललित लाहु लोने लखनु, लोयन-लाहु निहारि ।
सुत ललाम लालहु ललित, लेहु ललकि फल चारि ॥२४॥
मंगलमूरति मोदनिधि, मधुर मनोहर बेष ।
राम-अनुग्रह पुत्रफल, होइहि सगुन बिसेष ॥२५॥
सोधत मख महि जनकपुर, सीय सुमंगलखानि ।
भूपति पुन्य-पयोधि जनु, रमा प्रगट भइ आनि ॥२६॥
नाम सत्रुसूदन सुभग, सुखमा-सील-निकेत ।
सेवत सुमिरत सुलभ सुख, सकल सुमंगल देत ॥२७॥
बालक कोसलपाल के, सेवकपाल कृपाल ।
तुलसी मनमानस बसत, मंगल मंजु मराल ॥२८॥
जनकनंदिनी जनकपुर, जब तें प्रगटीं आइ ।
तब तें सब सुख संपदा, अधिक अधिक अधिकाइ ॥२९॥
सीय स्वयंबर जनकपुर, सुनि सुनि सकल नरेस ।
आए साज समाज सजि, भूषन बसन सुदेस ॥३०॥
चले मुदित कौसिक अवध, सगुन सुमंगल साथ ।
आए मुनि सनमानि गृह, आने कोसलनाथ ॥३१॥

सादर सोरह भाँति नृप, पूजि पहुनई कीन्हि ।
बिनय बड़ाई देखि मुनि, अमित आसिष दीन्हि ॥३२॥
मुनि माँगे दसरथ दिये, रामु लखनु दोउ भाइ ।
पाइ सगुन फल सुकृत-फल, प्रमुदित चले लेवाइ ॥३३॥
स्यामल गौर किसोर बर, धरे तून धनुबान ।
सोहत कौसिक सहित मग, मुद मंगल कल्यान ॥३४॥
सैल सरित सर बाग बन, मृग बिहंग बहुरंग ।
तुलसी देखत जात प्रभु, मुदित गाधिसुत संग ॥३५॥
लेत बिलोचन-लाहु सब, बड़भागी मगलोग ।
रामकृपा दरसनु सुगम, अगम जाग जप जोग ॥३६॥
जलदछाँह मृदु मग अवनि, सुखद पवन अनुकूल ।
हरषत बिबुध बिलोकि प्रभु, बरषत सुरतरु फूल ॥३७॥
दले मलिन खल, राखि मख, मुनि सिष आसिष दीन्हि ।
बिद्या बिस्वामित्र सब, सुथल समरपित कीन्हि ॥३८॥
अभय किए मुनि राखि मखु, धरे बान धनु भाथ ।
धनु मख कौतुक जनकपुर, चले गाधिसुत साथ ॥३९॥
गौतमतिय-तारन चरन - कमल आनि उर देखु ।
सकल सुमंगल सिद्धि सब, करतल सगुन बिसेखु ॥४०॥
जनक पाइ प्रिय पाहुने, पूजे पूजन जोगु ।
बालक कोसलपाल के, देखि मगन पुरलोगु ॥४१॥
सनमाने आने सदन, पूजे अति अनुराग ।
तुलसी मंगल सगुन सुभ, भूरि भलाई भाग ॥४२॥

कौसिक देखन धनुष मख, चले संग दोउ भाइ ।
कुँवर निरखि पुर नारि-नर, मुदित नयनफल पाइ ॥४३॥
भूपसभा भवचाप दलि, राजत राजकिसोर ।
सिद्धि सुमंगल सगुन सुभ, जय जय जय सब ओर ॥४४॥
जयमय मंजुल माल उर, मंगलमूरति देखि ।
गान निसान प्रसून झरि, मंगल मोद बिसेखि ॥४५॥
समाचार सुनि अवधपति, आए सहित समाज ।
प्रीति परस्पर मिलत मुद, सगुन सुमंगल साज ॥४६॥
गान निसान बितान बर, बिरचे बिबिध बिधान ।
चारि बिवाह उछाह बड़, कुसल काज कल्यान ॥४७॥
दाइज पाइ अनेक बिधि, सुत सुतबधुन समेत ।
अवधनाथु आए अवध, सकल सुमंगल लेत ॥४८॥
चौथ चारु उनचास पुर, घर घर मंगलचार ।
तुलसिहि सब दिन दाहिने, दसरथ राजकुमार ॥४९॥

पंचम सर्ग

रामनाम कलि कामतरु, रामभगति सुरधेनु ।
सगुन सुमंगल मूल जग, गुरु-पद-पंकज-रेनु ॥ १ ॥
जलधि-पार मानस अगम, रावन-पालित लंक ।
सोच बिकल कपि भालु सब, दुहुँ दिसि संकट संक ॥ २ ॥
जामवंत हनुमंत बलु, कहा पचारि पचारि ।
राम सुमिरि साहसु करिय, मानिय हिये न हारि ॥३॥

रामकाज लगि जनमु जग, सुनि हरषे हनुमान ।
होइ पुत्र फलु सगुन सुभ, राम भगतु बलवान ॥ ४ ॥
कहत उछाहु बड़ाइ कपि, साथी सकल प्रबोधि ।
लागत रामप्रसाद मोहिं, गोपद सरिस पयोधि ॥ ५ ॥
राखि तोषि सबु साथ सुभ, सगुन सुमंगल पाइ ।
कूदि कुधर चढ़ि आनि उर, सीय सहित दोउ भाइ ॥ ६ ॥
हरषि सुमन बरषत बिबुध, सगुन सुमंगल होत ।
तुलसी प्रभु लंघेउ जलधि, प्रभुप्रताप करि पोत ॥ ७ ॥
राहुमातु माया-मलिन, मारी मारुतपूत ।
समय सगुन मारग मिलहिं, छल मलीन खल धूत ॥ ८ ॥
पूजा पाइ मिनाक पहिं, सुरसा कपि सबादु ।
मारग अगम सहाय सुभ, होइहि रामप्रसादु ॥ ९ ॥
लंका लोलुप लंकिनी, काली काल कराल ।
काल करालहि दीन्हि बलि, कालरूप कपिकाल ॥१०॥
मसकरूप दसकंधपुर, निसि कपि घर घर देखि ।
सीय बिलोकि असोक तर, हरष बिषाद बिसेखि ॥११॥
फरकत मंगल अंग सिय, बाम बिलोचन बाहु ।
त्रिजटा सुनि कह सगुन फल, प्रिय सँदेस बड़ लाहु ॥१२॥
सगुन समुझि त्रिजटा कहति, सुनु, सिय अबहीं आजु ।
मिलिहि रामसेवक कहिहि, कुसल लखनु रघुराजु ॥१३॥
तुलसी प्रभु गुनगन बरनि, आपनि बात जनाइ ।
कुसल खेम सुग्रीवपुर, रामु लखनु दोउ भाइ ॥१४॥

सुरुख जानकी जानि कपि, कहे सकल संकेत ।
दीन्हि मुद्रिका, लीन्हि सिय, प्रीति प्रतीति समेत ॥१५॥
पाइ नाथ कर मुद्रिका, सियहिय हरष बिषादु ।
प्राननाथ प्रिय सेवकहि, दीन्ह सुआसिरबादु ॥१६॥
नाथ-सपथ पन रोपि कपि, कहत चरन सिरु नाइ ।
नहिं बिलंब, जगदंब ! अब, आइ गये दोउ भाइ ॥१७॥
समाचार कहि सुनत प्रभु, सानुज सहित सहाय ।
आए अब रघुबंसमनि, सोचु परिहरिय माय ॥१८॥
गए सोच संकट सकल, भए सुदिन जिय जानु ।
कौतुक सागर सेतु करि, आये कृपानिधानु ॥१९॥
सकुल सदल जमराजपुर, चलन चहत दसकंधु ।
काल न देखत कालबस, बीस-बिलोचन-अंधु ॥२०॥
आसिष आयसु पाइ कपि, सीयचरनु सिर नाइ ।
तुलसी रावन-बाग-फल, खात बराइ बराइ ॥२१॥
सूर-सिरोमनि साहसी, सुमति समीरकुमार ।
सुमिरत सब सुख संपदा, मुद-मंगल-दातार ॥२२॥
सत्रुसमन पद-पंकरुह, सुमिरि करहु सब काज ।
कुसल खेम कल्यान सुभ, सगुन सुमंगल साज ॥२३॥
भरत भलाई की अवधि, सील सनेह निधान ।
धरम भगति भायप समय, सगुन कहब कल्यान ॥२४॥
सेवकपाल कृपालचित, रबिकुल-कैरवचंद ।
सुमिरि करहु सब काज सुभ, पग पग परमानंद ॥२५॥

सियपद सुमिरि सुतीय हित, सगुन सुमंगल जान।
स्वामि सोहागिल, भाग बड़, पुत्रकाजु कल्यान ॥२६॥
लखिमन पदपंकज सुमिरि, सगुन सुमंगल पाइ।
जय बिभूति कीरति कुसल, अभिमत लाभु अघाइ ॥२७॥
तुलसी कानन कमलवन, सकल सुमंगल वास।
राम-भगति-हित सगुन सुभ, सुमिरत तुलसीदास ॥२८॥
रूख निपातत, खात फल, रच्छक अच्छ निपाति।
कालरूप बिकराल कपि, सभय निसाचर जाति ॥२९॥
बनु उजारि जारेउ नगर, कूदि कूदि कपिनाथ।
हाहाकार पुकार सब, आरत मारत माथ ॥३०॥
पूँछ बुताइ प्रबोधि सिय, आइ गहे प्रभु पाय।
खेम कुसल जय जानकी, जय जय जय रघुराय ॥३१॥
सुनि प्रमुदित रघुबंसमनि, सानुज सेन समेत।
चले सकल मंगल सगुन, बिजय सिद्धि कहि देत ॥३२॥
रामपयान निसान नभ, बाजहिं गाजहिं बीर।
सगुन सुमंगल समर जय, कीरति कुसल सरीर ॥३३॥
कृपासिंधु प्रभु सिंधु सन, माँगेउ पंथु न देत।
बिनय न मानहिं जीव जड़, डाटे नवहिं अचेत ॥३४॥
लाभु लाभु लोवा कहत, छेमकरी कह छेम।
चलत बिभीषन सगुन सुनि, तुलसी पुलकत पेम ॥३५॥
पाहि पाहि असरन-सरन, प्रनतपाल रघुराज।
दियो तिलक लंकेसु कहि, राम गरीबनेवाज ॥३६॥

लंक असुभ चरचा चलति, हाट, बाट, घर, घाट ।
रावन सहित समाज अब, जाइहि बारह बाट ॥३७॥
ऊकपात, दिकदाह दिन, फेकरहिं स्वान सियार ।
उदित केतु, गतहेतु महि, कंपति बारहिं बार ॥३८॥
रामकृपा कपि भालु करि, कौतुक सागर सेतु ।
चले पार बरषत बिबुध, सुमन सुमंगल हेतु ॥३९॥
नीच निसाचर मीचु-बस, चले साजि चतुरंग ।
प्रभु-प्रताप पावक प्रबल, उड़ि उड़ि परत पतंग ॥४०॥
साजि साजि बाहन चलहिं, जातुधानु बलवानु ।
असगुन असुभ न गनहिं गत, आइ कालु नियरानु ॥४१॥
लरत भालु कपि सुभट सब, निदरि निसाचर घोर ।
सिर पर समरथ राम सो, साहिब, तुलसी तोर ॥४२॥
मेघनादु, अतिकाय भट, परे महोदर खेत ।
रावन भाइ जगाइ तब, कहा प्रसंगु अचेत ॥४३॥
उठि बिसाल बिकराल बड़, कुंभकरनु जमुहान ।
लखि सुदेस कपि भालु दल, जनु दुकाल समुहान ॥४४॥
राम स्याम बारिद सघन, बसन सुदामिनि माल ।
बरषत सर हरषत बिबुध, दला दुकालु दयाल ॥४५॥
राम रावनहिं परसपर, होत रारि रन घोर ।
लरत पचारि पचारि भट, समर सोर दुहुँ ओर ॥४६॥
बीस बाहु, दससीस दलि, खंड खंड तनु कीन्ह ।
सुभट सिरोमनि लंकपति, पाछे पाउ न दीन्ह ॥४७॥

बिबुध बजावत दुंदुभी, हरषत बरषत फूल।
राम बिराजत जीति रन, सुर सेवक अनुकूल ॥४८॥
लंका थापि बिभीषनहिं, बिबुध बसाइ सुबास।
तुलसी जय मंगल कुसल, सुभ पंचम उनचास ॥४९॥

षष्ठ सर्ग

रघुबर-आयसु अमरपति, अमिय सींचि कपि भालु।
सकल जिआये सगुन सुभ, सुमिरहु राम कृपालु ॥ १ ॥
सादर आनी जानकी, हनूमान प्रभु पास।
प्रीति परस्पर समउ सुभ, सगुन सुमंगल बास ॥ २ ॥
सीता-सपथ प्रसंग सुभ, सीतल भयउ कृसानु।
नेम प्रेम ब्रत धरम हित, सगुन सुहावनु जानु ॥ ३ ॥
सनमाने कपि भालु सब, सादर साजि बिमानु।
सीय सहित, सानुज, सदल, चले भानुकुल-भानु ॥ ४ ॥
हरषत सुर, बरषत सुमन, सगुन सुमंगल गान।
अवधनाथु गवने अवध, खेम कुसल कल्यान ॥ ५ ॥
सिंधु, सरोवर, सरित, गिरि, कानन, भूमिबिभाग।
राम दिखावत जानकिहिं, उमगि उमगि अनुराग ॥ ६ ॥
तुलसी मंगल सगुन सुभ, करत जोरि जुग हाथ।
हंस-बंस-अवतंस जय, जय जय जानकिनाथ ॥ ७ ॥
अवध अनंदित लोग सब, ब्योम बिलोकि बिमानु।
मनहुँ कोकनद कोक मन, मुदित उदित लखि भानु ॥ ८ ॥

मिले गुरुहि, जन, परिजनहिं, भेंटत भरत सप्रीति ।
लखनु राम सिय कुसल पुर, आए रिपु रन जीति ॥ ९ ॥
उदबस अवध अनाथ सब, अबदसा दुख देखि ।
राम लखनु सीता सकल, बिकल बिषाद बिसेखि ॥१०॥
मिलीं मातु, हित, मीत, गुरु, सनमाने सब लोग ।
सगुन समय बिसमय हरष, प्रिय संयोग बियोग ॥११॥
अमर अनंदित, मुनि मुदित, मुदित भुवन दसचारि ।
घर घर अवध बधावने, मुदित नगर-नर-नारि ॥१२॥
सुदिन सोधि गुरु बेदबिधि, कियो राज-अभिषेक ।
सगुन सुमंगल सिद्धि सब, दायक दोहा एक ॥१३॥
भाँति भाँति उपहार लेइ, मिलत जुहारत भूप ।
पहिराए सनमानि सब, तुलसी सगुन अनूप ॥१४॥
जयधुनि गान निसान सुर, बरषत सुरतरु फूल ।
भये रामु राजा अवध, सगुन सुमंगल मूल ॥१५॥
भालु, बिभीषन कीसपति, पूजे सहित समाज ।
भली भाँति सनमानि सब, बिदा किये रघुराज ॥१६॥
रामराज सतोष सुख, घर, बन सकल सुपास ।
तरु सुरतरु, सुरधेनु महि, अभिमत भोग बिलास ॥१७॥
रामराज सब काज कहँ, नीक एक ही आँक ।
सकल सगुन मंगल कुसल, होइहि बारु न बाँक ॥१८॥
कुंभकरन रावन सरिस, मेघनाद-से बीर ।
ढहे समूल बिसाल तरु, कालनदी के तीर ॥१९॥

सकुल सदल रावन-सरिस, कवलित काल कराल।
सोच पोच असगुन असुभ, जाय जीव जंजाल ॥२०॥
अबिचल राज बिभीषनहिं, दीन्ह राज रघुराज।
अजहुँ बिराजत लंक पर, तुलसी सहित समाज ॥२१॥
मंजुल मंगल मोदमय, मूरति मारुतपूत।
सकल सिद्धि कर-कमल-तल, सुमिरत रघुबर-दूत ॥२२॥
सगुन समय सुमिरत सुखद, भरत आचरनु चारु।
स्वामिधरम ब्रत पेम हित, नेम निबाहनिहारु ॥२३॥
ललित लखन-लघु बंधु पद, सुखद सगुन सब काहु।
सुमिरत सुभ कीरति बिजय, भूमि ग्राम गृह लाहु ॥२४॥
रामचंद्र-मुख-चंद्रमा, चित चकोर जब होइ।
रामराज सब काज सुभ, समउ सुहावन सोइ ॥२५॥
भूमिनंदनी-पद-पदुम, सुमिरत सुभ सब काज।
बरषा भलि, खेती सुफल, प्रमुदित प्रजा सुराज ॥२६॥
सेवक, सखा, सुबंधु हित, नाइ लखनुपद माथु।
कीजिय प्रीति प्रतीति सुभ, सगुन सुमंगल साथु ॥२७॥
रामनाम रति नाम गति, राम नाम बिस्वास।
सुमिरत सुभ मंगल कुसल, तुलसी तुलसीदास ॥२८॥
बिप्र एक बालक मृतक, राखेउ रामदुआर।
दंपति बिलपत सोक अति, आरत करत पुकार ॥२९॥
राम सोच संकोच सब, सचिव बिकल संताप।
बालक-मीचु अकाल भइ, रामराज केहि पाप ॥३०॥

बिबुध बिमल बानी गगन, हेतु प्रजा अपचारु ।
रामराज परिनाम भल, कीजिय बेगि बिचारु ॥३१॥
कोसलपाल कृपालु चित, बालक दीन्ह जिआइ ।
सगुन कुसल कल्यान सुभ, रोगी उठै नहाइ ॥३२॥
बालकु जिया बिलोकि सब, कहत उठा जनु सोइ ।
सोच-बिमोचन सगुन सुभ, रामकृपा भल होइ ॥३३॥
सिला सुतिय भइ, गिरि तरे, मृतक जिये जग जान ।
राम-अनुग्रह सगुन सुभ, सुलभ सकल कल्यान ॥३४॥
केवट निसिचर बिहँग मृग, किये साधु सनमानि ।
तुलसी रघुबर की कृपा, सगुन सुमंगलखानि ॥३५॥
रामराज राजत सकल, धरम-निरत नरनारि ।
राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि ॥३६॥
बग उलूक झगरत गये, अवध जहाँ रघुराउ ।
नीक सगुन, बिबरिहि झगर, होइहि धरम निआउ ॥३७॥
जती-स्वान संवाद सुनि, सगुन कहब जिय जानि ।
हंस-बंस-अवतंस-पुर, बिलग होत पय पानि ॥३८॥
राम कुचरचा करहिं सब, सीतहिं लाइ कलंक ।
सदा अभागी लोग जग, कहत सकोचु न संक ॥३९॥
सती-सिरोमनि सीय तजि, राखि लोगरुचि राम ।
सहे दुसह दुख सगुन गत, प्रियबियोगु परिनाम ॥४०॥
बरन-धरम आस्रम-धरम निरत, सुखी सब लोग ।
रामराज मंगल सगुन, सुफल, जाग जप जोग ॥४१॥

बाजिमेध अगनित किए, दिए दान बहु भाँति ।
तुलसी राजा राम जग, सगुन सुमंगल पाँति ॥४२॥
असमंजसु बड़ सगुन गत, सीता-राम-बियोग ।
गवन बिदेस, कलेस कलि, हानि, पराभव, रोग ॥४३॥
मानिय सिय अपराध बिनु, प्रभु परिहरि पछतात ।
रुचै समाज न राजसुख, मन मलीन, कुस गात ॥४४॥
पुत्र-लाभ, लव-कुस-जनम, सगुन सुहावन होइ ।
समाचार मंगल कुसल, सुखद सुनावइ कोइ ॥४५॥
रामसभा लव-कुस ललित, किए राम-गुन-गान ।
राज-समागम सगुन सुभ, सुजस लाभ सनमान ॥४६॥
बालमीकि लव-कुस सहित, आनी सिय सुनि राम ।
हृदय हरषु जानब प्रथम, सगुन सोक परिनाम ॥४७॥
अनरथ असगुन अति असुभ, सीता-अवनि-प्रवेसु ।
समय सोक, संताप, भय, कलह, कलंक कलेसु ॥४८॥
सुभग सगुन उनचास रस, रामचरितमय चारु ॥
राम-भगत हित सफल सब, तुलसी बिमल बिचारु ॥४९॥

सप्तम सर्ग

राम लखनु सानुज भरत, सुमिरत सुभ सब काज ।
साहित प्रीति प्रतीति हित, सगुन सकल सुभ काज ॥ १ ॥
सुख-मुद-मंगल-कुमुद-बिधु, सगुन-सरोरुह-भानु ।
करहु काज सब सिद्धि सुभ, आनि हिये हनुमान ॥ २ ॥

राजकाज, मनि, हेम, हय, रामरूप रविवार ।
कहब नीक जयलाभ सुभ, सगुन समय अनुहार ॥ ३ ॥
रस गोरस खेती सकल, बिप्र-काज सुभ साज ।
राम-अनुग्रह सोमदिन, प्रमुदित प्रजा सुराज ॥ ४ ॥
मंगल मंगल भूमिहित, नृपहित जय संग्राम ।
सगुन बिचारब समय सम, करि गुरुचरन प्रनाम ॥ ५ ॥
बिपुल बनिज, बिद्या, बसन, बुध बिसेषि गृहकाजु ।
सगुन सुमंगल कहब सुभ, सुमिरि सीय रघुराजु ॥ ६ ॥
गुरुप्रसाद मंगल सकल, रामराज सब काज ।
जज्ञ, बिवाह-उछाह, ब्रत, सुभ तुलसी सब साज ॥ ७ ॥
सुक्र सुमंगल काज सब, कहब सगुन सुभ देखि ।
जंत्र मंत्र मनि औषधी, सहसा सिद्धि बिसेखि ॥ ८ ॥
रामकृपा थिर काज सुभ, सनि-बासर बिस्राम ।
लोह, महिष, गज, बनिज भल, सुख सुपास गृह ग्राम ॥ ९ ॥
राहु केतु उलटे चलहिं, असुभ अमंगल मूल ।
रुंड मुंड पाखंड-प्रिय, असुर अमर प्रतिकूल ॥१०॥
समउ राहु रबि-गहनु-मत, राजहिं प्रजहिं कलेस ।
सगुन सोच संकट बिकट, कलह कलुष दुख देस ॥११॥
राहु सोम संगमु बिषमु, असगुन उदधि अगाधु ।
ईति भीति खल दल प्रबल, सीदहिं भूसुर साधु ॥१२॥
सात पाँच ग्रह एक थल, चलहिं बाम गति धाम ।
राज बिराजिय समउ-गत, सुभहित सुमिरहु राम ॥१३॥

खेती बनि बिद्या बनिज, सेवा सिलिप सुकाज ।
तुलसी सुरतरु सरिस सब, सुफल राम के राज ॥१४॥
सुधा,साधु, सुरतरु, सुमन, सुफल, सुहावनि बात ।
तुलसी, सीतापति-भगति, सगुन सुमंगल सात ॥१५॥
सिद्धि समागम संपदा, सदन सरीर सुपास ।
सीतानाथ-प्रसाद सुभ, सगुन सुमंगल बास ॥१६॥
कौसल्या कल्यानमय, मूरति करत प्रनामु ।
सगुन सुमंगल काज सुभ, कृपा करहिं सियरामु ॥१७॥
सुमिरि सुमित्रा नाम जग, जे तिय लेहिं सुनेम ।
सुवन लखन रिपुदवनु-से, पावहिं पति-पद-प्रेम ॥१८॥
दसरथ नाम सुकामतरु, फलइ सकल कल्यान ।
धरनि धाम धन धरम सुख,सुत गुन रूप-निधान ॥१९॥
कलह कपट कलि कैकई, सुमिरत काज नसाइ ।
हानि मीचु दारिद दुरित, असगुन असुभ अघाइ ॥२०॥
राम बाम दिसि जानकी, लखनु दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥२१॥
मध्यम दिन, मध्यम दसा, मध्यम सकल समाज ।
नाइ माथ रघुनाथपद, जानब मध्यम काज ॥२२॥
हित पर बढ़इ बिरोधु जब, अनहित पर अनुराग ।
रामबिमुख बिधि बामगत, सगुन अघाइ अभाग ॥२३॥
कृपनु देइ, पाइय परो, बिन साधन सिधि होइ ।
सीतापति सनमुख समुझि, जो कीजिय सुभ सोइ ॥२४॥

पहिले हित परिनामगत, बीच बीच भल पोच ।
सगुन कहब अस रामगति, कहबि समेत सकोच ॥२५॥
रमा रमापति गौरि हरु, सीताराम सनेहु ।
दंपति-हित, संपति सकल, सगुन सुमंगल गेहु ॥२६॥
प्रीति प्रतीति न रामपद, बड़ी आस, बड़ लोभ ।
नहिं सपनेहुँ संतोष सुख, जहाँ तहाँ मन छोभ ॥२७॥
पय नहाइ, फल खाइ, जपु, रामनाम षट मास ।
सगुन सुमंगल सिद्धि सब, करतल तुलसीदास ॥२८॥
बड़ कलेस कारज अलप, बड़ी आस, लहु लाहु ।
उदासीन सीतारमन, समय सरिस निरबाहु ॥२९॥
दस दिसि दुख दारिद दुरित, दुसह दसा दिन दोष ।
फेरे लोचन राम अब, सनमुख साज सरोष ॥३०॥
खेती बनिज न, भीख भलि, अफल उपायकदंब ।
कुसमय जानब, बाम बिधि, रामनाम अवलंब ॥३१॥
पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिनाम ।
सुलभ सिद्धि सब सगुन सुभ, सुमिरत सीताराम ॥३२॥
भागु भाग तजि भालथलु, आलस ग्रसे उपाउ ।
असुभ अमंगल सगुन सुनि, सरन राम के आउ ॥३३॥
गइ बरषा करषक बिकल, सूखत सालि सुनाज ।
कुसमउ कुसगुन कलह कलि, प्रजहि कलेसु कुराज ॥३४॥
तुलसी तुलसी राम सिय, सुमिरहु लखन समेत ।
दिन दिन उदउ अनंद अब, सगुन सुमंगल देत ॥३५॥

उदबस अवध नरेस बिनु, देस दुखी नर नारि ।
राजभंग कुसमाज बड़, गत ग्रह-चालि बिचारि ॥३६॥
अवध-प्रवेस अनंदु बड़, सगुन सुमंगल माल ।
राम-तिलक-अवसर कहब, सुख संतोष सुकाल ॥३७॥
राम-राज-बाधक बिबुध, कहब सगुन सति भाउ ।
देखि देवकृत दोष दुख, कीजिय उचित उपाउ ॥३८॥
मंद मंथरा मोहबस, कुटिल कैकई कीन्ह ।
ब्याधि बिपति सब देवकृत, समय सगुन कहि दीन्ह ॥३९॥
रामबिरह दसरथ दुखित, कहति कैकई काकु ।
कुसमय जाय उपाय सब, केवल करमबिपाकु ॥४०॥
लखन राम सिय बसत बन, बिरह-बिकल पुरलोग ।
समय सगुन कह करमबस, दुख सुख जोग बियोग ॥४१॥
तुलसी लाइ रसाल तरु, निज कर सींचति सीय ।
कृषी सफल भल सगुन सुभ, समउ कहब कमनीय ॥४२॥
सुदिन साँझ पोथी नेवति, पूजि प्रभात सप्रेम ।
सगुन बिचारब चारुमति, सादर सत्य सनेम ॥४३॥
मुनि गनि, दिन गनि, धातु गनि, दोहा देखि बिचारि ।
देस, करम, करता, बचन, सगुन समय अनुहारि ॥४४॥
सगुन सत्य ससि नयन गुन, अवधि अधिक नयवान ।
होइ सुफल सुभ जासु जसु, प्रीति प्रतीति प्रमान ॥४५॥
गुरु गनेस हरु गौरि सिय, रामु लखनु हनुमानु ।
तुलसी सादर सुमिरि सब, सगुन बिचार बिधानु ॥४६॥

हनूमान सानुज भरत, राम सीय उर आनि ।
लखन सुमिरि तुलसी कहत, सगुन बिचारु बखानि ॥४७॥
जो जेहि काजहि अनुहरइ, सो दोहा जब होइ ।
सगुन समय सब सत्य सब, कहब रामगति होइ ॥४८॥
गुन बिस्वास, बिचित्र मनि, सगुन मनोहर हारु ।
तुलसी रघुबर-भगत-उर, बिलसत बिमल बिचारु ॥४९॥



पार्वती-मंगल



बिनइ गुरहि, गुनिगनहि, गिरिहि, गननाथहि ।
हृदय आनि सियराम धरे धनु-भाथहि ।
गावउँ, गौरि-गिरीस-बिवाह सुहावन ।
पाप-नसावन, पावन, मुनि-मन-भावन ॥ १ ॥
कबितरीति नहिं जानउँ, कबि न कहावउँ ।
संकर-चरित-सुसरित मनहिं अन्हवावउँ ।
पर अपवाद-बिबाद-बिदूषित बानिहि ।
पावनि करउँ सो गाइ भवेस भवानिहि ॥ २ ॥
जय संवत, फागुन सुदि पाँचै, गुर दिनु ।
अस्विनि बिरचेउँ मंगलु, सुनि सुख छिनु छिनु ।
गुननिधानु हिमवानु धरनिधर धुर धनि ।
मैना तासु घरनि घर त्रिभुअन तिअमनि ॥ ३ ॥
कहहु सुकृत केहि भाँति सराहिय तिन्ह कर ।
लीन्ह जाइ जगजननि जनमु जिन्हके घर ।
मंगलखानि भवानि प्रगट जब तें भइ ।
तब तें रिधि सिधि संपति गिरिगृह नित नइ ॥ ४ ॥
नित नव सकल कल्यान मंगल मोदमय मुनि मानहीं ।
ब्रह्मादि सुर नर नाग अति अनुराग भाग बखानहीं ।

पितु, मातु प्रिय परिवारु हरषहिं निरखि पालहिं लालहीं।
सित पाख बाढ़ति चन्द्रिका जनु चंद्रभूषन भालहीं ॥ ५ ॥

कुँअरि सयानि बिलोकि मातु पितु सोचहिं।
गिरिजा-जोगु जुरिहि बरु अनुदिन लोचहिं।
एक समय हिमवान भवन नारद गए।
गिरिबरु मैना मुदित मुनिहि पूजत भए ॥ ६ ॥
उमहिं बोलि रिषि-पगन मातु मेलति भइ।
मुनि मन कीन्ह प्रनाम, बचन आसिष दइ।
कुँअरि लागि पितु काँध ठाढ़ि भइ सोहइ।
रूपु न जाइ बखानि, जान जोइ जोहइ ॥ ७ ॥
अति सनेह सतिभाय पाँय परि पुनि पुनि।
कह मैना मृदु बचन "सुनिय बिनती, मुनि।
तुम तिभुअन तिहुँकाल बिचार बिसारद।
पारबती-अनुरूप कहिय बरु, नारद" ॥ ८ ॥
मुनि कह "चौदह भुअन फिरउँ जग जहँ जहँ।
गिरिबर सुनिय सरहना राउरि तहँ तहँ।
भूरि भाग तुम सरिस कतहुँ कोउ नाहिंन।
कछु न अगम, सब सुगम, भयो बिधि दाहिन ॥ ९ ॥

दाहिन भए बिधि, सुगम सब, सुनि तजहु चित चिंता नई।
बरु प्रथम बिरचि बिरंचि बिरची मंगला मंगलमई।
त्रिथिलोक चरचा चलति राउरि चतुर चतुरानन कही।
हिमवानुकन्या जोगु बरु बाउर बिबुधबंदित सही ॥१०॥

मोरेहुँ मन अस आव मिलिहि बरु बाउर" ।
लखि नारद-नारदी उमहिं सुखु भा उर ॥
सुनि सहमे, परि पाइँ, कहत भए दंपति ।
"गिरिजहि लागि हमार जिवन सुख संपति ॥११॥
नाथ ! कहिय सोइ जतन मिटइ जेहि दूषनु" ।
"दोषदलनु" मुनि कहेउ "बालबिधुभूषनु ॥
अवसि होइ सिधि, साहस फलइ सुसाधन ।
कोटि कलपतरु सरिस संभु-अवराधन ॥१२॥
तुम्हरे आस्रम अबहिं ईसु तप साधहिं ।
कहिय उमहिं मनु लाइ जाइ अवराधहिं" ॥
कहि उपाउ दंपतिहि मुदित मुनिबर गए ।
अति सनेह पितु मातु उमहिं सिखवत भए ॥१३॥
सजि समाज गिरिराज दीन्ह सबु गिरिजहि ।
बदति जननि, 'जगदीस जुवति जिनि सिरजहि' ॥
जननि-जनक-उपदेस महेसहि सेवहि ।
अति आदर अनुराग भगति मन भेवहि ॥१४॥
भेवहि भगति मन, बचन करम अनन्य गति हरचरन की ।
गौरव सनेहु सँकोच सेवा जाइ केहि बिधि बरन की ॥
गुन-रूप-जोबनसींव सुंदरि निरखि छोभ न हर हिए ।
ते धीर अछत बिकारहेतु जे रहत मनसिज बस किए ॥१५॥
देव देखि भल समउ मनोज बुलाएउ ।
कहेउ करिय सुरकाजु, साजु सजि धाएउ ॥

बामदेव सन काम बाम होइ बरतेउ।
जग-जय-मद-निदरेसि हरु, पाएसि फर तेउ ॥१६॥
रति पतिहीन मलीन बिलोकि बिसूरति।
नीलकंठ मृदु सील कृपामय मूरति।
आसुतोष परितोष कीन्ह बर दीन्हेउ।
सिव उदास, तजि बास अनत गमु कीन्हेउ ॥१७॥
उमा नेहबस बिकल देह सुधि बुधि गइ।
कलपबेलि बन बढ़त बिषम हिम जनु दइ।
समाचार सब सखिन जाइ घर घर कहे।
सुनत मातु पितु परिजन दारुन दुख दहे ॥१८॥
जाइ देखि अति प्रेम उमहिं उर लावहिं।
बिलपहिं, बाम बिधातहि दोष लगावहिं।
जौं न होहिं मंगलमग सुर बिधि बाधक।
तौ अभिमत फल पावहिं करि स्रमु साधक ॥१९॥
साधक कलेस सुनाइ सब गौरिहि निहोरत धाम को।
को सुनइ काहि सोहात घर, चित चहत चंद्रललाम को।
समुझाइ सबहिं दृढ़ाइ मन, पितु मातु आयसु पाइ कै।
लागी करन पुनि अगमु तपु, तुलसी कहै किमि गाइ कै ॥२०॥
फिरेउ मातु पितु परिजन लखि गिरिजा पन।
जेहि अनुरागु लागु चितु, सोइ हितु आपन।
तजेउ भोग जिमि रोग, लोग अहिगन जनु।
मुनि-मनसहु तें अगम तपहिं लायो मनु ॥२१॥

सकुचहि बसन बिभूषन परसत जो बपु ।
तेहि सरीर हर-हेतु अरंभेउ बड़ तपु ।
पूजहि सिवहि, समय तिहुँ करहि निमज्जन ।
देखि प्रेमु ब्रतु नेमु सराहहिं सज्जन ॥२२॥
नींद न भूख पियास, सरिस निसि बासरु ।
नयन नीर, मुख नाम, पुलक तनु, हिय हरु ।
कंद मूल फल असन, कबहुँ जल पवनहिं ।
सूखे बेल के पात खात दिन गवनहिं ॥२३॥
नाम अपरना भयो परन जब परिहरे ।
नवल धवल कल कीरति सकल भुअन भरे ।
देखि सराहहिं गिरिजहि मुनिबरु मुनि बहु ।
अस तप सुना न दीख कबहुँ काहू कहुँ ॥२४॥
काहू न देख्यो कहहिं यह तपु जोगु फल फल चारि का ।
नहिं जानि जाइ, न कहति, चाहति काहि कुधर-कुमारिका ।
बटुबेष पेखन पेम पनु ब्रत नेम ससिसेखर गए ।
मनसहि समरपेउ आपु गिरिजहि, बचन मृदु बोलत भए ॥२५॥
देखि दसा करुनाकर हर दुख पाएउ ।
मोर कठोर सुभाय, हृदय अस आएउ ।
बंस प्रसंसि, मातु पितु कहि सब लायक ।
अमिय बचन बटु बोलेउ सुनि सुखदायक ॥२६॥
"देवि ! करौं कछु बिनय सो बिलगु न मानब ।
कहउँ सनेह सुभाय साँचु जिय जानब ।

जनमि जगत जस प्रगटिहु मातु पिता कर।
तीयरतन तुम उपजिहु भव-रतनाकर ॥२७॥
अगम न कछु जग तुम कहँ, मोहिं अस सूझइ।
बिनु कामना, कलेस कलेस न बूझइ।
जौं बर लागि करहु तपु तौ लरिकाइय।
पारस जौं घर मिलै तौ मेरु कि जाइय ? ॥२८॥
मोरे जान कलेस करिय बिनु काजहि।
सुधा कि रोगिहि चाहहि, रतन कि राजहि।
लखि न परेउ तपकारन बटु हिय हारेउ।
सुनु प्रिय बचन सखीमुख गौरि निहारेउ ॥२९॥
गौरी निहारेउ सखीमुख, रुख पाइ तेहिं कारन कहा।
'तप करहि हरहितु' सुनि बिहँसि बटु कहत 'मुरुखाई महा'।
जेहिं दीन्ह अस उपदेस बरेहु कलेस करि बरु बावरो।
हित लागि कहौं सुभाय सो बड़ बिषम बैरी रावरो ॥३०॥
कहहु काह सुनि रीझिहु बरु अकुलीनहिं।
अगुन अमान अजाति मातु-पितु-हीनहिं।
भीख माँगि भव खाहिं, चिता नित सोवहिं।
नाचहिं नगन पिसाच पिसाचिनि जोवहिं ॥३१॥
भाँग धतूर अहार, छार लपटावहिं।
जोगी, जटिल, सरोष, भोग नहिं भावहिं।
सुमुखि सुलोचनि ! हर मुखपंच, तिलोचन।
बामदेव फुर नाम, काम-मद-मोचन ॥३२॥

एकउ हरहि न बर गुन, कोटिक दूषनु।
नर-कपाल, गजखाल, ब्याल, बिष भूषनु।
कहँ राउर गुन सील सरूप सुहावन।
कहाँ अमंगल बेषु बिसेषु भयावन ॥३३॥
जो सोचहि ससिकलहि सो सोचहि रौरेहि ?
कहा मोर मन धरि न बरिय बर बौरेहि।
हिये हेरि हठ तजहु, हठै दुख पैहहु।
ब्याह-समय सिख मोरि समुझि पछितैहहु ॥३४॥
पछिताब भूत पिसाच प्रेत जनेत ऐहैं साजिकै।
जमधारि सरिस निहारि सब नर नारि चलिहहिं भाजि कै।
गजअजिन दिव्य दुकूल जोरत सखी हँसि मुख मोरि कै।
कोउ प्रगट कोउ हिय कहिहि मिलवत अमिय माहुर घोरि कै ॥३५
तुमहिं सहित असवार बसह जब होइहहिं।
निरखि नगर नर नारि बिहँसि मुख गोइहहिं।
बटु करि कोटि कुतर्क जथा रुचि बोलइ।
अचल-सुता-मनु-अचल बयारि कि डोलइ ? ॥३६॥
साँच सनेह साँचि रुचि जो हठि फेरइ।
सावनसरित सिंधुरुख सूप सो घेरइ।
मनि बिनु फनि, जलहीन मीन तनु त्यागइ।
सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ ॥३७॥
करनकटुक बटु बचन बिसिख सम हिय हए।
अरुन नयन, चढ़ि भृकुटि, अधर फरकत भए।

बोली फिरि लखि सखिहि काँपु तनु थरथर ।
"आलि ! बिदा करु बटुहि बेगि, बड़ बरबर ॥३८॥
कहुँ तिय होहिं सयानि सुनहि सिख राउरि ?
बौरेहि कें अनुराग भइउँ बड़ि बाउरि ।
दोसनिधान, इसानु सत्य सबु भाषेउ ।
मेटि को सकइ सो आँकु जो बिधि लिखि राखेउ ॥३९॥
को करि बादु बिबादु बिषादु बढ़ावइ ?
मीठ काहु कबि कहहिं जाहि जोइ भावइ ।
भइ बड़ि बार आलि कहुँ काज सिधारहि ।
बकि जनि उठहि बहोरि, कुजुगुति सँवारहि ॥४०॥
जनि कहहि कछु बिपरीत जानत प्रीतिरीति न बात की ।
सिव-साधु-निंदकु मंद अति जो सुनै सोउ बड़ पातकी" ।
सुनि बचन सोधि सनेहु तुलसी साँच अबिचल पावनो ।
भए प्रगट करुनासिंधु संकर, भाल चंद्र सुहावनो ॥४१॥
सुंदर गौर सरीर भूति भलि सोहइ ।
लोचन भाल बिसाल बदनु मनु मोहइ ।
सैलकुमारि निहारि मनोहर मूरति ।
सजल नयन हिय हरषु पुलक तनु पूरति ॥४२॥
पुनि पुनि करै प्रनामु, न आवत कछु कहि ।
"देखौं सपन कि सौतुख ससिसेखर, सहि !"
जैसे जनमदरिद्र महामनि पावइ !
पेखत प्रगट प्रभाउ प्रतीति न आवइ ॥४३॥

सफल मनोरथ भएउ, गौरि सोहइ सुठि।
घर तें खेलन मनहुँ अबहिं आई उठि।
देखि रूप अनुराग महेसु भए बस।
कहत बचन जनु सानि सनेह-सुधा-रस ॥४४॥
"हमहिं आजु लगि कनउड़ काहु न कीन्हेउ।
पारबती! तप प्रेम मोल मोहिं लीन्हेउ।
अब जो कहहु सो करउँ बिलंब न यहि घरि।
सुनि महेस मृदु बचन पुलकि पाँयन परि ॥४५॥
परि पाँय सखिमुख कहि जनायो आपु बाप-अधीनता।
परितोषि गिरिजहि चले बरनत प्रीति नीति प्रबीनता॥
हर हृदय धरि घर गौरि गवनी, कीन्ह बिधि मानभावनो।
आनंद प्रेमु समाजु मंगलगान बाजु बधावनो ॥४६॥
सिव सुमिरे मुनि सात आइ सिर नाइन्हि।
कीन्ह संभु सनमानु जनमफल पाइन्हि।
"सुमिरहिं सकृत तुम्हहिं जन तेइ सुकृतीबर।
नाथ जिन्हहिं सुधि करिअ तिन्हहिं सम तेइ नर!" ॥४७॥
सुनि मुनिबिनय महेस परम सुख पाएउ।
कथाप्रसंग मुनीसन्ह सकल सुनाएउ।
"जाहु हिमाचल-गेह प्रसंग चलाएहु।
जौं मन मान तुम्हार तौ लगन लिखाएहु ॥४८॥
अरुंधती मिलि मैनहि बात चलाइहि।
नारि कुसल इहि काजु, काजु बनि आइहि'।

"दुलहिनि उमा, ईस बरु, साधक ए मुनि।
बनिहि अवसि एहु काज" गगन भइ अस धुनि ॥४९॥
भयउ अकनि आनंद महेस मुनीसन्ह।
देहिं सुलोचनि सगुन कलस लिए सीसन्ह।
सिव सों कहे दिन ठाउँ बहोरि मिलनु जहँ।
चले मुदित मुनिराज गए गिरिबर पहँ ॥५०॥
गिरिगेह गे अति नेह आदर पूजि पहुनाई करी।
घरवात घरनि समेत कन्या आनि सब आगे धरी।
सुख पाइ बात चलाइ सुदिनु सोधाइ गिरिहि सिखाइ कै।
रिषि सात प्रातहि चले प्रमुदित ललित लगन लिखाइ कै ॥५१॥
बिप्रबृंद सनमानि पूजि कुलगुरु सुर।
परेउ निसानहिं घाउ, चाउ चहुँ दिसि पुर।
गिरि, बन, सरित सिंधु, सर सुनइ जो पायउ।
सब कहँ गिरिबर-नायक नेवति पठायउ ॥५२॥
धरि धरि सुंदर भेस चले हरषित हिए।
चँवर, चीर उपहार हार मनिगन लिए।
कहेउ हरषि हिमवान बितान बनावन।
हरषित लगीं सुआसिनि मंगल गावन ॥५३॥
तोरन कलस चँवर धुज बिबिधि बनाइन्हि।
हाट पटोरन्हि छाय सफल तरु लाइन्हि।
गौरी नैहर केहि बिधि कहहु बखानिय।
जनु रितुराज मनोज-राज रजधानिय ॥५४॥

जनु राजधानी मदन की बिरची चतुर बिधि और ही ।
रचना बिचित्र बिलोकि लोचन बिथक ठौरहि ठौर ही ॥
यहि भाँति ब्याहु समाजु सजि गिरिराज मगु जोवन लगे ।
तुलसी लगन लै दीन्हि मुनिन्ह महेस आनँद-रँग-मगे ॥५५॥

बेगि बुलाइ बिरंचि बँचाइ लगन तब ।
कहेन्हि 'बियाहन चलहु बुलाइ अमर सब ।
बिधि पठए जहँ तहँ सब सिवगन धावन ।
सुनि हरषहिं सुर कहहिं निसान बजावन ॥५६॥
रचहिं बिमान बनाइ सगुन पावहिं भले ।
निज निज साजु समाजु साजि सुरगन चले ।
मुदित सकल सिवदूत भूतगन गाजहिं ।
सूकर, महिष, स्वान, खर बाहन साजहिं ॥५७॥
नाचहिं नाना रंग, तरंग बढ़ावहिं ।
अज, उलूक, बृक नाद गीत गन गावहिं ।
रमानाथ, सुरनाथ, साथ सब सुरगन ।
आए जहँ बिधि संभु देखि हरषे मन ॥५८॥
मिले हरिहि हरु हरषि, सुभाखि सुरेसहिं ।
सुर निहारि सनमानेउ, मोदु महेसहिं ।
बहु बिधि बाहन जान बिमान बिराजहिं ।
चली बरात निसानु गहागह बाजहिं ॥५९॥

बाजहिं निसान, सुगान, नभ, चढ़ि बसह बिधुभूषन चले ।
बरषहिं सुमन जय जय करहिं सुर, सगुन सुभ मंगल भले ।

तुलसी बराती भूत प्रेत पिसाच पसुपति सँग लसे।
गजछाल, ब्याल, कपालमाल बिलोकि बरु सुर हरि हँसे ॥६०॥

बिबुध बोलि हरि कहेउ निकट पुर आएउ।
आपन आपन साजु सबहिं बिलगाएउ।
प्रमथनाथ के साथ प्रमथगन राजहिं।
बिबिध भाँति मुख, बाहन, बेष बिराजहिं ॥६१॥
कमठ खपर मढ़ि खाल निसान बजावहिं।
नर-कपाल जल भरि भरि पियहिं पियावहिं।
बर अनुहरति बरात बनी हरि हँसि कहा।
सुनि हिय हँसत महेस, केलि कौतुक महा ॥६२॥
बड़ बिनोदु मग मोदु न कछु कहि आवत।
जाइ नगर निअरानि बरात बजावत।
पुर खरभर, उर हरषेउ अचलु-अखंडलु।
परब उदधि उमगेउ जनु लखि बिधुमंडलु ॥६३॥
प्रमुदित गे अगवान, बिलोकि बरातहि।
भभरे, बनइ न रहत, न बनइ परातहि।
चले भाजि गज बाजि फिरहिं नहिं फेरत।
बालक भभरि भुलान फिरहिं घर हेरत ॥६४॥
दीन्ह जाइ जनवास सुपास किए सब।
घर घर बालक बात कहन लागे तब।
"प्रेत बैताल बराती, भूत भयानक।
बरद चढ़ा बर बाउर, सबइ सुबानक ॥६५॥

कुसल करइ करतार कहहिं हम साँचिय।
देखब कोटि बियाह जियत जौं बाँचिय"।
समाचार सुनि सोचु भएउ मन मैनहिं।
नारद के उपदेस कवन घर गे नहिं ? ॥६६॥

घरघाल चालक कलहप्रिय कहियत परम परमारथी।
तैसी बरेखी कीन्हि पुनि मुनि सात स्वारथ सारथी।
उर लाइ उमहिं अनेक बिधि, जलपति जननि दुख मानई।
हिमवान कहेउ "इसान महिमा अगम, निगम न जानई"॥५७॥

सुनि मैना भइ सुमन, सखी देखन चली।
जहँ तहँ चरचा चलइ हाट चौहट गली।
श्रीपति, सुरपति, बिबुध बात सब सुनि सुनि।
हँसहिं कमलकर जोरि, मोरि मुख पुनि पुनि ॥६८॥
लखि लौकिक गति, संभु जानि बड़ सोहर।
भए सुंदर सतकोटि मनोज मनोहर।
नील निचोल छाल भइ, फनि मनिभूषन।
रोम रोम पर उदित रूपमय पूषन ॥६९॥
गन भए मंगलबेष मदन मनमोहन।
सुनत चले हिय हरषि नारि-नर जोहन।
संभु सरद राकेस, नखतगन सुरगन।
जनु चकोर चहुँ ओर बिराजहिं पुरजन ॥७०॥
गिरिबर पठए बोलि लगन बेरा भइ।
मंगल अरघ पाँवड़े देत चले लइ।

होहिं सुमंगल सगुन, सुमन बरषहिं सुर।
गहगहे गान निसान मोद मंगल पुर ॥७१॥
पहिलिहि पँवरि सुसामध भा सुखदायक।
इत बिधि उत हिमवान सरिस सब लायक।
मनि चामीकर चारु थार सजि आरति।
रति सिहाहिं लखि रूप, गान सुनि भारति ॥७२॥
भरी भाग अनुराग पुलक तनु मुद मन।
मदनमत्त गजगवनि चलीं बर परिछन।
बर बिलोकि बिधुगौर सु अंग उजागर।
करति आरती सासु मगन सुखसागर ॥७३॥
सुखसिंधुमगन उतारि आरति करि निछावरि निरखि कै।
मगु अरघ बसन प्रसून भरि लेइ चली मंडप हरषि कै।
हिमवान दीन्हेउ उचित आसन सकल सुर सनमानि कै।
तेहि समय साज समाज सब राखे सुमंडपु आनि कै ॥७४॥
अरघु देइ मनिआसन बर बैठाएउ।
पूजि कीन्ह मधुपर्क, अमी अँचवाएउ।
सपत रिषिन्ह बिधि कहेउ, बिलंबु न लाइय।
लगन बेर भइ बेगि बिधान बनाइय ॥७५॥
थापि अनल हर बरहि बसन पहिराएउ।
आनहु दुलहिनि बेगि समउ अब आएउ।
सखी सुआसिनि संग गौरि सुठि सोहति।
प्रगट रूपमय मूरति जनु जगु मोहति ॥७६॥

भूषन बसन समय सम सोभा सो भली ।
सुखमा बेलि नवल जनु रूपफलनि फली ।
कहहु काहि पटतरिय गौरि गुनरूपहि ।
सिंधु कहिय केहि भाँति सरिस सर कूपहि ॥७७॥
आवत उमहिं बिलोकि सीस सुर नावहिं ।
भए कृतारथ जनम जानि सुखु पावहिं ।
बिप्र बेद धुनि करहिं सुभासिष कहि कहि ।
गान निसान सुमन झरि अवसर लहि लहि ॥७८॥
बरु दुलहिनिहिं बिलोकि सकल मन रहसहिं ।
साखोचार समय सब सुर मुनि बिहँसहिं ।
लोक-बेद-बिधि कीन्ह लीन्ह जल कुस कर ।
कन्यादान सँकलप कीन्ह धरनीधर ॥७९॥
पूजे कुलगुर-देव, कलसु सिल सुभ धरी ।
लावा होम बिधान बहुरि भाँवरि परी ।
बंदन बंदि, ग्रंथिबिधि करि, धुव देखेउ ।
भा बिवाह सब कहहिं जनमफल पेखेउ ॥८०॥
पेखेउ जनमफलु भा बिआह,उछाह उमगहि दस दिसा ।
नीसान गान प्रसून झरि तुलसी सुहावनि सो निसा ।
दाइज बसन मनि धेनु धनु हय गय सुसेवक सेवकी ।
दीन्हीं मुदित गिरिराज जे गिरिजहिं पियारी पेंवकी ॥८१॥
बहुरि बराती मुदित चले जनवासहि ।
दूलह दुलहिनि गे तब हास - अवासहि ।

रोकि द्वार मैना तब कौतुक कीन्हेउ ।
करि लहकौरि गौरि हर बड़ सुख दीन्हेउ ॥८२॥
जुआ खेलावत गारि देहिं गिरिनारिहि ।
अपनी ओर निहारि प्रमोद पुरारिहि ।
सखी सुआसिनि, सासु पाउ सुख सब बिधि ।
जनवासहि बर चलेउ सकल मंगलनिधि ॥३८॥
भइ जेवनार बहोरि बुलाइ सकल सुर ।
बैठाए गिरिराज धरम-धरनी-धुर ।
परुसन लगे सुआर, बिबुध जन जेंवहिं ।
देहिं गारि बर नारि मोद मन भेवहिं ॥८४॥
करहिं सुमंगल गान सुघर सहनाइन्ह ।
जेइँ चले हरि दुहिन सहित सुर भाइन्ह ।
भूधर भोर बिदा कर साज सजाएउ ।
चले देव सजि जान निसान बजाएउ ॥८५॥
सनमाने सुर सकल दीन्हि पहिरावनि ।
कीन्हि बड़ाई बिनय सनेह सुहावनि ।
गहि सिवपद कह सासु बिनय मृदु मानबि ।
गौरि-सजीवनि मूरि मोरि जिय जानबि । ८६॥
भेंटि बिदा करि बहुरि भेंटि पहुँचावहिं ।
हुँकरि हुँकरि सु लवाइ धेनु जनु धावहिं ।
उमा मातुमुख निरखि नयन जल मोचहिं ।
'नारि-जनमु जग जाय' सखी कहि सोचहिं ॥८७॥

भेंटि उमहिं गिरिराज सहित सुत परिजन।
बहु समुझाइ बुझाइ फिरे बिलखित मन।
संकर गौरि समेत गए कैलासहि।
नाइ नाइ सिर देव चले निज बासहि ॥८८॥
उमा महेस बिआह-उछाह भुवन भरे।
सबके सकल मनोरथ बिधि पूरन करे।
प्रेमपाट पटडोरि गौरि-हर-गुन मनि।
मंगल हार रचेउ कबि मति मृगलोचनि ॥८९॥
मृगनयनि बिधुबदनी रचेउ मनि मंजु मंगल हार सो।
उर धरहु जुवती जन बिलोकि तिलोक सोभा-सार सो।
कल्यान काज उछाह ब्याह सनेह सहित जो गाइहैं।
तुलसी उमा-संकर-प्रसाद प्रमोद मन प्रिय पाइहैं ॥९०॥



रामलला-नहछू

सोहर छंद

आदि सारदा गनपति गौरि मनाइय हो।
रामलला कर नहछू गाइ सुनाइय हो॥
जेहि गाये सिधि होय परमनिधि पाइय हो।
कोटि जनम कर पातक दूरि सो जाइय हो॥ १॥
कोटिन्ह बाजन बाजहिं दसरथ के गृह हो।
देवलोक सब देखहिं आनँद अति हिय हो॥
नगर सोहावन लागत बरनि न जातै हो।
कौसल्या के हरष न हृदय समातै हो॥ २॥
आलो हि बाँस के माँड़व मनिगन पूरन हो।
मोतिन्ह झालर लागि चहूँ दिसि झूलन हो॥
गंगाजल कर कलस तौ तुरित मँगाइय हो।
जुवतिन्ह मंगल गाइ राम अन्हवाइय हो॥ ३॥
गजमुकुता हीरा मनि चौक पुराइय हो।
देइ सुअरघ राम कहँ लेइ बैठाइय हो॥
कनकखंभ चहुँ ओर मध्य सिंहासन हो।
मानिक दीप बराय बैठि तेहि आसन हो॥ ४॥

बनि बनि आवति नारि जानि गृह मायन हो ।
बिहँसत आउ लोहारिनि हाथ बरायन हो ॥
अहिरिनि हाथ दहेंड़ि सगुन लेइ आवत हो ।
उनरत जोबनु देखि नृपति मन भावइ हो ॥ ५ ॥
रूपसलोनि तँबोलिनि बीरा हाथहि हो ।
जाकी ओर बिलोकहि मन तेहि साथहि हो ॥
दरजिनि गोरे गात लिहे कर जोरा हो ।
केसरि परम लगाइ सुगंधन बोरा हो ॥ ६ ॥
मोचिनि बदन-सकोचिनि हीरा माँगन हो ।
पनहि लिहे कर सोभित सुंदर आँगन हो ॥
बतिया कै सुघरि मलिनिया सुंदर गातहि हो ।
कनक रतनमय मौर लिहे मुसुकातहि हो ॥ ७ ॥
कटि कै छीन बरिनियाँ छाता पानिहि हो ।
चंद्रबदनि मृगलोचनि सब रसखानिहि हो ॥
नैन बिसाल नउनियाँ भौं चमकावइ हो ।
देइ गारी रनिवासहि प्रमुदित गावइ हो ॥ ८ ॥
कौसल्या कइ जेठि दीन्ह अनुसासन हो ।
"नहछू जाइ करावहु बैठि सिंहासन हो" ॥
गोद लिहे कौसिला बैठि रामहि बर हो ।
सोभित दूलह राम सीस पर आँचर हो ॥ ९ ॥
नाउनि अति गुनखानि तौ बेगि बोलाई हो ।
करि सिंगार अति लोनि तौ बिहँसति आई हो ॥

कनक-चुनिन सों लसित नहरनी लिये कर हो।
आनँद हिय न समाइ देखि रामहिं बर हो ॥१०॥
कानन कनक तरीवन, बेसरि सोहइ हो।
गजमुकुता कर हार कंठ मन मोहइ हो।
कर कंकन, कटि किंकिन, नूपुर बाजइ हो।
रानी कै दीन्हीं सारी तौ अधिक बिराजइ हो ॥११॥
काहे रामजिउ साँवर, लछिमन गोर हो।
कीदहुँ रानि कौसिलहि परिगा भोर हो।
राम अहहिं दसरथ कै लछिमन आन क हो।
भरत सत्रुहन भाइ तौ श्रीरघुनाथ क हो ॥१२॥
आजु अवधपुर आनँद नहछू राम क हो।
चलहु नयन भरि देखिय सोभाधाम क हो।
अति बड़ भाग नउनियाँ छुऐ नख हाथ सों हो।
नैनन्ह करति गुमान तौ श्रीरघुनाथ सों हो ॥१३॥
जो पगु नाउनि धोवइ राम धोवावइँ हो।
सो पगधूरि सिद्ध मुनि दरस न पावइँ हो।
अतिसय पुहुप क माल राम-उर सोहइ हो।
तिरछी चितवनि आनँदमनि मुख जोहइ हो ॥१४॥
नख काटत मुसुकाहिं बरनि नहिं जातहि हो।
पदुम-राग-मनि मानहुँ कोमल गातहि हो।
प्रभु कर चरन पछालि तौ अति सुकुमारी हो।
जावक रचति अँगुरियन्ह मृदुल सुढारी हो ॥१५॥

भई निवछावरि बहु विधि जो जस लायक हो।
तुलसिदास बलि जाउँ देखि रघुनायक हो।
राजन दीन्हें हाथी, रानिन्ह हार हो।
भरि गे रतनपदारथ सूप हजार हो॥१६॥
भरि गाड़ी निवछावरि नाऊ लेइ आवइ हो।
परिजन करहिं निहाल असीसत आवइ हो।
तापर करहिं सुमौज बहुत दुख खोवहिं हो।
होइ सुखी सब लोग अधिक सुख सोवहिं हो॥१७॥
गावहिं सब रनिवास देहिं प्रभु गारी हो।
रामलला सकुचाहिं देखि महतारी हो।
हिलिमिलि करत सवाँग सभा रसकेलि हो।
नाउनि मन हरषाइ सुगंधन मेलि हो॥१८॥
दूलह कै महतारि देखि मन हरषइ हो।
कोटिन्ह दीन्हेउ दान मेघ जनु बरखइ हो।
रामलला कर नहछू अति सुख गाइय हो।
जेहि गाये सिधि होइ परम-निधि पाइय हो॥१६॥
दसरथ राउ सिंहासन बैठि बिराजहिं हो।
तुलसिदास बलि जाहि देखि रघुराजहि हो।
जे यह नहछू गावइँ गाइ सुनावइँ हो।
रिद्धि सिद्धि कल्यान मुकुति नर पावइँ हो॥२०॥

बरवै रामायण

बाल कांड

केस-मुकुत सखि मरकतमनिमय होत ।
हाथ लेत पुनि मुकुता करत उदोत ॥ १ ॥
सम सुबरन सुखमाकर सुखद न थोर ।
सीय अंग, सखि ! कोमल, कनक कठोर ॥ २ ॥
सियमुख सरद्कमल जिमि किमि कहि जाइ ।
निसि मलीन वह, निसि दिन यह बिगसाइ ॥ ३ ॥
बड़े नयन कुटि भृकुटी, भाल बिसाल ।
तुलसी मोहत मनहिं मनोहर बाल ॥ ४ ॥
चंपक-हरवा अँग मिलि अधिक सोहाइ ।
जानि परै सिय हियरे जब कुँभिलाइ ॥ ५ ॥
सिय तुव अंग-रंग मिलि अधिक उदोत ।
हार-बेलि पहिरावउँ चंपक होत ॥ ६ ॥
साधु सुसील सुमति सुचि सरल सुभाव ।
राम नीतिरत, काम कहाँ यह पाव ? ॥ ७ ॥
कुंकुमतिलक भाल, स्रुति कुंडल लोल ।
काकपच्छ मिलि, सखि ! कस लसत कपोल ॥ ८ ॥

भालतिलक सर, सोहत भौंह कमान।
मुख अनुहरिया केवल चंद समान ॥ ९ ॥
तुलसी बंकबिलोकनि, मृदु मुसुकानि।
कस प्रभु नयन कमल अस कहौं बखानि ॥१०॥
कामरूप सम तुलसी राम सरूप।
को कबि समसरि करै परै भवकूप? ॥११॥
चढ़त दसा यह, उतरत जात निदान।
कहउँ न कबहूँ करकस भौंह कमान ॥१२॥
नित्य नेम-कृत अरुन उदय जब कीन।
निरखि निसाकर-नृप-मुख भए मलीन ॥१३॥
कमठपीठि धनु सजनी कठिन अँदेस।
तमकि ताहि ए तोरिहि कहेउ महेस ॥१४॥
नृप निरास भए निरखत नगर उदास।
धनुष तोरि हरि सब कर हरेउ हरास ॥१५॥
का घूँघट मुख मूँदहु नवला नारि?
चाँद सरग पर सोहत एहि अनुहारि ॥१६॥
गरब करहु रघुनंदन जनि मन माँह।
देखउ आपनि मूरति सिय कइ छाँह ॥१७॥
उठी सखी हँसि मिस करि कहि मृदु बैन।
सिय रघुबर के भए उनींदे नैन ॥१८॥
सींक धनुष, हित सिखन, सकुचि प्रभु लीन।
मुदित माँगि इक धनुही नृप हँसि दीन ॥१९॥

अयोध्या कांड

सात दिवस भए साजत सकल बनाउ ।
का पूछहु सुठि राउर सरल सुभाउ ॥२०॥
राजभवन सुख बिलसत सिय सँग राम ।
बिपिन चले तजि राज, सु बिधि बड़ बाम ॥२१॥
कोउ कह नर-नारायन, हरि-हर कोउ ।
कोउ कह बिहरत बन मधु मनसिज दोउ ॥२२॥
तुलसी भइ मति बिथकित करि अनुमान ।
राम लखन के रूप न देखेउँ आन ॥२३॥
तुलसी जनि पग धरहु गंग महँ साँच ।
निगानाँग करि नितहिं नचाइहि नाच ॥२४॥
सजल कठौता कर गहि कहत निषाद ।
चढ़उ नाव पग धोइ करउ जनि बाद ॥२५॥
कमल कंटकित सजनी, कोमल पाइ ।
निसि मलीन, यह प्रफुलित नित दरसाइ ॥२६॥

(वाल्मीकि-वचन)

द्वै भुज कर हरि रघुबर सुंदर भेस ।
एक जीभ कर लछिमन दूसर सेस ॥२७॥

अरण्य कांड

बेद-नाम कहि, अँगुरिन खंडि अकास ।
पठयो सूपनखाहि लखन के पास ॥२८॥

हेमलता सिय-मूरति मृदु मुसुकाइ।
हेम हरिन कहँ दीन्हेउ प्रभुहि देखाइ ॥२९॥
जटा,मुकुट, कर सर धनु, संग मरीच।
चितवनि बसति कनखियनु अँखियनु बीच ॥३०॥

(राम-वाक्य)

कनकसलाक, कला ससि, दीपसिखाउ।
तारा, सिय कहँ लछिमन मोहिं बताउ ॥३१॥
सीय बरन सन केतकि अति हिय हारि।
किहेसि भँवर कर हरवा हृदय बिदारि ॥३२॥
सीतलता ससि की रहि सब जग छाइ।
अगिनि-ताप है हम कहँ सँचरत आइ ॥३३॥

किष्किंधा कांड

स्याम गौर दोउ मूरति लछिमन राम।
इनतें भइ सित कीरति अति अभिराम ॥३४॥
कुजन-पाल, गुन-बर्जित, अकुल, अनाथ।
कहहु कृपानिधि राउर कस गुननाथ ॥३५॥

सुंदर कांड

बिरह आगि उर ऊपर जब अधिकाइ।
ए अँखियाँ दोउ बैरिनि देइ बुझाइ ॥३६॥
डहकु न, है उजियरिया, निसि नहिं घाम।
जगत जरत अस लागु मोहिं बिनु राम ॥३७॥
अब जीवन कइ है कपि आस न कोइ।

कनगुरिया कइ मुँदरी कँगना होइ ॥३८॥
राम-सुजस कर चहुँ जुग होत प्रचार ।
असुरन कहँ लखि लागत जग अँधियार ॥३९॥

(कपि-वाक्य)

सिय-बियोग-दुख केहि बिधि कहउँ बखानि ।
फूलबान तें मनसिज बेधत आनि ॥४०॥
सरद चाँदनी सँचरति चहुँ दिसि आनि ।
बिधुहि जोरि कर बिनवति कुलगुरु जानि ॥४१॥

लंका कांड

बिबिध बाहिनी बिलसित सहित अनंत ।
जलधि सरिस को कहै राम भगवंत ॥४२॥

उत्तर कांड

चित्रकूट पयतीर सो सुरतरु-बास ।
लखन राम सिय सुमिरहु तुलसीदास ॥४३॥
पय नहाइ फल खाइ, परिहरिय आस ।
सीयराम-पद सुमिरउ तुलसीदास ॥४४॥
स्वारथ परमारथ हित एक उपाय ।
सीयराम-पद तुलसी प्रेम बढ़ाय ॥४५॥
काल कराल बिलोकउ होइ सचेत ।
रामनाम जपु तुलसी प्रीति समेत ॥४६॥
संकट सोचबिमोचन, मंगलगेह ।
तुलसी रामनाम पर करिय सनेह ॥४७॥

कलि नहिं ज्ञान, बिराग, न जोग, समाधि ।
रामनाम जपु तुलसी नित निरुपाधि ॥४८॥
रामनाम दुइ आखर हिय हितु जानु ।
राम लखन सम तुलसी सिखवन मानु ॥४९॥
माय बाप गुरु स्वामि राम कर नाम ।
तुलसी जेहि न सोहाइ ताहि बिधि बाम ॥५०॥
रामनाम जपु तुलसी होइ बिसोक ।
लोक सकल कल्यान, नीक परलोक ॥५१॥
तप, तीरथ, मख, दान, नेम, उपवास ।
सब तें अधिक राम जपु तुलसीदास ॥५२॥
महिमा रामनाम कइ जान महेस ।
देत परमपद कासी करि उपदेस ॥५३॥
जान आदि-कबि तुलसी नामप्रभाउ ।
उलटा जपत कोल तें भए रिषिराउ ॥५४॥
कलसजोनि जिय जानेउ नामप्रतापु ।
कौतुक सागर सोखेउ करि जिय जापु ॥५५॥
तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि ।
बेद पुरान पुकारत, कहत पुरारि ॥५६॥
रामनाम पर तुलसी नेह निबाहु ।
एहि तें अधिक, न एहि सम जीवनलाहु ॥५७॥
दोष–दुरित–दुख–दारिद–दाहक नाम ।
सकल सुमंगलदायक तुलसी राम ॥५८॥

केहि बिनती महँ ? गिनती जस बनघास ।
राम जपत भए तुलसी तुलसीदास ॥५९॥
आगम निगम पुरान कहत करि लीक ।
तुलसी राम नाम कर सुमिरन नीक ॥६०॥
सुमिरउ नाम राम कर, सेवउ साधु ।
तुलसी उतरि जाउ भव-उदधि अगाधु ॥६१॥
कामधेनु हरिनाम, कामतरु नाम ।
तुलसी सुलभ चारि फल सुमिरत राम ॥६२॥
तुलसी कहत सुनत सब, समुझत कोय ।
बड़े भाग अनुराग राम सन होय ॥६३॥
एकहि एक सिखावत जपत न आप ।
तुलसी रामप्रेम कर बाधक पाप ॥६४॥
मरत कहत सब सब कहँ 'सुमिरउ राम' ।
तुलसी अब नहिं जपत समुझि परिनाम ॥६५॥
तुलसी रामनाम जपु आलस छाँड़ु ।
रामबिमुख कलिकाल को भयउ न भाँड़ु ॥६६॥
तुलसी रामनाम सम मित्र न आन ।
जो पहुँचाव रामपुर तनु अवसान ॥६७॥
नाम भरोस, नाम बल, नाम सनेहु ।
जनम जनम रघुनंदन तुलसिहि देहु ॥६८॥
जनम जनम जहँ जहँ तनु तुलसिहि देहु ।
तहँ तहँ राम निबाहिब नामसनेहु ॥६९॥

वैराग्य-संदीपिनी



दोहा

राम बामदिसि जानकी, लखन दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्यानमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥
तुलसी मिटै न मोहतम, किये कोटि गुनग्राम ।
हृदय कमल फूलै नहीं, बिनु रबि-कुल-रबि राम ॥ २ ॥
सुनत लखन स्रुति नयन बिनु, रसना बिनु रस लेत ।
बास नासिका बिनु लहै, परसै बिना निकेत ॥ ३ ॥

सोरठा

अज अद्वैत अनाम, अलख रूप गुनरहित जो ।
मायापति सोइ राम, दासहेतु नरतनु धरेउ ॥ ४ ॥

दोहा

तुलसी यह तनु खेत है, मन बच कर्म किसान ।
पाप पुन्य द्वै बीज हैं, बवै सो लवै निदान ॥ ५ ॥
तुलसी यह तनु तवा है, तपत सदा त्रय ताप ।
सांति होइ जब सांतिपद, पावै रामप्रताप ॥ ६ ॥
तुलसी बेद-पुरान-मत, पूरन सास्त्र बिचार ।
यह बिराग-संदीपिनी, अखिल ज्ञान को सार ॥ ७ ॥

(संत-स्वभाव-वर्णन)

सरल बरन भाषा सरल, सरल अर्थमय मानि ।
तुलसी सरलै संतजन, ताहि परी पहिचानि ॥ ८ ॥

चौपाई

अति सीतल अति ही सुखदाई । सम दम रामभजन अधिकाई ।
जड़ जीवन को करै सचेता । जग माहीं बिचरत एहि हेता ॥९॥

दोहा

तुलसी ऐसे कहुँ कहूँ, धन्य धरनि वह संत ।
पर काजे परमारथी, प्रीति लिए निबहंत ॥१०॥
की मुख पट दीन्हें रहै, अर्थ यथा भाषंत ।
तुलसी या संसार में, सो बिचारजुत संत ॥११॥
बोलै बचन बिचारि कै, लीन्हें संत सुभाव ।
तुलसी दुख दुर्बचन के, पंथ देत नहिं पाव ॥१२॥
सत्रु न काहू करि गनै, मित्र गनै नहिं काहि ।
तुलसी यह मत संत को, बोलै समता माहिं ॥१३॥

चौपाई

अति अनन्य गति इंद्रीजीता । जाको हरि बिनु कतहुँ न चीता ।
मृगतृष्ना सम जग जिय जानी । तुलसी ताहि संत पहिचानी ॥

दोहा

एक भरोसो एक बल, एक आस बिस्वास ।
राम-रूप-स्वाती-जलद, चातक तुलसीदास ॥१५॥
सो जन जगत-जहाज है, जाके राग न दोष ।
तुलसी तृष्ना त्यागि कै, गहेउ सील संतोष ॥१६॥

सील गहनि सबकी सहनि, कहनि हीय मुख राम।
तुलसी रहिए एहि रहनि, संत जनन को काम ॥१७॥
निज संगी निज सम करत, दुर्जन मन दुख दून।
मलयाचल हैं संतजन, तुलसी दोषबिहून ॥१८॥
कोमल बानी संत की, स्रवै अमृतमय आइ।
तुलसी ताहि कठोर मन, सुनत मैन होइ जाइ ॥१९॥
अनुभव सुख उत्पति करत, भव भ्रम धरै उठाइ।
ऐसी बानी संत की, जो उर भेदै आइ ॥२०॥
सीतल बानी संत की, ससि हू तें अनुमान।
तुलसी कोटि तपनि हरै, जो कोउ धारै कान ॥२१॥

चौपाई

पाप ताप सब सूल नसावै। मोह अंध रबि-बचन बहावै ॥
तुलसी ऐसे सदगुन साधू। बेद मध्य गुन बिदित अगाधू ॥

दोहा

तन करि मन करि बचन करि, काहू दूषत नाहिं।
तुलसी ऐसे संत जन, रामरूप जग माहिं ॥२३॥
मुख देखत पातक हरै, परसत करम बिलाहिं।
बचन सुनत मन मोहगत, पूरुब भाग मिलाहिं ॥२४॥
अति कोमल अरु बिमल रुचि, मानस में मल नाहिं।
तुलसी रत मन होइ रहै, अपने साहिब माहिं ॥२५॥
जाके मन तें उठि गई, तिल तिल तृष्ना चाहि।
मनसा बाचा कर्मना, तुलसी बंदत ताहि ॥२६॥

कंचन काँचहि सम गनै, कामिनि काठ पखान ।
तुलसी ऐसे संतजन, पृथिवी ब्रह्म समान ॥२७॥

चौपाई

कंचन कों मृतिका करि मानत । कामिनि काष्ठ सिला पहिचानन ॥
तुलसी भूलि गयो रस एहा । ते जन प्रगट राम की देहा ॥२८॥

दोहा

आकिंचन, इंद्रियदमन, रमन राम इकतार ।
तुलसी ऐसे संतजन, बिरले या संसार ॥२९॥
अहंवाद, 'मैं तैं' नहीं, दुष्टसंग नहिं कोइ ।
दुख तें दुख नहिं ऊपजै, सुख तें सुख नहिं होइ ॥३०॥
सम कंचन काँचै गिनत, सत्रु मित्र सम दोइ ।
तुलसी या संसार में, कहत संतजन सोइ ॥३१॥
बिरले बिरले पाइए, माया त्यागी संत ।
तुलसी कामी कुटिल कलि, केकी काक अनंत ॥३२॥
"मैं तैं" मेट्यो मोहतम, ऊगो आतम - भानु ।
संतराज सो जानिए, तुलसी या सहिदानु ॥३३॥

(संत-महिमा-वर्णन)

सोरठा

को बरनै मुख एक, तुलसी महिमा संत की ।
जिन्हके बिमल बिबेक, सेष महेस न कहि सकत ॥३४॥

दोहा

महि पत्री करि सिंधु मसि, तरु लेखनी बनाइ ।
तुलसी गनपति सों तदपि, महिमा लिखी न जाइ ॥३५॥

धन्य धन्य माता-पिता, धन्य पुत्रवर सोइ ।
तुलसी जो रामहिं भजै, जैसेहु कैसेहु होइ ॥३६॥
तुलसी जाके बदन तें, धोखेउ निकसत राम ।
ताके पग की पगतरी, मेरे तनु को चाम ॥३७॥
तुलसी भगत सुपच भलो, भजै रैनि दिन राम ।
ऊँचो कुल केहि कामको, जहाँ न हरि को नाम ॥३८॥
अति ऊँचे भूधरनि पर, भुजँगन के अस्थान ।
तुलसी अति नीचे सुखद, ऊख अन्न अरु पान ॥३९॥

चौपाई

अति अनन्य जो हरि को दासा। रटै नाम निसि दिन प्रति स्वासा।
तुलसी तेहि समान नहिं कोई । हम नीके देखा सब लोई ॥४०॥
जदपि साधु सबही बिधि हीना । तद्यपि समता के न कुलीना ॥
यह दिन रैनि नाम उच्चरै । वह नित मान-अगिनि में जरै ॥

दोहा

दास रता एक नाम सों, उभय लोक सुख त्यागि ।
तुलसी न्यारे है रहै, दहै न दुख की आगि ॥४२॥

(शांति-वर्णन)

दोहा

रैनि को भूषन इंदु है, दिवस को भूषन भानु ।
दास को भूषन भक्ति है, भक्ति को भूषन ज्ञान ॥४३॥
ज्ञान को भूषन ध्यान है, ध्यान को भूषन त्याग ।
त्याग को भूषन सांतिपद, तुलसी अमल अदाग ॥४४॥

चौपाई

अमल अदाग सांतिपद सारा। सकल कलेस न करत प्रहारा ॥
तुलसी उर धारै जो कोई। रहै अनंदसिंधु महँ सोई ॥४५॥
बिबधि-पाप-संभव जो तापा। मिटहिं दोष दुख दुसह कलापा ॥
परम सांति सुख रहै समाई। तहँ उतपात न भेदै आई ॥४६॥
तुलसी ऐसे सीतल संता। सदा रहैं एहि भाँति एकंता ॥
कहा करैं खल लोग भुजंगा। कीन्ह्यौं गरल सील जो अंगा ४७

दोहा

अति सीतल अति ही अमल, सकल कामनाहीन।
तुलसी ताहि अतीत गनि, बृत्ति सांति लयलीन ॥४८॥

चौपाई

जौ कोइ कोप भरै मुख बैना। सनमुख हनै गिरा-सर पैना ॥
तुलसी तऊ लेस रिस नाहीं। सो सीतल कहिए जग माहीं ४९

दोहा

सात द्वीप नव खंड लौं, तीनि लोक जग माहिं।
तुलसी सांति समान सुख, अपर दूसरो नाहिं ॥५०॥

चौपाई

जहाँ सांति सतगुरु की दई। तहाँ क्रोध की जर जरि गई ॥
सकल कामबासना बिलानी। तुलसी यहै सांति सहिदानी ५१
तुलसी सुखद सांति को सागर। संतन गायो करन उजागर ॥
तामैं तन मन रहै समोई। अहं-अगिनि नहिं दाहै कोई ॥

दोहा

अहंकार की अगिनि में, दहत सकल संसार।

तुलसी बाँचैं संतजन, केवल सांति - अधार ॥५३॥
महा सांतिजल परसि कै, सांत भए जन जोइ ।
अहं अगिनि तें नहिं दहैं, कोटि करै जो कोइ ॥५४॥
तेज होत तन तरनि को, अचरज मानत लोइ ।
तुलसी जो पानी भया, बहुरि न पावक होइ ॥५५॥
जद्यपि सीतल सम सुखद, जग मैं जीवन प्रान ।
तदपि सांति जल जनि गनौ, पावक तेज प्रमान ॥५६॥

चौपाई

जरै बरै अरु खीझि खिझावै । राग द्वेष महँ जनम गँवावै ॥
सपनेहु सांति नहीं उन देही । तुलसी जहाँ जहाँ ब्रत एही ॥

दोहा

सोइ पंडित सोइ पारखी, सोई संत सुजान ।
सोई सूर सचेत सो, सोई सुभट प्रमान ॥५८॥
सोइ ज्ञानी सोइ गुनी जन, सोई दाता ध्यानि ।
तुलसी जाके चित भई, राग द्वेष की हानि ॥५९॥

चौपाई

राग द्वेष की अगिनि बुझानी । काम क्रोध बासना नसानी ॥
तुलसी जबहिं सांति गृह आई । तब उर ही उर फिरी दोहाई ॥६०

दोहा

फिरी दोहाई राम की, गे कामादिक भाजि ।
तुलसी ज्यों रवि के उदय, तुरत जात तम लाजि ॥६१॥
यह बिराग-संदीपिनी, सुजन सुचित सुनि लेहु ।
अनुचित बचन बिचारि कै, जस सुधारि तस देहु ॥६२॥

जानकी-मंगल

मंगल छंद

गुरु गनपति गिरिजापति गौरि गिरापति ।
सारद सेष सुकबि स्रुति संत सरल मति ।
हाथ जोरि करि बिनय सबहि सिर नावौं ।
सिय - रघुबीर - बिबाहु यथामति गावौं ॥ १ ॥
सुभ दिन रच्यो स्वयंबर मंगलदायक ।
सुनत स्रवन हिय बसहिं सीय-रघुनायक ।
देस सुहावन पावन बेद बखानिय ।
भूमि तिलक सम तिरहुत त्रिभुवन जानिय ॥ २ ॥
तहँ बस नगर जनकपुर परम उजागर ।
सीय लच्छि जहँ प्रगटी सब सुखसागर ।
जनक नाम तेहि नगर बसै नरनायक ।
सब गुनअवधि, न दूसर पटतर लायक ॥ ३ ॥
भएउ न होइहि, है न, जनक सम नरवइ ।
सीय सुता भै जासु सकल मंगलमइ ।
नृप लखि कुँअरि सयानि बोलि गुरु परिजन ।
करि मत रचेउ स्वयंबर सिवधनु धरि पन ॥ ४ ॥
पनु धरेउ सिवधनु रचि स्वयंबर अति रुचिर रचना बनी ।
जनु प्रगटि चतुरानन देखाई चतुरता सब आपनी ।

पुनि देस देस सँदेस पठएउ भूप सुनि सुख पावहीं।
सब साजि साजि समाज राजा जनक-नगरहिं आवहीं ॥ ५ ॥

रूप सील बय बंस बिरुद बल दल भले।
मनहुँ पुरंदरनिकर उतरि अवनी चले।
दानव देव निसाचर किन्नर अहिगन।
सुनि धरि धरि नृपबेष चले प्रमुदित मन ॥ ६ ॥
एक चलहिं, एक बीच, एक पुर पैठहिं।
एक धरहिं धनु धाय नाइ सिरु बैठहिं।
रंगभूमि पुर कौतुक एक निहारहिं।
ललकि लोभाहिं नयन मन, फेरि न पारहिं ॥ ७ ॥
जनकहि एक सिहाहिं देखि सनमानत।
बाहर भीतर भीर न बनै बखानत।
गान निसान कोलाहल कौतुक जहँ तहँ।
सीय-बिबाह-उछाह जाइ कहि का पहँ ? ॥ ८ ॥
गाधिसुअन तेहि अवसर अवध सिधाएउ।
नृपति कीन्ह सनमान भवन लै आएउ।
पूजि पहुनई कीन्हि पाइ प्रिय पाहुन।
कहेउ भूप "मोहिं सरिस सुकृत किए काहु न" ॥ ९ ॥

'काहु न कीन्हेउ सुकृत' सुनि मुनि मुदित नृपहि बखानहीं।
महिपाल मुनि को मिलन सुख महिपाल मुनि मन जानहीं।
अनुराग भाग सोहाग सील सरूप बहु भूषन भरीं।
हिय हरषि सुतन्ह समेत रानी आइ रिषि-पायन्ह परीं ॥१०॥

कौसिक दीन्हि असीस सकल प्रमुदित भई ।
सींची मनहुँ सुधारस कलपलता नई ।
रामहिं भाइन्ह सहित जबहिं मुनि जोहेउ ।
नैन नीर, तनु पुलक, रूप मन मोहेउ ॥११॥
परसि कमलकर सीस, हरषि हिय लावहिं ।
प्रेमपयोधि-मगन मुनि, पार न पावहिं ।
मधुर मनोहर मूरति सादर चाहहिं ।
बार बार दसरथ के सुकृत सराहहिं ॥१२॥
राउ कहेउ कर जोरि सुबचन सुहावन ।
"भयउँ कृतारथ आजु देखि पद पावन ।
तुम्ह प्रभु पूरनकाम, चारि-फल-दायक ।
तेहि तें बूझत काजु डरौं मुनिनायक" ॥१३॥
कौसिक सुनि नृपबचन सराहेउ राजहिं ।
धर्मकथा कहि कहेउ गएउ जेहि काजहिं ।
जबहिं मुनीस महीसहिं काजु सुनाएउ ।
भएउ सनेह-सत्य-बस उतरु न आएउ ॥१४॥
आयउ न उतरु बसिष्ठ लखि बहु भाँति नृप समुझायऊ ।
कहि गाधिसुत तप-तेज कछु रघुपतिप्रभाउ जनायऊ ।
धीरजु धरेउ गुरुबचन सुनि कर जोरि कह कोसलधनी ।
"करुनानिधान सुजान प्रभु सों उचित नहिं बिनती घनी ॥१५॥
नाथ मोहिं बालकन्ह सहित पुर परिजन ।
राखनहार तुम्हार अनुग्रह घर बन" ।

दीन बचन बहु भाँति भूप मुनि सन कहे।
सौंपि राम अरु लखन पाँय-पंकज गहे ॥१६॥
पाइ मातु-पितु-आयसु गुरु पाँयन्ह परे।
कटि निखंग पट पीत, करनि सर धनु धरे।
पुरबासी नृप रानिन्ह संग दिए मन।
बेगि फिरेउ करि काज कुसल रघुनंदन ॥१७॥
ईस मनाइ असीसहिं जय जस पावहु।
न्हात खसै जनि बार, गहरु जनि लावहु।
चलत सकल पुरलोग बियोग बिकल भए।
सानुज भरत सप्रेम राम पायन्ह नए ॥१८॥
होहिं सगुन, सुभ मंगल जनु कहि दीन्हेउ।
राम लखन मुनि साथ गवन तब कीन्हेउ।
स्यामल गौर किसोर मनोहरतानिधि।
सुखमा सकल सकेलि मनहुँ बिरचे बिधि ॥१९॥
बिरचे बिरंचि बनाइ बाँची रुचिरता रंचौ नहीं।
दसचारि भुअन निहारि देखि बिचारि नहिं उपमा कहीं।
रिषि संग सोहत जात मगु छबि बसति सो तुलसी हिए।
कियो गवन जनु दिननाथ उत्तर संग मधु माधव लिए ॥२०॥
गिरि तरु बेलि सरित सर बिपुल बिलोकहिं।
धावहिं बाल सुभाय, बिहँग मृग रोकहिं।
सकुचहिं मुनिहिं सभीत बहुरि फिरि आवहिं।
तोरि फूल फल किसलय माल बनावहिं ॥२१॥

देखि बिनोद, प्रमोद प्रेम कौसिक उर ।
करत जाहिं घन छाँह, सुमन बरषहिं सुर ।
बधी ताड़का, राम जानि सब लायक ।
बिद्या-मंत्र रहस्य दिए मुनिनायक ॥२२॥
मग-लोगन्ह के करत सुफल मन लोचन ।
गए कौसिक आस्रमहिं बिप्र - भय - मोचन ।
मारि निसाचर - निकर जग्य करवाएउ ।
अभय किए मुनिबृंद जगत जसु गाएउ ॥२३॥
बिप्र साधु सुरकाज महामुनि मन धरि ।
रामहिं चले लिवाइ धनुष मख मिसु करि ।
गौतमनारि उधारि पठै पति-धामहिं ।
जनक नगर लै गयउ महामुनि रामहिं ॥२४॥
लै गएउ रामहिं, गाधिसुवन बिलोकि पुर हरषे हिए ।
सुनि राउ आगे लेन आएउ सचिव गुरु भूसुर लिए ।
नृप गहे पाँय, असीस पाई, मान आदर अति किए ।
अवलोकि रामहिं अनुभवत मनु ब्रह्मसुख सौगुन दिए ॥२५॥
देखि मनोहर मूरति मन अनुरागेउ ।
बँधेउ सनेह बिदेह, बिराग बिरागेउ ।
प्रमुदित हृदय सराहत भल भवसागर ।
जहँ उपजहिं अस मानिक, बिधि बड़ नागर ॥२६॥
पुन्यपयोधि मातुपितु ए सिसु सुरतरु ।
रूप-सुधा-सुख देत नयन अमरनि बरु ।

"केहि सुकृती के कुँअर" कहिय मुनिनायक।
"गौर स्याम छविधाम धरे धनुसायक ॥२७॥
बिषयबिमुख मन मोर सेइ परमारथ।
इन्हहिं देखि भयो मगन जानि बड़ स्वारथ।
कहेउ सप्रेम पुलकि मुनि सुनि, "महिपालक !
ये परमारथरूप ब्रह्ममय बालक ॥२८॥
पूषन - बंस - बिभूषन दसरथनंदन।
नाम राम अरु लखन सुरारि निकंदन"।
रूप सील बय बंस राम परिपूरन।
समुझि कठिन पन आपन लाग बिसूरन ॥२९॥
लागे बिसूरन समुझि पन मन बहुरि धीरज आनि कै।
लै चले देखावन रंगभूमि अनेक बिधि सनमानि कै।
कौसिक सराही रुचिर रचना, जनक सुनि हरषित भए।
तब राम लखन समेत मुनि कहँ सुभग सिंहासन दए ॥३०॥
राजत राजसमाज जुगल रघुकुलमनि।
मनहुँ सरदबिधु उभय, नखत धरनी धनि।
काकपच्छ सिर, सुभग सरोरुहलोचन।
गौर स्याम सत - कोटि-काम-मद - मोचन ॥३१॥
तिलकु ललित सर भृकुटी काम कमानै।
स्रवन बिभूषन रुचिर देखि मन मानै।
नासा चिबुक कपोल अधर रद सुंदर।
बदन सरद-बिधु-निंदक सहज मनोहर ॥३२॥

उर बिसाल बृषकंध सुभग भुज अति बल।
पीत बसन उपवीत, कंठ मुकुताफल।
कटि निखंग, कर-कमलन्हि धरे धनुसायक।
सकल अंग मनमोहन जोहन लायक ॥३३॥
राम-लखन-छबि देखि मगन भए पुरजन।
उर आनँद, जल लोचन, प्रेम पुलक तन।
नारि परस्पर कहहिं देखि दुहुँ भाइन्ह।
"लहेउ जनम फल आजु जनमि जग आइन्ह ॥३४॥
जग जनमि लोयनलाहु पाए" सकल सिवहिं मनावहीं।
"बर मिलौ सीतहि साँवरो हम हरखि मंगल गावहीं।
इक कहहिं "कुँअर किसोर कुलिस-कठोर सिवधनु है महा।
किमि लेहिं बाल मराल मंदर नृपहिं अस काहु न कहा" ॥३५॥
भे निरास सब भूप बिलोकत रामहिं।
"पन परिहरि सिय देब जनक बरु स्यामहिं।
कहहिं एक "भलि बात, ब्याहु भल होइहि।
बर दुलहिनि लगि जनक अपन पन खोइहि" ॥३६॥
सुचि सुजान नृप कहहिं "हमहिं अस सूझइ।
तेज प्रताप रूप जहँ तहँ बल बूझइ।
चितइ न सकहु सामतन, गाल बजावहु।
बिध बस बलउ लजान, सुमति न लजावहु ॥३६॥
अवसि राम के उठत सरासन टूटिहि।
गवनिहि राजसमाज नाक असि फूटिहि।

कस न पियहु भरि लोचन रूप-सुधा-रसु ।
करहु कृतारथ जनम, होहु कत नरपसु" ॥३८॥
दुहुँ दिसि राजकुमार बिराजत मुनिबर ।
नील पीत पाथोज बीच जनु दिनकर ।
काकपच्छ रिषि परसत पानि सरोजनि ।
लाल कमल जनु लालत बालमनोजनि ॥३९॥
"मनसिज मनोहर मधुर मूरति कस न सादर जोवहू ।
बिनु काज राजसमाज महुँ तजि लाज आपु बिगोवहू" ।
सिख देइ भूपनि साधु भूप अनूप छबि देखन लगे ।
रघुबंस कैरवचंद चितइ चकोर जिमि लोचन ठगे ॥४०॥
पुर-नर-नारि निहारहिं रघुकुलदीपहिं ।
दोसु नेहबस देहिं बिदेह महीपहिं ।
एक कहहिं "भल भूप, देहु जनि दूषन ।
नृप न सोह बिनु बचन, नाक बिनु भूषन ॥४१॥
हमरे जान जनेस बहुत भल कीन्हेउ ।
पन मिस लोचनलाहु सबन्हि कहुँ दीन्हेउ ।
अस सुकृती नरनाहु जो मन अभिलाषिहि ।
सो पुरइहि जगदीस पैज पन राखिहि ॥४२॥
प्रथम सुनत जो राउ राम - गुन - रूपहिं ।
बोलि ब्याहि सिय देत दोष नहिं भूपहिं ।
अब करि पैज पंच महँ जो पन त्यागै ।
बिधिगति जानि न जाइ, अजसु जग जागै ॥४३॥

अजहुँ अवसि रघुनंदन चाप चढ़ाउब ।
ब्याह उछाह सुमंगल त्रिभुवन गाउब" ।
लागि झरोखन्ह झाँकहिं भूपतिभामिनि ।
कहत बचन रद लसहिं दमक जनु दामिनि ॥४४॥
जनु दमक दामिनि, रूप रति मद निदरि सुंदरि सोहहीं ।
मुनि ढिग देखाए सखिन्ह कुँवर बिलोकि छबि मन मोहहीं ।
सियमातु हरषी निरखि सुखमा अति अलौकिक राम की ।
हिय कहति 'कहँ धनु कुँवर कहँ बिपरीत गति बिधि बाम की ।४५।
"कहाँ कठिन सिवधनुष कहाँ मृदुमूरति ।
कहि अस बचन सखिन्ह सन रानि बिसूरति ।
"जो बिधि लोचन अतिथि करत नहिं रामहिं ।
तौ कोउ नृपहि न देत दोसु परिनामहिं ॥४६॥
अब असमंजस भएउ न कछु कहि आवै" ।
रानिहि जानि ससोच सखी समुझावै ।
"देवि! सोचु परिहरिय, हरष हिय आनिय ।
चाप चढ़ाउब राम बचन फुर मानिय ॥४७॥
तीनि काल कर ज्ञान कौसिकहिं करतल ।
सो कि स्वयंबर आनहि बालक बिनु बल ?
मुनिमहिमा सुनि रानिहिं धीरजु आयउ ।
तब सुबाहु - सूदन - जसु सखिन्ह सुनायउ ॥४८॥
सुनि जिय भएउ भरोस रानि हिय हरखइ ।
बहुरि निरखि रघुबरहिं प्रेम मन करखइ ।

नृप रानी पुरलोग राम तन चितवहिं।
मंजु मनोरथ-कलस भरहिं अरु रितवहिं ॥४९॥
रितवहिं भरहिं धनु निरखि छिनु छिनु निरखि रामहिं सोचहीं।
नर-नारि हरष-बिषाद-बस हिय सकल सिवहिं सकोचहीं।
तब जनक-आयसु पाइ कुलगुरु जानकिहिं लै आयऊ।
सिय रूपरासि निहारि लोचनलाहु लोगन्हि पायऊ ॥५०॥
मंगल भूषन बसन मंजु तन सोहहिं।
देखि मूढ़ महिपाल मोहबस मोहहिं।
रूपरासि जेहि ओर सुभाय निहारइ।
नील-कमल-सर श्रेनि मयन जनु डारइ ॥५१॥
छिनु सीतहिं छिनु रामहिं पुरजन देखहिं।
रूप सील बय बंस बिसेष बिसेषहिं।
राम दीख जब सीय, सीय रघुनायक।
दोउ तन तकि तकि मयनु सुधारत सायक ॥५२॥
प्रेम प्रमोद परस्पर प्रगटत गोपहिं।
जनु हिरदय गुन-ग्राम-थूनि थिर रोपहिं।
रामसीय बय, समौ, सुभाय सुहावन।
नृप-जोबन छबि-पुरहिं चहत जनु आवन ॥५३॥
सो छबि जाइ न बरनि देखि मन मानै।
सुधापान करि मूक कि स्वाद बखानै?
तब बिदेहपन बंदिन्ह प्रगटि सुनायउ।
उठे भूप आमरषि, सगुन नहिं पायउ ॥५४॥

नहिं सगुन पायेउ रहे मिसु करि, एक धनु देखन गए ।
टकटोरि कपि ज्यौं नारियरु, सिर नाइ सब बैठत भए ।
इक करहिं दाप, न चाप सज्जनबचन जिमि टारे टरै ।
नृप नहुष ज्यों सबके बिलोकत बुद्धिबल बरबस हरै ॥५५॥

देखि सपुर परिवार जनक हिय हारेउ ।
नृपसमाज जनु तुहिन बनजबन मारेउ ।
कौसिक जनकहिं कहेउ "देहु अनुसासन ।
देखि भानु-कुल-भानु इसानु-सरासन" ॥५६॥
"मुनिबर तुम्हरे बचन मेरु महि डोलहिं ।
तदपि उचित आचरत पाँच भल बोलहिं ।
बानु बानु जिमि गयउ, गवहिं दसकंधरु ।
को अवनीतल इन्ह सम बीरधुरंधरु ॥५७॥
पारबती-मन सरिस अचल, धनु चालक ।
हहिं पुरारि तेउ एक नारिब्रत-पालक ।
सो धनु कहि अवलोकन भूप किसोरहिं ।
भेद कि सिरिस सुमनकन कुलिस कठोरहिं ॥५८॥
रोम रोम छबि निंदति सोम मनोजनि ।
देखिय मूरति, मलिन करिय मुनि सो जनि ।
मुनि हँसि कहेउ "जनक यह मूरति सोहइ ।
सुमिरत सकृत मोहमल सकल बिछोहइ ॥५९॥

सब मल-बिछोहनि जानि मूरति जनक कौतुक देखहू ।
धनुसिंधु नृप-बल-जल बढ्यो रघुबरहिं कुंभज लेखहू ।

सुनि सकुचि सोचहिं जनक, गुरु पद बंदि रघुनंदन चले ।
नहिं हरष हृदय बिषाद कछु भए सगुन सुभ मंगल भले ॥६०॥

बरिसन लगे सुमन सुर, दुंदुभि बाजहिं ।
मुदित जनक पुर-परिजन नृपगन लाजहिं ।
महि महिधरनि लखन कह बलहिं बढ़ावन ।
राम चहत सिवचापहिं चपरि चढ़ावन ॥६१॥
गए सुभाय राम जब चाप समीपहिं ।
सोच सहित परिवार बिदेह महीपहिं ।
कहि न सकति कछु सकुचनि, सिय हिय सोचइ ।
गौरि गनेस गिरीसहिं सुमिरि सकोचइ ॥६२॥
होति बिरह-सर-मगन देखि रघुनाथहिं ।
फरकि बाम भुज नयन देहिं जनु हाथहिं ।
धीरज धरति, सगुन बल रहत सो नाहिंन ।
बरु किसोर धनु घोर दइउ नहिं दाहिन ॥६३॥
अंतरजामी राम मरम सब जानेउ ।
धनु चढ़ाइ कौतुकहिं कान लगि तानेउ ।
प्रेम परखि रघुबीर सरासन भंजेउ ।
जनु मृग-राज-किसोर महा गज गंजेउ ॥६४॥

गंजेउ सो गरजेउ घोर धुनि सुनि भूमि भूधर लरखरे ।
रघुबीर जस-मुकुता बिपुल सब भुवन पटु पेटक भरे ।
हित मुदित, अनहित रुदित मुख, छबि कहत कबि धनु जाग की ।
जनु भोर चक्क चकोर कैरव सघन कमल तड़ाग की ॥६५॥

नभ पुर मंगल गान निसान गहागहे ।
देखि मनोरथ-सुरतरु ललित लहालहे ।
तब उपरोहित कहेउ, सखी सब गावत ।
चलीं लेवाइ जानकिहिं भा मनभावत ॥६६॥
कर-कमलनि जयमाल जानकी सोहइ ।
बरनि सकै छबि अतुलित अस कबि को हइ ?
सीय सनेह-सकुच-बस पिय तन हेरइ ।
सुरतरु रुख सुरबेलि पवन जनु फेरइ ॥६७॥
लसत ललित करकमल माल पहिरावत ।
कामफंद जनु चंदहिं बनज फँदावत ।
राम-सीय-छबि निरुपम, निरुपम सो दिनु ।
सुखसमाज लखि रानिन्ह आनँद छिनु छिनु ॥६८॥
प्रभुहिं माल पहिराइ जानकिहिं लै चली ।
सखी मनहुँ बिधु उदय मुदित कैरव-कली ।
बरषहिं बिबुध प्रसून हरषि कहि जय जय ।
सुख सनेह भरे भुवन, राम गुरु पहिं गय ॥६९॥

गए राम गुरु पहिं, राउ रानी नारि नर आनँद भरे ।
जनु तृषित करि करिनी निकर सीतल सुधासागर परे ।
कौसिकहिं पूजि प्रसंसि आयसु पाइ नृप सुख पाएऊ ।
लिखि लगन तिलक समाज सजि कुलगुरुहिं अवध पठाएऊ ॥७०॥

गुनिगन बोलि कहेउ नृप माँड़व छावन ।
गावहिं गीत सुआसिनि, बाज बधावन ।

सीय-राम-हित पूजहिं गौरि गनेसहिं।
परिजन पुरजन सहित प्रमोद नरेसहिं ॥७१॥
प्रथम हरदि बंदन करि मंगल गावहिं।
करि कुलरीति, कलस थपि तेलु चढ़ावहिं।
गे मुनि अवध, बिलोकि सुसरित नहायउ।
सतानंद सत-कोटि नाम-फल पायउ ॥७२॥
नृप सुनि आगे आइ पूजि सनमानेउ।
दीन्हि लगन कहि कुसल राउ हरषानेउ।
सुनि पुर भएउ अनंद बधाव बजावहिं।
सजहिं सुमंगल कलस बितान बनावहिं ॥७३॥
राउ छाँड़ि सब काज, साज सब साजहिं।
चलेउ बरात बनाइ पूजि गनराजहिं।
बाजहिं ढोल निसान सगुन सुभ पाइन्हि।
सिय नैहर जनकौर नगर नियराइन्हि ॥७४॥

नियरानि नगर बरात हरषी लेन अगवानी गए।
देखत परस्पर मिलत, मानत, प्रेमपरिपूरन भए।
आनंद पुर कौतुक कोलाहल बनत सो बरनत कहाँ।
लै दियो तहँ जनवास सकल सुपास नित नूतन जहाँ ॥७५॥

गे जनवासहिं कौसिक रामलखन लिए।
हरषे निरखि बरात प्रेम प्रमुदित हिए।
हृदय लाइ लिए गोद मोद अति भूपहिं।
कहि न सकहिं सत सेष अनंद अनूपहिं ॥७६॥

राय कौसिकहिं पूजि दान बिप्रन्ह दिए ।
राम सुमंगल हेतु सकल मंगल किए ।
ब्याह-बिभूषन-भूषित भूषन-भूषन ।
बिस्वबिलोचन-बनजबिकासक पूषन ॥७७॥
मध्य बरात बिराजत अति अनुकूलेउ ।
मनहुँ काम आराम कलपतरु फूलेउ ।
पठई भेंट बिदेह बहुत बहु भाँतिन्ह ।
देखत देव सिहाहिं अनंद बरातिन्ह ॥७८॥
बेदबिहित कुलरीति कीन्हि दुहुँ कुलगुर ।
पठई बोलि बरात जनक प्रमुदित उर ।
जाइ कहेउ "पगु धारिय" मुनि अवधेसहिं ।
चले सुमिरि गुरु गौरि गिरीस गनेसहिं ॥७९॥
चले सुमिरि गुरु सुर सुमन बरषहिं, परे बहु बिधि पाँवड़े ।
सनमानि सब बिधि जनक दसरथ किए प्रेम कनावड़े ।
गुन सकल सम समधी परस्पर मिलत अति आनँद लहे ।
जय धन्य जय जय धन्य धन्य बिलोकि सुर नर मुनि कहे ॥८०॥
तीनि लोक अवलोकहिं नहिं उपमा कोउ ।
दसरथ जनक समान जनक दसरथ दोउ ।
सजहिं सुमंगल साज रहस रनिवासहिं ।
गान करहिं पिकबैनि सहित परिहासहिं ॥८१॥
उमा रमादिक सुरतिय सुनि प्रमुदित भइँ ।
कपट नारि-बर-बेष बिरचि मंडप गइँ ।

मंगल आरति साजि बरहिं परिछन चलीं।
जनु बिगसीं रबि-उदय कनक-पंकज-कलीं॥८२॥
नखसिख सुंदर रामरूप जब देखहिं।
सब इंद्रिन्ह महँ इंद्रबिलोचन लेखहिं।
परम प्रीति कुलरीति करहिं गजगामिनि।
नहिं अघाहिं अनुराग भाग भरि भामिनि॥८३॥
नेग-चारु कहँ नागरि गहरु लगावहिं।
निरखि निरखि आनंद सुलोचनि पावहिं।
करि आरती निछावरि बरहिं निहारहिं।
प्रेममगन प्रमदागन तनु न सम्हारहिं॥८४॥
नहिं तनु सम्हारहिं, छबि निहारहिं निमिष रिपु जनु रन जए।
चक्कवै-लोचन रामरूप-सुराज-सुख भोगी भए।
तब जनक सहित समाज राजहिं उचित रुचिरासन दए।
कौसिक बसिष्ठहिं पूजि पूजे राउ दै अंबर नए॥८५॥
देत अरघ रघुबीरहिं मंडप लै चलीं।
करहिं सुमंगल गान उमँगि आनँद अलीं।
बर बिराज मंडप महँ बिस्व बिमोहइ।
रितु बसंत बनमध्य मदन जनु सोहइ॥८६॥
कुल-बिवहार, बेदबिधि चाहिय जहँ जस।
उपरोहित दोउ करहिं मुदित मन तहँ तस।
बरहिं पूजि नृप दीन्ह सुभग सिंहासन।
चलीं दुलहिनहिं ल्याइ पाइ अनुसासन॥८७॥

जुवति जूथ महँ सीय सुभाइ बिराजइ।
उपमा कहत लजाइ भारती भाजइ।
दूलह दुलहिनि देखि नारि-नर हरषहिं।
छिनु छिनु गान निसान सुमन सुर बरषहिं ॥८८॥
लै लै नाउँ सुआसिनि मंगल गावहिं।
कुँवर कुँवरि हित गनपति गौरि पुजावहिं।
अगिनि थापि मिथिलेस कुसोदक लीन्हेउ।
कन्यादान बिधान संकलप कीन्हेउ ॥८९॥
संकलपि सिय रामहिं समरपी सील सुख सोभामई।
जिमि संकरहिं गिरिराज गिरिजा,हरिहिं श्री सागर दई।
सिंदूरबंदन होम लावा होन लागीं भाँवरी।
सिलपोहनी करि मोहनी मन हर्यौ मूरति साँवरी ॥९०॥
यहि बिधि भयो बिवाह उछाह तिहूँ पुर।
देहिं असीस मुनीस सुमन बरसहिं सुर।
मनभावत बिधि कीन्ह, मुदित भामिनि भईं।
बर दुलहिनहिं लेवाइ सखी कोहबर गईं ॥९१॥
निरखि निछावरि करहिं बसन मनि छिनु छिनु।
जाइ न बरनि बिनोद मोदमय सो दिनु।
सियभ्राता के समय भौम तहँ आयउ।
दुरीदुरा करि नेगु सुनात जनायउ ॥९२॥
चतुर नारि बर कुँवरिहिं रीति सिखावहिं।
देहिं गारि लहकौर समय सुख पावहिं।

जुआ खेलावत कौतुक कीन्ह सयानिन्ह ।
जीति-हारि-मिस देहिं गारि दुहुँ रानिन्ह ॥९३॥
सीयमातु मन मुदित उतारति आरति ।
को कहि सकइ अनंद मगन भइ भारति ।
जुवति जूथ रनिवास रहस-बस यहि बिधि ।
देखि देखि सिय राम सकल मंगलनिधि ॥९४॥

मंगलनिधान बिलोकि लोयन-लाहु लूटति नागरी ।
दइ जनक तीनिहु कुँवरि कुँवर बिबाहि सुनि आनँदभरी ।
कल्यान मो कल्यान पाइ बितान छबि मन मोहई ।
सुरधेनु, ससि, सुरमनि सहित मानहु कलपतरु सोहई ॥९५॥

जनक अनुज-तनया दुइ परम मनोरम ।
जेठि भरत कहँ ब्याहि रूप रति सय सम ।
सिय लघुभगिनि लखन कहँ रूप-उजागरि ।
लखन-अनुज श्रुतिकीरति सब-गुन-आगरि ॥९६॥
रामबिवाह समान ब्याह तीनिउ भए ।
जीवनफल, लोचनफल बिधि सब कहँ दए ।
दाइज भयउ बिबिध बिध, जाइ न सो गनि ।
दासी, दास, बाजि, गज, हेम, बसन, मनि ॥९७॥
दान मान परमान प्रेम पूरन किए ।
समधी सहित बरात बिनय बस करि लिए ।
गे जनवासेहिं राउ, संग सुत सुतबहु ।
जनु पाए फल चारि सहित साधन चहुँ ॥९८॥

चहुँ प्रकार जेवनार भई बहु भाँतिन्ह ।
भोजन करत अवधपति, सहित बरातिन्ह ।
देहिं गारि बर नारि नाम लै दुहुँ दिसि ।
जेंवत बढ़ेउ अनंद, सोहावनि सो निसि ॥९९॥
सो निसि सोहावनि, मधुर गावनि, बाजने बाजहिं भले ।
नृप कियो भोजन पान, पाइ प्रमोद जनवासहिं चले ।
नट भाट मागध सूत जाचक जस प्रतापहिं बरनहीं ।
सानंद भूसुर-बृंद मनि गज देत मन करषै नहीं ॥१००॥
करि करि बिनय कछुक दिन राखि बरातिन्ह ।
जनक कीन्ह पहुनाई अगनित भाँतिन्ह ।
'प्रात बरात चलिहि' सुनि भूपतिभामिनि ।
परि न बिरहबस नींद, बीति गइ जामिनि ॥१०१॥
खरभर नगर, नारि नर बिधिहिं मनावहिं ।
बार बार ससुरारि राम जेहि आवहिं ।
सकल चलन के साज जनक साजत भए ।
भाइन्ह सहित राम तब भूपभवन गए ॥१०२॥
सासु उतारि आरती करहिं निछावरि ।
निरखि निरखि हिय हरषहिं मूरति साँवरि ।
माँगेउ बिदा राम तब, सुनि करुना भरी ।
परिहरि सकुच सप्रेम पुलकि पायन्ह परी ॥१०३॥
सीय सहित सब सुता सौंपि कर जोरहिं ।
बार बार रघुनाथहिं निरखि निहोरहिं ।

"तात तजिय जनि छोह मया राखबि मन ।
अनुचर जानब राउ सहित पुर परिजन ॥१०४॥
जन जानि करब सनेह, बलि कहि दीन बचन सुनावहीं ।
अति प्रेम बारहिं बार रानी बालकन्हि उर लावहीं ।
सिय चलत पुरजन नारि हय गय बिहँग मृग ब्याकुल भए ।
सुनि बिनय सासु प्रबोधि तब रघुबंसमनि पितु पहिं गए ॥१०५॥
परेउ निसानहिं घाउ राउ अवधहिं चले ।
सुरगन बरषहिं सुमन सगुन पावहिं भले ।
जनक जानकिहिं भेंटि सिखाइ सिखावन ।
सहित सचिव गुरु बंधु चले पहुँचावन ॥१०६॥
प्रेम पुलकि कह राय "फिरिय अब राजन ।
करत परसपर बिनय सकल गुन भाजन ।
कहेउ जनक कर जोरि "कीन्ह मोहिं आपन ।
रघुकुल-तिलक सदा तुम्ह उथपनथापन ॥१०७॥
बिलगु न मानब मोर जो बोलि पठायउँ ।
प्रभुप्रसाद जस जाति सकल सुख पायउँ ।
पुनि बसिष्ठ आदिक मुनि बंदि महीपति ।
गहि कौसिक के पाँय कीन्हि बिनती अति ॥१०८॥
भाइन्ह सहित बहोरि बिनय रघुबीरहिं ।
गदगद कंठ, नयन जल, उर धरि धीरहिं ।
"कृपासिंधु सुखसिंधु सुजान - सिरोमनि ।
तात ! समय सुधि करबि छोह छाँड़ब जनि ॥१०९॥

जनि छोह छाँड़ब बिनय सुनि रघुबीर बहु बिनती करी ।
मिलि भेंटि सहित सनेह फिरेउ बिदेह मन धीरज धरी ।
सो समौ कहत न बनत कछु सब भुवन भरि करुना रहे ।
तब कीन्ह कोसलपति पयान निसान बाजे गहगहे ॥११०॥

पंथ मिले भृगुनाथ हाथ फरसा लिए ।
डाँटहिं आँखि देखाइ कोप दारुन किए ।
राम कीन्ह परितोष रोष रिस परिहरि ।
चले सौंपि सारंग सुफल लोचन करि ॥१११॥

रघुबर-भुज-बल देखि उछाह बरातिन्ह ।
मुदित राउ लखि सन्मुख बिधि सब भाँतिन्ह ।
एहि बिधि ब्याहि सकल सुत जग जस छायउ ।
मगलोगनि सुख देत अवधपुर आयउ ॥११२॥

होहिं सुमंगल सगुन सुमन सुर बरषहिं ।
नगर कोलाहल भयउ नारि नर हरषहिं ।
घाट बाट पुर द्वार बजार बनावहिं ।
बीथी सींचि सुगंध सुमंगल गावहिं ॥११३॥

चौकैं पूरैं चारु कलस ध्वज साजहिं ।
बिबिध प्रकार गहगहे बाजन बाजहिं ।
बंदनवार बितान पताका घर घर ।
रोपैं सफल सपल्लव मंगल तरुवर ॥११४॥

मंगल बिटप मंजुल बिपुल दधि दूब अच्छत रोचना ।
भरि थार आरति सजहिं सब सारंग-सावक-लोचना ।

मन मुदित कौसल्या सुमित्रा सकल भूपति-भामिनी ।
सजि साजि परिछन चलीं रामहिं मत्त-कुंजरगामिनी ॥११५॥

बधुन्ह सहित सुत चारिउ मातु निहारहिं ।
बारहिं बार आरती मुदित उतारहिं ।
करहिं निछावरि छिनु छिनु मंगल मुद भरी ।
दुलह दुलहिनिन्ह देखि प्रेमपय-निधि परी ॥११६॥
देत पाँवड़े अरघु चलीं लइ सादर ।
उमँगि चलेउ आनंद भुवन भुइँ बादर ।
नारि उहार उघारि दुलहिनिन्ह देखहिं ।
नैनलाहु लहि जनम सफल करि लेखहिं ॥११७॥
भवन आनि सनमानि सकल मंगल किए ।
बसन कनक मनि धेनु दान बिप्रन्ह दिए ।
जाचक कीन्ह निहाल असीसहिं जहँ तहँ ।
पूजे देव पितर सब राम उदय कहँ ॥११८॥
नेगचार करि दीन्ह सबहिं पहिरावनि ।
समधी सकल सुआसिनि गुरुतिय पावनि ।
जोरी चारि निहारि असीसत निकसहिं ।
मनहुँ कुमुद बिधु-उदय मुदित मन बिकसहिं ॥११९॥

बिकसहिं कुमुद जिमि देखि बिधु भइ अवध सुख सोभामई ।
एहि जुगुति रामबिबाह गावहिं सकल कबि कीरति नई ।
उपवीत ब्याह उछाह जे सिय राम मंगल गावहीं ।
तुलसी सकल कल्यान ते नर नारि अनुदिनु पावहीं ॥१२०॥

विनयपत्रिका



राग गौरी*

गाइऔ गनपति जगबंदन । संकर-सुअन भवानी-नंदन ।
सिद्धिसदन गजबदन बिनायक । कृपासिंधु सुंदर सब लायक ।
मोदकप्रिय मुद-मंगल-दाता । बिद्यावारिधि बुद्धि-बिधाता ।
माँगत तुलसिदास कर जोरें । बसहु[1] रामसिय मानस मोरें ॥१॥
दीनदयाल दिवाकर देवा । करै[2] मुनि मनुज सुरासुर सेवा ।
हिम-तम-करि केहरि करमाली । दहन दोष दुख दुरित रुजाली ।
कोक-कोकनद-लोक-प्रकासी । तेज-प्रताप-रूप-रस-रासी ।
सारथि पंगु, दिब्य रथ-गामी । हरि-संकर-बिधि-मूरति स्वामी ।
बेद-पुरान प्रगट जसु जागै । तुलसी रामभगति बर माँगै ॥२॥

को जाचिए संभु तजि आन ?

दीनदयाल भक्तआरतिहर सब प्रकार समरथ भगवान ।
कालकूट-जर जरत सुरासुर, निज पन लागि कीन्ह[3] बिषपान ।
दारुन दनुज जगत-दुखदायक मार्‍यो[4] त्रिपुर एक ही बान ।
जो गति अगम महामुनि दुर्लभ कहत संत स्रुति सकल पुरान ।
सोइ गति मरन-काल अपने पुर देत सदासिव सबहिं समान ।

---

* राग बिलावल—भा०, बेनो०, शि० । १ बसहिं—भा०, बेनी, शि० । २ कर—प्र०, करि—ज० । ३ कियो—ज०, प्र०, रा० त०, बै । ४ जार्‍यो—इ, दीन ।

सेवत सुलभ उदार कलपतरु पार्वती-पति परम सुजान ।
देहु कामरिपु रामचरन-रति तुलसिदास कहँ कृपानिधान ॥३॥

राग धनाश्री

दानि कहूँ संकर-से[1] नाहीं ।
दीनदयालु दिबोई भावत[2] जाचक सदा सोहाहीं ।
मारि कै मारु थप्यो जग मैं[3] जाकी प्रथम रेख भट माहीं ।
ता ठाकुर को रीझि निवाजिबो कह्यो क्यों परत मोहि[4] पाहीं ?
जोग कोटि करि जो गति हरि सों मुनि माँगत सकुचाहीं ।
बेद बिदित तेहि पद पुरारि - पुर कीट - पतंग समाहीं ।
ईसु उदार उमापति परिहरि अनत जे जाँचन जाहीं ।
तुलसिदास ते मूढ़ माँगने कबहुँ न पेट अघाहीं ॥४॥

बावरो रावरो नाहु[5], भवानी !
दानि बड़ो दिन, देत दये[6] बिनु, बेद-बड़ाई भानी ।
निज घर की घरबात बिलोकहु, हौ तुम परम सयानी ।
सिव की दई संपदा देखत श्रीसारदा सिहानी ।
जिन्हके भाल लिखी लिपि मेरी सुख की नहीं निसानी ।
तिन्ह रंकन्ह कहुँ नाक सँवारत हौं आयो नकबानी ।
दुख दीनता दुखी इन्हके दुख, जाचकता अकुलानी ।
यह अधिकार सौंपिए औरहिं, भीखि भली मैं जानी ।
प्रेम-प्रसंसा-विनय-ब्यंगि[10]-जुत सुनि बिधि की बर बानी ।

---

१ सम, २ भावै, ३ में—भा०, बेनीं । ४ मो—भा०, ५ नाह, ६ दिये, ७ बर बात, ८ जिनके, ९ रंकन्ह को, १० बिंग—भा० बेनी ।

तुलसी मुदित महेस, मनहिं मन जगतमातु मुसुकानी ॥५॥

राग रामकली

माँगिए गिरिजापति कासी । जासु भवन अनिमादिक दासी ।
औढर-दानि द्रवत पुनि थोरें । सकत न देखि दीन कर जोरें ।
सुख संपति मति सुगति सुहाई । सकल सुलभ संकर सेवकाई ॥
गये जे सरन आरति-के-लीन्हें । निरखि निहाल निमिष महँ कीन्हें॥
तुलसिदास जाचक जसु गावै । बिमल भगति रघुपति की पावै ।६
कस न दीन पर द्रवहु, उमाबर । दारुन-बिपति-हरन, करुनाकर ॥
बेद-पुरान कहत उदार हर । हमरि बेर का[1] भयेहु कृपनतर ॥
कवनिभगतिकीन्हींगुननिधिद्विज । होइ[2]प्रसन्नदीन्हेहुसिवपद्निज॥
जो गति अगम महामुनि गावहिं । तु[3]अपुर कीट पतंगउ पावहिं ॥
देहु कामरिपु ! रामचरन-रति । तुलसिदास प्रभु हरहु भेद-मति ७

देव बड़े, दाता बड़े, संकर बड़े भोरे ।
किये दूर दुख सबनि के जिन्ह[4] जिन्ह कर जोरे ॥
सेवा सुमिरन पूजिबो पाताखत[5] थोरे ।
दइ जग जहँ लगि संपदा[6] सुख गज रथ घोरे ॥
गाँव[7] बसत, मैं बामदेव, कबहूँ न निहोरे ।
अधिभौतिक बाधा भई, ते किंकर तोरे ॥
बेगि बोलि, बलि[8], बरजिए करतूति कठोरे ।

---

१ कस भयउ, २ होय, ३ तव—भा० बेनी०, ज० । ४ जिन—भा० । ५ पात आखत—दीन । ६ दियो जगत जहँ लगि सबै—आधुनिक पाठ । ७ गाउँ, ८ किन—प्र० ।

तुलसी दलि रूँध्यो चहै सठ साक† सिहोरे ॥ ८ ॥

सिव, सिव ! होइ प्रसन्न करि दाया ।
करुनामय, उदार-कीरति, बलि जाउँ ! हरहु निज माया ॥
जलज-नयन, गुन-अयन, मयन-रिपु, महिमा जान न कोई ।
बिनु तव कृपा रामपद-पंकज सपनेहुँ भगति न होई ॥
रिषै[1] सिद्ध मुनि मनुज दनुज सुर अपर जीव जग माहीं ।
तुअ[2] पद-बिमुख पार न पावै[3] कोउ कलप कोटि चलि जाहीं ॥
अहिभूषन, दूषन-रिपु-सेवक, देव देव त्रिपुरारी ।
मोह-निहार-दिवाकर संकर, सरन-सोक-भयहारी ॥
गिरिजा-मन-मानस-मराल, कासीस, मसान-निवासी ।
तुलसिदास हरिचरन-कमल, हर ! देहु भगति अबिनासी ॥

राग धनाश्री

देव! मोहतम-तरनि, हर, रुद्र, संकरसरन,
हरन-मम सोक, लोकाभिरामं ।
बालससि भाल, सुबिसाल लोचन-कमल
काम - सतकोटि - लावन्यधामं ॥
कुंदेंदु-कर्पूर[4]-दर गौर बिग्रह रुचिर,
तरुन-रबिकोटि तनु तेज भ्राजै ।
भस्म सर्वांगमर्द्धांग[5] सैलात्मजा,
ब्याल-नृकपाल-माला बिराजै ॥

† साखि—आधुनिक पाठ । १ रिषय—ज० ह० प्र० । २ तव—ज० । ३ न पार पाव—भा०, बेनी । ४ कंबु कुंदेंदु—भा०, बेनी । ५ अर्द्धांग—ज०, प्र० ।

मौलि संकुल-जटामुकुट-बिद्युच्छटा[1],
तटिनि बर बारि हरिचरन-पूतं ।
श्रवन कुंडल, गरलकंठ करुनाकंद,
सच्चिदानंद बंदेऽवधूतं ॥
सूल-सायक-पिनाकपानि[2] सत्रुबन-
दहन इव धूमध्वज, बृषभ-जानं ।
ब्याघ्र-गज-चर्म परिधान, बिज्ञान-घन,
सिद्ध-सुर-मुनि-मनुज-सेब्यमानं ॥
तांडव[3]-नृत्य-पर, डमरु-डिंडिमि-प्रवर,
असुभ इव भाति कल्यानरासी ।
महाकल्पांत ब्रह्मांडमंडल-दवन,
भवन कैलास, आसीन कासी ।
तज्ञ, सर्वज्ञ, जज्ञेसमच्युत, बिभो,
बिस्व भवदंससंभव, पुरारी ।
ब्रह्मेंद्र-चंद्रार्क-बरुनाग्नि-बसु-मरुत-जम-
र्च्य भवदंघ्रि [4]सर्वेधिकारी ।
अकल, निरुपाधि निर्गुन, निरंजन जन्म[5],
कर्मपथमेकमजनिर्बिकारं ।
अखिल बिग्रह, उग्ररूप सिव भूपसुर,

---

१ च्छ के स्थान पर १६६६ की प्रति में सर्वत्र केवल छ का प्रयोग ही मिलता है । भा०, शि०, बेनी आदि में च्छ का प्रयोग है । २ पिनाकासिकर—ह० प्र० ३ तांडवित—ह० प्र०, ज० । ४ सर्वाधिकारी—आधुनिक पाठ । ५ ब्रह्म—प्र० ।

सर्बगत, सर्ब, सर्वोपकारं ।
ज्ञान, बैराग्य, धन, धर्म, कैवल्य सुख,
सुभग सौभाग्य सिव सानुकूलं ।
तदपि नर मूढ़ आरूढ़ संसार-पथिं[1],
भ्रमत भव बिमुख-तव-पादमूलं ।
नष्टमति, दुष्ट अति, कष्टरत, खेदगत,
दासतुलसी संभु सरन आया ।
देहि कामारि श्रीरामपदपंकजे,
भक्तिमंनवर्त्त[2] गतभेदमाया ॥१०॥

भीषनाकार, भैरव भयंकर, भूत-प्रेत-प्रमथाधिपति, बिपतिहर्त्ता ।
मोहमूषक-मार्जार, संसार-भय-हरन, तारनतरन, करनं[3], कर्त्ता ॥
अतुल बल बिपुलबिस्तार,बिग्रह गौर,अमल अतिधवलधरनीधराभं ।
सिरसि संकुलित कल कूट पिंगल जटा-पटल सतकोटि बिद्युच्छटाभं ॥
भ्राज बिबुधापगा-आपु पावन परम मौलिमालेव सोभाबिचित्रं ।
ललित लल्लाट पर राजरजनीस कल,कलाधर,नौमि हर धनद-मित्रं ॥
इंदु-पावक-भानु-नयन, मर्दनमयन, ज्ञानगुन-अयन, बिज्ञानरूपं ।
रवनगिरिजा,भवनभूधराधिपसदा, श्रवनकुंडल,बदनछबि अनूपं ।
चर्म-असिसूलधर, डमरु सायक चाप,जान बृजभेस,करुनानिधानं ।
जरत सुर असुरनरलोकसोकाकुलं मृदुलचित अजित कृत गरलपानं ।
भस्मतनुभूषनं, ब्याघ्रचर्म्माम्बरं, उरग-नरमौलि-उरमालधारी ।

---

१ पथ—भा०, बेनी । २ मनवरत–भा०, बेनी । भवहरनि-प्र० । ३ 'करन' पर हरताल लगाकर अभय बनाया है । ४ सर चाप कर— आधुनिक पाठ ।

डाकिनी-साकिनी-खेचरं-भूचरं जंत्रमंत्र-भंजन, प्रबल कल्मषारी।
कालअतिकाल,कलिब्याल[1]-ब्यालाद-खग,त्रिपुरमर्दन,भीम-कर्मभारी।
सकल-लोकांत-कल्पांतसूलाग्रकृत दिग्गजाव्यक्त-गुन नृत्यकारी।
पाप संताप घनघोर संसृति दीन भ्रमत जगजोनि नहिं कोपि त्राता।
पाहि भैरवरूप रामरूपी रुद्र, बंधु गुर जनक जननी बिधाता।
यस्यगुनगन गनतिबिमलमतिसारदा निगमनारद प्रमुखब्रह्मचारी।
सेष सर्वेस आसीन आनंदबन, प्रनत-तुलसीदास-त्रासहारी॥११॥

सदा संकरं, संप्रदं, सज्जनानंददं, सैलकन्यावरं, परम रम्यं।
काममदमोचनं, तामरस-लोचनं बामदेवं भजे भावगम्यं।
कंबु-कुंदेंदु-कर्पूरगौरं, सिवं, सुंदरं, सच्चिदानंदकंदं।
सिद्ध-सनकादि-जोगींद्र-बृंदारका-बिष्नु-बिधि-बंद्य चरणारबिंदं।
ब्रह्मकुलवल्लभं, सुलभमतिदुर्ल्लभं, बिकटवेषं, बिभुं, बेदपारं।
नौमि करुणाकरं, गरलगंगाधरं, निर्गुणं, निर्मलं, निर्विकारं।
लोकनाथं, सोकसूलनिर्मूलिनं, सूलिनं, मोहतम-भूरि-भानुं।
कालकालं, कलातीतमजरं, हरं, कठिन-कलिकाल-कानन-कृसानुं॥
तज्ञमज्ञानपाथोधि-घटसंभवं, सर्बगं, सर्वसौभाग्य-मूलं।
प्रचुर-भव-भंजनं, प्रनत-जन-रंजनं, दासतुलसी सरन सानुकूलं १२

राग वसंत

सेवहु सिवचरन सरोज-रेनु। कल्यान-अखिलप्रद कामधेनु॥
कर्पूरगौर, करुनाउदार। संसार-सार, भुजगेंद्रहार॥
सुख-जन्म-भूमि महिमा अपार। निर्गुन, गुननायक, निराकार॥

---

१ कलिकाल—आधुनिक पाठ।

त्रयनयन, मयन-मर्दन, महेस । अहँकार-निहार-उदित-दिनेस ।
बर बाल-निसाकर मौलि भ्राज । त्रैलोक-सोकहर, प्रमथराज ।
जिन्हकहुँबिधिसुगतिनलिखीभाल। तिन्हकीगतिकासीपतिकृपाल ।
उपकारी को पर हर समान ? सुर असुर जरत कृत गरलपान ।
बहु कल्प उपाय *करिय अनेक । बिनु संभु-कृपा नहिं भो[1] बिबेक ।
बिज्ञान-भवन,गिरिसुता-रमन । कहि[2]तुलसिदास ममत्रास-समन १३
देखोदेखोबनुबन्योआजुउमाकंत।मनोदेखनतुम्हहिंआईरितुबसंत ।
मा[3]नो तनुदुति चंपक-कुसुममाल । बर बसन नील नूतन तमाल ॥
कल कदलि जंघ, पद कमल लाल । सूचति कटि केहरि, गति मराल ॥
भूषन प्रसून बहु बिबिध रंग । नूपुर किंकिनि कलरव-बिहंग ॥
कर नवल बकुल-पल्लव रसाल । श्रीफल कुच, कंचुकि लताजाल ॥
आनन सरोज, कच मधुपपुंज । लोचन बिसाल नव नीलकंज ॥
पिक-बचन चरित बर बरहि कीर । सित सुमन हास, लीला समीर ॥
कहि तुलसिदास सु[4]नि सिव सुजान । उर बसि प्रपंच रचै पंचबान ॥
करि कृपा हरिय भ्रमफं[5]दु काम । जेहिं हृदयँ बसहिं सुखरासि राम १४

राग मारू

दुसह-दोष-दुख-दलनि करु देवि ! दाया ।
बिश्वमूलासि, जन-सानुकूलासि, कर[6]सूलधारिणि, महामूल माया ॥
तडितगर्भांगि सर्वांग सुंदर लसत, दिब्य पट, भब्य भूषन बिराजै ।
बालमृगमंजु-खंजन-बिलोचन, चंदबदन, लखि कोटि रतिमार लाजै ।

* उपाया करि अनेकु—१६६६ की प्रति । १ भव—शि० । २ कह—ज०, ह० प्र० । ३ जनु—ह० प्र० । ४ सुनु—ह० प्र० । ५ फंद—ह० प्र० प्र०, ६ कर—ज० प्र० ।

रूप-सुख-सील-सीमासि भीमासि रामासि बामासि बर बुद्धि बानी।
छमुख-हेरंब-अंबासि जगदंबिके! संभुजायासि जय जय भवानी।
चंड-भुजदंड-खंडनि बिहंडनि, मुंड महिषमद-भंग करि अंग तोरे।
सुंभ निःसुंभ कुंभीस रणकेसरिनि, क्रोधबारिधि बैरिबृंद बोरे।
निगम-आगम-अगम,गुर्बि तवगुनकथन उर्बिधरकरत जेहिसहसजीहा।
देहि मा! मोहिंपनुपेमु यहनेमुनिजरामघनस्याम, तुलसीपपीहा।१५।

राग सारंग (रामकली)

जय जय जग जननि,देवि,सुर-नर-मुनि-असुर सेवि,
भगत[1] भूति दायिनि, भयहरनि, कालिका।
मंगल-मुद - सिद्धिसदनि, पर्बसर्बरीस - बदनि,
ताप - तिमिर - तरुनतरनि - किरनमालिका॥
वर्मचर्मकर कृपान, सूलसेलधनुषबान-
धरनि, दलनि दानवदल, रनकरालिका।
पूतना पिसाच प्रेत साकिनि डाकिनि[2] समेत,
भूत ग्रह बेताल खग मृगाल-जालिका॥
जय महेसभामिनी, अनेकरूप - नामिनी,
समस्त - लोकस्वामिनि[3], हिमसैलबालिका।
रघुपति-पद परम प्रेम तुलसी चहै अचल नेमु,
देहि है प्रसन्न, पाहि प्रनतपालिका!॥१६॥
जय जय भगीरथनंदिनि, मुनिचय-चकोरचंदिनि,

---

१ भक्त—भा०। भक्ति—बेनी, प्र०। २ डाकिनि साकिनि—प्र०। ३ स्वामिनी—भा०, बेनी।

नर-नाग-बिबुधबंदिनि, जय जह्नुबालिका ।
बिष्नुपदसरोजजासि, ईस-सीस पर बिभासि,
त्रिपथगासि, पुण्य[1]पासि, पापछालिका ॥
बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रयतापहारि,
भवँर बर, बिभंगतर तरंगमालिका ॥
पुरजन-पूजोपहार सोभित ससि-धवल धार,
भंजनि-भवभार, भक्तिकल्प-थालिका ।
निजतटबासी बिहंग, जल-थलचर पसु पतंग,
कीट, जटिल तापस सब सरिस पालिका ॥
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस बीर,
बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका ! ॥१७॥

राग रामकली (धनाश्री)

जयति जय सुरसरी जगदखिल-पाविनी[2] ।
बिष्नु-पदकंज मकरंद-इव अंबुबर बहसि,
दुख दहसि अघबृंद - बिद्राविनी ।
मिलित जलपात्र अज - जुक्तहरिचरनरज,
बिरजतर बारि[3] त्रिपुरारिसिर - धामिनी ।
जह्नु-कन्या धन्य, पुन्यकृत सगरसुत, भूधर-द्रोनि-बिद्दरनि बहुनामिनी
जच्छ गंधर्व मुनि किन्नरोरग दनुज मनुज मज्जहिं सुकृतपुंज जुतकामिनी
स्वर्गसोपान, बिज्ञान-ज्ञानप्रदे ! मोहमदमदन-पाथोज बनजामिनी[4] ॥

---

१ रासि—ह० प्र० । २ पावनी —ह० प्र० । ३ बर । ४ हिमि—भा० में 'बन' पर चिन्ह = देकर हाशिए पर 'हिमि' बनाया गया है । बेनो में 'बन' है ।

हरित गंभीर बानीर दुहुँ तीर बर मध्य धारा बिसद बिश्वअभिरामिनी
नील पर्यंक कृत सयन सर्पेस जनु सहससीसावली स्रोत सुरस्वामिनी
अमितमहिमाअमितरूप भूपावली मुकुटमनि-बंदिते ! लोकत्रयगामिनी ।
देहिरघुबीरपदप्रीतिनिर्भरमातु ! दासतुलसीत्रासहरनिभवभामिनी ॥

राग रामकली (बिलावल–प्र० ज०)

हरति पाप त्रिबिधताप सुमिरत सुरसरित ।
बिलसत महि कल्पबेलि मुद-मनोरथ-फरित ॥
सोहत ससिधवल-धार सुधा-सलिल-भरित ।
बिमलतर तरंग लसत रघुबर के से चरित ॥
तो बिनु जगदंब गंग ! कलिजुग का करित ?
घोर भव-अपार-सिंधु तुलसी कैसे[1] तरित ? ॥१९॥

ईससीस बससि, त्रिपथ लससि नभ-पताल-धरनि ।
मुनि, सुर, नर, नाग, सिद्ध, सुजन मंगल-करनि ॥
देखत दुख-दोष-दुरित-दाह-दारिद-दरनि ।
सगरसुवन-साँसति-समनि, जलनिधि-जल-भरनि ॥
महिमा की अवधि करसि बहु बिधि-हरि-हरनि ।
तुलसी करु बानि बिमल बिमल-बारि-बरनि ॥२०॥

राग बिलावल

जमुना ज्यों ज्यों लागी बाढ़न ।
त्यों त्यों सुकृत सुभट कलि भूपहिं निदरि लगे बाँह[1]-काढ़न ॥
ज्यों ज्यों जल मलीन त्यों त्यों जमगन-मुख मलीन लहैं आढ़ न ।

---

१ किमि (७४) । बहि—ह० प्र० ।

तुलसिदास जगदघ जवास ज्यों अनघ-आगि[1] लागे डाढ़न २१

राग रामकली*

सेइअ सहित सनेह देहभरि कामधेनु कलि कासी ।
समनि-सोक-संताप-पाप-रुज, सकल-सुमंगल-रासी ॥
मरजादा चहुँ ओर चरन बर सेवत[2] सुरपुरबासी ।
तीरथ सब सुभ अंग, रोम सिवलिंग अमित अबिनासी ॥
अंतरअयनु अयनु भल, थन फल, बच्छ बेद-बिस्वासी ।
गलकंबल बरना बिभाति, जनु लूम-लसति सरिता-सी ॥
दंडपानि भैरव बिषान, मलरुचि खलगन भयदा सी ।
लोलदिनेस तिलोचन लोचन, करनघंट घंटा-सी ॥
मनिकरनिका-बदन-ससि सुंदर, सुरसरि सुखसुषमा सी ।
स्वारथ - परमारथ - परिपूरन पंचकोस महिमा सी ॥
बिस्वनाथ पालक कृपालचित, लालति नित गिरिजा सी ।
सिद्धि सची सारद पूजहिं, मनु जुगवत[3] रहति रमा सी ॥
पंचाच्छरी प्रान, मुद माधव, गव्य सुपंचनदा सी ।
ब्रह्म जीव सम राम नाम दोउ आखर बिस्वबिकासी ॥
चारितु चरति करम कुकरम करि मरत जीवगन घासी ।
लहत परमपद पय पावन जेहि, चहत प्रपंच-उदासी ॥
कहत पुरान रची केसव निज कर-करतूति-कला सी ।

---

१ संवत् १५ में 'आगि' पर किसी ने मेघ बनाया है । २ सेवित—भा० प्र० । ३ जोगवत—ह० प्र० ।

* आधुनिक प्रतियों में 'राग भैरव' है ।

तुलसी बसि हरपुरी राम जपु जौं भयो चहै सुपासी ॥२२॥

राग वसंत (कान्हरा—प्र०)

सब सोचबिमोचन चित्रकूट । कलिहरन, करनकल्यान बूट ॥
सुचि अवनि सुहावनि आलबाल । कानन बिचित्र, बारी बिसाल ॥
मंदाकिनि-मालिनि सदा सींच । बर-बारि बिषम नर नारि नीच ॥
साखा, सुसृंग, भूरुह, सुपात । निरभर मधु बर मृदु मलयवात ॥
सुक-पिक-मधुकर-मुनिबर-बिहारु । साधन-प्रसून, फलचारि चारु ॥
भवघोरघाम-हर सुखद छाँह । थप्यो थिर प्रभाउ जानकीनाह ॥
साधक सुपथिक बड़े भाग्य[1] पाइ । पावत अनेक अभिमत अघाइ ॥
रस एक, रहित-गुनकरमकाल । सिय राम लखन पालक कृपाल ॥
तुलसी जो राम-पद चहिय[2] प्रेम । सेइय गिरि कर[3] निरुपाधि नेम २३

राग कान्हरा (वसंत—प्र०)

अब चित चेति[4] चित्रकूटहि चलु ।
कोपित कलि, लोपित मंगल-मग, बिलसत बढ़त मोह-माया-मलु ॥
भूमि बिलोकि[5] राम-पद-अंकित, बन बिलोकि रघुबर-बिहार-थलु ।
सैलसृंग भवभंगहेतु लखि, दलन कपट-पाखंड-दंभ-दलु ॥
जहँ जनमे जगजनक जगतपति बिधि हरिहर परिहरि प्रपंच छलु ।
सकृत प्रबेस करत जेहि आस्रम बिगत-बिषाद भये पारथ नलु ॥
न करु बिलंब, बिचारु चारु मति, बरष पाछिले[6] सम अगिले पलु ।

---

१ भाग—ज० । २ चहहि—प्र० । ३ करि—ह० प्र०, प्र० ज० । ४ चेतु, ५ बिलोकु, ६ पाछिलो सम आगिलो—बेनी ।

मंत्र सो जाइ जपहि जो जपत भै[1] अजर अमर हर अँचइ हलाहलु ॥
राम-नाम-जप-जाग करत नित, मज्जत पय पावन पीवत जलु ।
करिहैं राम भावतो मन को, सुख-साधन अनयास महा फलु ॥
कामदमनि कामता-कलपतरु सो जुग जुग जागत जगतीतलु ।
तुलसी तोहि बिसेष बूझिये एक प्रतीति, प्रीति, एकै बलु २४

राग धनाश्री

जयति अंजना-गर्भ-अंभोधि-संभूत-बिधु बिबुधकुल-कैरवानंदकारी।
केसरी-चारु-लोचन-चकोरक-सुखद, लोकगन-सोकसंतापहारी ॥
जयति बालार्क[2] कपि-केलि-कौतुक-उदित-चंडकरमंडल-ग्रासकर्त्ता ।
राहु-रबि-सक्र-पबि-गर्ब-खर्बीकरन,सरनभयहरन,जयभुवनभर्त्ता॥
जयति धीरधुर बीर रघुबीर[3]-हित रुद्रअवतार संसारपाता ।
बिप्र-सुर-सिद्ध-मुनि-आसिषाकार- बपुष-
बिमल-गुन-बुद्धि-बारिधि बिधाता ॥
जयति सुग्रीव-सिक्षादि-रक्षन-निपुन बालि-बलसालि-बध-मुख्य-हेतू ।
जलधि-लंघन-सिंह,सिंहिका-मद-मथन,रजनिचर-नगर-उत्पातकेतू ॥
जयति भूनंदिनी-सोच-मोचन,बिपिनदलन,घननादबस-बिगतसंका
लूमलीलानलज्वालमालाकुलित[4] होलिकाकरन-लंकेसलंका ॥
जयतिसौमित्रि रघुनंदनानंदकर, रिच्छ-कपि-कटक-संघटबिधाई ।
बद्ध[5]-सागर-सेतु, अमरमंगलहेतु, भानुकुलकेतु-रनबिजयदाई ॥
जयतिजय[6]बज्रतनु,दसन,नख,मुखबिकट,चंड-भुजदंड-तरु,सैल-पानी

---

१ भए (ह० प्र०) । २ जय बाल—भा०, बेनी० । ३ धुरधीर रघुबीर रनधीर—भा०, ह० प्र० । ४ लीला अनल—बेनी । ५ बाँधि बारिधि—ह० प्र०, ज० । ६ जयति—१६६६ ।

समर-तैलिकजंत्र तिल तमीचर-निकर पेरि डारे सुभट घालि घानी ॥
जयति दसकंठ-घटकर्ण-बारिदनाद-कदन-कारन, कालनेमि-हंता ।
अघट-घटना-सुघट,सुघट-बिघटन-बिकट भूमि-पाताल-जल-गगन-गंता
जयति बिस्व-बिख्यात बानैत,बिरुदावली बिदुषबरनत बेदबिमलबानी
दासतुलसीत्रास-समन सीतारमन-संग सोहत[1] राम राजधानी ॥२५॥
जयति मर्कटाधीस मृगराज-बिक्रम महादेव मुदमंगलालय कपाली ।
मोह-मद-कोह-कामादि-खल-संकुला-घोरसंसार-निसि-किरणमाली ॥
जयति लसदंजनादितिज कपि-केसरी-कस्यप-प्रभव-जगदार्त्तिहारी[2]
लोक-लोकप-कोक-कोकनद-सोकहर-हंस हनुमानकल्यानकारी[3] ॥
जयति सुबिसाल बिकराल-बिग्रह,बज्र-सार सर्बांग भुजदंड भारी ।
कुलिस नख दसन बल बसति[4] बालधि-बृहद्[3] बैरि-सस्त्रास्त्रधर-कुधरधारी
जयतिजानकी-सोचसंताप-मोचन,रामलक्ष्मणानंद-बारिज-बिकासी ।
कीस-कौतुक-केलि-लूम-लंकादहन दलन-कानन-तरुन-तेजरासी ॥
जयति पाथोधि पाषान-जलजान-कर जातुधान-प्रचुर-हर्ष-हाता ।
रुष्ट[5]-रावण-कुंभकर्ण-पाकारिजित्-मर्मभित्-कर्म-परिपाक-दाता ॥
जयति भुवनैकभूषन,बिभीषन-बरद-बिहित-कृत, रामसंग्राम-साका
पुष्पकारूढ़-सौमित्रि-सीता- सहित-भानुकुलभानु-कीरति-पताका ॥
जयति पर-जंत्रमंत्राभिचार-ग्रसन, कार्मन-कूट-कृत्यादि-हंता ।
साकिनी-डाकिनी-पूतना - प्रेत-बैताल-भूत - प्रमथ-जूथ - जंता ॥
जयति बेदांतबिद्विबिधबिद्या-बिसद-बेदबेदांगबिद ब्रह्मवादी ।

---

१ सोभित—भा०, बेनी०, ज० प्र० । हर्त्ता २ कर्त्ता ३ बृहद्बीर—भा०, बेनी । ४ बर लसति—आधुनिक पाठ । ५ दुष्ट—ह० प्र० ।

ज्ञान-बैराग-बिज्ञान भाजन बिभो ! बिमलगुन गनत सुक नारदादी
जयति काल-गुन-कर्म-माया-मथन, निश्चल-ज्ञान ब्रत, सत्यरत, धर्म चारी
सिद्ध-सुरबृंद-योगींद्र-सेवित सदा दासतुलसी प्रणत-भय-तमारी २६
जयति मंगलागार, संसारभारापहर बानराकार, बिग्रह-पुरारी ।
राम-रोषानल-ज्वालमालामिस-ध्वांतचर-सलभ-संहारकारी ॥
जयति मरुदंजनामोद-मंदिर, नतग्रीव-सुग्रीव-दुःखैक-बंधो ।
जातुधानोद्धत-क्रुद्ध-कालाग्निहर, सिद्ध-सुर-सज्जनानंदसिंधो ॥
जयति रुद्राग्रणी, बिश्ववंद्याग्रणी, बिश्वबिख्यात भट चक्रवर्त्ती ।
सामगाताग्रणी, कामजेताग्रणी, रामहित, रामभक्तानुवर्त्ती ॥
जयति संग्राम-जय, रामसंदेसहर[2], कोसला-कुसल-कल्यानभाखी ।
रामबिरहार्कसंतप्त-भरतादिनरनारि-सीतलकरन-कल्पसाखी ॥
जयति सिंहासनासीनसीतारमन निरखि निर्भर-हरष नृत्यकारी ।
रामसम्राज-सोभा-सहित सर्वदा तुलसिमानस-रामपुर-बिहारी ॥ २७
जयतिबातसंजात, बिख्यात बिक्रम, बृहद्बाहु, बलबिपुल, बालधिबिसाला
जातरूपाचलाकार-बिग्रह लसत-लोमबिद्युल्लता-ज्वालमाला ॥
जयति बालार्क-बर-बदन, पिंगल नयन, कपिस-कर्कस-जटाजूटधारी ।
बिकट भ्रुकुटी, बज्र दसन नख-बैरि-मदमत्त-कुंजर-पुंज-कुंजरारी ।
जयति भीमार्जुन-ब्यालसूदन-गर्बहर धनंजय-रथत्रानकेतू ।
भीषम-द्रोण-कर्णादि-पालित, कालदृक्, सुजोधन-चमू-निधनहेतू ॥
जयति गतराज्य-दातार, हंतार-संसार-संकट, दनुज-दर्पहारी ।
ईति अति भीति-ग्रह-प्रेत-चौरानल-ब्याधिबाधा समन घोर मारी ॥

१ बिद्या—भा०, बेनी० । २ सदेह—बैनी० ।

जयति निगमागम-व्याकरण करणलिपि काव्य-कौतुक-कला कोटिसिंधो
सामगायक, भक्त-काम-दायक, बामदेव-श्रीराम-प्रियप्रेमबंधो ॥
जयति धर्मांसु-संदग्ध-संपाति-नवपक्ष-लोचन-दिव्यदेह-दाता ।
कालकलि-पाप-संताप-संकुल-सदा-प्रनत-तुलसीदास-तात-माता॥ २८॥

जयति निर्भरानंद-संदोह कपिकेसरी केसरीसुवन भुवनैकभर्त्ता ।
दिव्य-भूम्यंजना-मंजुलाकरमणे, भक्त-संताप-चिंतापहर्त्ता ॥
जयति धर्मार्थकामापवर्गद बिभो ! ब्रह्मलोकादि-बैभव-बिरागी ।
बचन-मानस-कर्म सत्य-धर्मव्रती जानकीनाथ-चरणानुरागी ॥
जयति बिहगेस-बल-बुद्धि-बेगाति-मद-मथन, मन्मथ-मथन, ऊर्द्ध्वरेता ।
महानाटक-निपुन, कोटि-कबिकुल-तिलक, गानगुन-गर्ब-गंधर्ब-जेता ॥
जयति मंदोदरी-केसकर्षण बिद्यमान-दसकंठ भटमुकुट-मानी ।
भूमिजा-दुःख-संजात-रोषांतकृत जातनाजंतु-कृत-जातुधानी ॥
जयति रामायण-श्रवन-संजात-रोमांच-लोचनसजल-सिथिलबानी ।
रामपदपद्म-मकरंद-मधुकर पाहि ! दासतुलसी-सरण सूलपानी ॥२९॥

राग सारंग

जाके गति है हनुमान की ।
ताकी पैज पूजि आई यह रेखा कुलिस पषान की ॥
अघटित-घटन, सुघट-बिघटन, ऐसी बिरुदावलि नहिं आन की ।
सुमिरत संकट-सोच-बिमोचनि मूरति मोदनिधान की ॥
तापर सानुकूल गिरिजा, हर, लखनु, रामु, अरु जानकी ।
तुलसी कपि की कृपा-बिलोकनि खानि सकल कल्यान की ॥३०॥

राग सारंग (गौरी)

ताकिहै तमकि ताकी ओर को ?
जाके है सब भाँति भरोसो कपि केसरीकिसोर को ॥
जनरंजन, अरिगन-गंजन, मुखभंजन खल बरजोर को ।
बेद पुरान प्रगट पुरुषारथु, सकल सुभट-सिरमोर को ॥
उथपै-थपन, थपै-उथपन पन बिबुधबृंद-बंदिछोर को ।
जलधि लंघि, दहि लंक प्रबल-दल-दलन निसाचर घोर को ॥
जाको बालबिनोद समुझि[1] जिय डरत दिवाकर भोर को ।
जाकी चिबुकचोट चूरन कियो[2] रद-मद कुलिस कठोर को ॥
लोकपाल अनुकूल बिलोकिबो चहत बिलोचन-कोर को ।
सदा अभय जयमय[3]-मंगलमय जो सेवकु रनरोर को ॥
भगत-कामतरु नामु राम परिपूरन चंद चकोर को ।
तुलसी फल चार्‍यो करतल, जसु गावत गई-बहोर को ॥३१॥

राग बिलावल

ऐसी तोहि न बूझिये हनुमान हठीले ।
साहेब कहूँ न राम से, तो से न उसीले[4] ॥
तेरे देखत सिंह के सिसु-मेंढुक लीले ।
जानत हौं कलि तेरेऊ मनो गुनगन कीले ॥
हाँक सुनत दसकंध के भए बंधन ढीले ।
सो बल गयो, किधौं भयो[5] अब गर्ब-गहीले ॥

---

१ जिय २ किय—भा०, बेनी । ३ सदा सो अभय मोद—भा० । सदा सु अभय मोद—बेनो, बेनी में पहले 'सदा अभय जय मुद' पाठ था । ४ तोसे न बसीले—५१, १५ । ५ भये—ह० प्र० ।

सेवक को परदा फटै, तू*समरथ सी ले।
अधिक आपु तें आपुनो सुनि मान सही ले॥
सासति तुलसीदास की देखि सुजस तुही ले।
तिहूँ काल तिनको भलो जे रामरँगीले॥३२॥

समरथ सुवन समीर के रघुबीर पियारे।
मोपर कीबे तोहि जो करि लेहि भिया, रे॥
तेरी महिमा तें चलैं चिंचिनी-चियाँ रे।
अँधियारो मेरी बार क्यों[3]? त्रिभुवन-उँजियारे।
केहि करनी जन जानि कै सनमान किया रे।
केहि अघ अवगुन आपनो करि डारि दिया रे॥
खायो खोंची माँगि मैं तेरो नाम लिया रे।
तेरे बल, बलि आजु लौं जग जागि जिया रे॥
जौ तोसों होतो फिरो मेरो हेतु हिया रे।
तौ क्यों बदन देखावतो कहि बचन इया रे॥
तो सो ज्ञाननिधान को सर्वज्ञ बिया रे।
हौं समुझत साईं-द्रोहि की गति छार-छिया रे॥
तेरे स्वामी राम-से, स्वामिनी सिया रे।
तहँ तुलसी कहँ कौन की काको तकिया रे?॥३३॥

अति आरत, अति स्वारथी, अति दीन दुखारी।
इनको बिलगु न मानिये बोलहिं न बिचारी॥
लोक-रीति देखी सुनी, ब्याकुल नर नारी।

* तुम—१६६६। २ सुनि—ह० प्र०। ३ कों—१६६६।

अति बरषे अनबरषेउ[1] देहिं दैवहिं गारी ॥
ना कहि आये[2] नाथ सों भय साँसति भारी ।
"कहि आयो[3], कीबी छमा निज ओर निहारी" ॥
समय साँकरे सुमिरिये समरथ हितकारी ।
सो सब बिधि ऊपर करै अपराध बिसारी ॥
बिगरी सेवक की सदा साहबहिं सुधारी ।
तुलसी पर तेरी कृपा निरुपाधि निनारी[4] ॥३४॥

कटु कहिये गाढ़े परे सुनि समुझि सुसाईं ।
करहिं अनभलेहु को भलो आपनी भलाई ॥
समरथ सुभ जो पावई, बीर, पीर पराई ।
ताहि तकै सब ज्यों नदी बारिधि न बुलाई ॥
अपने अपने को भलो चहैं लोग लुगाई ।
भावै जो जेहि तेहि भजै सुभ असुभ सगाई ॥
बाँहबोल दै थापिये जो निज बरिआई ।
बिनु सेवा सो पालिये सेवक की नाई ॥
चूक चपलता मेरियै, तू बड़ो बड़ाई ।
होत आदरे ढीठ हौं अति नीच निचाई ॥
बंदिछोर बिरुदावली निगमागम गाई ।
नीको तुलसीदास को[6] तेरियै निकाई ॥

१ अनबरषेहूँ—७४, ७१, ह० प्र० । २ आएउ—बेनी । ३ भायो-१५ ।
४ निआरो-१५ ह० प्र० । ५ सुनु । ६ तेरि ही-आधुनिक ।

राग गौरा (गौरी)

मंगलमूरति मारुतनंदन । सकल-अमंगल-मूल-निकंदन ॥
पवनतनय संतन-हितकारी । हृदय बिराजत अवधबिहारी ॥*
मातुपिता गुर गनपति सारद । सिवा समेत संभु सुक नारद ॥
चरन बंदि बिनवौं सब काहू । देहु रामपद-नेहु-निबाहू ॥
बंदौं राम लखन बैदेही । ते[1] तुलसी के सहज[2] सनेही ॥३६॥

राग केदारा

लाड़िले लखनलाल हित हौ जन के ।
सुमिरे संकटहारी, सकल सुमंगलकारी, पालक कृपाल अपने पन के ।
धरनी-धरनहार भंजन-भुवनभार, अवतार साहसी सहसफन के ।
सत्य-संध, सत्यब्रत, परमधर्मरत, निर्मल करम बचन अरु मन के ।
रूपकेनिधान, धनुबानपानि, तूनकटि, महाबीर-बिदित, जितैयाबड़ेरनके
सेवक-सुखदायक, सबल, सबलायक, गायक जानकीनाथ गुनगनके ।
भावते भरतके, सुमित्रासीताके दुलारे, चातक चतुर राम-स्यामघनके ।
बल्लभ उर्मिलाके सुलभ सनेसबस, धनीधन तुलसीसे निर्धन के ॥३७॥

राग धनाश्री

जयति लक्ष्मणानंत भगवंत भूधर, भुजगराज, भुवनेस, भूभारहारी ।
प्रलयपावक-महाज्वाल-माला-बमन, समन-संताप, लीलावतारी ॥
जयतिदासरथि, समर-समरथ, सुमित्रासुअन, सत्रुसूदन, रामभरतबंधो
चारु-चंपकबरन, बसनभूषन-धरन दिब्यतर, भव्य, लावन्यसिंधो ।

---

* यह पंक्ति केवल प्र०, शि०, ज०, १५, ५१, ७४, ह० प्र० प्रतियों में है ।
१ जे, २ परम—भा०, बेनी, प्र० ।

जयति गाधेय-गौतम-जनक सुखजनक बिस्वकंटक-कुटिल-कोटिहंता।
बचन-चय-चातुरी-परसुधर-गर्बहर, सर्वदा रामभद्रानुगंता।
जयतिसीतेस-सेवासरस,बिषयरस-निरस,निरुपाधि,धुरधर्मधारी।
बिपुल-बलमूल, सार्दूलबिक्रम, जलदनादमर्दन, महाबीर भारी।
जयति संग्राम-सागर-भयंकर-तरन-रामहित-करन-बरबाहु-सेतू।
उर्मिलारवन, कल्यानमंगलभवन,दासतुलसी-दोष-दवन-हेतू ॥३८॥
जयतिभूमिजारमन-पदकंजमकरंद-रसरसिक-मधुकरभरतभूरिभागी।
भुअन-भूषन-भानुबंस-भूषन, भूमिपाल-मनि-रामचंद्रानुरागी।
जयति बिबुधेस-धनदादिदुर्लभ महाराज-सम्राट[1]-पद-सुख[2] बिरागी।
खड्गधाराब्रतीप्रथमरेखा प्रकट, सुद्ध-मति-जुवति-पति पेम-पागी।
जयति निरुपधि,भक्तिभावजंत्रित-हृदय, बंधुहित-चित्रकूटाद्रिचारी।
पादुकानृपसचिव पुहुमिपालक परम धर्मधुर धीर[3] बर बीर भारी।
जयति संजीवनी-समय-संकट हनूमान धनुबान महिमा बखानी।
बाहुबल-बिपुल,परमिति पराक्रमअतुल,गूढ़गतिजानकीजानि जानी।
जयति रनअजिर-गंधर्वगनगर्बहर फेरि किये राम-गुनगाथ-गाता।
मांडवी-चित्तचातक-नवांबुदबरन,सरन-तुलसीदास-अभयदाता ३६
जयति जय सत्रु-करि-केसरी सत्रुघन[4] सत्रु-तम-तुहिनहर-किरनकेतू।
देव! महिदेव-महि-धेनु-सेवक-सुजन-सिद्ध-मुनि सकल-कल्यान-हेतू।
जयति सर्बांगसुंदर सुमित्रासुअन भुअनबिख्यात भरतानुगामी।
वर्म-चर्मासि-धनु-बान-तूनीरधर सत्रुसंकट-समन यत्प्रनामी।

---

१ संम्राज—ह० प्र०, १५। २ सुख पद—भा०, बे, १५, ७४, ५१।
३ धीर गंभीर—भा०, बेनी। ४ सत्रुघन तम—१६६६।

जयतिलवनांबुनिधि-कुंभसंभव,महादनुज-दुर्जन-दलन, दुरितहारी ।
लक्ष्मनानुज, भरत-राम-सीता-चरनरेनु-भूषित-भालतिलकधारी ।
जयतिश्रुतिकीर्ति-वल्लभसुदुर्लभसुलभनमतनमंद-भक्त-भक्तिदाता ।
दासतुलसीचरनसरनसीदत,विभो!पाहि!दीनार्त्त-संताप-हाता।४०।

राग केदार

कबहुँक अंब औसर पाइ ।
मेरिऔ सुधि द्याइबी कछु करुन-कथा चलाइ ॥
दीन सब अँगहीन खीन मलीन अघी अघाइ ।
नामु लै भरै उदरु एक प्रभु-दासि-दासु कहाइ ॥
बूझिहैं 'सो है कौन'? कहिबो नाम दसा जनाइ ।
सुनत रामकृपालु कें मेरी बिगरियो बनि जाइ ॥
जानकी जगजननि जन की कियें बचन-सहाइ ।
तरै तुलसीदास भव तव-नाथ-गुनगन गाइ ॥४१॥

कबहुं समय सुधि द्याइबी मेरी मातु जानकी ।
जनु कहाइ नाम लेत हौं कियें पन चातक ज्यों,प्यास सुपेम-पान की ।
सरलप्रकृति आपु जानिए करुना-निधान की ।
निजगुन अरिकृतअनहितौ दास-दोषसुरतिचितरहतिनदियेंदानकी।
बानि बिसमरनसील है मानद अमान की ।
तुलसिदासनबिसारिएमनक्रमबचनजाकेसपनेहुँगतिनआनकी।४२।

जयति सच्चिदव्यापकानंद यद्ब्रह्म-विग्रहाव्यक्त लीलावतारी ।

---

१ भक्ति अभय—ज० । २ कहिबी—ह० प्र०, भा०, बे० । ३ बिसारन—७४, ५१ । ४ विग्रह व्यक्त—बेनी, प्र० ज० ।

बिकल-ब्रह्मादि-सुरसिद्ध-संकोचबस-बिमल-गुन-गेह-नरदेह-धारी ।
जयति कोसलाधीस-कल्यान, कोसलसुता-कुसल, कैवल्य फल-चारुचारी
बेदबोधित-कर्म-धर्म-धरनी-धेनु-बिप्र-सेवक-साधु-मोदकारी ।
जयति रिसि-मख-पाल, समनसज्जनसाल, पाप[1]बस-मुनिबधू-साप[2]हारी
भंजि भवचाप, दलि दाप भूपावली, सहित भृगुनाथ नतमाथ भारी ।
जयति धुरधीर रघु[3]बीर धार्मिक ! गुरु-मातु-पितु-बंधु-बचनानुसारी ।
चित्रकूटाद्रि-बिंध्याद्रि-दंडकबिपिन-धन्यकृत, पुन्यकानन-बिहारी ।
जयति पाकारिसुत-काक-करतूति-फलदानि, खनिगर्त्तगोपितबिराधा ।
दिब्य-देवी-बेष देखि, लखि निसिचरी जनु बिडंबित करी बिश्वबाधा ।
जयति खर-त्रिसिर-दूषन-चतुर्दससहस-सुभट-मारीच-संहारकर्त्ता ।
गीध-सबरी-भक्ति-बिबसकरुनासिंधु, चरित-निरुपाधि त्रिबिधार्ति-हर्त्ता
जयति मदअंधकुकबंधबधि, बालि-बलसालिबधि, करन-सुग्रीव-राजा ।
सुभट-मर्कट-भालु-कटक-संघट सजत, नमित पद रावनानुज नेवाजा ।
जयति पाथोधि-कृत-सेतु-कौतुकहेतु, कालमन अगम लइ ललकि लंका ।
सकुल सानुजसदल दलित दसकंठ रन, लोकलोकप किये रहितसंका ।
जयति सौमित्रि-सीता-सचिव-सहित चले पुष्पकारूढ़ निज[4] राजधानी
दासतुलसी मुदित अवधबासी सकल, राम भये भूप, बैदेहि रानी ४३

जयति राजराजेंद्रराजीवलोचनराम-नाम कलिकामतरु, सामसाली
अनयअंभोधिकुंभज निसाचरनिकर तिमिरघनघोरखरकिरनमाली ।
जयति मुनिदेव नरदेव दसरत्थ के, देव-मुनि-बंद्य किये अवधबासी ।

१ साप, २ पाप—ह० प्र० । ३ रघुबीर धुरधीर धार्मिक—बेनी, धार्मिक धुरधीर रघुबीर—५१ । ४ निज शब्द ७४, ५१ की प्रतियों में नहीं है ।

लोकनायककोकसोक-संकटसमन, भानुकुल-कमल-कानन-बिकासी
जयति सिंगार-सर-तामरस-दाम-द्युति-देह, गुनगेह, बिस्वोपकारी ।
सर्व-सौभाग्य-सौंदर्य-सुषमारूप, निज मनोभव कोटि-गर्ब हारी[1] ।
जयति सुभग सारंगसुनिखंगसायक-सक्ति-चारुचर्मासिबरबर्मधारी
धर्मधुर धीर रघुबीर भुजबल-अतुल, हेलया दलित भूभार भारी ।
जयतिकलधौतमनिमुकुटकुंडलश्रवनतिलक भलिभाल बिधुबदनसोभा
दिव्यभूषनबसन, पीत उपवीत किये ध्यान कल्यानभाजन न को भा
जयतिभरतसौमित्रिसत्रुहन[2]सेवित सुमुख, सचिव-सेवकसुखदसर्वदाता
अधम आरत दीनपतित पातक-पीन, सकृत नतमात्र कहँ[3] पाहि पाता ।
जयतिजयभुवन दसचारिजसजगमगत, पुन्यमय, धन्यजयराम, राजा
चरितसुरसरितकबिमुख्यगिरिनिःसरितपिबतमज्जतमुदितसतसमाजा
जयति बर्नाश्रमाचार-पर-नारिनर, सत्य-सम-दम-दया-दान-सीला ।
बिगत दुखदोष, संतोष सुख सर्वदा, सुनत गावत रामराजलीला ॥
जयति बैराग्य-बिज्ञान-बारांनिधे नमत नर्मद पाप-ताप-हर्त्ता ।
दासतुलसी चरनसरन संसयहरन देहिं अवलंब बैदेहिभर्त्ता ॥४४॥

राग गौरी

श्रीरामचंद्र कृपाल[5] भजु मन हरन-भवभय-दारुनं ।
नवकंज-लोचन, कंजमुख, करकंज, पदकंजारुनं ॥
कंदर्प-अगनित-अमित-छबि, नवनील-नीरद[6]-सुंदरं ।

---

१ गर्वापहारी—आधुनिक । २ सत्रुघ्न—ह० प्र० । ३ कहि—बेनी, कहे—आधुनिक । ४ मय—१५, ५१ । ५ कृपालु—भा० ब०, ह० प्र०, १५, ज० । ६ नीरज—७४, ५१ प्र०, १५, ह० प्र०, ज० । बेनी में 'द' पर हरताल लगाकर 'ज' बनाया है ।

पटपीत मानहुँ तड़ित-रुचि सुचि नौमि जनकसुता-वरं ॥
भजु दीनबंधु दिनेस दानव-दैत्यबंस-निकंदनं ।†
रघुनंद आनँदकंद कोसलचंद दसरथनंदनं ॥†
सिर मुकुट, कुंडल तिलक चारु, उदार अंग बिभूषनं ।
आजानुभुज, सरचाप-धर, संग्रामजित-खरदूषनं ॥
इति बदत तुलसीदास संकर-सेष-मुनि-मनरंजनं ।
मम हृदयकंज निवास करि[1] कामादि-खल-दल-गंजनं ॥४५॥

राग रामकली

सदा राम जपु, राम जपु, मूढ़ मन बारबारं ।
सकलसौभाग्यसुखखानिजियजानि सठ! मानिबिस्वासबदवेदसारं
कोसलेंद्र नव-नीलकंजाभ-तनु मदनरिपु-कंजहृदि-चंचरीकं ।
जानकीरमन, सुखभवन, भुअनैकप्रभु, समर-भंजन, परम कारुणीकं
दनुज-बन-धूमध्वज, पान-आजानु-भुजदंड-कोदंडबर-चंड-बानं ।
अरुन करचरन मुख,नयन राजीव,गुनअयन,बहु-मयन-सोभानिधानं
वासना-वृंद-कैरव-दिवाकर, काम-क्रोध-मद-कंज-कानन-तुषारं ।
लोभ-अति-मत्तनागेंद्र-पंचाननं, भक्तहित-हरन-संसारभारं ॥
केशवं क्लेशहं केश-वंदित-पदद्वंद्व-मंदाकिनी-मूलभूतं ।
सर्वदानंद संदोह, मोहापहं, घोर-संसार-पाथोधि-पोतं ॥
शोक-संदेह-पाथोद-पटलानिलं, पाप-पर्वत-कठिन-कुलिसरूपं ।
संतजन-कामधुक-धेनु विश्रामप्रद, नाम-कलिकलुष-भंजन अनूपं ॥

† ये दोनों पंक्तियाँ १६६६ की प्रति में नहीं हैं। १ करु—आधुनिक, ज०। भा० में करु पर चिन्ह देकर 'करि' बनवाया है।

धर्म,कल्पद्रुमाराम, हरिधाम, पथि, संबलं, मूलमिदमेवमेकं ।
भक्ति बैराग्य बिज्ञान सम दान दम नाम,आधीन साधनमनेकं ।
तेन तप्तं तेनं दत्तमेवाखिलं, तेन सर्वं कृतं कर्मजालं ।
जेन श्रीरामनामामृतं पानकृतमनिसमनवद्यमवलोक्य कालं ।
स्वपचखलभिल्लजमनादिहरिलोकगतनामबलबिपुलमतिमलं न परसी ।
त्यागिसबआससंत्रासभवपास,असि,निसितयहंनामजपुदासतुलसी
ऐसी आरती राम रघुबीर की करहि मन ।
हरन दुखद्वंद गोविंद आनंदघन ॥
अचर,चर,रूप हरि सर्वगतं सर्वदा बसत, इति बासना धूप दीजै ।
दीपनिज-बोध,गत क्रोध मदमोह तम, प्रौढ़अभिमान-चितवृत्तिछीजै ।
भाव अतिसय बिसद प्रवर नैवेद्य सुभ श्रीरमन परम,संतोषकारी ।
प्रेम तांबूल, गतसूल संसय सकल, बिपुल,भवबासना,बीज,हारी ।
असुभ,सुभकर्म घृत,कर्न दसवर्तिका, त्याग पावक, सतोगुनप्रकासं ।
भगति,वैराग,बिज्ञान,दीपावली अर्पि नीराजनं जगनिवासं ।
बिमल,हृदि,भवन कृत सांति,पर्यंक सुभसयन बिस्राम श्रीरामराया ।
छमा करुना प्रमुख तत्र परिचारिका, यत्र हरि तत्र नहिं भेदमाया ।
एहिआरतीनिरतसनकादिश्रुतिसेषसिवदेवरिषिअखिलमुनितत्वदरसी
करैसोइतरै,परिहरैकामादिमल,वदतिइतिअमलमतिदासतुलसी ।४७।
हरति सब आरतीं आरती राम की ।

---

१ हुतं—ह० प्र०, ७४ । २ मलिन—ज०, ७४, ५१, ह० प्र० । ३ हरि-भा० बेनी, प्र० ज० आदि सभी में । ४ सं० १६६६ में 'सर्वगत' नहीं है जान पड़ता है लिखने में छूट गया । ५ पूर्न भा०, बेनी । ६ खल—बेनी ।

दहति दुख दोष निर्मल निकाम[1] की ॥
सुभग सौरभ धूप दीप बर मालिका ।
उड़त अघ बिहग सुनि ताल-करतालिका ॥
भक्त[2]-हृदि-भवन अज्ञान-तम-हारिनी ।
बिमल-बिज्ञानमय, तेज-बिस्तारिनी ॥
मोह-मद-कोह-कलि-कंज-हिमजामिनी ।
मुकुति की दूतिका, देह-दुति दामिनी ॥
प्रनतजन - कुमुदबन - इंदुकर - जालिका ।
तुलसि अभिमान-महिषेस बहु कालिका ॥४८॥

दनुज वन-दहन, गुनगहन, गोविंद, नंनादि-आनंददाताऽबिनासी ।
संभु सिव रुद्र संकर भयंकर भीम घोर-तेजायतन क्रोधरासी ।
अनंत[3] भगवंत जगदंत[4]-अंतक-त्रास-समन श्रीरमन भुवनाभिरामं ।
भूधराधीस जगदीस ईसान बिज्ञानघन ज्ञानकल्यान-धामं ।
वामनाव्यक्त पावन परावर बिभो, प्रगट परमातमा प्रकृति-स्वामी ।
चंद्रसेखर सूलपानि हर अनघ अज अमित अविछिन्न बृषभेसगामी ।
नीलजलदाभ-तनु स्याम बहु-काम-छबि, रामराजीवलोचन कृपाला ।
कंबु-कर्पूर-बपु-धवल निर्मल मौलि, जटा सुरतटिनि, सित सुमनमाला ।
बसन-किंजल्क-धर चक्र-सारंग-दर-कंज-कौमोदकी अति बिसाला ।
मार-करि-मत्त-मृगराज त्रयनयन हर नौमि अपहरन-संताप[5]ज्वाला ।

---

१ निर्मूलनी काम—भा०, बेनी, बक्सर । २ भरत—१६६६ । ३ देवनंत—१६६६ । ४ यह शब्द १६६६ में नहीं है । ५ संसार—ह० प्र०, ५१, १५, प्र० ज० ।

कृष्न करुनाभवन, दवन-कालीय-खल बिपुल-कंसादि-निर्बंसकारी।
त्रिपुर-मद-भंगकर, मत्तगज-चर्म-धर, अंधकोरग-ग्रसन-पन्नगारी।
ब्रह्म व्यापक अकल सकलपर परम हित ज्ञानगोतीत गुनवृत्तिहर्त्ता।
सिंधुसुत-गर्व-गिरि-बज्र, गौरीस नव, दक्षमखमखिल-बिध्वंसकर्त्ता।
भक्तिप्रिय भक्तजन-कामधुकधेनु हरि हरनदुर्घट-बिकट-बिपति-भारी
सुखदनर्मदबरदबिरजअनवद्यऽखिल,बिपिन-आनंद-बीथिन-बिहारी
*रुचिर हरिसंकरी-नाम मंत्रावली द्वंद्वदुख-हरनि आनंदखानी।
बिष्नुसिवलोक-सोपान-सम सर्मदा बदत तुलसीदास बिसदबानी४९
भानुकुल-कमल-रबि,कोटि-कंदर्प-छबि,कालकलि-ब्यालमिवबैनतेयं।
प्रबल भुजदंड-परचंड कोदंडधर, तूनबर बिसिष, बलमप्रमेयं।
अरुन राजीवदल-नयन सुषमा-अयन स्याम-तनुकांतिबर-बारिदाभं।
तप्तकांचन-वस्त्र सस्त्र बिद्या-निपुन सिद्धसुर-सेव्य पाथोजनाभं।
अखिल लावन्यगृह बिस्वबिग्रह परम प्रौढ़ गुनगूढ़ महिमा उदारं।
दुर्द्धर्ष, दुस्तर, दुर्ग, स्वर्ग-अपवर्ग-पति, भग्न-संसार-पादप-कुठारं।
सापबस-मुनिबधू-मुक्तकृत, बिप्रहित-जग्यरक्षन-दक्ष पक्षकर्त्ता।
जनकनृप-सदसि-सिवचाप-भंजन, उग्र-भार्गवागर्व-गरिमापहर्त्ता।
गुरुगिरा-गौरवामरसुदुस्त्यज-राज्य त्यक्तश्री सहित;सौमित्रि-भ्राता
संग जनकात्मजा,मनुजमनुसृत्य, अज,दुष्टबधनिरत,त्रैलोक्य-त्राता।
दंडकारन्य-कृत-पुन्य-पावनचरन, हरन-मारीच-मायाकुरंगं।
बालिबल-मत्तगजराज-इव केसरी सुहृद-सुग्रीव-दुखरासि-भंगं।
रिच्छ मर्कट बिकट सुभट उद्भट,समर सैल-संकास रिपु-त्रासकारी।

---

* देव इति—अधिक है १६६६ में। १ बिमल—भा० बेबी।

बद्धपाथोधि, सुर-निकर-मोचन, सकुल-लंकेस[4]-दससीस-भुजबीसहारी[2]
दुष्टबिबुधारि [3]संघार-महिभार-अपहरन अवतार कारन अनूपं ।
अमल अनवद्य अद्वैत निर्गुन सगुन ब्रह्म सुमिरामि नरभूपरूपं ।
सेष स्रुति सारदा संभु नारद सनक गनत गुन, अंत नहिं तव चरित्रं ।
सोइराम कामारिप्रिय अवधपति सर्वदा दास तुलसी-त्रासनिधिबहित्रं ५०

जानकीनाथ रघुनाथ रागादितम-तरनि, तारुन्यतनु तेजधामं ।
सच्चिदानंद आनंदकंदाकरं बिस्वबिस्राम रामाभिरामं ।
नीलनव-बारिधर सुभग-सुभ-कांतिकर पीतकौसेय-बरबसन-धारी ।
रत्नहाटक-जटित मुकुट मंडित मौलि भानुसत-सदृस-उद्योतकारी ।
स्रवन कुंडल, भालतिलक, भ्रूरुचिरअति, अरुनअंभोजलोचनबिसालं ।
बक्र[4] अवलोकि त्रैलोक्य-सोकापहं, मारहर[5]-हृदय-मानस-मरालं ।
नासिका चारु, सुकपोल, द्विज बज्रदुति, अधर बिंबोपमा, मधुर हासं ।
कंठ दर, चिबुक बर, बचन गंभीरतर, सत्यसंकल्प सुरत्रासनासं ।
सुमन-सुबिचित्र-नवतुलसिका-दलयुतं मृदुल बनमाल उर भ्राजमानं ।
भ्रमत आमोदबस मत्तमधुकर-निकर मधुरतर मुखर कुर्वंति-गानं ।
सुभग श्रीवत्स केयूर कंकन हार किंकिनी-रटनि कटितट रसालं ।
बाम दिसि जनकजासीन-सिंहासनं कनक-मृदुबल्लि[6]मिव तरु-तमालं ।
आजानुभुजदंड, कोदंड मंडित बाम बाहु, दक्षिन पानि बानमेकं ।
अखिल मुनिनिकर सुरसिद्ध गंधर्व बर नमत नर नाग अवनिप अनेकं

---

१ दलन, २ भारी—भा०, बेनी । ३ संघात—ह०, प्र०, ७४, ज०, । ४ बक्र—भा०, बेनी, ५१ । अन्य प्रतियों में बक्त्र । ५ अरि—ह० प्र०, ज०, ७४ । हर—भा०, बेनी०, ५१ । ६ बल्लि नव—बेनी । बल्लिवत्—आधुनिक ।

अनवद्यं[1] अविच्छिन्न सर्वज्ञ सर्वेस खलु सर्वतोभद्र दाताऽसमाकं ।
प्रनतजन-खेदबिच्छेद बिद्या-निपुन नौमि श्रीराम सौमित्रि साकं ।
जुगल पदपद्म सुखसद्म पद्मालयं, चिह्न कुलिसादि सोभातिभारी ।
हनुमंत-हृदि बिमल-कृतपरममंदिर सदा दासतुलसीसरन-सोकहारी। ५१
कोसलाधीस जगदीस जगदेकहित अमितगुन, बिपुल बिस्तारलीला ।
गायंति तवचरित सुपवित्र श्रुतिसेष सुकसंभु सनकादिमुनिमननसीला
बारिचर बपुषधर, भक्त-निस्तारपदं[2], धरनि कृत नाव महिमातिगुर्वी ।
सकल जज्ञांगमय उग्र बिग्रह क्रोड, मर्दि दनुजेस उद्धरन उर्वी ॥
कमठ अति बिकट-तनु. कठिन पृष्ठोपरि भ्रमत मंदर कंडु-सुख मुरारी ।
प्रगटकृत अमृत, गो, इंदिरा, इंदु बृंदारकाबृंद-आनंदकारी ॥
मनुज-मुनि-सिद्ध-सुर-नाग-त्रासक दुष्ट दनुज द्विजधर्म-मर्याद-हर्त्ता ।
अतुलमृगराजबपु धरित, बिद्दरित अरि, भक्त-प्रह्लाद-अहलादकर्त्ता ॥
छलन बलि कपट बटुरूप पावनं[3] ब्रह्म, भुवन-पर्जंत पद-तीनि-करनं ।
चरननखनीर त्रैलोक्य पावन परम बिबुध जननी दुसह सोक हरनं ।
छत्रियाधीस-करिनिकर-नर-केसरी परसुधर बिप्र-ससि-जलदरूपं ।
बीस-भुजदंड-दससीस खंडन चंडबेग-सायक नौमि राम-भूपं ॥
भूमि-भर-भारहर प्रगट परमातमा ब्रह्म नररूपधरि-भक्तहेतू ।
बृष्निकुल-कुमुद-राकेस राधारवनं[6] कंस-बंसाटवी-धूमकेतू ॥
प्रबल-पाखंड-महिमंडलाकुल देखि निंद्यकृत्-अखिल-मखकर्म-जालं ।
सुद्धबोधैक घन ज्ञान-गुनधाम अज बुद्ध अवतार बंदे कृपालं ॥

---

१ अनघ—बेनी, प्र०, ५१। २ पर, ३ बामन, ४ बर—आधुनिक।
५ घर—७४, ५१, ह० प्र०। ६ रमन—ह० प्र०, ७४, ज० ५१।

कालकलि-जनित-मल-मलिनमनसर्बनर, मोहनिसि-निबिडजमनांधकारं ।
बिष्नुजस-पुत्रकल्की दिवाकर उदित दासतुलसी हरन बिपति-भारं ५२

सर्व-सौभाग्यमद, सर्वतोभद्र-निधि, सर्व सर्वेस सर्वाभिरामं ।
सर्व-हृदि-कंज-मकरंदमधुकर रुचिररूप भूपालमनि नौमि रामं ॥
सर्वसुखधाम गुनग्राम बिश्रामपद नाम सर्वास्यवद मति पुनीतं ।
निर्मलं सांत सुबिसुद्ध बोधायतन क्रोध-मद-हरन करुनानिकेतं ।
अजित निरुपाधि गोतीतमव्यक्त बिभुमेकमनवद्यमजमद्वितीयं ।
प्राकृतं प्रकट परमातमा परमहित प्रेरकानंद बंदे तुरीयं ॥
भूधरं सुंदरं श्रीबरं मदन-मद-मथन, सौंदर्ज-सीमातिरम्यं ।
दुष्प्राप्य दुष्पेक्ष्य दुस्तर्क्य दुष्पार संसारहर सुलभ मृदुभावगम्यं ॥
सत्यकृत सत्यरत सत्यब्रत सर्वदा पुष्ट संतुष्ट संकष्टहारी ।
धर्मवर्मनि ब्रह्मकर्मबोधैक बिप्रपूज्य ब्रह्मण्य जनप्रिय मुरारी ॥
नित्य निर्मम, नित्य मुक्त निर्मान हरि ज्ञानघन सच्चिदानंद मूलं ।
सर्बरच्छक सर्वभच्छकाध्यच्छ कूटस्थ गूढ़ार्चि भक्तानुकूलं ॥
सिद्ध साधक साध्य, वाच्य बाचकरूप, मंत्र-जापक जाप्य, सृष्टि स्रष्टा
परमकारन, कंजनाभ, जलदाभतनु, सगुन निर्गुन, सकल-दृश्य-द्रष्टा ॥
ब्योम-ब्यापक बिरज ब्रह्म बरदेस बैकुंठ बामन बिमल ब्रह्मचारी ।
सिद्ध बृंदारकाबृंद-बंदित सदा खंडि पाखंड निर्मूलकारी ॥
पूरनानंद-संदोह अपहरन-संमोह-अज्ञान-गुनसन्निपातं ।
बचन मन कर्म गतसरन तुलसीदास, त्रास-पाथोधि-इव कुंभजातं ॥ ५३

बिस्वबिख्यात बिस्वेस बिस्वायतन बिश्वमर्याद ब्यालादगामी ।
ब्रह्मबरदेस बागीस ब्यापक बिमल बिपुल बलवान निर्वानस्वामी ।

प्रकृति, महतत्व, सब्दादि, गुन, देवता, ब्योम मरुदग्नि, अमलांबु, उर्वी।
बुद्धि मन इंद्रिय प्रान चित्तातमा काल-परमानु चिच्छक्ति गुर्वी।
सर्वमेवात्र-त्वद्रूप भूपालमनि ब्यक्तमब्यक्त गतभेद, बिष्नो।
भुवन भवदंस कामारि-बंदित-पदद्वंद-मंदाकिनी-जनक जिष्नो।
आदिमध्यांत भगवंत त्वं सर्वगतमीस पश्यंति ये ब्रह्मबादी।
जथा पट-तंतु घट-मृत्तिका, सर्प-स्रग, दारु-करि, कनक-कटकांगदादी।
गूढ़ गंभीर गर्बघ्न गूढ़ार्थवित गुप्त गोतीत गुरु ज्ञान ज्ञाता।
ज्ञेय ज्ञानप्रिय प्रचुर गरिमागार घोर-संसार-परपार-दाता।
सत्यसंकल्प अतिकल्प कल्पांतकृत कल्पनातीत अहि-तल्पवासी।
बनजलोचन बनजनाभ बनदाभ-बपु बनचर-ध्वज-कोटि-लावन्यरासी
सुकर दुष्कर दुराराध्य दुर्ब्यसनहर दुर्ग दुर्द्धर्ष दुर्गार्त्ति-हर्त्ता।
वेदगर्भार्भकादर्भ्रगुन - गर्व - अर्बाकपर - गर्व - निर्वापकर्त्ता॥
भक्त-अनुकूल, भवमूल-निर्मूलकर, तूलअघ-नामपावक-समानं।
तरल-तृष्ना-तमी-तरनि धरनीधरन सरन-भय-हरन करुनानिधानं।
बहुल बृंदारकाबृंद बंदारु पद-द्वंद्व, मंदारमालोरधारी।
पाहिमामीस संतापसंकुल सदा दासतुलसी प्रनत रावनारी॥५४॥

संत-संतापहर बिस्वबिश्रामकर राम कामारि-अभिरामकारी।
सुद्धबोधायतन सच्चिदानदघन सज्जनानंदवर्द्धन खरारी।
सील-समता-भवन बिषमता-मति-समन राम रामारमन रावनारी।
खड्गकर चर्मबर-बर्मधर, रुचिर कटि तून, सर-सक्ति-सारंगधारी।
सत्यसंधान निर्बानप्रद सर्वहित सर्वगुन-ज्ञान-बिज्ञानसाली।

१ अर्बाग—७४, ५१।

सघन-तम-घोर-संसार-भर-सर्वरी-नामदिवसेस-खर-किरनमाली ।
तपन तीछन तरुन, तीव्रतापघ्न तपरूप तनुभूप तमपर तपस्वी ।
मान-मद-मदन-मत्सर-मनोरथ-मथन मोह-अंभोधि-मंदर मनस्वी ।
बेदबिख्यात बरदेस बामन बिरज बिमल बागीस बैकुंठस्वामी ।
काम-क्रोधादि-मर्दन बिबर्धन-क्षमा सांतबिग्रह बिहँगराज-गामी ॥
परम पावन, पापपुंज-मुंजाटवी-अनल-इव-निमिष-निर्मूलकर्त्ता ।
भुवनभूषन, दूषनारि, भुवनेस, भूनाथ श्रुतिमाथ जय भुवनभर्त्ता ॥
अमल अबिचल अकल सकल संतप्त-कलि-बिकलता-भंजनानंदरासी।
उरग-नायक-सयन, तरुन-पंकज-नयन, छीरसागर-अयन, सर्वबासी
सिद्ध-कबि-कोबिदानंददायक पदद्वंद्व, मंदात्ममनुजैर्दुरापं ।
यत्र संभूत अति पूत जल सुरसरी दर्सनादेव अपहरति पापं ॥
नित्य निर्मुक्त संयुक्तगुन निर्गुनानंत भगवंत नियामक नियंता ।
विश्व-पोषन-भरन विश्वकारन-करन, सरन-तुलसीदास-त्रासहंता ५५

दनुजसूदन दयासिंधु दंभापहन दहन-दुर्दोष दुःपापहर्त्ता ।
दुष्टतादमन, दमभवन, दुःखौघहर दुर्ग-दुर्बासना-नासकर्त्ता ॥
भूरिभूषन भानुमंत भगवंत भवभंजनाभयद भुवनेस भारी ।
भावनातीत भवबंद्य भव-भक्तहित भूरि-उद्धरन भूधरन-धारी ॥
बरद बनदाभ बागीस विश्वातमा बिरज बैकुंठ-मंदिर-बिहारी ।
ब्यापकब्योम बंद्यांघ्रि पावन बिभो ब्रह्मविद्-ब्रह्मचिंतापहारी ॥
सहज सुंदर सुमुख सुमन सुभ सर्वदा सुद्ध सर्वज्ञ स्वच्छंदचारी ।
सर्वकृत सर्वभृत सर्वजित् सर्वहित सत्यसंकल्प कल्पांतकारी ॥

---

१ बामन—आधुनिक ।

नित्य निर्मोह निर्गुन निरंजन निजानंद निर्मान निर्वानदाता ।
निर्भरानंद निःकंप निःसीम निर्मुक्त निरुपाधि निर्मम विधाता ॥
महामंगलमूल मोद-महिमायतन मुग्ध-मधु-मथन मानद अमानी ।
मदनमर्दन मदातीत मायारहित मंजु मानाथ पाथोज-पानी ॥
कमललोचन, कलाकोस, कोदंडधर, कोसलाधीस, कल्यानरासी ।
जातुधान-प्रचुर-मत्तकरि-केसरी भक्त मनपुन्य-आरन्यबासी ॥
अनघ अद्वैत अनवद्य अव्यक्त अज अमित अविकार आनंदसिंधो !
अचल अनिकेत अबिरल अनामय अनारंभ अंभोदनादघ्न बंधो ॥
दासतुलसी खेदखिन्न, आपन्न, इह-सोकसंपन्न अतिसय सभीतं ।
प्रनतपालक राम परम करुनाधाम पाहि मामुर्विपति दुर्बिनीतं ५६

देहि सतसंग निजअंग, श्रीरंग, भवभंग-कारन, सरन-सोकहारी ।
जेतु भवदंघ्रि-पल्लव-समाश्रित सदा भक्तिरत, बिगतसंसय मुरारी !
असुर सुर नाग नर जक्ष गंधर्व खग रजनिचर सिद्ध जे चापि अन्ये ।
संतसंसर्ग त्रयवर्गपर परमपद प्राप, निःप्राप गति त्वयि प्रसन्ने ॥
वृत्र बलि बान प्रहलाद मय ब्याध गज गृद्ध द्विजबंधु निजधर्म त्यागी ।
साधुपद-सलिल-निर्धूत-कल्मष सकल, स्वपच जमनादि कैवल्यभागी
सांत निरपेक्ष निर्मम निरामय अगुन शब्द-ब्रह्मैक पर-ब्रह्म ज्ञानी ।
दक्ष, समदृक स्वदृक विगत-अति-स्वपरमतिपरमरतिबिरतितव चक्रपानी
विश्व-उपकारहित ब्यग्र-चित सर्वदा, त्यक्तमदमन्यु, कृतपुन्यरासी ।
यत्र तिष्ठंति तत्रैव अज सर्व हरि सहित गच्छंति क्षीराब्धिबासी ॥

---

१ प्राप्य—७४, ५१ । प्राप—भा०, बेनी प्र० । २ सोदक—१८१६ । स्वदक—सभी प्रतियों में ।

बेद-पय-सिंधु, सुबिचार-मंदर महा अखिल-मुनिबृंद निर्मथनकर्त्ता ।
सार-सतसंगमुद्धृत्यमिति निश्चितं बदति श्रीकृष्णवैदर्भिभर्त्ता ॥
सोक संदेह भय हर्षतम तषगण साधु-सद्युक्ति-बिच्छेदकारी ।
यथा रघुनाथ-सायक निसाचरचमू-निचय-निर्दलन-पटु बेग भारी ॥
यत्रकुत्रापि मम जन्म निज कर्मबस भ्रमत जगयोनि संकटमनेकम् ।
तत्र त्वद्भक्ति सज्जन-समागम सदा भवतु मे रामबिश्राममेकम् ॥
प्रबल भवजनित-त्रैव्याधि-भेषज भक्ति, भक्त भैषज्यमद्वैतदरसी ।
संत-भगवंत अंतर निरंतर नहीं किमपि मतिमलिनकहदासतुलसी ५७

देहि अवलंब करकमल कमलारमन दमनदुख समन-संताप-भारी ।
अज्ञान-राकेस ग्रासन बिधुंतुद, गर्ब-काम-करिमत्त-हरि दूषनारी ॥
बपुष ब्रह्मांड सो, प्रवृत्ति-लंकादुर्ग रचित मन-दनुज-मयरूपधारी ।
बिबिधकोसौघअतिरुचिरमंदिरनिकरसत्वगुन-प्रमुखत्रय-कटककारी ॥
कुनप-अभिमान-सागर भयंकर घोर बिपुल अवगाह दुस्तर अपारम् ।
नक्र-रागादि-संकुल मनोरथ सकल संगसंकल्प-बीची-बिकारम् ॥
मोह दसमौलि, तद्भ्रात अहंकार, पाकारिजित्-काम बिश्रामहारी ।
लोभ अतिकाय, मत्सर महोदर दुष्ट, क्रोध पापिष्ठ बिबुधांतकारी ॥
द्वेष-दुर्मुख, दंभ-खर, अकंपन-कपट, दर्प मनुजाद-मद-सूलपानी ।
अमितबल परम दुर्जय निसाचर-चमू सहित षड्वर्ग गो-जातुधानी ॥
जीव भवदंघ्रि-सेवक-बिभीषन बसत मध्य दुष्टाटवी ग्रसितचिंता ।
नियम जम सकल सुरलोक-लोकेस लंकेसबस नाथ! अत्यंत भीता ॥

---

१ इति—भा० बेनी। २ अनेकम्—भा० बेनी। ३ दलन—भा०, बेनी। ४निकट—ह० प्र०, ५१, ७४।

ज्ञान अवधेस, गृह-गेहिनी भक्ति सुभ, तत्र अवतार भूभारहर्त्ता ।
भक्त संकष्टमवलोक्य पितुवाक्य-कृत गमन किय गहन बैदेहि-भर्त्ता ॥
कैवल्य-साधन अखिल भालु मर्कट बिपुल ज्ञान-सुग्रीव-कृत जलधिसेतू ।
प्रबल बैराग्य दारुन प्रभंजनतनय बिषय-बन-दहनमिव धूमकेतू ॥
दुष्ट-दनुजेस निर्बंस कृत दासहित बिश्वदुख-हरन बोधैकरासी ।
अनुज निजजानकीसहितहरिसर्वदादासतुलसी-हृदय-कमलबासी ५८

दीनउद्धरन रघुवर्ज करुनाभवन समनसंताप पापौघ-हारी ।
बिमल-बिज्ञान-बिग्रह अनुग्रहरूप भूपबर बिबुध-नर्मद खरारी ॥
संसारकांतार अतिघोर गंभीर घन गहन तरुकर्म-संकुल, मुरारी ।
बासना-बल्लि खर-कंटकाकुल बिपुल निबिड़ बिटपाटवी कठिन भारी ।
बिबिध चितवृत्तिखग-निकर सेनोलूक काकबकगृध्र आमिष-अहारी ।
अखिलखलनिपुन-छल-छिद्रनिरखतसदा जीवजनपथिकमनखेदकारी ।
क्रोध करि मत्त, मृगराज कंदर्प, मद-दर्प बृक भालु अति उग्रकर्म्मा ।
महिष मत्सर क्रूर, लोभ सूकर रूप फेरु छल, दंभ मार्जार-धर्म्मा ।
कपट मर्कट, बिकट ब्याघ्र पाखंडमुख दुखद-मृगब्रात उतपातकर्त्ता ।
हृदय अवलोकि यह सोक सरनागतं, पाहि,मां पाहि,भो बिश्वभर्त्ता ।
प्रबल अहंकार दुर्घट महीधर, महामोह गिरिगुहा निबिडांधकारम् ।
चित्त बैताल, मनुजाद मन, प्रेतगन रोग, भोगौघ बृश्चिक-बिकारम् ।
बिषय-सुख-लालसादंस-मसकादि,खलझिल्लि.रूपादिसबसर्पस्वामी ।
तत्र आक्षिप्त तव बिषम माया, नाथ! अंध मैं मंद ब्यालादगामी ।
घोर अवगाह भव-आपगा, पापजल-पूर, दुष्प्रेक्ष्य दुस्तर अपारं ।

१ सूर—१५६६ ।

मकर षड्वर्ग, गो नक्र, चक्राकुल, कूल सुभ-असुभ, दुख तीव्र धारं।
सकल संघट पोच, सोचबस सर्बदा दासतुलसी बिषय-गहन ग्रस्तम्।
त्राहि रघुबंसभूषन कृपाकर कठिन काल-बिकराल-कलि-त्रासत्रस्तम्। ५९

नौमि नारायनं नरं करुनायनं ध्यानपारायनं ज्ञानमूलम्।
अखिल-संसार-उपकार-कारन सदय-हृदय तपनिरत प्रणतानुकूलम्।
श्याम-नव-तामरस-दाम-द्युतिबपुष-छबिकोटि-मदनार्क अघटितप्रकाशम्
तरुन रमनीय राजीव लोचन बदन राकेस, कर निकर हासम्।
सकल सौंदर्यनिधि, बिपुल-गुन-धाम बिधि-बेदबुधसंभुसेवितअमानम्
अरुन-पदकंज - मकरंद - मंदाकिनी मधुप-मुनिबृंद कुर्वंति पानम्।
सक्र-प्रेरित-घोर-मारमद-भंगकृत, क्रोधगत, बोधरत, ब्रह्मचारी।
मारकंडेय मुनिवर्ज हित कौतुकी, बिनहिं कल्पांत प्रभु प्रलयकारी।
पुण्यबन सैल सरि बदरिकाश्रम सदाऽसीनपद्मासनं एकरूपं।
सिद्ध-जोगींद्र-बृंदारकानंदप्रद भद्रदायक दरस अति अनूपं।
मान मनभंग, चितभंग मद, क्रोध लोभादिपर्वतदुर्ग, भुवनभर्त्ता।
द्वेष मत्सर-रागप्रबल प्रत्यूह प्रति, भूरि निर्दय, क्रूर-कर्म-कर्त्ता।
बिकटतर बक्र छुरधार प्रमदा, तीव्र दर्प कंदर्प खर खड्गधारा।
धीर गंभीर-मन-पीरकारक तत्र के बराका बयं बिगतसारा।
परम दुर्घट पंथ, खल असंगत साथ, नाथ नहिं हाथ बर बिरति-यष्टी।
दरसनारत दास, त्रसित-माया-पास, त्राहि हरि त्राहि हरि जानि कष्टी।
दासतुलसी दीन, धर्मसंबलहीन श्रमित अति खेद, मति मोहग्रासी।
देहि अवलंब न बिलंब अंभोजकर-चक्रधर तेज-बलसर्म-रासी। ६०।

सकलसुखकंद आनंदबन-पुण्यकृत बिंदुमाधव द्वंद्व-बिपति-हारी।

यस्यांघ्रिपाथोजअजसंभुसनकादिसुकसेषमुनिबृंदअलिनिलयकारी।
अमलमरकत स्याम, काम-सतकोटि-छबि-पीतपटतड़ितइव जलदनीलं।
अरुणसतपत्र-लोचन, बिलोकनिचारु, प्रनतजन-सुखद, करुनार्द्रसीलं।
काल-गजराज-मृगराज, दनुजेस-बन-दहन-पावक, मोह-निसि-दिनेसं
चारिभुज चक्र कौमोदकी जलज दर सरसिजोपरि जथा राजहंसं।
मुकुट कुंडल तिलक, अलकअलिब्रातइव, भृकुटिद्विजअधरबरचारुनासा
रुचिर सुकपोल, दर ग्रीव सुखसींव, हरि.इंदुकर-कुंदमिव मधुरहासा।
उरसि बनमाल सुबिसाल, नव मंजरी भ्राज श्रीवत्स-लांछनमुदारं।
परम ब्रह्मण्य, अतिधन्य गतमन्यु अज अमित बलबिपुलमहिमाअपारं।
हार केयूर, कर कनक-कंकन, रतनजटित मनि मेखला कटिप्रदेसं।
युगल पद नूपुरा मुखर कलहंसवत्, सुभग सर्वांग, सौंदर्यबेषं।
सकल-सौभाग्य-संयुक्त त्रैलोक्यश्री, बामदिसि रुचिर बारीसकन्या।
बसत बिबुधापगा निकट तट सदन बर, नयननिरखंति नरतेऽतिधन्या
अखिल-मंगल-भवन, निबिड़-संसय-समन, दवन[2] बृजिनाटवी कष्टहर्ता
बिस्वधृत बिश्वहित अजित गोतीत सिव बिश्व-पालन-हरन, बिश्वकर्त्ता
ज्ञानबिज्ञान-वैराग्यऐश्वर्य-निधि, सिद्धि अनिमादि दे भूरि दानं।
ग्रसत[3]-भवब्यालअतित्रासतुलसीदास त्राहि श्रीरामउरगारिजानं ६१

राग आसावरी

इहै परम फल परम बड़ाई।
नखसिख रुचिर बिंदुमाधव-छबि निरखहिं नयन अघाई॥
बिसद किसोर पीन सुंदर बपु स्याम सुरुचि अधिकाई।

१ दक्षि। २ दमन, ३ ग्रसित—भा० बेनी।

नीलकंज बारिद तमाल मनि इन तनु तें दुति पाई ॥
मृदुलचरन सुभ चिन्ह पदज नख अति अभूत उपमाई ।
अरुन नील पाथोज प्रसव जनु मनिजुत दल समुदाई ॥
जातरूप मनिजटित मनोहर नूपुर जन - सुखदाई ।
जनु हर उर हरि बिबिध बेष धरि रहे बर भवन बनाई ॥
कटितट रटति चारु किंकिनि, रव अनुपम बरनि न जाई ।
हेमजलज कल कलिन मध्य जनु मधुकर मुखर सोहाई ॥
उर बिसाल भृगुचरन चारु अति सूचत कोमलताई ।
कंकन चारु बिबिध भूषन बिधि रचि निज कर मन लाई ॥
गजमनि-माल बीच भ्राजत कहि जात न पदिक-निकाई ।
जनु उडुगन-मंडल बारिद पर नवग्रह रची अथाई ॥
भुजग-भोग भुजदंड, कंज दर चक्र गदा बनि आई ।
सोभासीवँ ग्रीव चिबुकाधर बदन अमित छबि छाई ॥
कुलिस-कुंदकुडमल-दामिनि-दुति दसननि देखि लजाई ।
नासा नयन कपोल ललित, श्रुति-कुंडल भ्रू मोहिं भाई ॥
कुंचित कच सिर मुकुट भाल पर तिलक कहौं समुझाई ।
अलप तड़ित जुग रेख इंदु महँ रहि तजि चंचलताई ॥
निर्मल पीत दुकूल अनूपम उपमा हिय न समाई ।
बहु मनिजुत गिरिनील-सिखर पर कनक-बसन रुचिराई ॥
दच्छभाग अनुराग सहित इंदिरा अधिक ललिताई ।
हेमलता जनु तरु तमाल ढिग नील निचोल ओढ़ाई ॥
सत सारदा सेस स्रुति मिलि करि सोभा कहि न सिराई ।

तुलसिदास मतिमंद द्वंदरत कहै कौन बिधि गाई ॥६२॥

राग जयतिश्री

मन इतनोइ है या तनु को परम फलु ।
नख सिख[1] सुभग बिंदुमाधव छबि तजि सुभाउ अवलोकु एक पलु ।
तरुन अरुन अंभोज चरन मृदु, नख-दुति हृदय-तिमिरहारी ।
कुलिस-केतु-जव-जलज-रेख बर, अंकुस मन-गज-बसकारी ।
जटित-कनक-मनि नूपुर, मेखल कटितट रटति मधुर बानी ।
त्रिबली उदर गँभीर नाभि-सर जहँ उपजे बिरंचि ज्ञानी ।
उर बन-माल पदिक अति सोभित, बिप्रचरन चित कहँ करषै ।
स्याम-तामरस-दाम-बरन बपु, पीत बसन सोभा बरषै ।
कर कंचन केयूर मनोहर, देति मोद मुद्रिक न्यारी
गदा-कंज-दर-चारु-चक्रधर, नागसुंड सम भुज चारी ।
कंबु-ग्रीव, छबिसींव चिबुक द्विज, अधर अरुन, उन्नत नासा ।
नव-राजीव-नयन, ससि-आनन, सेवक-सुखद बिसद हासा ॥
रुचिर कपोल, स्रवन कुंडल, सिर मुकुट, सुतिलक भाल भ्राजै ।
ललित भृकुटि, सुंदर चितवनि, कच निरखि मधुप-अवली लाजै ॥
रूप-सील-गुन-खानि दच्छदिसि सिंधुसुता रत-पदसेवा ।
जाकी कृपा-कटाच्छ चहत सिव,बिधि,मुनि, मनुज, दनुज, देवा ॥
तुलसिदास भवत्रास मिटै तब जब चित[2] यहि सरूप अटकै ।
नाहिं त दीन मलीन हीन-सुख कोटि जनम भ्रमि भ्रमि भटकै ६३

---

१ सब अंग—ह० अ०, ५१, ज । २ मति—७४, ७३ ।

राग बसंत

बंदौं रघुपति करुनानिधान । जातें छूटै भव भेदज्ञान ॥
रघुबंस-कुमुद सुखप्रद निसेस । सेवित पदपंकज अज महेस ॥
निज-भक्त-हृदय-पाथोज-भृंग । लावन्य बपुष अगनित अनंग ॥
अति प्रबल मोह-तम मारतंड । अज्ञान-गहन-पावक प्रचंड ॥
अभिमान-सिंधु-कुंभज उदार । सुररंजन, भंजन भूमिभार ॥
रागादि-सर्पगन-पन्नगारि । कंदर्प-नाग-मृगपति मुरारि ॥
भवजलधि-पोत चरनारबिंद । जानकी-रमन आनंदकंद ॥
हनुमंत - प्रेमबापी - मराल । निष्काम-कामधुक गो दयाल ॥
त्रैलोक-तिलक गुनगहन राम । कह तुलसिदास बिश्रामधाम ६४

राग भैरव

राम राम रमु, राम राम रटु, राम राम जपु जीहा ।
रामनाम - नव - नेह - मेह को मन हठि होहि पपीहा ॥
सब साधनफल कूप-सरित-सर-सागर-सलिल निरासा ।
रामनाम-रति स्वाति-सुधा सुभ-सीकर प्रेम-पियासा ॥
गरजि तरजि[1] पाषान बरषि पबि प्रीति परखि जिय जानै ।
अधिक अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति[2] पहिचानै ॥
रामनाम गति, रामनाम मति, रामनाम-अनुरागी ।
ह्वै गए, हैं, जे होहिंगे तेइ तिभुअन गनियत बड़भागी ॥
एकअंग मग अगम गवन करि बिलमु न छिन छिन छाहैं ।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि निरुपधि नेम निबाहैं ६५

१ गरज तरज । २ परख— १६६६ ।

राम जपु, राम जपु, राम जपु, बावरे !
घोर भव-नीरनिधि नाम निज नाव, रे !
एकहि साधन सब रिधि सिधि साधि, रे !
ग्रसे कलि रोग जोग संजम समाधि, रे !
भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो बाम, रे !
रामनाम ही सों अंत सबही को काम, रे !
जग-नभबाटिका रही है फलि फूलि, रे !
धुआँ के से धौरहर देखि तू न भूलि, रे !
रामनाम छाँड़ि जो भरोसो करै और, रे !
तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर, रे ॥ ६६ ॥

रामनाम जपु जिय सदा सानुराग, रे !
कलि न बिराग जोग जाग तप त्याग, रे !
राम-सुमिरन सब बिधि ही को राज, रे ! } ❀
राम को बिसारिबो निषेध-सिरताज, रे ! }
रामनाम महामनि, फनि जगजाल, रे !
मनि लियें[1] फनि जियें[2] ब्याकुल बिहाल, रे !
रामनाम कामतरु देत फल चारि, रे !
कहत पुरान, बेद, पंडित, पुरारि, रे !
रामनाम प्रेम परमारथ को सारु, रे !
रामनाम तुलसी को जीवन-अधार, रे ! ॥ ६७ ॥

राम राम राम जीय जौलौं तू न जपिहै ।

❀ १६६६ में ये पंक्तियाँ नहीं हैं । १ लिये, २ जिये—ज०, ह० प्र०, ५१
१५ । जियै—भा०, बेनी ।

तौ लौं तू कहूँ जाय तिहूँ ताप तपिहै ॥
सुरसरि-तीर बिनु नीर दुख पाइहै ।
सुरतरु-तर तोहिं दुःख दारिद सताइहै ॥
जागत बागत सपने न दुख सोइहै ।
जनमि जनमि जुग जुग जग रोइहै ॥
छूटिबे की जतन बिसेषि बाँध्यो जाहिगो ।
ह्वैहै बिष भोजन जौं सुधा सानि खाहिगो ॥
तुलसी तिलोक तिहूँ काल तोसे दीन को ।
रामनाम ही की गति जैसे जल मीन को ॥६८॥

सुमिरु सनेह सों तू नाम रामराय को ।
संबरु निसंबरी को, सखा असहाय को ॥
भागु है अभागे हू को, गुन गुनहीन को ।
गाहक गरीब को दयालु दानि दीन को ॥
कुल अकुलीन को सुने न कोउ साखि है ।
पाँगुरे को हाथ पाँय, आँधरे को आँखि है ॥
माय बाप भूखे को, अधार निराधार को ।
सेतु भवसागर को, हेतु सुखसार को ॥
पतित-पावन रामनाम सों न दूसरो ।
सुमिरें सुभूमि भयो तुलसी सो ऊसरो ॥६९॥

भलो भली भाँति है जो मेरे कहे लागिहै ।
मन रामनाम सों सुभाय अनुरागिहै ॥

१ सुनो है बेद साखि है—भा० बेनी, १५, ७४, ५१ ।

रामनाम को प्रभाव जानु जूड़ी आगि है।
सहित सहाय कलिकाल भीरु भागिहै॥
राग रामनाम सों, बिराग जोग जागिहै।
बाम बिधि भाल हू न कर्म-दाग दागिहै॥
रामनाम-मोदक सुधा-सनेह पागिहै।
पाइ परितोष तू न द्वार द्वार बागिहै॥
कामतरु रामनाम, जोइ जोइ माँगिहै।
तुलसिदास स्वारथ परमारथौ न खाँगिहै॥७०॥

ऐसेउ साहब की सेवा सों होत चोर, रे!
आपनी न बूझि, ना कहे को राढ़रोर रे!
मुनि-मन-अगमु, सुगमु माय बापु सो।
कृपासिंधु, सहज सखा, सनेही आपु सो॥
लोक-बेद-बिदित बड़ो न रघुनाथ सो।
सब दिन, सब देस, सबही के साथ सो॥
स्वामी सर्बज्ञ सों चलै न चोरी चार की।
प्रीति-पहिचानि, यह रीति दरबार की॥
काय न कलेसु लेसु, लेत मानि मन की।
सुमिरे सकुचि रुचि जोगवत जन की॥
रीझें बस होत, खीझे देत निज धामु, रे!
फलत सकल फल कामतरु-नामु, रे!
बेचें खोटो दाम न मिलै, न राखे कामु, रे!
सोउ तुलसी निवाज्यो ऐसे राजा रामु, रे॥७१॥

मेरो भलो कियो राम आपनी भलाई ।
हौं तो साईं-द्रोही, पै सेवक-हितु साँईं ॥
राम सो बड़ो है कौन ? मो सों कौन छोटो ?
राम सों खरो खसम ? मो सों खल खोटो ?
लोगु कहै राम को गुलाम हौं, कहावौं ।
एतो बड़ो अपराध, भो मन बावौं ॥
पाथ-माथे चढ़ै तृन तुलसी जो नीचो ।
बोरत न बारि ताहि जानि आपु सींचो ॥७२॥

जागु जागु जागु जीव[1] जोहै जग-जामिनी ।
देह गेह नेह जानि[2] जैसे घन-दामिनी ॥
सूते[3] सपने ही सहै संसृत-संताप, रे ।
बूड़ो मृगबारि, खायो जेंवरी को साँप, रे !
कहैं बेद बुध तू तौ बूझि मन माहिं रे !
दोष दुख सपने के जागे ही पै जाहिं, रे ?
तुलसी जागे तें जाय ताप तिहुँ ताइ, रे !
रामनाम सुचि रुचि सहज सुभाइ, रे ॥७३॥

राग विभास

जानकीस की कृपा जगावति[4], सुजान जीव !
जागि त्यागु मूढ़तानुरागु श्रीहरे ।
करु बिराग तजु बिकार, भजु उदार रामचंद्र,
भद्रसिंधु दीनबंधु, बेद बदत, रे !

---

१ जीव जड़, २ जानु, ३ सोवत—आधुनिक । ४ जगावती—भा०, बेनो ।

मोहमय कुहू-निसा बिसाल काल बिपुल सोयो,
खोयो सो अनूप रूप स्वप्न हू परे।
अब प्रभात प्रगट ज्ञान-भानु के प्रकास,
बासना-सराग-मोह-द्वेष-निबिड़-तम टरे।
भागे मद-मान-चोर भोर जानि जातुधान,
काम-क्रोध-लोभ-छोभ-निकर अपडरे।
देखत रघुबर-प्रताप बीते संताप पाप,
ताप त्रिबिध प्रेम-आप दूर ही करे।
स्रवन सुनि गिरा गँभीर जागे अति धीर,
बीर बर बिराग तोष सकल संत आदरे।
तुलसिदास प्रभु कृपाल निरखि जीवजन,
बिहाल भंज्यो भवजालु परम मंगलाचरे ॥७४॥

राग ललित

खोटो खरो रावरो हौं, रावरी सौं,
रावरे सों झूठ क्यों कहौंगो ? जानौ सबही के मन की।
करम बचन हियें कहौं न कपट किये,
ऐसी हठ जैसी गाँठि पानी परे सन की ॥
दूसरो भरोसो नाहिं, बासना उपासना की,
बासव, बिरंचि, सुर, नर, मुनिगन की।
स्वारथ के साथी, मेरे हाथ[1] सों न लेवा देई,
काहू तो न पीर रघुबीर दीनजन की ॥

---

1 हाथी स्याने—१६६६। हाथो स्वान—बेनो।

साँप सभा साबरु लबारु भए देव दिव्य,
दुसह साँसति कीजै आगे ही या तन की।
साँचे परे पाऊँ पान, पाँच[1] मैं प्रवान पनु,
तुलसी-चातकु-आस राम-स्याम-घन की ॥७५॥

राम को गुलाम नाम रामबोला राम राख्यो,
काम यहै नाम द्वै हौं कबहुँ कहतु हौं।
रोटी लूगा नीकें राखै, आगे हू को बेद भाषै,
भलो ह्वैहै तेरो, तातें आनँदु लहतु हौं ॥
बाँध्यो हौं करम जड़ गरभ गूढ़ निगड़,
सुनत दुसह हौं तो साँसति सहतु हौं।
आरत-अनाथ-नाथ कोसलपाल कृपाल,
लीन्हों छीनि दीन देख्यो दुरित दहतु हौं ॥
बूझ्यो ज्योंहीं, कह्यो "मैं हूँ चेरो ह्वैहौं रावरो जू,
मेरे कोऊ कहूँ न हौं चरन गहतु हौं।
मींजो गुरु पीठ अपनाइ गहि बाँह बोलि,
सेवक-सुखद सदा बिरुद बहतु हौं ॥
लोग कहैं पोचु, सो न सोचु न सकोचु,
मेरे ब्याह न बरेखी, जाति पाँति न चहतु हौं।
तुलसी काजु अकाजु राम ही के रीझे खीझे,
प्रीति की प्रतीति मन मुदित रहतु हौं ॥७६॥

जानकी-जीवन, जगजीवन, जगतहित,

---

[1] पंच में परे प्रमान—भा० बेनी।

जगदीस, रघुनाथ, राजिव-लोचन राम ।
सरद्-बिधु-बदन, सुखसील, श्रीसदन,
सहज सुंदर तनु, सोभा अगनित काम ॥
जग सुपिता, सुमातु, सुगुर, सुहित सुमीत,
सबको दाहिनो, दीनबंधु काहू को न बाम ।
आरतिहरन, सरनद, अतुलित दानि,
प्रनतपाल, कृपालु पतित-पावन नाम ॥
सकल - बिस्व - बंदित, सकल-सुर -सेवित,
आगम निगम कहैं रावरे ई गुनग्राम ।
इहै जानिकै तौ तुलसी तिहारो जन भयो,
न्यारो कै गनिबो जहाँ गने गरीब गुलाम ॥७७॥

राग टोडी

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोई ।
जासों दीनता कहौं मैं देखौं दीन सोई ॥
सुर नर मुनि असुर नाग साहिब तौ घनेरे ।
तौलौं जौलौं रावरे न नेकु नयन फेरे ॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित, बदत बेद चारी ।
आदि अंत मध्य राम साहिबी तिहारी ॥
पाहन, कपि पसु, बिहँग अपने कर लीन्हें ।
महाराज दसरथ के ! रंक राय कीन्हें ॥
तुमहिं माँगि माँगनो न माँगनो कहायो ।
सुनि सुभाव सील सुजस जाचन जन आयो ॥

तूँ गरीब को निवाज, हौं गरीब तेरो।
बारक कहिए कृपाल! तुलसिदास मेरो ॥७८॥

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पापपुंज - हारी॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मोसो?
मो समान आरत नहिं, आरतिहर तोसो॥
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू[1] ठाकुर, हौं चेरो।
तात,मात,गुरु, सखा तू सब बिधि हित मेरो॥
तोहिं मोहिं नाते अनेक मानिये जो भावै।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु! चरन-सरन पावै ॥७९॥

और काहि माँगिए, को माँगिबो निवारै?
अभिमतदातार कौन दुखदरिद्र दारै?
धरम-धाम राम काम-कोटि-रूप रूरो।
साहिब सब बिधि सुजान, दान-खड्ग सूरो॥
सुसमय दिन द्वै निसान सबके द्वार बाजै।
कुसमय दसरथ के दानि! तैं गरीब निवाजै॥
सेवा बिनु, गुन - बिहीन दीनता सुनाए।
जे जे तैं निहाल किए ते फूले फिरत पाए॥
तुलसिदास जाचक-रुचि जानि दान दीजै।
रामचंद्र चंद्र तू! चकोर मोहिं कीजै ॥८०॥

---

१ तू है—प्र०।

रागभैरव (भा० प्र०) आसावरी

दीनबंधु, सुखसिंधु, कृपाकर, कारुनीक रघुराई ।
सुनहु नाथ! मन जरत त्रिबिध ज्वर, करत फिरत बौराई ॥
कबहुँ जोगरत, भोगनिरत सठ, हठ बियोग बस होई ।
कबहुँ मोहबस द्रोह करत बहु, कबहुँ दया अति सोई ॥
कबहुँ दीन मतिहीन रंकतर, कबहुँ भूप अभिमानी ।
कबहुँ मूढ़ पंडित बिडंब-रत, कबहुँ धरम-रत ज्ञानी ॥
कबहुँ देख जग धनमय रिपुमय, कबहुँ नारिमय भासै ।
संसृति-सन्निपात दारुन दुख बिनु हरिकृपा न नासै ॥
संजम जप तप नेम धरम ब्रत बहु भेषज समुदाई ।
तुलसिदास भवरोग रामपद-प्रेमहीन नहिं जाई ॥८१॥

मोहजनित मल लाग बिबिध बिधि, कोटिहु जतन न जाई ।
जनम जनम अभ्यास निरत चित अधिक अधिक अधिकाई[1] ।
नयन मलिन परनारि निरखि, मन मलिन बिषय सँग लागे ॥
हृदय मलिन बासना मान मद, जीव सहज सुख त्यागे ।
परनिंदा सुनि स्रवन मलिन भए, बचन दोष पर गाए ॥
सब प्रकार मलभार लाग निज नाथ-चरन बिसराए ।
तुलसिदास ब्रत दान ज्ञान तप सुद्धिहेतु स्रुति गावै ॥
राम[2]चरन-अनुराग-नीर बिनु अति मल नास न पावै ॥८२॥

राग जयतश्री

कछु है न आइ गयो जनम जाय ।

१ लपटाई—वेनी, ह० प्र०, ७४, ५१ । २ रामचंद्र—१२६९ ।

अति दुर्लभ तनु पाइ कपट तजि भजे न राम मन बचन काय ॥
लरिकाई बीत्यो अचेत चित, चंचलता चौगुनी चाय ।
जोबन-जर जुवती-कुपथ्य करि भयो त्रिदोष भरि मदन-बाय ॥
मध्य बयस धनहेतु गँवाई कृषी बनिज नाना उपाय ।
रामबिमुख सुख लह्यो न सपनेहुँ निसि-बासर तयो तिहूँ ताय ॥
सेये नहिं सीतापति-सेवक साधु सुमति भले भगति भाय ।
सुने न पुलकि तनु, कहे न मुदित मन, किए जे चरित रघुबंसराय ।
अब सोचत मनि बिनु भुजंग ज्यों बिकल अंग दले जरा धाय ।
सिर धुनि धुनि पछितात मींजि कर, कोउ न मीत हित दुसह दाय ॥
जिन्ह लगि निज परलोक बिगारयो ते लजात होत ठाढ़े ठायँ ।
तुलसी सुमिरि अजहुँ रघुनाथहिं तर्‌यो गयंद जाके अर्द्धनायँ ॥८३॥

तौ तू पछितैहै मन मींजि हाथ ।
भयो सुगम तो को अमर-अगम तनु समुझि धौं कत खोवत अकाथ ।
सुखसाधन हरि बिमुख बृथा, जैसे श्रम-फल घृतहित मथे पाथ ।
यह बिचारि तजि कुपथ कुसंगति चलु सुपंथ मिलि भले साथ ॥
देखु राम-सेवक सुनु कीरति, रटहि नाम करि गान-गाथ ।
हृदय आनु धनुबान-पानि प्रभु लसे मुनिपट कटि कसे भाथ ॥
तुलसिदास परिहरि प्रपंच सब नाउ रामपद-कमल माथ ।
जनि डरपहि तो-से अनेक खल अपनाये जानकीनाथ ॥८४॥

राग धनाश्री

मन माधव कों नेकु निहारहि ।

सुनु, सठ-सदा रंक के धन ज्यों छिनछिन, प्रभुहिं सँभारहि ॥
सोभासील ज्ञान-गुन-मंदिर सुंदर परम उदारहि ।
रंजन-संत अखिल-अघ-गंजन-भंजन-बिषय-बिकारहि ॥
जौं बिनु जोग जज्ञ ब्रत संजम गयो चहहि भव पारहि ।
तौ जिनि तुलसिदास निसि बासर हरिपद-कमल बिसारहि ॥८५॥

इहै कह्यौ सुत बेद चहूँ ।
श्री रघुबीर-चरन-चिंतन तजि नाहिंन ठौर कहूँ ॥
जाके चरन बिरंचि सेइ सिधि पाई संकर हूँ ।
सुक सनकादि मुक्त बिचरत तेउ भजन करत अजहूँ ॥
जद्यपि परम चपल श्री संतत, थिर न रहति कतहूँ ।
हरिपद-पंकज पाइ अचल भइ करम बचन मनहूँ ॥
करुनासिंधु भगत-चिंतामनि सोभा सेवत हूँ ।
और सकल सुर असुर ईस सब खाए उरग छहूँ ॥
सुरुचि कह्यो सोई सत्य, तात ! अति परुष बचन जबहूँ ।
तुलसिदास रघुनाथ-बिमुख नहिं मिटै बिपति कबहूँ ॥८६॥

सुनु[1] मन मूढ़ सिखावन मेरो ।
हरिपद-बिमुख काहू न लह्यो सुख सठ यह समुझि सबेरो ॥
बिछुरे रबि ससि, मन ! नयननि तें पावत दुख बहुतेरो ।
भ्रमत स्रमित निसि दिवस गगन मों[2], तहँ रिपु राहु बड़ेरो ॥
जद्यपि अति पुनीत सुरसरिता तिहुँ पुर सुजस घनेरो ।

१ सुनि—१६६६ । सुनु—ह० प्र०, बे०, ज०, भा०, ७४, १५ ।
२ महँ—भा० बेनी ।

तजे चरन अजहूँ न मिटत नित बहिबो ताहू केरो ॥
मिटै न बिपति भजे बिनु रघुपति स्रुति संदेह निबेरो ।
तुलसिदास सब आस छाँड़ि करि होहि राम को चेरो ८७

कबहूँ मन बिस्राम न मान्यो ।
निसि दिन भ्रमत बिसारि सहज सुख जहँ तहँ इंद्रिन्ह-तान्यो ॥
जदपि बिषय सँग सह्यो[1] दुसह दुख बिषम जाल अरुझान्यो ।
तदपि न तजत मूढ़ ममताबस, जानत हूँ नहिं जान्यो ॥
जनम अनेक किए नाना बिध करम-कीच चित सान्यो ।
होयँ[2] न बिमलु बिबेक-नीर बिनु, बेद पुरान बखान्यो ॥
निज हित नाथ पिता गुरु हरि सों हरषि हृदय नहिं आन्यो ।
तुलसिदास कब तृषा जाइ ? सर खनतहिं जनम सिरान्यो ८८

मेरो मन हरि जू ! हठ न तजै ।
निसि दिन नाथ ! देउँ सिख बहु बिधि करत सुभाव निजै ॥
ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ फिरि[3] खल पतिहिं भजै ॥
लोलुप भ्रमत गृहप[4] ज्यों जहँ तहँ सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुँ न मूढ़ लजै ॥
हौं हार्‌यो करि जतन बिबिध बिधि, अतिसय प्रबल अजै ।
तुलसिदास बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥८९॥

---

१ सहे—ज०, आधुनिक। २ होइ—प्र० ७४। ३ पुनि—बेनी, ह० प्र०, प्र० ज०, ७४, ५१। ४ गृहपसु—बक्सर।

ऐसी मूढ़ता या मन की ।
परिहरि रामभगति सुरसरिता आस करत ओसकन की ॥
धूमसमूह निरखि चातक ज्यों तृषित जानि मति घन की ।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचन की ॥
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तन की ।
टूटत अति आतुर अहार बस छति बिसारि आनन की ॥
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौ गति जन की ।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पन की ॥९०॥

नाचत ही निसि दिवस मर्‍यो ।
तब हीं तें न भयो हरि ! थिर जब तें जिव नाम धर्‍यो ॥
बहु बासना, बिबिध-कंचुक-भूषन-लोभादि भर्‍यो ।
चर अरु अचर गगन जल थल में कौन स्वाँग न कर्‍यो ?
देव दनुज मुनि नाग मनुज नहिं जाँचत कोउ उबर्‍यो ।
मेरो दुसह दरिद्र दोष दुख काहू तौ न हर्‍यो ॥
थके नयन पद पानि सुमति बल, संग सकल बिछुर्‍यो ।
अब रघुनाथ सरन आयो जन भवभय-बिकल डर्‍यो ॥
जेहि गुन तें बस होहु रीझि करि मोहि सो सब बिसर्‍यो ।
तुलसिदास निज भवनद्वार प्रभु दीजै रहन पर्‍यो ॥९१॥

माधव जू मो सम मंद न कोऊ ।
जद्यपि मीन पतंग हीनमति मोहिं नहिं पूजहिं ओऊ ॥
रुचिर रूप-आहार-बस्य उन पावक लोह न जान्यो ।
देखत बिपति बिषय न तजत हौं, तातें अधिक अयान्यो ॥

महामोह-सरिता अपार महँ संतत फिरत बह्यो ।
श्रीहरिचरन-कमल नौका तजि फिरि फिरि फेन गह्यो ॥
अस्थि पुरानो[1] छुधित स्वान अति ज्यों भरि मुख पकर्‍यो ।
निज तालूगत रुधिर पान करि[2] मन संतोष धर्‍यो ॥
परम-कठिन-भवब्याल-ग्रसित हौं, त्रसित भयो अतिभारी ।
चाहत अभय भेक सरनागत खगपति नाथ बिसारी ॥
जलचर बृंद जाल अंतरगत सिमिटि होत एक पासा ।
एकहि एक खात लालच-बस, नहिं देखत निज नासा ॥
मेरे अघ सारद अनेक जुग गनत पार नहिं पावै ।
तुलसीदास पतित-पावन प्रभु यह भरोस जिय आवै ॥९२॥

कृपा सो धौं कहाँ बिसारी राम ?
जेहि करुना सुनि श्रवन दीन-दुख धावत[3] हौ तजि धाम ॥
नागराज निज बल बिचारि हिय हारि चरन चित दीन्ह ।
आरत गिरा सुनत खगपति तजि चलत बिलंबु न कीन्ह ॥
दितिसुत-त्रास-त्रसित निसि दिन प्रहलाद प्रतिज्ञा राखी ।
अतुलित बल मृगराज-मनुज तनु दनुज हत्यो श्रुति साखी ॥
भूप सदसि सब नृप बिलोकि प्रभु राखु कह्यो नर-नारी ।
बसन पूरि, अरि-दरप दूरि करि भूरि कृपा दनुजारी ॥
एक एक रिपु तें त्रासित जन तुम राखे रघुबीर ।
अब मोहिं देत दुसह दुख बहु रिपु कस न हरहु भवभीर[4] ॥

---

१ पुरातन—ह० प्र० । २ करि—ज०, ह० प्र० । ३ आवत—१९९६ । धावत—प्र० ज० । ४ पीर—आधुनिक, प्र० ।

लोभ ग्राह, दनुजेस क्रोध, कुरुराज - बंधु खल मार।
तुलसिदास प्रभु यह दारुन दुख भंजहु राम उदार॥

काहे तें हरि मोहिं बिसारो।
जानत निज महिमा, मेरे अघ, तदपि न नाथ सँभारो॥
पतितपुनीत दीनहित असरन-सरन कहत श्रुति चारो।
हौं नहिं अधम सभीत दीन? किधौं बेदन बृथा[1] पुकारो?॥
खग-गनिका-गज-ब्याध-पाँति जहँ तहँ हौं हूँ बैठारो।
अब केहि लाज कृपानिधान परसत पनवारो फारो॥
जौं कलिकाल प्रबल अति होतो तव निदेस तें न्यारो।
तौ हरि रोस भरोस दोस गुन तेहिं भजतो तजि गारो॥
मसक बिरंचि, बिरंचि मसक सम करहु प्रभाव तुम्हारो।
यह समरथ आछत मोहिं त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो॥
नाहिंन नरक परत मोकहँ डर, जद्यपि हौं अति हारो।
यह बड़ि त्रास दासतुलसी प्रभु नामहुँ पाप न जारो॥९४॥

तऊ न मेरे अघ अवगुन गनिहैं।
जौं जमराज काज सब परिहरि इहै ख्याल उर अनिहैं॥
चलिहैं छूटि पुंज पापिन के असमंजस जिय जनिहैं।
देखि खलल अधिकार प्रभू सों मेरी भूरि भलाई भनिहैं॥
हँसि करिहैं परतीति भगत की भगतसिरोमनि मनिहैं।
ज्यों त्यों तुलसिदास कोसलपति अपनायहि पर बनिहैं॥९५॥

---

१ मृषा—आधुनिक, ज० ह० प्र०, ७४, ५१।

जो पै[1] जिय, धरिहौ अवगुन जन के।
तौ क्यों कटत सुकृत-नख तें मोपै बिपुल[2]-बृंद अघ-बन के॥
कहिहै कौन कलुष मेरे कृत करम बचन अरु मन के।
हरिहैं[3] अमित सेष सारद स्नुति गिनत एक एक छन के॥
जो चित चढ़ै नाम-महिमा निज गुन-गन पावन पन के।
तौ तुलसिहिं तारिहौ बिप्र ज्यों दसन तोरि जमगन के॥९६॥

जो पै हरि जन के अवगुन गहते।
तौ सुरपति कुरुराज बालि सों कत हठि बैर बिसहते?
जौं जप-जाप-जोग-ब्रत-बरजित केवल प्रेम न चहते।
तौ कत सुर मुनिबर बिहाय ब्रज गोपगेह बसि रहते?
जौं जहँ तहँ पन राखि भगत को भजन प्रभाव न कहते।
तौ कलि कठिन करम-मारग जड़ हम केहि भाँति निबहते?
जौं सुतहित लिए नाम अजामिल के अघ अमित न दहते।
तौ जमभट साँसति-हर हम-से बृषभ खोजि खोजि नहते॥
जौं जग-बिदित पतित-पावन अति बाँकुर बिरद न बहते।
तौ बहुकल्प कुटिल तुलसी से सपनेहुँ सुगति न लहते॥९७॥

ऐसी हरि करत दास पर प्रीति।
निज प्रभुता बिसारि जन के बस होत सदा यह रीति॥
जेहि बाँधे सुर असुर नाग नर प्रबल करम की डोरि[4]।
सोइ अबिछिन्न ब्रह्म जसुमति[5] बाँध्यो हठि सकत न छोर॥

---

१ जौ—ह० प्र०, ७४। मो—भा०, बे०, २१। २ बिटप—आधुनिक। ३ हारिहिं—ह० प्र०, ७४, ५१, आधुनिक। हरिहैं—भा० बे०। ४ रि, ५ जसोमति—११६६। शी० जसुमति—भा०, बेनी, ज०।

जाकी मायावस बिरंचि सिव नाचत पार न पायो ।
करतल ताल बजाइ ग्वाल-जुवतिन्ह तेहि नाच नचायो ॥
बिस्वंभर, श्रीपति, त्रिभुवन-पति बेद-बिदित यह लीख ।
बलि सों कछु न चली प्रभुता बरु ह्वै द्विज माँगी भीख ॥
जाको नाम लियें छूटत भव जनम-मरन-दुखभार ।
अंबरीष हित लागि कृपानिधि सोइ जनम्यो दस बार ॥
जोग बिराग ध्यान जप तप करि जेहि खोजत मुनि ज्ञानी ।
बानर भालु चपल पसु पाँवर, नाथ तहाँ रति मानी ॥
लोकपाल, जम, काल, पवन, रबि, ससि सब आज्ञाकारी ।
तुलसिदास प्रभु उग्रसेन के द्वार बेंत-करधारी ॥९८॥

बिरदु गरीबनिवाजु राम को ।
गावत बेद पुरान संभु सुक प्रगट प्रभाव नाम को ॥
ध्रुव, प्रह्लाद, बिभीषन, कपि जदुपति पांडव सुदाम को ।
लोक सुजस, परलोक सुगति इनमें को हो राम काम को ॥
गनिका, कोल, किरात, आदि-कबि, इन्हतें[1] अधिक बाम को ?
बाजिमेध कब कियो अजामिल, गज गायो कब साम को ?
छली मलीन हीन सबही अँग, तुलसी सो छीन छाम को ?
नाम-नरेस-प्रताप प्रबल जग जुग जुग चालत चाम को ॥९९॥

सुनि सीतापति सील सुभाउ ।
मोद न मन, तन पुलक, नयन जल सो नर खेहै[2] खर खाउ ॥
सिसुपन तें पितु मातु बंधु प्रिय[3] सेवक सचिव सखाउ ।

---

१ इन्ह- ज० । २ खेहहिं—भा०, बेनी । ३ प्रिय—१६६६ । गुरु—भा०, बेनी ।

कहत राम-बिधु-बदन रिसोहैं सपनेहुँ लख्यो न काउ ॥
खेलत संग अनुज बालक नित जोगवत अनट अपाउ ।
जितें[1] हारि चुचुकारि दुलारत, देत दिवावत दाउ ॥
सिला साप-संताप-बिगत भइ परसत पावन पाउ ।
दई सुगति सो न हेरि हरषु हियँ, चरन छुए को पछिताउ ॥
भवधनु भंजि निदरि भूपति भृगुनाथ खाइ गए ताउ ।
छमि अपराध, छमाइ पाँइ परि, इतौ न अनत समाउ ॥
कह्यो राजु, बन दियो नारिबस, गरि गलानि गयो राउ ।
ता कुमातु को मन जोगवत ज्यों निज तनु मरम कुघाउ ॥
कपि सेवाबस भए कनौड़े, कह्यो, पवनसुत आउ ।
दीबे कों न कछू रिनियाँ हौं, धनिकु तू पत्र लिखाउ ॥
अपनाए सुग्रीव बिभीषन, तज्यो न तिन्ह छल छाउ ।
भरतसभा सनमानि सराहत होत न हृदय अघाउ ॥
निज करुना करतूति भगत पर चपत चलत चरचाउ ।
सकृत प्रनाम प्रनत-जस बरनत सुनत कहत फिरि गाउ ॥
समुझि समुझि गुनग्राम राम के उर अनुराग बढ़ाउ ।
तुलसिदास अनायास[2] रामपद पाइहै[3] पेम-पसाउ ॥१००॥

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे ?
काको नाम पतितपावन जग ? केहि अति दीन पियारे ?
कौन देव बरिआई[4] बिरद-हित हठि हठि अधम उधारे ?

१ जीति—भा०, बेनी । २ अनयास, ३ पइहै—भा०, बेनी । ४ कौने देव बराय—आधुनिक, ५१ । बरिआइ—७४, ह०, प्र० ।

खग, मृग, ब्याध, पषान, बिटप, जड़ जमन कवन सुर तारे ?
देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज सब माया-बिबस बिचारे।
तिन्हके हाथ दासतुलसी प्रभु कहा अपनपौ हारे ? ॥१०१॥

हरि तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों।
साधन-धाम बिबुध दुरलभ तनु मोहि कृपा करि दीन्हों ॥
कोटिहुँ मुख कहि जाइ[2] न प्रभु के एक एक उपकार।
तदपि नाथ कछु और माँगिहौं दीजै परम उदार ॥
बिषय-बारि मन-मीन भिन्न नहिं होत कबहुँ पल एक।
तेहि तें सहौं बिपति अति दारुन जनम[3] कुजोनि अनेक ॥
कृपा-डोरि, बंसी-पद-अंकुस, परम प्रेम-मृदु-चारो।
यहि बिधि बेधि[4] हरहु मेरो दुख, कौतुक राम तिहारो ॥
हैं स्रुति-बिदित उपाय सकल, सुर केहि केहि दीन निहारै।
तुलसिदास यहि जीव मोह-रजु जोइ बाँध्यो सोइ छोरै १०२

यह बिनती रघुबीर गुसाईं।
और आस बिस्वास भरोसो हरौ जिय[5] की जड़ताई ॥
चहौं न सुगति सुमति, संपति, कछु रिधि सिधि, बिपुल बड़ाई।
हेतुरहित अनुराग नाथपद बढ़ौ अनुदिन अधिकाई ॥
कुटिल करम लै जाय मोहिं जहँ जहँ अपनी बरिआई।
तहँ तहँ[6] जनि छिन छोह छाँड़िए कमठ-अंड की नाई ॥
है जग में जहँ लगि या तनु की प्रीति प्रतीति सगाई।

---

१ जात—प्र०। २ जनमत-आधुनिक, ७४, ५१। ३ बिधे। ४ जीव। ५ आधुनिक राम। ६ जिनि।

ते सब तुलसिदास प्रभु सों मेरी[1] होहि सिमिटि एक ठाईं १०३

जानकिजीवन[2] की बलि जैहौं ।
चितु कहै रामसीय-पद परिहरि अब न कहूँ चलि जैहौं ॥
उपजी उर प्रतीति, सपनेहुँ[3] सुख प्रभुपद बिमुख न पैहौं ।
मन समेत या तन के बासिन्ह इहै सिखावनु दैहौं ॥
स्रवनन्हि और कथा नहिं सुनिहौं, रसना औरु न गैहौं ।
रोकिहौं नयन बिलोकत औरहिं[4], सीसु ईस ही नैहौं ॥
नातो नेह नाथ सों करि सब नाते नेह बहैहौं ।
है[5] छरुभार ताहि तुलसी जग जाको दासु कहैहौं १०४

अब लौं नसानी अब न नसैहौं ।
रामकृपा भवनिसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं ॥
पायो नाम चारु चिंतामनि, उर-कर तें न खसैहौं ।
स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं ॥
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस है न हँसैहौं ।
मन-मधुकर पन करि तुलसी रघुपति-पद कमल बसैहौं १०५

राग रामकली

महाराज रामादर्‍यो धन्य सोई ।
गरुअ, गुनरासि, सर्वज्ञ, सुकृती, सूर, सीलनिधि, साधु तेहि सम न कोई
उपल, केवट, कीस[5], भालु, निसिचर, सबर[6], गीध सम-दम-दया-दान-हीने
नाम लियें राम किए परमपावन सकल तरत नर तिन्हके गुनगान कीन्हे

१ ही सों होहु—आधुनिक । २ जानकी, ३ प्रतीति सपनेहुँ, ४ औरन, ५ यह-भा०, बेनी । ५ कीस केवट उपल—भा०, बेनी । ६ सबरि—भा०, बेनी ।

ब्याधपराध की साध राखी कौन ? पिंगला कौन मति भगति भेई ?
कौनु धौं[1] सोमजाजी अजामिल अधम ? कौनु गजराज हो[2] बाजपेई ?
पंडुसुत, गोपिका, बिदुर, कूबरी सबहिं[2] सोधु कियें[3] सुद्धता लेसु कैसो
प्रेम लखि कृष्नकिये आपनेतिन्हकोअबसुजस[4] संसार हरिहरकोजैसो
कोल, खल, भिल्लजमनादि खसे[5] रामुकहेनीच है ऊँच पद कैं न पायो
दीन-दुख-दमन श्रीरमन करुनाभवन पतित-पावन बिरुद बेद गायो
मंदमतिकुटिलखल-तिलकुतुलसीसरिस[6] भयो नतिहुँलोकतिहुँकाल कोऊ
नाम की कानि पहिचानि पन आपनो
ग्रसत कलिकाल[7] राख्यो सरन सोऊ ॥१०६॥

है नीको मेरो देवता कोसलपति राम ।
सुभग सरोज-सुलोचन[8] सुठि सुंदर स्याम ॥
सिय समेत सोहैं[9] सदा, छबि अमित अनंग ।
भुज बिसाल सर धनु धरें, कटि चारु निषंग ॥
बलि पूजा माँगै[10] नहीं, चाहै एक प्रीति ।
सुमिरन ही मानै भलो, पावन सब रीति ॥
देइ सकल सुख, दुख दहै आरतजन-बंधु ।
गुन गहि अघ औगुन हरै, ऐसो[11] करुणासिंधु ॥
देस काल पूरन महा[12], बद बेद पुरान ।

---

१ धौं—भा० बेनी । २ सबको—१६६६ । ३ लिए—बेनी । ४ किए आपने तिन्हहु को सुजस—७३ आधुनिक । ५ खल राम कहि, ६ सहस भा— भा० बेनी । सरिस भौ—बक्सर । ७ ब्याल—भा०, ब्र० । ८ सरोरुह लोचन तन, ९ सोभित, १० चाहत, ११ प्रभु, १२ सदा—भा०, बेनी ।

सब को प्रभु,सब मों बसै, सबकी गति जान ॥
को करि कोटिक कामना पूजै बहु देव ?
तुलसिदास तेहि सेइए संकर जेहि सेव ॥१०७॥

बीर महा अवराधिए साधें सिधि होय ।
सकल काम पूरन करै जानै सब कोय ॥
बेगि, बिलंबु, न कीजिये, लीजिये उपदेस ।
बीज-मंत्र जपिए सोई जो जपत महेस ॥
प्रेमबारि तरपनु भलो, घृत सहज सनेहु ।
संसय समिधि,अगिनि छमा,ममता बलि देहु ॥
अघ उचाटि मन बस करै, मारै मद मार ।
आकरषै सुख संपदा संतोष बिचार ॥
जेहिं[1] यहि भाँति भजनु कियो[2] मिले रघुपति ताहि ।
तुलसिदास प्रभु पथ चढ्यो,जो लेहु निबाहिं[3] ॥१०८॥

कस न करहु करुना हरे ! दुखहरन[4] मुरारी !
त्रिबिध - ताप - संदेह-सोक - संसय - भय - हारी ॥
एहु कलिकाल - जनित मल मतिमंद मलिन मन ।
तेहि पर प्रभु नहिं कर सँभार,केहि भाँति जियै जन ?
सब प्रकार समरथ, प्रभो ! मैं सब बिधि दीन ।
यह जिय जानि द्रवहु नहीं मैं करम - के[6] हीन ॥

---

१ जे—बेनी, बक्सर । किये—भा० बेनी । ३ निरबाहि—१६६६ शेष सभी प्रतियों में निबाहि । ४ समन—भा०, बेनी । ५ भा०, बेनी । बिचारि—१६६६ । ६ करम बिहीन ।

भ्रमत अनेक जोनि फिरौं रघुपति[1] ! आन न मोरें ।
दुख सुख सहौं रहौं सदा सरनागत तोरें ॥
तोहि सम देव न कोउ कृपालु समुझेउँ[2] मन माहीं ।
तुलसिदास हरि तोषिए सो साधन नाहीं ॥१०९॥

कहु केहि कहिय कृपानिधे[3] ! भवजनित बिपति अति ।
इंद्रिय सकल बिकल सदा निज निज सुभाउ रति ॥
जो सुख संपति, सरग नरक संतत सँग लागी ।
हरि परिहरि सोइ जतन करत मन मोर अभागी ॥
मैं अति दीन, दयालु देव, सुनि मन अनुरागे ।
जब न द्रवहु, रघुबीर धीर ! काहें[4] न दुख लागे ॥
जद्यपि मैं अपराध-भवन, दुखसमन मुरारे ।
तुलसिदास[5] कहुँ आस इहै प्रभु पतित उधारे ॥११०॥

केसव कहि न जाइ का कहिए ?
देखत तव रचना बिचित्र हरि समुझि मनहिं मन रहिए ॥
सून्य[6] भीति पर चित्र, रंग नहिं, तनु बिनु लिखा चितेरें ।
धोयें मिटइ न, मरइ भीति-दुख, पाइय यहि तनु हेरें ॥
रबिकर-नीर बसै अति दारुन मकररूप तेहि नाहीं[7] ।
बदनहीन सो ग्रसै चराचर पान करन जल[8] जाहीं ॥
कोउ कह सत्य, झूठ कह कोऊ, जुगल प्रबल करि मानै ।

---

१ रघुपति पति । २ समुझौं—भा० बेनी । ३ करुनानिधे—भा०, बेनी । ४ क्यों न, ५ को आस यही बडु—भा०, बेनी । ६ सून—भा० । सुन—बेनी । ७ माहीं । ८ जे—भा०, बेनी ।

तुलसिदास परिहरै तीनि भ्रम सो आपन पहिचानै ॥१११॥

केसव कारन कवन[1] गुसाईं ।

जेहि अपराध असाधु जानि मोहिं तजेउ अज्ञ की नाईं ॥

परम पुनीत संत कोमलचित तिनहिं तुमहिं बनि आई ।

तौ कत बिप्र ब्याध गनिकहिं तारेहु ? कछु रही सगाई ?

काल करम, गति अगति जीव कैं[2] सब हरि हाथ तुम्हारें ।

सो कछु करहु हरहु ममता मैं फिरउँ न तुम्हहिं बिसारें ॥

जौं तुम तजहु भजौं न आन प्रभु, यह प्रवान पन[3] मोरें ।

मन क्रम बचन नरक सुरपुर जहँ तहँ रघुबीर निहोरें ॥

जद्यपि नाथ उचित न होइ अस प्रभु सैं करिअ[4] ढिठाई ।

तुलसिदास सीदत निसि दिन देखत तुम्हारि निठुराई ॥११२॥

माधव ! अब न द्रवहु केहि लेखें ?

प्रनतपाल पन तोर, मोर पन जिअउँ कमलपद देखें ॥

जब लगि मैं न दीन, दयालु तैं, मैं न दास, तैं स्वामी ।

तब लगि जे दुख सहेउँ कहेउँ नहिं, जद्यपि अंतरजामी ॥

तैं उदार मैं कृपन, पतित मैं, तैं पुनीत स्रुति गावै ।

बहुत नात रघुनाथ तोहिं मोहिं, अब न तजें बनि आवै ॥

जनक जननि, गुरु बंधु, सुहृद पति सब प्रकार हितकारी ।

द्वैतरूप तमकूप परौं[5] नहिं सो कछु जतन बिचारी ॥

सुनु अदभ्र-करुना, बारिज-लोचन, मोचन-भय-भारी ।

---

१ कौन, २ की, ३ प्रमान ४ सों करौं—भा०, बेनी। ५ से किछु—१६६६, ह०, प्र०, ९६, १५। अस कछु—७४, ५१।

तुलसिदास प्रभु तव प्रकास बिनु संसय टरै न टारी ॥११३॥

माधव ! मो-समान जग माहीं ।
सब बिधि हीन, मलीन, दीन अति लीन-बिषय कोउ नाहीं ॥
तुम्ह सो हेतु-रहित, कृपालु, आरत-हित, ईस न त्यागी ।
मैं दुख-सोक-बिकल कृपालु ! केहि कारन दया न लागी ?
नाहिंन कछु अवगुन तुम्हार, अपराध मोर मैं माना ।
ज्ञानभवन तनु दियहु, नाथ ! सोउ पाय न मैं प्रभु जाना ॥
बेनु करील, श्रीखंड बसंतहिं दूषन मृषा लगावै ।
सार-रहित, हतभाग्य सुरभि पल्लव सो कहु कहँ पावै ॥
सब प्रकार मैं कठिन, मृदुल हरि, दृढ़ बिचार जिय मोरें ।
तुलसिदास प्रभु मोह-शृंखला छूटिहि तुम्हरेहिं छोरें ॥११४॥

माधव ! मोह पाँस क्यों टूटै ?
बाहिर कोटि उपाय करिय, अभ्यंतर ग्रंथि न छूटै ॥
घृतपूरन कराह अंतरगत ससि-प्रतिबिंब दिखावै ।
ईंधन अनल लगाइ कलप सत औटत नास न पावै ॥
तरु-कोटर महँ बस बिहंग, तरु काटे मरै न जैसें ।
साधन करिय बिचार-हीन मन सुद्ध होइ नहिं तैसे ॥
अंतर मलिन, बिषय मन अति, तन पावन करिय पखारें ।
मरै न उरग अनेक जतन बलमीक बिबिध बिधि मारें ॥
तुलसिदास हरि-गुरु-करुना-बिनु बिमल बिबेक न होई ।

---

१ टरत—ह० प्र० । २ सम—भा०, बेनी, ह० प्र०, ७४, ५१ । ३ फाँस—ह० प्र०, ७४, ५१ ।

बिनु बिबेक संसार घोर निधि पार न पावै कोई ॥११५॥

माधव ! असि तुम्हारि यह माया ।
करि उपाय पचि मरिय, तरिय नहिं जब लगि करहु न दाया ॥
सुनिय, गुनिय, समुझिय, समुझाइय दसा हृदय नहिं आवै ।
जेहि अनुभव बिनु मोह-जनित दारुन भव-बिपति सतावै ॥
ब्रह्म पियूष मधुर सीतल जौं पै मन सो रस पावै ।
तौ कत मृगजल-रूप बिषय कारन निसि बासर धावै ॥
जेहि के भवन बिमल चिंतामनि सो कत काँच बटोरै ।
सपने परबस पर्‌यो जागि देखत केहि जाइ निहोरै ?
ज्ञान भगति साधन अनेक सब सत्य, झूठ कछु नाहीं ।
तुलसिदास हरिकृपा मिटै भ्रम, यह भरोस मन माहीं ॥११६॥

है[1] हरि ! कवन दोष तोहिं दीजै ?
जेहि उपाय सपनेहुँ दुर्लभ गति सोइ निसि बासर कीजै ॥
जानत अर्थ अनर्थ-रूप, तमकूप परब यहि लागें ।
तदपि न तजत स्वान, अज, खर ज्यों फिरत बिषय-अनुरागें ॥
भूत-द्रोह-कृत मोह-बस्य हित आपन मैं न बिचारो ।
मद, मत्सर, अभिमान, ज्ञान-रिपु इन महँ रहनि अपारो ॥
बेद पुरान सुनत समुझत रघुनाथ सकल जगब्यापी ।
भेदत नहिं श्रीखंड बेनु इव सारहीन मन पापी ॥
मैं अपराध-सिंधु करुनाकर ! जानत अंतरजामी ।
तुलसिदास भवब्याल-ग्रसित तव सरन उरग-रिपु-गामी ॥११७॥

---

1 हैं—१९९९ ।

हे हरि[1]! कवन जतन सुख मानहु ?
ज्यों गज-दसन तथा मम करनी सब प्रकार तुम जानहु ॥
जो कछु कहिय करिय भवसागर तरिय बत्सपद जैसें ।
रहनि आन बिधि, करिय आन, हरिपद-सुख पाइय कैसें ॥
देखत चारु मयूर नयन[2]-सुख, बोलि सुधा इव सानी ।
सबिष उरग आहार निठुर अस, यह करनी वह बानी ॥
अखिल-जीव-बत्सल निर्मत्सर चरन-कमल-अनुरागी ।
ते तव प्रिय रघुबीर ! धीरमति अतिसय निज-पर-त्यागी ॥
जद्यपि मम अवगुन अपार संसार-जोग्य रघुराया ।
तुलसिदास निज गुन बिचारि करुना-निधान करु दाया ॥११८॥

हे[3] हरि ! कवन जतन भ्रम भागै ?
देखत सुनत बिचारत यह मन निज सुभाउ नहिं त्यागै ॥
भगति, ज्ञान, बैराग्य सकल साधन यहि लागि उपाई ।
कोउ भल कहहु, देउ कछु कोऊ, असि बासना न उर तें जाई ॥
जेहि निसि सकल जीव सूतहिं तव कृपापात्र जन जागै ।
निज करनी बिपरीत देखि मोहिं समुझि महा भय लागै ॥
जद्यपि भगन-मनोरथ बिधि-बस सुख इच्छत दुख पावै ।
चित्रकार करहीन जथा स्वारथ बिनु चित्र बनावै ॥
हृषीकेस सुनि नाउँ जाउँ बलि, अति भरोस जिय मोरें ।
तुलसिदास इंद्रिय-संभव दुख हरें बनिहि प्रभु तोरें ॥११९॥

हे[4] हरि ! कस न हरहु भ्रम भारी ?

१, ३, ४ हैं; २ बचन—१६६६ ।

जद्यपि मृषा सत्य भासै जब लगि नहिं कृपा तुम्हारी ॥
अर्थ अविद्यमान जानिय संसृति नहिं जाइ गोसाईं ।
बिनु बाँधे निज हठ सठ परबस पर्यो कीर की नाँईं ॥
सपने ब्याधि बिबिध बाधा भइ, मृत्यु उपस्थित आई ।
बैद अनेक उपाय करहिं, जागें बिनु पीर न जाई ॥
स्रुति-गुर-साधु-सुमृति-संमत यह दृश्य असद[1] दुखकारी ।
तेहि बिनु तजें, भजें बिनु रघुपति बिपति सकै को टारी ?
बहु उपाय संसार-तरन कहँ बिमल गिरा श्रुति गावै ।
तुलसिदास मैं मोर गएँ बिनु जिव सुख कबहुँ न पावै॥१२०

हे[2] हरि यह भ्रम की अधिकाई ।
देखत सुनत कहत समुझत संसय संदेह न जाई ॥
जौं जग मृषा, ताप-त्रय-अनुभव होइ[3] कहहु केहि लेखें ।
कहि न जाइ मृगबारि सत्य, भ्रम तें दुख होइ बिसेखें ॥
सुभग सेज[4] सोवत सपने बारिधि बूड़त भय लागै ।
कोटिहुँ नाव न पार पाव सो जब लगि आपु न जागै ॥
अनबिचार रमनीय सदा, संसार भयंकर भारी ।
सम संतोष दया बिबेक तें ब्यवहारी सुखकारी ॥
तुलसिदास सब बिधिप्रपंच जग जदपि झूठ स्रुति गावै ।
रघुपति-भगति संत-संगति बिनु को भवत्रास नसावै । १२१॥

मैं हरि साधन करइ न जानी ।
जस आमय भेषज न कीन्ह तस, दोस कहा दिरमानी ॥

---

१ सदा । २ हैं—१६६६ । ३ होत—७४, ह० प्र०, ५१ । ४ सयन—१६६६ ।

सपने नृप कहँ घटइ बिप्रबध, बिकल फिरै अघ लागें।
बाजिमेध सत कोटि करै नहिं सुद्ध होइ बिनु जागें॥
स्रग महुँ सर्प बिपुल भयदायक प्रगट होइ अबिचारें।
बहु आयुध धरि, बल अनेक करि हारहिं मरइ न मारें॥
निज भ्रम तें रबिकर-संभव सागर अति भय उपजावै।
अवगाहत बोहित नौका चढ़ि कबहूँ पार न पावै॥
तुलसिदास जग आपु सहित जब लगि निर्मूल न जाई।
तब लगि कोटि कलप उपाय करि मरिय, तरिय नहिं भाई॥१२२

अस कछु समुझि परत, रघुराया!
बिनु तव कृपा दयालु दासहित मोह न छूटै माया॥
बाक्यज्ञान अत्यंत निपुन भवपार न पावै कोई।
निसि गृह मध्य दीप की बातिन्ह[1] तम निवृत्त नहिं होई॥
जैसे कोउ इक दीन दुखी अति असन-हीन दुख पावै।
चित्र कलपतरु कामधेनु गृह लिखें न बिपति नसावै॥
षट रस बहु प्रकार भोजन कोउ दिन अरु रैनि बखानै।
बिनु बोले संतोष-जनित सुख खाइ सोइ पै जानै॥
जब लगि नहिं निज हृदि प्रकास, अरु बिषय-आस मन माहीं।
तुलसिदास तब लगि जगजोनि भ्रमत, सपनेहुँ सुख नाहीं॥१२३

जौ निज मन परिहरै बिकारा।
तौ कहँ[2] द्वैत-जनित संसृति-दुख, संसय, सोक अपारा॥
सत्रु मित्र मध्यस्थ तीनि ये मन कीन्हें बरिआईँ।

---

१ बातन—भा० बेनी, ह० ज०। २ कहाँ—१६६६।

त्यागब गहब उपेच्छनीय अहि हाटक तृन की नाईं ॥
असन, बसन, पसु, बस्तु बिबिध बिधि सब मनि महँ रह जैसें ।
सरग, नरक, चर अचर लोक बहु बसत मध्य मन तैसें ॥
बिटप मध्य पुत्रिका, सूत्र महँ कंचुकि बिनहिं बनाएँ ।
मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रगटत अवसर पाएँ ॥
रघुपति-भगति-बारि-छालित चित बिनु प्रयास ही सूझै ।
तुलसिदास कह चिद्-बिलास जग बूझत बूझत बूझै ॥१२४

मैं केहि कहौं बिपति अति भारी । श्रीरघुबीर धीर हितकारी ॥
मम हृदय भवन हरि तोरा । तहँ बसे आइ बहु चोरा ॥
अति कठिन करहिं बरजोरा । मानहिं नहिं बिनय निहोरा ॥
तम, मोह, लोभ, अहँकारा । मद, क्रोध, बोध-रिपु, मारा ॥
अति करहिं उपद्रव नाथा । मरदहिं मोहिं जानि अनाथा ॥
मैं एक, अमित बटपारा । कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥
भागेहु नहिं नाथ उबारा । रघुनायक करहु सँभारा ॥
कह तुलसिदास सुनु रामा । लूटहिं तस्कर तव धामा ॥
चिंता यह मोहिं अपारा । अपजस जनि होय तुम्हारा१२५

मन मेरे मानै सिख मेरी । जौं निज भगति चहै हरि केरी ॥
उर आनहि प्रभु कृत हित जेते । सेवहिं ते जे अपनपौ चेते ॥
दुख सुख अरु अपमान बड़ाई । सब सम लेखहिं बिपति बिहाई ॥
सुनु सठ काल-ग्रसित यह देही । जनि तेहि लागि बिदूषहि केही ॥
तुलसिदास बिनु असि मति आये । मिलहिं न राम कपट लय लाये१२६

---

१ भा०, बेनी । मानहि—ह० प्र०, ५१, ७४ ।

मैं जानी हरिपद-रति नाहीं । सपनेहुँ नहिं बिराग मन माहीं ॥
जे रघुबीर-चरन अनुरागी । ते सब भोग रोग सम त्यागी ॥
काम, भुअंग डसत जब जाही । बिषय-निंब कटु लगै न ताही ॥
असमंजस अस हृदय बिचारी । बढ़त सोच नित नूतन भारी ॥
जब कब रामकृपा दुख जाई । तुलसिदास नहिं आन उपाई १२७
सुमिरु सनेह सहित सीतापति । रामचरन तजि नहिंन आन गति ॥
जप, तप, तीरथ, जोग, समाधी । कलि मति बिकल, न कछु निरुपाधी
करतहुँ सुकृत न पाप सिराहीं । रकतबीज जिमि बाढ़त जाहीं ॥
हरनि एक अघ-असुर-जालिका । तुलसिदास प्रभुकृपा-कालिका १२८

रुचिर रसना तू राम राम राम क्यों न रटत ?
सुमिरत सुख सुकृत बढ़त, अघ अमंगल घटत ॥
बिनु स्रम कलि-कलुष-जाल कटु कराल कटत ।
दिनकर के उदय जैसे तिमिर-तोम फटत ॥
जाग, जोग, जप, बिराग, तप, सुतीरथ अटत ।
बाँधिबे को भवगयंद रेनु की रजु बटत ॥
परिहरि सुरमनि सुनाम गुंजा लखि लटत ।
लालच लघु तेरो लखि तुलसी तोहि हटत ॥१२९॥

राम, राम, राम, राम, राम, राम जपत ।
मंगल मुद उदित होत, कलिमल छल छपत ॥
कहु केहि लहे फल रसाल बबुर-बीज बपत ।
हारहि जनि जनम जाय गालगूल गपत ॥

---

१ अनुरागे, २ त्यागे—भा०, बेनी, ह० प्र० ज०, १५ :

काल, करम, गुन, सुभाव सबके सीस तपत ।
रामनाम-महिमा की चरचौ चले चपत ॥
साधन बिनु सिद्धि सकल बिकल लोग लपत ।
कलिजुग बर बिपुल बनिज नाम नगर खपत ॥
नाम सों प्रतीति प्रीति हृदय सुथिर थपत ।
पावन किय रावन-रिपु तुलसिहुँ-से अपत ॥१३०॥

पावन प्रेम-रामचरन जनम लाहु परम ।
रामनाम लेत होत सुलभ सकल धरम ॥
जोग, मख, बिबेक बिरति बेद-बिदित[1] करम ।
करिबे कहँ कटु कठोर, सुनत मधुर नरम ॥
तुलसी सुनि जानि बूझि भूलहि जनि भरम ।
तेहि प्रभु को तू सरन होहि जेहि सबकी सरम ॥१३१॥

राम-से प्रीतम की प्रीति-रहित जीव जाय जियत ।
जेहि सुख सुख मानि लेत सुख सो समुझि कियत ॥
जहँ जहँ जेहि जोनि जनम महि पताल बियत ।
तहँ तहँ तू बिषय-सुखहिं चहत, लहत नियत ॥
कत बिमोह लट्यो फट्यो गगन मगन सियत ।
तुलसी प्रभु-सुजस गाइ क्यों न सुधा पियत ॥१३२॥

तोसों हौं फिरि फिरि हित सत्य बचन कहत ।
सुनि मन गुनि समुझि क्यों न सुगम सुमग गहत ॥
छोटो बड़ो, खोटो खरो जग जो जहँ रहत ।

---

१ विहित—ह० ज० ।

अपने अपने को भलो कहहु को न चहत ?
बिधि लखि लघु कीट अवधि सुख सुखी, दुख दहत।
पसु लौं पसुपाल ईस बाँधत छोरत नहत॥
बिषय मुखद भार सिर को काँधे ज्यों बहत।
योंही जिय जानि मानि सठ तू साँसति सहत॥
पायो किनं घृत बिचारु हरिनबारि महत।
तुलसी तकु ताहि सरन जातें सब लहत॥१३३॥
तातें हौं बार बार देव ! द्वार परि पुकार करत।
आरति नति दीनता कहे सुप्रभु संकट हरत॥
लोकपाल सोकबिकल रावन-डर डरत।
का सुनि सकुचनं कृपालु नरसरीर धरत ?
कौसिक, मुनितीय, जनक सोक-अनल जरत।
साधन केहि सीतल भये सो न समुझि परत॥
केवट, खग, सबरि सहज चरनकमल न रत।
सनमुख तोहिं होत नाथ कुतरु सुफल फरत॥
बंधुबैर कपि बिभीषन गुरु गलानि गरत।
सेवा केहि रीझि राम किए सरिस भरत ?
सेवक भयो पवनपूत साहिब अनुहरत।
ताको लिए नाम राम सबको सुढर ढरत॥
जाने बिनु राम-रीति पचि पचि जग मरत।
परिहरि छल सरन गए तुलसिहु-से तरत॥१३४॥

---

१ केहि—ह०, ५१, ७४। २ सकुचे—आधुनिक।

राग सूहो बिलावल

राम सनेही सों तैं न सनेह कियो ।
अगम जो अमरनि हूँ सो तनु तोहिं दियो ॥
दियो सुकुल जनम सरीर सुंदर हेतु जो फल चारि को ।
जो पाइ पंडित परमपद पावत पुरारि मुरारि को ॥
यहु भरतखंडु समीप सुरसरि, थलु भलो, संगति भली ।
तेरी कुमति कायर कलपबल्ली चहति बिषफल फली ॥१॥
अजहुँ समुझि चित्त दै सुनु परमारथु ।
है हितु सो जगहूँ जाहि तें स्वारथु ॥
स्वारथहि प्रिय, स्वारथ सो काते, कौन बेद बखानई ।
देखु खल अहिखेल परिहरि सो प्रभुहि पहिचानई ॥
पितु, मातु, गुर, स्वामी, अपनपौ, तिय, तनय, सेवक, सखा ।
प्रिय लगत जाके प्रेम सों बिनु हेतु हित नहिं तैं लखा ॥२॥
दूरि न सो हितू हेरु हियेंहि है ।
छलहि छाँड़ि सुमिरे छोह कियेंहि है ॥
किएँ छोहु छाया कमल कर की भगत पर भजतहि भजै ।
जगदीस जीवन जीव को जो साज सब सबको सजै ॥
हरिहि हरिता बिधिहि बिधिता, सिवहि सिवता जेहि दई ।
सोइ जानकी-पति मधुर मूरति मोदमय मंगलमई ॥३॥
ठाकुर अतिहि बड़ो सील सरल सुठि ।
ध्यान-अगम सिव हू, भेंट्यो केवट उठि ॥
भरि अंक भेंट्यो सजल नयन सनेह सिथिल सरीर सों ।

सुर सिद्ध मुनि कबि कहत कोउ न प्रेमप्रिय रघुबीर सो ॥
खग सबरि निसिचर भालु कपि किए आपु तें बंदित बड़े ।
तापर तिनकी सेवा सुमिरि जिय जात जनु सकुचनि गड़े ।।४॥
स्वामी को सुभाउ कह्यो सो जब उर आनिहैं[1] ।
सोचु सकल मिटिहै, रामु भलो मनिहैं[2] ॥
भलो मानिहैं रघुनाथ जोरि जो हाथ माथो नाइहैं ।
ततकाल तुलसीदास जीवन जनम को फलु पाइहैं ॥
जपु नाम करहि प्रनाम कहि गुनग्राम रामहिं धरि हियें ।
बिचरहि अवनि अवनीस-चरन-सरोज मन मधुकर कियें ।५।१३५

जिय[3] जब तें हरि तें बिलगान्यो । तब तें देह गेह निज जान्यो ॥
मायाबस सरूप बिसरायो । तेहि भ्रम तें दारुन दुख पायो ॥
पायो जो दारुन दुसह दुख सुखलेस सपनेहुँ नहिं मिल्यो ।
भयसूल सोक अनेक जेहि तेहि पंथ तू हठि हठि चल्यो ॥
बहु जोनि जन्म जरा बिपति, मतिमंद हरि जान्यो नहीं ।
श्रीराम-बिनु बिश्राम मूढ़ ! बिचारि लख पायो कहीं ॥१॥
आनँदसिंधु मध्य तव बासा । बिनु जाने कस मरसि पियासा ॥
मृगभ्रम-बारि सत्य जल जानी । तहँ तू मगन भयो सुख मानी ॥
तहँ मगन मज्जसि पान करि त्रयकाल जल नाहीं जहाँ ।
निज सहज अनुभव रूप तव खल भूलि चलि आयो तहाँ ॥
निर्मल निरंजन निर्बिकार उदार सुख तैं परिहर्यौ ।
निःकाज राज बिहाय नृप इव स्वप्न-कारागृह पर्यो ॥२॥

---

१ आनिहै, २ मानिहै—भा० बेनी । ३ जिय—७४, ह० प्र०, ७१ ।

तैं निज कर्मडोरि दृढ़ कीन्हीं। अपनेहि करनि गाँठि हठि दीन्ही।
तेहि तें परबस पर्‍यो अभागे। ता फल गर्भबास दुख आगे॥
आगे अनेक समूह संसृति, उदरगति जान्यो सोऊ।
सिर हेठ, ऊपर चरन, संकट बात नहिं पूछै कोऊ॥
सोनित पुरीष जो मूत्र मल कृमि कर्दमावृत सोवही।
कोमल सरीर, गँभीर बेदन, सीस धुनि धुनि रोवही॥३॥
तैं निज कर्मजाल जहँ घेरो। श्रीहरि संग तज्यो नहिं तेरो।
बहु बिधि प्रतिपालन प्रभु कीन्हीं। परम कृपालु ज्ञान तोहि दीन्हीं॥
तोहिं दियो ज्ञान बिबेक जन्म अनेक की तब सुधि भई।
तेहि ईस की हौं सरन जाकी बिषम माया गुनमई॥
जेहि किए जीव-निकाय बस रसहीन दिन दिन अति नई।
सो करौ बेगि सँभार श्रीपति बिपति महुँ जेहि मति दई॥४॥
पुनि बहु बिधि गलानि जिय मानी। अब जग जाइ भजौं चक्रपानी।
ऐसेहि करि बिचार चुप साधी। प्रसव पवन प्रेर्‍यो अपराधी॥
प्रेर्‍यो जो परम प्रचंड मारुत कष्ट नाना तैं सह्यो।
सो ज्ञान ध्यान बिराग अनुभव जातना-पावक दह्यो॥
अति खेद-ब्याकुल अलप बल छिन एक बोलि न आवई।
तव तीब्र कष्ट न जान कोउ सब लोग हर्षित गावई॥५॥
बाल-दसा जेते दुख पाए। अति अनीस नहिं जाहिं गनाए।
छुधा ब्याधि बाधा भइ भारी। बेदन नहिं जानै महतारी॥
जननी न जानै पीर सो केहि हेतु सिसु रोदन करै।

१ अपने। २ गहि—७४, ह० प्र०, ५१।

सोइ करै बिबिध उपाय जातें अधिक तुव छाती जरै ॥
कौमार, सैसव अरु किसोर अपार अघ को कहि सकै ।
बितरेकि तोहि निर्दय महा खल आन कहु को सहि सकै ॥६॥
जौवन जुवति-संग रँग रात्यो । तब तू महा मोह मद मात्यो ।
तातें तजी धर्म मरजादा । बिसरे तव सब प्रथम बिषादा ॥
बिसरे बिषाद निकाय संकट समुझि नहिं फाटत हियो ।
फिरि गर्भगत-आवर्त्त संसृति-चक्र जेहिं होइ सोइ कियो ॥
कृमि-भस्म-बिट-परिनाम तनु तेहि लागि जग बैरी भयो ।
परदार परधन द्रोहपर संसार बाढ़ै नित नयो ॥ ७ ॥
देखत ही आई बिरुधाई । जो तैं सपनेहु नाहिं बुलाई ।
ताके गुन कछु कहे न जाहीं । सो अब प्रगट देखु तन माहीं ॥
सो प्रगट तनु जर्जर जराबस ब्याधि सूल सतावई ।
सिरकंप, इंद्रिय-सक्ति प्रतिहत बचन काहु न भावई ॥
गृहपाल हू तें अति निरादर, खान पान न पावई ।
ऐसिहु दसा न बिराग, तहँ तृष्ना तरंग बढ़ावई ॥ ८ ॥
कहि को सकै महा भव तेरे । जनम एक के कछुक गने रे ।
खानि चारि संतत अवगाही । अजहुँ न करु बिचार मन माहीं ॥
अजहूँ बिचारि बिकार तजि भजु राम जनसुख-दायकं ।
भवसिंधु दुस्तर जलरथं, भजु चक्रधर सुर-नायकं ॥
बिनु हेतु करुनाकर उदार अपार-माया-तारनं ।
कैवल्य, पति, जगपति, रमापति, प्रानपति गतिकारनं ॥ ९ ॥
रघुपति भक्ति सुलभ सुखकारी । सो त्रयताप-सोक-भय-हारी ।

बिनु सतसंग भगति नहिं होई। ते तब मिलैं द्रवै जब सोई ॥
जब द्रवै दीनदयालु राघव साधु-संगति पाइए।
जेहि दरस परस समागमादिक पापरासि नसाइए ॥
जिन्हकें मिलें सुख दुख समान, अमानतादिक गुन भए।
मद मोह लोभ बिषाद क्रोध सुबोध तें सहजहिं गए ॥१०॥
सेवत साधु द्वैत-भय भागे। श्रीरघुबीर-चरन लय-लागे ॥
देहजनित बिकार सब त्यागे। तब फिरि निज स्वरूप अनुरागे ॥
अनुराग जो निज रूप तें जग तें बिलच्छन देखिए।
संतोष सम सीतल सदा दम देहवंत न लेखिए ॥
निर्मम निरामय एकरस, तेहि हरष सोक न ब्यापई।
त्रैलोक्य-पावन सो सदा जाकहुँ दसा ऐसी भई ॥११॥
जौं तेहि पंथ चलै मन लाई। तौ हरि काहे न होहिं सहाई ॥
जो मारग स्रुति साधु बतावै। तेहि पथ चलत सबै सुख पावै ॥
पावै सदा सुख हरिकृपा, संसार-आसा तजि रहै।
सपनेहुँ नहीं दुख देत दरसन, बात कोटिक को कहै ॥
द्विज देव गुरु हरि संत बिनु संसार पार न पाइये।
यह जानि तुलसीदास त्रासहरन रमापति गाइये ॥१२॥१३६॥

जौं पै कृपा रघुपति कृपालु की बैर और के कहा सरै ?
होइ न बाँको बार भगत को जौं कोउ कोटि उपाय करै ॥
तकै नीच जो मीच साधु की सोइ पामर तेहि मीचु मरै।
बेद-बिदित प्रहलाद कथा सुनि को न भगति-पथ पाउँ धरै ?
गज उधारि हरि थप्यो बिभीषन,ध्रुव अबिचल कबहूँ न टरै।

अंबरीष की साप सुरति करि अजहुँ महामुनि ग्लानि गरै ॥
सो न कहा जो कियो सुजोधन अबुध आपने मान जरै ॥
प्रभुप्रसाद सौभाग्य विजय-जस पांडु-तनय बरिआइँ बरै ॥
जो जो कूप खनैगो पर कहँ सो सठ फिरि तेहि कूप परै ।
सपनेहु सुख न संतद्रोही कहँ, सुरतरु सोउ बिष-फरनि फरै ॥
हैं काके द्वै सीस ईस के जो हठि जन की सीम चरै ?
तुलसिदास रघुबीर-बाँहबल सदा अभय काहू न डरै ॥१३७॥

कबहुँ सो कर-सरोज रघुनायक धरिहौ, नाथ! सीस मेरे।
जेहि कर अभय किए जन आरत बारक बिबस नाम टेरे ॥
जेहि कर-कमल कठोर संभुधनु भंजि जनक संसय मेट्यो।
जेहि कर-कमल उठाइ बंधु ज्यों परम प्रीति केवट भेंट्यो ॥
जेहि कर-कमल कृपालु गीध कहँ पिंडोदक दै धाम दियो।
जेहि कर बालि बिदारि दास-हित कपिकुल-पति सुग्रीव कियो ॥
आयो सरन सभीत बिभीषनु जेहि कर-कमल तिलक कीन्हों ।
जेहि कर गहि सर चाप असुर हति अभयदान देवन्ह दीन्हों ॥
सीतल सुखद छाँह जेहि कर की मेटति पाप, ताप, माया।
निसि बासर तेहि कर-सरोज की चाहत तुलसिदास छाया ॥१३८॥

दीनदयाल दुरित दारिद दुख दुनी दुसह तिहुँताप तई है ।
देव-दुआर पुकारत आरत सबकी सब सुखहानि भई है ॥
प्रभु के बचन बेद-बुध-संमत मम मूरति महिदेव-मई है ।
तिन्हकी मति रिस, राग, मोह, मद, लोभ लालची लीलि लई है ॥

राज-समाज कुसाज कोटि कटु कलपत[1] कलुष कुचाल नई है।
नीति प्रतीति प्रीति परमिति पति हेतु-बाद हठि हेरि हई है॥
आस्रम-बरन-धरम-बिरहित जग लोक-बेद-मरजाद गई है।
प्रजा पतित पाखंड पापरत, अपने अपने रंग रई है॥
साँहिति[2] सत्य सुरीति[3] गई घटि, बढ़ी कुरीति कपट-कलई है।
सीदत साधु, साधुता सोचति, खल बिलसत, हुलसति खलई है॥
परमारथ स्वारथ-साधन भई[4] अफल सकल, नहिं सिद्धि सई है।
कामधेनु-धरनी कलि-गोमर-बिबस बिकल, जामति[5] न बई है॥
कलि करनी बरनिए कहाँ लौं करत फिरत बिनु टहल टई है।
तापर दाँत पीसि कर मींजत, को जानै चित कहा ठई है॥
त्यौंत्यौं नीचु नित[6] बढ़त चढ़त सिर ज्यों ज्यों सीलबस ढील दई है।
सरुष बरजि तरजिए तरजनी, कुम्हिलैहै कुम्हड़े की जई है॥
दीजै दादि देखि नातो बलि, मही-मोद-मंगल-रितई है।
भरै[7] भाग अनुराग लोग कहै[8] राम कृपा चितवनि चितई है॥
बिनती सुनि सानंद हेरि हँसि करुना-बारि भूमि भिजई है।
रामराजु भयो काजु सगुन सुभ, राजा रामु जगत-बिजई है॥
समरथु बड़ो सुजानु सुसाहिबु सुकृत-सेन हारत जितई है।
सुजन सुभाउ सराहत सादर अनायास साँसति बितई है॥
उथपे-थपन, उजारि-बसावन, गई-बहोर बिरुद सदई है।

---

१ कलपित, २ साँति, ३ सुभ रीति, ४ भइ, ५ जागति—भा०, बेनी। ४ भए—आधुनिक, बक्सर। ६ बढ़त सो चढ़त—भा० बेनी। ७ भरे, ८ कहैं—भा०, बेनी। ९ अवधि—५१, ६, ७४।

तुलसी प्रभु आरत-आरतिहर अभय-बाँह केहि केहि न दई है ॥१३९॥

ते नर नरकरूप जीवत जग भव-भंजन-पद बिमुख अभागी।
निसि बासर रुचि पाप, असुचि मन, खल मतिमलिन निगमपथ-त्यागी
नहिं सतसंग भजन नहिं हरि को स्रवन न राम-कथा अनुरागी।
सुत-बित-दार-भवन-ममता-निसि सोवत अति, न कबहुँ मति जागी।
तुलसिदास हरि-नाम-सुधा तजि सठ हठि पियत-बिषय-बिष माँगी।
सूकर स्वान सृगाल सरिस जन जनमत जगत जननि-दुख-लागी १४०

रामचंद्र रघुनायक ! तुम सों हौं बिनती केहि भाँति करौं ?
अघ अनेक अवलोकि आपने अनघ नाम अनुमानि डरौं ॥
परदुख दुखी, सुखी परसुख तें संतसील नहिं हृदय धरौं।
देखि आन को बिपति परम सुख, सुनि संपति बिनु आगि जरौं ॥
भगति, बिराग, ज्ञान साधन कहि बहु बिधि डहँकत लोग फिरौं।
सिव-सरबस सुखधाम नाम तव बेंचि नरकप्रद उदर भरौं ॥
जानत हूँ निज पाप-जलधि जिय जल-सीकर सम सुनत लरौं।
रज सम पर अवगुन सुमेरु करि गुन-गिरि सम रज तेहि निदरौं ॥
नाना बेष बनाइ दिवस निसि पर बित जेहि तेहि जुगुति हरौं।
एकौ पल न कबहुँ अलोल-चित हित दै पद-सरोज सुमिरौं ॥
जौ आचरन बिचारहु मेरो कलप कोटि लगि अवटि मरौं।
तुलसिदास प्रभु-कृपा-बिलोकनि गोपद ज्यों भवसिंधु तरौं ॥१४१॥

सकुचत हौं अति, राम कृपानिधि ! क्यों करि बिनय सुनावौं[1] ?
सकल धरम बिपरीत करत, केहि भाँति नाथ मन भावौं ?

---

१ भा० बेनी में सर्वत्र " ैं " है, १६६६ में " ों " है।

जानत हूँ हरि रूप चराचर मैं हठि नयन न लावौं।
अंजन-केस-सिखा जुवती तहँ लोचन-सलभ पठावौं॥
स्रवनन्हि को फलु कथा तिहारी यहु समुझौं समुझावौं।
तिन्ह स्रवनन्हि परदोष निरंतर सुनि सुनि भरि भरि तावौं॥
जेहि रसना गुन गाइ तिहारे बिनु प्रयास सुख पावौं।
तेहि मुख पर-अपवाद भेक[1] ज्यों रटि रटि जनमु नसावौं॥
'करहु हृदय अति बिमल बसहिं हरि' कहि कहि सबहिं सिखावौं।
हौं निज उर अभिमान-मोह-मद-खलमंडली बसावौं॥
जो तनु धरि हरिपद साधहिं जन सो बिनु काज गँवावौं।
हाटक घट भरि धर्‌यो सुधा गृह तजि नभ कूप खनावौं॥
मन क्रम बचन लाइ कीन्हें अघ ते करि जतन दुरावौं।
पर-प्रेरित इरिषा-बस कबहुँक कियो कछु सुभ, सो जनावौं॥
बिप्रद्रोह जनु बाँट पर्‌यो, हठि सब सों बैरु बढ़ावौं।
ताहू पर निज मति बिलास सब संतन्हि माँझ गँनावौं॥
निगम, सेष, सारद निहोरि जौं अपने दोष कहावौं।
तौ न सिराहिं कलपसत लगि, प्रभु, कहा एक मुख गावौं ?॥
जौं करनी आपनी बिचारौं तौ कि सरन हौं आवौं ?
मृदुल सुभाउ सील रघुपति को सो बल मनहिं दिखावौं॥
तुलसिदास प्रभु सो गुन नहिं जेहि सपनेहु तुम्हहिं रिझावौं।
नाथकृपा भवसिंधु धेनुपद सम सुजानि सिर[2] नावौं॥१४२॥

सुनहु राम रघुबीर गुसाईं ! मन अनीति-रत मेरो।

---

१ भरे—१६११। २ सम जो जानि सिर नावौं—१६६६।

चरन-सरोज बिसारि तुम्हारे[1] निसि दिन फिरत अनेरो ॥
मानत नहीं निगम-अनुसासन, त्रास न काहू केरो ।
भूली सूल करम-कोल्हुन तिल ज्यों बहु बारनि पेरो ॥
जहँ सतसंग भक्ति माधव की सपनेहु करत न फेरो ।
लोभ-मोह-मद-काम-क्रोधरत तिन्ह सों नेह घनेरो ॥
पर-गुन सुनत दाह, पर-दूषन[2] सुनत हर्ष[3] बहुतेरो ।
आपु पाप को नगर बसावत, सहि न सकत पर खेरो ॥
साधन-फल, स्रुति-सार नाम तव, भव-सरिता कहँ बेरो ।
सो पर कर काकिनी लागि सठ बेचि होत हठि चेरो ॥
कबहुँक हौं संगति-स्वभाव तें जाउँ सुमारग नेरो ।
तब करि क्रोध संग कुमनोरथ देत कठिन भट-भेरो ॥
एक हौं दीन मलीन हीनमति बिपति-जाल अति घेरो ।
तापर सहि न जाइ करुनानिधि मन को दुसह दरेरो ॥
हारि पत्यो करि जतन बहुत बिधि, तातें हौं कहत सबेरो ।
तुलसिदास की त्रास मिटै जब करहु[4] हृदय महँ डेरो ॥१४३॥

सो धौं को जो नाम-लाज तें नहिं राख्यो रघुबीर !
कारुनीक बिनु कारन ही हरि, हरहिं सकल भवभीर ॥
बेद-बिदित जग-बिदित अजामिल बिप्रबंधु अघ-धाम ।
घोर जमालय जात निवास्यो सुत-हित सुमिरत नाम ॥
पसु पाँवर अभिमान-सिंधु गज ग्रस्यो आइ जब ग्राह ।

---

१ तिहारे—१०२, १५, ५१ । २ कथा—७४, ५१ । ३ उर अंतर दोष हरष बहुतेरो—१६६६ । ४ करहु तुम—आधुनिक ।

सुमिरत सकृत सपदि आयो प्रभु हस्यो दुसह उर-दाह ॥
ब्याध, निषाद, गीध, गनिकादिक अगनित अवगुन-मूल ।
नाम-ओट तें राम सबन की दूरि करी सब सूल ॥
केहि आचरन घाटि हौं तिन्ह तें, रघुकुलभूषन भूप !
सीदत तुलसिदास निसि बासर पर्‌यो भीम तमकूप ॥१४४॥

कृपासिंधु ! जन दीन दुआरे दादि न पावत काहे ?
जब जहँ तुम्हहिं पुकारत आरत तब तिन्हके दुख दाहे ॥
गज, प्रहलाद, पांडुसुत, कपि सबको रिपु-संकट मेट्‌यो ।
प्रनत बंधुभय-बिकल बिभीषन उठि सो भरत ज्यों भेंट्‌यो ॥
मैं तुम्हरो लै नाउँ गाउँ एक उर आपने बसायो ।
भजनु बिबेक, बिरागु लोग भले करम करम करि ल्यायो ।
सुनि रिस भरे कुटिल कामादिक करहिं जोर-बरिआईं ।
तिन्हहिं उजारि नारि अरि धन पुर राखहिं राम गुसाईं ॥
सम सेवा छल दान दंड हौं रचि उपाय पचि हार्‌यो ।
बिनु कारन के कलह बड़ो दुख, प्रभु सों प्रगटि पुकार्‌यो ॥
सुर स्वारथी, अनीस, अलायक, निठुर, दया चित नाहीं ।
जाउँ कहाँ, को बिपति-निवारकु भव-तारकु जग माहीं ? ॥
तुलसी जदपि पोच तउ तुम्हरइ, और न काहू केरो ।
दीजै भगति बाँह बैरक ज्यों, सुबस बसै अब खेरो ।१४५॥

हौं सब बिधि राम रावरो चाहत भयो चेरो ।
ठौर ठौर साहिबी होत है ख्याल कालकलि केरो ॥

काल करम[1] इंद्री-बिषय गाहकगन घेरो।
हौं न कबूलत बाँधि कै मोल करत करेरो॥
बंदि छोर तेरो नाम है, बिरुदैत बड़ेरो।
मैं कह्यो तब छल-प्रीति कै माँगे उर डेरो॥
नाम ओट आज लगि बच्यो मलजुग जग जेरो।
अब गरीब न जमोगिये पाइबो न हेरो॥
जेहि कौतुक बक स्वान को प्रभु न्याव निबेरो।
तेहि कौतुक कहिये कृपाल तुलसी है मेरो॥१४६॥

कृपासिंधु ताते रहौं निसि दिन मन मारे।
महाराज लाज आपुही निज जाँघ उघारे॥
मिले रहैं, मारयो चहैं कामादि सँघाती।
मो बिनु रहैं न, मेरियै जारैं छल छाती॥
बसत हिये हित जानि मैं सबकी रुचि पाली।
कियो पथिक को दंड हौं जड़ कर्म[2] कुचाली॥
देखी सुनी न आजु लौं अपनाइत ऐसो।
करहिं सबै, सिर मेरे ही फिरि परै अनैसो॥
बड़े अलेखी लखि परे, परिहरे न जाहीं।
असमंजस मों मगन हौं, लीजै गहि बाहीं॥
बारक बलि अवलोकिए कौतुक जन जी को।
अनायास मिटि जाइगो संकट तुलसी को॥१४७॥

कहौं कौन मुँह लाइ कै, रघुबीर गुसाईं!

---

१ कर्म इन्द्रिय—आधुनिक। २ माँगेउ—ज०, १५, ह०।

सकुचत समुझत आपनी सब, साइँ दोहाई ।
सेवत बस, सुमिरत सखा, सरनागत सो हौं ।
गुनगन सीतानाथ के चित करत न हौं हौं ॥
कृपासिंधु बंधु दीन के आरत-हितकारी ।
प्रनतपाल बिरुदावली सुनि जानि बिसारी ॥
सेइ न धेइ न सुमिरि कै पदप्रीति सुधारी ।
पाइ सुसाहिब राम सो भरि पेट बिगारी ॥
नाथ गरीबनिवाजु हैं, मैं गही न गरीबी ।
तुलसी प्रभु निज ओर तें बनि परै सो कीबी ॥१४८॥

कहाँ जाउँ, कासों कहौं और ठौर न मेरे[1] ?
जनम गँवायो तेरेई द्वारे, किंकर तेरे[2] ॥
मैं तो बिगारी राम सों स्वारथ के लीन्हें ।
तोहिं कृपानिधि क्यों बनै मेरी सी कीन्हें ॥
दिन दुरदिन, दिन दुरदसा, दिन दुख, दिनदूषन ।
जौ लौं तू न बिलोकिहै रघुबंस-बिभूषन ॥
दई पीठि बिनु डीठ हौं, तू बिस्व-बिलोचन ।
तोसों तुही न दूसरो नत-सोच-बिमोचन ॥
पराधीन देव, दीन हौं, स्वाधीन गुसाईं ।
बोलनिहारे सों करै, बलि, बिनय कि झाईं ॥
आपु देखि मोहिं देखिये जन जानिये सांचो ।
बड़ी ओट राम नाम की जेहि लई सो बाँचो ॥

---

१ मेरो, २ तेरो, ३ नाथ सों आरति—आधुनिक

रहनि रीति राम रावरी नित हिय हुलसी है।
ज्यों भावै त्यों करु कृपा तेरो तुलसी है ॥१४९॥

रामभद्र मोहिं आपनो सोचु है अरु नाहीं।
जीव सकल संताप के भाजन जग माहीं ॥
नातो बड़े समर्थ सों एक ओर किधौं हूँ।
तोको मो-से अति घने, मोको एकै तूँ ॥
बड़ी गलानि हानि हिए है, सर्वज्ञ गुसाईं!
क्रूर कुसेवक कहत हौं सेवक की नाईं ॥
भलो पोच राम को कहैं मोहिं सब नर नारी।
बिगरे सेवक स्वान सो साहिब-सिर गारी ॥
असमंजस मन को मिटै, सो उपाय न सूझै।
दीनबंधु कीजै सोई बनि परै जो बूझै ॥
बिरुदावली बिलोकिए तिन्ह में कोउ हौं हौं।
तुलसी प्रभु को परिहर्‌यो सरनागत सो हौं ॥१५०॥

जो पै चेराई राम की करतो न लजातो।
तौ तू दाम कुदाम ज्यों कर कर न बिकातो ॥
जपत जीह रघुनाथ को नाम नहिं अलसातो।
बाजीगर के सूम ज्यों, खल! खेह न खातो ॥
जौं तू मन मेरे कहे राम-नाम कमातो।
सीतापति-सनमुख सुखी सब ठाँय समातो ॥
राम सुहाते तोहिं जौं तू सबहिं सुहातो।
काल करम कुल कारनी कोऊ न कोहातो ॥

राम-नाम-अनुराग ही जिय जो रतिआतो।
स्वारथ-परमारथ- पथी तोहि सब पतिआतो॥
सेइ साधु, सुनि समुझि कै पर-पीर पिरातो।
जनम कोटि को कँदैलो हृद-हृदय थिरातो॥
भव-मगु अगमु अनंतु है बिनु स्रमहिं सिरातो।
महिमा उलटे नाम की मुनि कियो किरातो॥
अमर अगम तनु पाइ सो जड़ जाय न जातो।
होतो मंगलमूल तू, अनुकूल बिधातो॥
जो मन[1] प्रीति प्रतीति सों राम नामहि रातो।
तुलसी राम प्रताप[2] तें तिहुँताप न तातो॥१५१॥

राम भलाई आपनी भल कियो न काको ?
जुग जुग जानकि-नाथ को जग जागत साको॥
ब्रह्मादिक बिनती करी कहि दुख बसुधा को।
रघु[3]कुल-कैरव-चंद भो आनंद-सुधा को॥
कौसिक गरत तुषार ज्यों तकि तेज तिया को।
प्रभु अनहित-हित को दियो फल कोप कृपा को॥
हर्‍यो[4] पाप आपु जाइकै संताप सिला को।
सोच[5]-मगन काढ्यो सही साहिब मिथिला को॥
रोषरासि भृगुपति धनी अहमिति ममता को।
चितवत भाजन करि लियो उपसम समता को॥

---

१ जन—भा०, बेनी। २ प्रसाद सों—५१, दीन। ३ रघुकुल—बेनी। ४ हयो—भा०, बेनी। ५ सोक—भा०।

मुदित मानि आयसु चले बन मातु पिता को ।
धरम-धुरंधर धीरधुर गुन-सील जिता को ?
गुह गरीब गत-ज्ञातिहूँ जेहि जिव न भखा को ।।
पायो पावन प्रेम ते सनमान सखा को ?
सद्‌गति सबरी गीध की सादर करता को ।
सोच-सींव सुग्रीव को संकट-हरता को ।।
राखि बिभीषन को सकै अस काल-गहा को ।
आज बिराजत राज है दसकंठ जहाँ को ।।
बालिस बासी अवध के बूझिए न खाको ।
ते पाँवर पहुँचे तहाँ जहँ मुनि मन थाको ।।
गति न लहै रामनाम सों अस बिधि सिरजा को ?
सुमिरत कहत प्रचारि कै बल्लभ गिरिजा को ।।
अकनि अजामिल की कथा सानंद न भा को ?
नाम लेत कलिकाल हूँ हरिपुरहिं न गा को ?
रामनाम-महिमा करै काम-भूरुह आको ।
साखी बेद पुरान है तुलसी तन ताको ।।१५२।।

मेरे रावरिये गति है रघुपति बलि जाउँ ।
निलज[1], नीच, निरगुन निरधन, कहँ जग दूसरो न ठाकुर ठाउँ ।।
हैं बर घर बहु भरे सुसाहिब, सूझत सबनि आपनो दाउँ ।
बानर-भालु[2], बिभीषन-हित बिनु कोसलपाल कहूँ न समाउँ ।।
प्रनतारति-भंजन जनरंजन सरनागत पबि-पंजर नाउँ ।

१ निडर — भा०, बेनी । २ बंधु — आधुनिक ।

कीजै दास दास तुलसी अब कृपासिंधु बिनु मोल बिकाउँ ॥१५३॥

देव ! दूसरो कौन दीन को दयाल ?
सील-निधान, सुजान-सिरोमनि, सरनागत-प्रिय, प्रनत-पाल ॥
को सर्बज्ञ[1] समर्थ[2] सकल प्रभु सिव-सनेह-मानस-मराल ?
को साहिब किय मीत-प्रीति बस खग निसिचर कपि भील भाल ?
नाथ-हाथ माया-प्रपंच सब जीव दोष गुन करम काल ।
तुलसिदास भल पोच रावरो, नेकु निरखि कीजै निहाल ॥१५४॥

राग सारंग

बिस्वास एक राम नाम को ।
मानत नहिं परतीति अनत ऐसोइ सुभाव मन बाम को ॥
पढ़िबो पर्‍यो न छठी छ मत, ऋग, जजुर, अथर्वन, साम को ।
ब्रत तीरथ, तप[2] सुनि सहमत, पचि मरै करै तन छाम को ?
करमजाल कलिकाल कठिन आधीन सुसाधित दाम को ।
ज्ञान, बिराग, जोग, जप को भय लोभ, मोह, कोह, काम को ॥
सब दिन सब लायक भए गायक रघुनायक-गुन-ग्राम को ।
बैठे नाम कामतरु तर डर कौन घोर घन घाम को ?
को जानै को जैहै जमपुर को सुरपुर परधाम को ।
तुलसिहिं बहुत भलो लागत जग जीवन रामगुलाम को ॥१५५॥

कलि नाम कामतरु राम को ।
दलनिहार दारिद दुकाल दुख दोष घोर घन घाम को ।
नाम लेत दाहिनो होत मन बाम बिधाता बाम को ।

---

१ समरथ सर्वज्ञ—५१, ज०, ह०, ७४, १५ । २ तप—ह०, ७४ ।

कहत मुनीस महेस महातम उलटे सीधे नाम को।
भलो लोक परलोक तासु जाके बल ललित-ललाम को।
तुलसिहु जग जानियत नाम ते सोच न कूच मुकाम को ॥१५६॥

सेइये सुसाहिब राम सो।
सुखद, सुजान, सुसील, सूर, सुचि, सुंदर कोटिक काम सो ॥
सारद, सेस, साधु महिमा कहि गुनगन-गायक साम सो।
सुमिरि सप्रेम नाम जासों रति चाहत चंद्र-ललाम सो।
गमन बिदेस न लेस कलेस को सकुचत सकृत प्रनाम सो।
साखी ताको बिदित बिभीषन बैठो है अबिचल धाम सो ॥
टहल सहल जन महल महल जागत चारो जुग जाम सो।
देखत दोष न खीझत रीझत सुनि सेवक गुनग्राम सो ॥
जाके भजे तिलोक-तिलक भये त्रिजग-जोनि तनु तामसो।
तुलसी ऐसे प्रभुहि भजै जो न ताहि बिधाता बाम सो ॥१५७॥

राग नट

कैसे देउँ नाथहिं खोरि ?
काम-लोलुप भ्रमत मन हरि-भगति परिहरि तोरि ॥
बहुत प्रीति पुजाइबे पर, पूजिबे पर थोरि।
देउँ सिख, सिखयो न मानत, मूढ़ता मति मोरि ॥
किये सहित सनेह जे अघ हृदय राखे चोरि।
संग बस किय सुभ सुनाये सकल लोक निहोरि ॥

---

१ सुसील, सुजान—प्र०, ७४, ह०, १५। २ कह—७४; कहै—दीन।
२ कलेस लेस नहिं—७४। ३ असि—आधुनिक।

करौं जो कछु धरौं सचि पचि सुकृत-सिला बटोरि।
पैठि उर बरबस दयानिधि दंभ लेत अँजोरि॥
लोभ मनहिं नचाव कपि ज्यों गरे आसा-डोरि।
बात कहौं बनाइ बुध ज्यों बर बिराग निचोरि॥
इतेहुँ पर तुम्हरो कहावत लाज अँचई घोरि।
निलजता पर रीझि रघुबर देहु तुलसिहिं छोरि॥१५८॥

है प्रभु मेरोई सब दोसु।
सीलसिंधु, कृपालु, नाथु, अनाथ-आरत पोसु॥
बेष, बचन, बिरागु, मनु, अघ,अवगुनन्हि को कोसु।
राम-प्रीति-प्रतीति पोलो, कपट करतब ठोसु॥
रागु रंगु कुसंग ही सों, साधु-संगति रोसु।
चहत केहरि-जसहिं सेइ सृगाल ज्यों खरगोसु॥
संभु-सिखवन रसन हूँ नित रामनामहिं घोसु।
दंभ हूँ कलि नामु-कुंभजु सोच-सागर-सोसु।
मोद-मंगल-मूल अति अनुकूल निज निरजोसु।
रामनाम-प्रभाव सुनि तुलसिहुँ परम संतोसु॥१५९॥

मैं हरि पतित पावन सुने।
हौं पतित, तुम पतितपावन, दोउ बानक बने॥
ब्याध,गनिका,गज,अजामिल साखि निगमनि भने।
और अधम अनेक तारे, जात कापै[1] गने?
जानि नाम अजानि लीन्हें नरक जमपुर मने।

---

१ का पहिं—भा०, बेनी।

दास तुलसी सरन आयो राखि[1] ले आपने ॥१६०॥

राग मलार

तोसो प्रभु जो पै कहूँ कोउ होतो।
तौ सहि निपट निरादर निसि दिन रटि लटि ऐसो घटि को तो ॥
कृपासुधा जलदान माँगिबो कहौ सो साँच निसोतो।
स्वाति-सनेह-सलिल-सुख चाहत चित-चातक को पोतो ॥
काल करम बस मनहु मनोरथ[2] कबहुँ कबहुँ कछु भो तो।
ज्यों मुदमय बसि मीन बारि तजि उछरि भभरि लेत गोतो ॥
जितो दुराउ दास तुलसी उर क्यों कहि आवत ओतो।
तेरे राज राय दसरथ के लयो बयो बिनु जोतो ॥१६१॥

राग सोरठ

ऐसो को उदार जग माहीं?
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ॥
जो गति जोग बिराग जतन करि नहिं पावत मुनि ज्ञानी।
सो गति दई गीध सबरी कहँ प्रभु न अधिक[3] करि जानी ॥
जो संपति दससीस अरपि करि रावन सिव पहँ लीन्हीं।
सोइ संपदा बिभीषन कहँ अति सकुच सहित हरि दीन्हीं ॥
तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो।
तौ भजु राम, काम सब पूरन करहिं कृपानिधि तेरो ॥१६२॥

एकै दानि-सिरोमनि साँचो।
जिहि जाँचो सो जाचकता-बस फिरि बहु नाच न नाचो ॥

१ राखि—आधुनिक। २ मन कुमनोरथ, ३ बहुत जिय जानी—आधुनिक।

सब स्वारथी असुर, सुर, नर, मुनि; कोउ न देत बिनु पाये।
कोसलपाल कृपाल कलपतरु द्रवत सकृत सिर नाये॥
हरिहुँ और अवतार आपने राखी बेद-बड़ाई।
लै चिउरा निधि दई सुदामहिं जद्यपि बाल-मिताई॥
कपि, सबरी, सुग्रीव, बिभीषन को नहिं कियो अजाची।
अब तुलसिहि दुख देति दयानिधि! दारुन आस-पिसाची॥१६३॥

जानत प्रीति रीति रघुराई।
नाते सब हाते करि राखत राम-सनेहु-सगाई॥
नेह निबाहि देह तजि दसरथ कीरति अचल चलाई।
ऐसेहुँ पितु तें अधिक गीध पर ममता गुन गरुआई॥
तिय-बिरही सुग्रीव सखा लखि प्रानप्रिया बिसराई।
रन परयो बंधु बिभीषन ही को सोचु हृदय अधिकाई॥
घर गुरगृह प्रियसदन सासुरे भइ जब[1] जब पहुनाई।
तब[2] तब कहें[3] सबरी के फलनि की रुचि माधुरी न पाई॥
सहज सरूप कथा मुनि बरनत रहत सकुचि सिर नाई।
केवट-मीत कहे सुख मानत, बानर बंधु-बड़ाई॥*
प्रेम कनौड़ो राम सो प्रभु तिभुअन[4] तिहुँ काल[5] न भाई।
तेरो रिनी हौं[6] कह्यो कपि सों, ऐसी मानिहि को सेवकाई॥
तुलसी राम सनेह सील सुनि जौं न भगति उर आई।
तौ तोहिं जनमि जाय जननी जड़ तनु-तरुनता गँवाई॥१६४॥

---

१ जहँ—७४, ५१। २ तह—७४, ५१। ३ कहि, ४ त्रिभुवन—भा० बेनी। ५ लोक—१६६६, ६ कह्यो हौं। * यह पंक्ति १६६६ में नहीं है।

रघुबर ! रावरी[1] इहै बड़ाई ।
निदरि गनी आदर गरीब पर करत कृपा अधिकाई ॥
थके देव साधन करि सब, सपनेहुँ नहिं[2] दिए दिखाई ।
केवट कुटिल भालु कपि कौन[4] तप किये सकल सँग भाई ॥
मिलि मुनिबृंद फिरत दंडकबन, सो चरचौ न चलाई ।
बारहिं बार गीध सबरी की बरनत प्रीति सुहाई ॥
स्वान कहे तें कियो पुर बाहिर जती गयंद चढ़ाई ।
तिय-निंदक मतिमंद प्रजा रज निज नय नगर बसाई ॥
एहि देवान[5] दिन दीन कनिगरे, रीति सदा चलि आई ।
दीनदयाल दीन तुलसी की, काहु न सुरति कराई ॥१६५॥

ऐसे राम दीन हितकारी ।
अति कोमल करुनानिधान बिनु कारन पर-उपकारी ॥
साधनहीन दीन निज अघबस सिला भई मुनि-नारी ।
गृह तें गवनि परसि पद पावन घोर साप तें तारी ॥
हिंसारत निषाद तामस नर[6] पसु समान बन चारी ।
भेंट्यो हृदय लगाइ प्रेमबस नहिं कुल जाति बिचारी ॥
जद्यपि द्रोह कियो सुरपति-सुत कहि न जाइ अति भारी ।
सकल लोक अवलोकि सोक-हत सरन गए भय टारी ॥
बिहँगजोनि आमिष अहार सो[7] गीध कौन व्रतधारी ।

---

१ रावरि यहै—भा०, बेनी । २ न दई, ३रचि निज नये,—१६६६ ।
४ कौनप, ५ दरबार दीन को आदर—भा० बेनी । ६ बपु—७४, ५१ ।
७ पर—आधुनिक ।

जनक समान क्रिया ताकी निज कर सब भाँतें[1] सँवारी ॥
अधम जाति सबरी जोषित जड़ लोक बेद तें न्यारी ।
जानि प्रीति दै दरस कृपानिधि सोउ रघुनाथ उधारी ॥
कपि सुग्रीव बंधुभय-ब्याकुल आयो सरन पुकारी ।
सहि न सके जन[2] के दारुन दुख हत्यो बालि सहि गारी ॥
रिपु को अनुज बिभीषन निसिचर कौन भजन अधिकारी ।
सरन गए आगे है लीन्हों भेंट्यो भुजा पसारी ॥
असुभ होइ जिन्हके सुमिरे तें बानर रीछ बिकारी ।
बेदबिदित पावन भये ते सब, महिमा नाथ तुम्हारी ॥
कहँ लगि कहौं दीन अगनित जिन्हकी तुम बिपति निवारी ।
कलिमल-ग्रसित दास तुलसी पर काहे कृपा बिसारी ॥१६६॥

रघुपति ! भगति करत कठिनाई ।
कहत सुगम, करनी अपार, जानै सोइ जेहि बनि आई ॥
जो जेहि कला कुसल ताकहुँ सो[3] सुलभ सदा सुखकारी ।
सफरी सनमुख चलै[4] प्रबाह, सुरसरी बहै गज भारी ॥
ज्यों सर्करा मिलै सिकता महुँ बल तें न कोउ बिलगावै ।
अति सूछम रसज्ञ[5] पिपीलिका बिनु प्रयास ही पावै ॥
सकल दृश्य निज उदर मेलि सोवै निद्रा तजि जोगी ।
सोइ हरिपद अनुभवै परम सुख अतिसय द्वैत-बियोगी ॥
सोक, मोह, भय, हरष, दिवस निसि, देस काल तहँ नाहीं ।

---

१ भाँति—ज० । २ दारुन दुख जन के—आधुनिक । ३ सोइ, ४ जल—आ० बेनी । ५ रसज्ञ सूछम—७४, ५१, ६०, १५ ।

तुलसिदास यहि दसाहीन संसय निर्मूल न जाहीं ॥१६७॥

जो पै रामचरन रति होती।
तौ कत त्रिविध सूल निसि बासर सहते बिपति निसोती ॥
जो संतोष सुधा निसि बासर सपनेहुँ कबहुँक पावै।
तौ कत बिषय बिलोकि झूठ जल मन कुरंग ज्यों धावै ॥
जौ श्रीपति-महिमा बिचारि उर भजते भाव बढ़ाए।
तौ कत द्वार द्वार कूकर ज्यों फिरते पेट खलाए ॥
जे लोलुप भये दास आस के ते सबही के चेरे।
प्रभु-बिस्वास आस जीती जिन्ह ते सेवक हरि केरे ॥
नहिं एकौ आचरन भजन को बिनय करत हौं ताते।
कीजै कृपा दासतुलसी पर, नाथ! नाम के नाते ॥१६८॥

जौं मोहिं राम लागते मीठे।
तौ नवरस, षटरस-रस रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे ॥
बंचक बिषय बिबिध तनु धरि अनुभवे सुने अरु डीठे।
यहु जानतहुँ[1] हृदय अपने सपने न अघाइ उबीठे ॥
तुलसिदास प्रभु सों एकहि बल बचन कहत अति ढीठे।
नाम की लाज राम करुनाकर केहि न दिये करि चीठे ॥१६९॥

यों मन कबहुँ[2] तो तुम्हहिं न लाग्यो।
ज्यों छलु छाँड़ि सुभाय[3] निरंतर रहत बिषय अनुराग्यो ॥
ज्यों चितई परनारि, सुने पातक-प्रपंच घर घर के।

---

१ जानत हौं उर, २ कबहूँ, ३ सुभाव,—भा० बेनी।

त्यों न साधु, सुरसरि-तरंगनि-बिमल गुननि रघुबर के ॥
ज्यों नासा सुगंधरस-बस, रसना षटरस-रति मानी।
रामप्रसाद-माल, जूठनि लगि त्यों न ललकि ललचानी ॥
चंदन चंदबदनि भूषन पट ज्यों चहै पाँवरु परस्यो।
त्यों रघुपति-पद-पदुम परस कों तनु पातकी न तरस्यो ॥
ज्यों सब भाँति कुदेव कुठाकुर सेए बपु बचन हिये हूँ।
त्यों न राम सुकृतज्ञ जे सकुचत सकृत प्रनाम किये हूँ ॥
चंचल चरन लोभ लगि लोलुप द्वार द्वार जग बागे।
रामसीय-आस्रमनि चलत सपने न भये श्रमित अभागे ॥
सकल अंग पद-बिमुख नाथ मुख नाम की ओट लई है।
है तुलसिहि परतीति एक प्रभु-मूरति कृपामई है ॥ १७०॥

कीजै मोकों जमजातनामई।
राम तुम्ह से सुचि सुहृद साहिबहिं मैं सठ पीठि दई ॥
गरभबास दस मास पालि पितुमातुरूप हित कीन्हों।
जड़हिं बिबेक, सुसील खलहिं, अपराधिहिं आदरु दीन्हों ॥
कपट करौं अंतरजामिहुँ सों, अघ ब्यापकहिं दुरावौं।
ऐसे कुमति कुसेवक पर रघुपति न कियो मन बावौं ॥
उदरु भरौं किंकरु कहाइ, बेच्यो बिषयनि हाथ हियो है।
मोहि-से बंचक कों कृपालु छल छाँड़ि कै छोह कियो है ॥

---

१ तरंगनि बिमल गुननि—भा०। तरंगन बिमल गुनगन—१६६६। तरंगनि गाये गुन—बेनी। तरंग निर्मल गुनगन—ह०, ५१। २ त्यों भए न—ह०, ५१। ३ ऐसेहु—७४। ४ बिषयन्ह—१६६६।

पल पल के उपकार रावरे जानि बूझि सुनि नीकें ।
भिद्यो न कुलिसहु तें कठोर-चित कबहुँ प्रेम सिय-पीकें ॥
स्वामी को सेवक-हितता सब, कछु निज साँइ-दोहाई ।
मैं मति-तुला तौलि देखी भइ मेरिहिं दिस गरुआई ॥
एतेहु पर हित करत नाथ मेरो, करि आयो अरु करिहैं ।
तुलसी अपनी ओर जानियत प्रभुहि कनौड़ोइ[1] भरिहैं ॥१७१॥

कबहुँक हौं एहि रहनि रहौंगो ।
श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपा तें संत सुभाउ[2] गहौंगो ॥
जथालाभु संतोष सदा काहू सों कछु न चहौंगो ।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेमु निबहौंगो ॥
परुषबचन अतिदुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो ।
बिगत मान, सम सीतल मन, पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो ॥
परिहरि देहजनित चिंता, दुख सुख समबुद्धि सहौंगो ।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि अबिरल[3] हरिभगति लहौंगो ॥१७२

नाहिंन आवत आन भरोसो ।
एहिं कलिकाल सकल साधनतरु है स्रम-फलनि फरो सो ॥
तप, तीरथ, उपवास, दान, मख जेहि जो रुचै करो सो ।
पाएहिं पै जानिबो करम-फलु, भरि भरि बेदु परोसो ॥
आगम-बिधि, जप, जाग करत नर सरत न काज खरो सो ।
सुख सपनेहु न जोग-सिधि-साधन, रोगु बियोगु धरो सो ॥

---

१ कनौड़े—भा०, बेनी । कनौड़ो—ह०, ७४ । २ सुभाव, ३ अबिचल—भा०, बेनी ।

काम, कोह, मद, लोभ मोह मिलि ग्यान बिराग हरो सो ।
बिगरतु मन संन्यास लेत, जल नावत आम घरो सो ॥
बहु मत मुनि[1] बहु पंथ पुराननि जहाँ तहाँ झगरो सो ।
गुरु कह्यो रामभजनु नीको मोहिं लागत राम[2] राज-डगरो सो ॥
तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि फिरि पचि मरै मरो सो ।
रामनाम बोहित भवसागर, चाहै तरन तरो सो ॥१७३॥

जाकें प्रिय न राम बैदेही ।
तेहि[3] छाँड़िऐ कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेही ॥
तजो[4] पिता प्रहलाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी ।
हरि हित[5] गुरु बलि पति ब्रजबनितन्हि सो भये मुदमंगलकारी ॥
नाते नेह राम[6] को मनियत सुहृद सुसेब्य जहाँ लौं ।
अंजनु कहा आँखि जेहि फूटै बहुतक कहौं कहाँ लौं ॥
तुलसी सो सब भाँति परम हित पूँजी प्रान तें प्यारो ।
जातें होय सनेह रामँ तें, इतनोइ मतो हमारो ॥१७४॥

जौ पै रहनि राम सों नाहीं ।
तौ नर खर कूकर सूकर से जाय जियत जग माहीं ॥
काम, क्रोध, मद, लोभ, नींद, भय, भूख, प्यास सबही कें ।
मनुज देह सुर साधु सराहत सो सनेह सिय-पी कें ॥
सूर, सुजान, सपूत सुलच्छन गनियत गुन गरुआई ।

१ सुनि—भा० बैनी । २ लगत राज—७४, ६० । ३ सो त्यागिये, ४ तज्यो, ५ बलि गुरु तजेउ नाह ब्रज बनितन्ह भे जग—७४ । ६ रामहि के—११६६ । ७ राम सो—भा०, बेनी । १७ रामपद—५१ ।

बिनु हरिभजन इँदारुन के फल, तजत नहीं करुआई ॥
कीरति, कुल, करतूति, भूति भलि, सील, सरूप सलोने ।
तुलसी प्रभु-अनुराग-रहित जस सालन साग अलोने ॥१७५॥

राख्यो राम सुस्वामी सों नीच नेह न नातो ।
इते अनादर होत हूँ तैं न हातो ॥
जोरे नेह नाते नए फोकट फोके ।
देह के दाहक सबै गाहक जी के ॥
अपने अपने को सब चाहत नीको ।
मूल दुहूँ को दयालु दूलह सी को ॥
जीव को जीवन, प्रान को प्यारो ।
सुखहू को सुख राम सो बिसारो ॥
कियो, करैगो तोसे खल को भलो ।
ऐसे सुसाहिब सों तू कुचाल क्यों चलो ॥
तुलसी तेरी भलाई अजहूँ बूझैं ।
राढ़उ राउत होत फिरि कै जूझैं ॥१७६॥

जो तुम त्यागो राम हौं तो नहिं त्यागों ।
परिहरि पाँय काहि अनुरागों ॥
सुखद सुप्रभु तुमसों जग माहीं ।
स्रवन-नयन-मन-गोचर नाहीं ॥
हौं जड़ जीव, ईस रघुराया ।
तुम मायापति, हौं बस माया ॥
हौं तो कुजाचक, स्वामि सुदाता ।

हौं कुपूत, तुम पितु हित माता ॥
जो पै कहुँ कोउ बूझत बातो ।
तौ तुलसी बिनु मोल बिकातो ॥१७७॥

भए हूँ उदास राम मेरें आस रावरी ।
आरत स्वारथी सब कहैं बात बावरी ॥
जीवन को दानि घनु कहा ताहि चाहिए ।
पेम-नेम कें निबाहें चातकु सराहिए ॥
मीन तें न लाभ-लेसु पानी पुन्य-पीन कों ?
जल बिनु थलु कहाँ मीचु-बिनु मीन कों ?
बड़े ही की ओट, बलि, बाँचि आये छोटे हैं ।
चलत खरे के संग जहाँ तहाँ खोटे हैं ॥
यहि दरबार भलो दाहिनेहु-बाम को ।
मोकों सुभदायक भरोसो रामनाम को ॥
कहत नसानी ह्वैहै हियें नाथ नीकी है ।
जानत कृपानिधान तुलसी के जी की है ॥१७८॥

राग बिलावल

कहाँ जाउँ ? कासों कहौं ? कौन सुनै दीन की ?
त्रिभुवन तुही गति सब अंगहीन की ॥
जग जगदीस घर घरनि घनेरे हैं ।
निराधार को अधार गुनगन तेरे हैं ॥
गजराज-काज खगराज तजि धायो को ।
मोसे दोस-कोस पोसे, तोसे माय जायो को ॥

मोसे क्रूर कायर कुपूत कौड़ी आध को।
किए बहुमोल तू करैया गीधस्राध को॥
तुलसी की तेरे ही बनाए, बलि, बनैगी।
प्रभु की बिलंब अंब दुख दोष जनैगी॥१७९॥

बारक बिलोकि बलि कीजै मोहि आपनो।
राय दसरथ के तू उथपन-थापनो॥
साहिब सरनपाल सबल न दूसरो।
तेरो नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो॥
बचन करम तेरे मेरे मन गड़े हैं।
देखे सुने जाने मैं जहान जेते बड़े हैं॥
कौने कियो समाधान सनमान सिला को?
भृगुनाथ सारिखो जितैया कौन लीला को?
मातु-पितु-बंधु-हित, लोक-बेदपाल को?
बोल को अचल, नत करत निहाल को?
संग्रहे सनेहबस अधम असाधु को?
गीध सबरी को, कहो, करी है सराध को?
निराधार को अधार, दीन को दयालु को?
मीत कपि केवट, रजनिचर भालु को॥
रंक निरगुनी नीच जितने निवाजे हैं।
महाराज सुजन, समाज ते बिराजे हैं॥
साँची बिरुदावली न बढ़ि कहि गई है।
सीलसिंधु ढील तुलसी की बार भई है॥१८०॥

केहू भाँति कृपासिंधु मेरी ओर हेरिए ।
मोको और न ठौर न, सुटेक एक तेरिए ॥
सहस सिला तें अति जड़ मति भई है ।
कासों कहौं, कौने गति पाहनहिं दई है ?
पद-राग-जाग चहौं कौसिक ज्यों कियो है ।
कलिमल खल देखि भारी भीति भियो है ॥
करम-कपीस बालि बली त्रास त्रस्यो हौं ।
चाहत अनाथ-नाथ तेरी बाँह बस्यो हौं ॥
महामोह-रावन बिभीषन ज्यों हयो हौं ।
त्राहि तुलसीस ! त्राहि तिहूँ ताप तयो हौं ॥१८१॥

नाथ-गुनगाथ सुनि होत चित चाउ सो ।
राम रीझिबे को जानो भगति न भाउ सो ॥
करम सुभाव काल ठाकुर न ठाँउ सो ।
सुधन न, सुतन न, सुमन सुआउ सो ॥
जाँचों जल जाहि कहै अमिय पिआउ सो ।
कासों कहौं काहू सों न बढ़त हिआउ सो ॥
बाप बलि जाउँ आप करिए उपाउ सो ।
तेरेही निहारे परै हारेहू सुदाउ सो ॥
तेरेही सुझाए सूझै असुझ सुझाउ सो ।
तेरे ही बुझाए बूझै अबुझ बुझाउ सो ॥
नाम-अवलंब-अंबु मीन-दीन राउ सो ।
प्रभु सों बनाइ कहौं जीह जरि जाउ सो ॥

सब भाँति बिगरी है एक सुबनाउ सो।
तुलसी सुसाहिबहिं दियो है जनाउ सो ॥१८२॥

राग असावरी

राम प्रीति की रीति आपु नीके जनियत हैं।
बड़े की बड़ाई, छोटे की छोटाई दूरि करै
ऐसी बिरुदावलि बलि बेद मनियत हैं॥
गीध को कियो सराध, भीलनी के खाये फल
सोऊ साधु-सभा भली भाँति भनियत है।
रावरे आदरे लोक बेद हूँ आदरियत
जोग ज्ञान हू तें गरुआई गनियत है॥
प्रभु की कृपा कृपालु कठिन कलिहूँ काल
महिमा समुझि उर माहिं अनियत हैं।
तुलसी पराये बस भये रस अनरस,
दीनबंधु-द्वारे हरि हठ ठनियत है॥१८३॥

रामनाम के जपे पै जाइ जिय की जरनि।
कलिकाल अपर उपाय तें अपाय भए
जैसे तम नासिबे को चित्र के तरनि॥
करम-कलाप, परिताप, पाप साने सब
ज्यों सुफूल फूले रूख[1] फोकट फरनि।
दंभ, लोभ, लालच उपासना बिनासि नीके
सुगति साधन भई उदर भरनि॥

---

1 तरु—आधुनिक।

जोग न समाधि निरुपाधि न बिराग ज्ञान
बचन बिसेष बेष, कहूँ न करनि ।
कपट कुपथ कोटि, कहनि रहनि खोटि
सकल सराहैं निज निज आचरनि ॥
मरत महेस उपदेस हैं कहा करत
सुरसरि-तीर कासी धरम-धरनि ।
रामनाम को प्रताप हर कहैं, जपैं आपु,
जुग जुग जानै जग बेदहूँ बरनि ॥
मति रामनाम ही सों, रति रामनाम ही सों,
गति रामनाम ही की बिपति-हरनि ।
रामनाम सों प्रतीति प्रीति राखे कबहुँक
तुलसी ढरैंगे राम आपनी ढरनि ॥१८४॥

लाज न लागत दास कहावत ।
सो आचरन बिसारि सोच तजि जो हरि तुम्ह कहँ भावत ॥
सकल संग तजि भजत जाहि मुनि जप तप जोग बनावत ॥
मो सम मंद महा खल पाँवर कौन जतन तेहि पावत ?
हरि निर्मल, मल-ग्रसित हृदय, असमंजस मोहि जनावत ।
जेहि सर काक कंक बक सूकर क्यों मराल तहँ आवत ॥
जाकी सरन जाइ कोबिद दारुन त्रयताप बुझावत ।
तहूँ गयें मद मोह लोभ अति सरगहुँ मिटत न सावत ॥
भव-सरिता कहँ नाव संत यह कहि औरनि समुझावत ।
हौं तिन्ह सों हरि परम बैर करि तुम सों भलो मनावत ॥

नाहिंन और ठौर मो कहुँ तातें हठि नातो लावत।
राखु सरन उदार-चूड़ामनि तुलसिदास गुन गावत ॥१८५॥

कौन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय मानि जानि डरिये ॥
जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन सो हठि परिहरिये।
जातें बिपति-जाल निसि दिन दुख तेहि पथ अनुसरिये ॥
जानत हूँ मन बचन करम पर - हित कीन्हें तरिये।
सोइ बिपरीति देखि परसुख बिनु कारन ही जरिये ॥
स्रुति पुरान सबको मत यह सतसंग सुदृढ़ धरिये।
निज अभिमान मोह ईर्षा बस तिन्हहिं न आदरिये ॥
संतत सोइ प्रिय मोहिं सदा जातें भव-निधि परिये।
कहौं अबं नाथ ! कौन बल तें संसार-सोक हरिये ॥
जब कब निज करुना सुभाव तें द्रवहु तो निस्तरिये।
तुलसिदास बिस्वास आन नहिं, कत पचि पचि मरिये ।१८६।

ताहि तें आयो सरन सबेरे।
ज्ञान-बिराग-भगति साधन कछु सपनेहु नाथ न मेरे ॥
लोभ, मोह, मद, काम, क्रोध रिपु फिरत रैनि दिन घेरे।
तिन्हहिं मिले मन भयो कुपथ-रत फिरै तिहारेहि फेरे ॥
दोष-निलय यह बिषय सोकप्रद कहत संत स्रुति टेरे।
जानत हूँ अनुराग तहाँ अति सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे ॥
बिष पियूष सम करहु, अगिनि हिम, तारि सकहु बिनु बेरे।
तुम्ह सम ईस कृपालु परम हित पुनि न पाइहौं हेरे ॥

यह जिय जानि रहौं सब तजि रघुबीर भरोसे तेरे ।
तुलसिदास यह बिपति- बागुरा तुम्ह सों बनिहि निबेरे ॥१८७॥

मैं तोहिं अब जान्यो, संसार !
बाँधि न सकहि मोहिं हरि के बल प्रगट कपट-आगार ॥
देखत ही कमनीय, कछू नाहिंन पुनि किए बिचार ।
ज्यों कदलीतरु मध्य निहारत कबहुँ न निकसै सार ॥
तेरे लिये जनम अनेक मैं फिरत न पायों पार ।
महाघोर-मृगजल-सरिता महुँ बोरयो हौं बारहिं बार ॥
सुनु खल छल बल कोटि किए बस होहिं न भगत उदार ।
सहित सहाय तहाँ बसि अब जेहि हृदय न नंदकुमार ॥
तासों करहु चातुरी जो नहिं जानै मरमु तुम्हार ।
सो परि डरै मरै रजु अहि तें बूझै नहिं ब्यवहार ॥
निज हित सुनु सठ ! हठ न करहि जो चहहि कुसल परिवार ।
तुलसिदास प्रभु के दासन्ह तजि भजहि जहाँ मद मार ॥१८८॥

राग गौरी

राम कहत चलु, राम कहत चलु, राम कहत चलु, भाई रे ।
नाहित भव बेगारि महँ परिहै छूटत अति कठिनाई रे ॥
बाँस पुरान साज सब अटखट सरल तिकोन खटोला रे ।
हमहिं दिहल करि कुटिल करमचँद मंद मोल बिनु डोला रे ॥
बिषम कहार मार-मदमाते, चलहिं न पाउँ बटोरें रे ।
मंद बिलंद अभेरा दलकन पाइय दुख झकझोरें रे ।
काँट कुराय लपेटन लोटनु ठाँवहिं ठाँव बझाऊ रे ।

जस जस चलिय दूरि तस तस निज बास न भेंट लगाऊ रे।
मारग अगम, संग नहिं संबल, नाउँ गाउँ कर भूला रे।
तुलसिदास भवत्रास हरहु अब, होहु राम अनुकूला रे। १८९

सहज सनेही राम सों तैं कियो न सहज सनेहु।
तातें भव-भाजन भयो, सुनु अजहुँ सिखावनु एहु॥
ज्यों मुख मुकुर बिलोकिए अरु चित न रहै अनुहारि।
त्यों सेवतहुँ निरापने मातु पिता सुत नारि॥
दै दै सुमन तिल बासि कै अरु खरि परिहरि रस लेत।
स्वारथ-हित भूतल भरे, मन मेचक, तनु सेत॥
करि बीत्यो, अब करतु है, करिबे हित मीत अपार।
कबहुँ न कोउ रघुबीर सो नेह निबाहनहार॥
जासों सब नातो फुरै तासों न करी पहिचानि।
तातें कछु समभयो नहीं कहा लाभ कहा हानि॥
साँचो जान्यो झूठ को, झूठे कहँ साँचो जानि।
को न गयो, को न जात है, को न जैहै करि हित हानि॥
बेद कह्यो, बुध कहत हैं अरु हौंहुँ कहत हौं टेरि।
तुलसी प्रभु साँचो हितू, तू हिय आँखिन्ह हेरि॥१९०

एक सनेही साँचिलो केवल कोसलपालु।
पेम कनौड़ो राम सो नहिं दूसरो दयालु॥
तन साथी सब स्वारथी, सुर ब्यवहार सुजान।
आरत अधम अनाथ हित को रघुबीर समान॥
नाद निठुर, समचर सिखी, सलिलु सनेह न सूरु।

ससि सरोग, दिनकरु बड़े, पयदु प्रेमपथ क्रूरु ॥
जाको मन जासों बँध्यो ताको सुखदायकु सोइ ।
सरल सील साहिब सदा सीतापति सरिस न कोइ ॥
सुनि सेवा सही को करै, परिहरै को दूषन देखि ।
केहि दिवान दिन दीन को आदरु अनुराग बिसेखि ॥
खग सबरी पितुमातु ज्यों माने, कपि को किए मीत ।
केवटु भेंट्यो भरत ज्यों ऐसो को कहो पतित-पुनीत ॥
देइ अभागहिं भाग को, को राखै सरन सभीत ।
बेदबिदित बिरुदावली, कबि कोबिद गावत गीत ॥
कैसेउ पाँवर पातकी जेहि लई नाम की ओट ।
गाँठी बाँध्यो राम सो परिख्यो न फेरि खर खोट ॥
मन-मलीन, कलि किलबिषी होत सुनत जासु कृत काज ।
सो तुलसी कियो आपनो रघुबीर गरीबनेवाज ॥१९१॥

जो पै जानकीनाथ सों नातो नेहु न नीच ।
स्वारथ परमारथ कहा ? कलि कुटिल बिगोयो बीच ॥
धरम बरन आस्रमनि के पैयत पोथिही पुरान ।
करतब बिनु बेष देखिए ज्यों सरीर बिनु प्रान ॥
बेद-बिदित साधन सबै सुनियत दायक फलचारि ।
राम-प्रेम बिनु जानिये जैसे सर सरिता बिनु बारि ॥
नाना पथ निरबान के, नाना बिधान बहु भाँति ।
तुलसी तू मेरे कहे जपु रामनाम दिन राति ॥१९२॥

अजहूँ अपने राम के करतब समुझत हित होइ ।

कहँ तू, कहँ कोसलधनी, तोको कहा कहत सब कोइ ॥
रीझि निवाज्यो कबहिं तू, कब खीझि दई तोहिं गारि।
दरपन बदन निहारि कै सुबिचार मान हिय हारि ॥
बिगरी जनम अनेक की सुधरत पल लगै न आधु।
'पाहि कृपानिधि!' प्रेम सों कहे को न राम कियो साधु ॥
बालमीकि-केवट-कथा, कपि-भील-भालु-सनमान।
सुनि सनमुख जो न राम सों तेहि को उपदेसै ज्ञान ॥
का सेवा सुग्रीव की, कहा प्रीति-रीति-निरबाहु?
जासु बंधु बध्यो ब्याध ज्यों सो सुनत सुहात न काहु ॥
भजन बिभीषन को कहा, फल कहा दियो रघुराज!
राम ग़रीबनिवाज के बड़ी बाँह-बोल की लाज ॥
जपहि नाम रघुनाथ को चरचा दूसरी न चालु।
सुमुख सुखद साहिब सुभी[2] समरथ कृपालु नतपालु ॥
सजल नयन, गदगद गिरा, गहबर मन पुलक सरीर।
गावत गुनगन राम के केहि की न मिटी भवभीर?
प्रभु कृतज्ञ सर्वज्ञ हैं, परिहरु पाछिली गलानि।
तुलसी तोसों राम सों कछु नई न जान पहिचानि ॥१९३॥

जौं अनुराग न राम सनेही सों। तौ लह्यो लाहु कहा नर देही सों ॥
जो तनु धरि परिहरि सब सुख भए सुमति राम अनुरागी।
सो तनु पाइ अघाइ किये अघ अवगुन अधम अभागी ॥
ज्ञान बिराग जोग जप तप मख जग मुद-मग नहिं थोरे।

उपदेसहि—५१, ह०, ज०, १५। २ सुमिह—बेनीं। सुधो—५१।

राम-प्रेम बिनु नेम जाय जैसे मृग-जल-जलधि हिलोरे ॥
लोक बिलोकि, पुरान बेद सुनि, समुझि बूझि गुर ज्ञानी ।
प्रीति प्रतीति रामपद-पंकज सकल सुमंगल-खानी ॥
अजहुँ जानि जिय मानि हारि हिय होइ पलक महँ नीको ।
सुमिरु सनेह सहित सीतापति मानु मतो तुलसी को ॥१६४॥

बलि जाउँ हौं राम गुसाईं । कीजै कृपा आपनी नाईं ॥
परमारथ सुरपुर-साधन सब स्वारथ सुखद भलाई ।
कलि सकोप लोपी सुचाल, निज कठिन कुचाल चलाई ॥
जहँ जहँ चित चितवत हित तहँ नित नव बिषाद अधिकाई ।
रुचि-भावती भभरि भागहि, समुहाइ अमित अनभाई ॥
आधि-मगन मन, ब्याधि - बिकल तनु, बचन मलीन झुठाई ।
एतेहुँ पर तुम्ह सों तुलसी की सकल सनेह सगाई ॥१६५॥

काहे को फिरत मन करत बहु जतन,
मिटै न दुख बिमुख रघुकुल - बीर ।
कीजै जो कोटि उपाय त्रिबिध ताप न जाइ,
कह्यो जो भुज उठाइ मुनिबर - कीर ॥
सहज टेव बिसारि तुहीं धौं देखु बिचारि,
मिलै न मथत बारि घृत बिनु छीर ।
समुझि तजहि भ्रम भजहि पद जुगम,
सेवत सुगम गुन गहन गँभीर ॥
आगम निगम ग्रंथ रिषि।मुनि सुर संत,
सबही को एक मत सुनु, मतिधीर ।

तुलसीदास मरै प्यास बिनु प्रभु पसु,
जद्यपि है निकट सुरसरि-तीर ॥१९६॥
नाहिंन चरन रति ताहि तें सहौं बिपति,
कहत सकल स्रुति मुनि मतिधीर।
बसै जो ससि-उछंग सुधा-स्वादित कुरंग,
ताहि क्यों भ्रम निरखि रबिकर-नीर ॥
सुनै नाना पुरान मिटत नहिं अज्ञान,
पढ़ै न समुझै जिमि खग कीर।
बझत बिनहिं पास सेमर - सुमन - आस,
करत चरत तेऊ फल बिनु हीर ॥
कछु न साधन सिधि, जानौं न निगम, बिधि,
नहिं जप तप बस मन, न समीर।
तुलसीदास भरोस परम करुना-कोस
प्रभु हरिहैं बिषम भवभीर ॥१९७॥

केदार

मन पछितैहै औसर बीते।
दुरलभ देह पाइ हरिपद भजु करम बचन अरु ही ते ॥
सहसबाहु दसबदन आदि नृप बचे न काल बली ते।
हम हम करि धन धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते ॥
सुत बनितादि जानि स्वारथ-रत न करु नेह सबही ते।
अंतहुँ तोहिं तजेंगे, पाँवर! तू न तजै अबही ते ॥
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़ त्यागु दुरासा जी ते।

बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ बिषय-भोग बहु घी ते १६८

काहे को फिरत मूढ़ मन धायो ।
तजि हरिचरन-सरोज सुधारस रबिकर-जल लय लायो ॥
त्रिजग, देव, नर, असुर, अपर जग जोनि सकल भ्रमि आयो ।
गृह, बनिता, सुत, बंधु भये बहु मातु पिता जिन्ह जायो ॥
जातें निरय-निकाय निरंतर सोइ इन्ह तोहिं सिखायो ।
तव हित होइ कटहिं भवबंधन, सो मगु तो न बतायो ॥
अजहुँ बिषय कहुँ जतन करत जद्यपि बहु बिधि डहँकायो ।
पावक-काम भोग-घृत तें सठ कैसें परत बुझायो ।
बिषयहीन दुख, मिलें बिपति अति, सुख सपनेहुँ नहिं पायो ॥
उभय प्रकार प्रेत-पावक ज्यों धन दुखप्रद स्रुति गायो ।
छिनु छिनु छीन होत जीवन, दुरलभ तनु बृथा गँवायो ।
तुलसिदास हरि भजहि आस तजि, काल-उरग जग खायो १६६

ताँबे सों पीठि[1] मनहुँ तनु पायो ।
नीचु ! मीचु जानत न सीस पर, ईस निपट बिसरायो ॥
अवनि,रवनि,धन,धाम,सुहृद, सुत को न इन्हहिं अपनायो ।
काके भए गए सँग काके सब सनेह छल-छायो ॥
जिन्ह भूपन्हि जग जीति, बाँधि जम अपनी बाँह बसायो ।
तेऊ काल कलेऊ कीन्हें, तू गिनती कब आयो ?
देखु बिचारि सारु का साँचो, कहा निगम निजु गायो ।
भजहि न अजहुँ समुझि तुलसी तेहि जेहि महेस मनु लायो २००

---

१ पीठि—१६६६ ।

लाभु कहा मानुष तनु पाएँ।
काय, बचन, मन सपनेहु कबहुँक घटत न काज पराएँ॥
जो सुख सुरपुर नरक गेह बन आवत बिनहिं बुलाएँ।
तेहि सुख कहँ बहु जतन करत मन, समुझत नहिं समुझाएँ॥
परदारा, परद्रोह, मोहबस कियो मूढ़ मन भाएँ।
गरभबास दुखरासि जातना तीब्र बिपति बिसराएँ॥
भय निद्रा मैथुन अहार सबके समान जग जाएँ।
सुर दुरलभ तनु धरि न भजे हरि, मद अभिमान गवाएँ॥
गई न निज-पर-बुद्धि, सुद्ध होइ रहे न राम-लय लाएँ।
तुलसिदास बीतें यह अवसर का पुनि के पछिताएँ? २०१

काजु कहा नरतनु धरि सार्‍यो?
पर-उपकार सार श्रुति को सो तो धोखेहुँ मैं न बिचार्‍यो॥
द्वैतमूल, भय सूल, सोक फल, भवतरु टरइ न टार्‍यो।
राम-भजन तीछन कुठार लेइ सो नहिं काटि निवार्‍यो॥
संसय-सिंधु नाम-बोहित भजि निज आतमा न तार्‍यो।
जनम अनेक बिवेकहीन बहु जोनि भ्रमत नहिं हार्‍यो॥
देखि आन की सहज संपदा द्वेष-अनल मनु जार्‍यो।
सम दम दया दीन पालन सीतल हियं हरि न सँभार्‍यो॥
प्रभु गुरु पिता सखा रघुपति मैं मन क्रम बचन बिसार्‍यो।
तुलसिदास एहि त्रास सरन राखिहिं जेहि गीध उधार्‍यो॥२०२

श्रीहरि-गुरु-पद-कमल भजहु मन तजि अभिमान।
जेहि सेवत पाइय हरि सुख-निधान भगवान॥

परिवा प्रथम प्रेम बिनु राम-मिलन अति दूरि ।
जद्यपि निकट हृदय निज रहे सकल भरिपूरि ॥
दुइज द्वैत-मत छाँड़ि चरहिं महि-मंडल धीर ।
बिगत मोह माया मद हृदय बसत रघुबीर ॥
तीज त्रिगुन-पर परम पुरुष श्रीरमन मुकुंद ।
गुन सुभाव त्यागे बिनु दुरलभ परमानंद ॥
चौथि चारि परिहरै बुद्धि मन, चित्त अहंकार ।
बिमल बिचार परमपद निज सुख सहज उदार ॥
पाँचइँ पाँच परस, रस, सब्द, गंध अरु रूप ।
इन्ह कर कहा न कीजिए बहुरि परब भवकूप ॥
छठि षड्वर्ग करिय जय जनकसुता पति लागि ।
रघुपति-कृपा-बारि बिनु नहिं बुताइ लोभागि ॥
सातैं सप्तधातु-निर्मित तनु करिय बिचार ।
तेहि तनु कर अब एक फल, कीजिय पर-उपकार ॥
आठइँ आठ-प्रकृति-पर निर्बिकार श्रीराम ।
केहि प्रकार पाइय हरि, हृदय बसहिं बहु काम ॥
नवमी नवद्वारपुर बसि जेहि न आपु भल कीन्ह ।
ते नर जोनि अनेक भ्रमत दारुन दुख लीन्ह ॥
दसहि दसहु कर संजम जो न करिय जिय जानि ।
साधन-बृथा होइँ सब मिलहिं न सारँगपानि ॥
एकादसी एक मन बस कैसहु करि जाइ ।
सोइ ब्रत कर फल पावै आवागमन नसाइ ॥

द्वादसि दान देहु अस अभय होइ त्रैलोक ।
परहित-निरत सो पारन बहुरि न ब्यापै सोक ॥
तेरसि तीन अवस्था तजहु भजहु भगवंत ।
मन-क्रम-बचन-अगोचर, ब्यापक, ब्याप्य, अनंत ॥
चौदसि चौदह भुवन अचरचर रूप गुपाल ।
भेद गये बिनु रघुपति अति न हरहिं जगजाल ॥
पूनो प्रेमभगति-रस हरिरस जानहिं दास ।
सम सीतल गत-मान ज्ञानरत बिषय उदास ॥
त्रिबिध सूल होलिय जारिय, खेलिय अस फाग ।
जौं जिय चहसि परम सुख तौ इह मारग लाग ॥
श्रुति-पुरान-बुध-संमत चाँचरि चरित मुरारि ;
करि बिचारि भव तरिय, परिय न कबहुँ जमधारि ॥
संसय-समन दमन-दुख सुखनिधान हरि एक ।
साधुकृपा बिनु मिलहिं नहिं करिय उपाय अनेक ॥
भवसागर कहँ नाव सुद्ध संतन्ह के चरन ।
तुलसिदास प्रयास बिनु मिलहिं राम दुखहरन ॥२०३॥

राग कान्हरा

जौ मन लागै रामचरन अस ।
देह, गेह, सुत, बित, कलत्र महँ मगन होत बिनु जतन किये जस ॥
द्वंद-रहित, गत-मान, ज्ञानरत, बिषय-बिरत खटाइ नाना कस ।
सुखनिधान सुजान कोसलपति ह्वै प्रसन्न कहु क्यों न होहिं बस ?
सर्ब भूतहित निर्ब्यलीक चित भगति प्रेम दृढ़ नेम एक-रस ।

तुलसिदास यह होइ तबहिं जब द्रवै ईस जेहि हत्यो सीसदस ॥२०४॥

जौ मन भज्यो चहै हरि सुरतरु ।
तौ तजि बिषय बिकार सार भजु, अजहूँ ते जो मैं कहौं सोइ करु ॥
सम, संतोष, बिचार बिमल अति, सतसंगति, ये चारि दृढ़ करि धरु ।
काम क्रोध अरु लोभ मोह मद राग द्वेष निसेष करि परिहरु ॥
स्रवन कथा, मुख नाम, हृदय हरि, सिर प्रनाम, सेवा कर अनुसरु ।
नयनन निरखि कृपा-समुद्र हरि अगजग-रूप भूप सीतावरु ॥
इहै भगति बैराग्य ज्ञान यह हरि-तोषन यह सुभ ब्रत आचरु ।
तुलसिदास सिवमत मारग यह चलत सदा सपनेहुँ नाहिंन डरु २०५

नाहिंन और कोउ सरन लायक दूजो श्रीरघुपति सम बिपति-निवारन ।
काको सहज सुभाउ सेवक बस, काहि प्रनत पर प्रीति अकारन ?
जन-गुन अलप गनत सुमेरु करि, अवगुन कोटि बिलोकि बिसारन ।
परम कृपालु, भगत-चिंतामनि बिरद पुनीत पतितजन-तारन ॥
सुमिरत सुलभ, दास दुख सुनि हरि चलत तुरत पटपीत सँभार न ।
साखि पुरान निगम आगम सब, जानत द्रुपदसुता अरु बारन ॥
जाको जस गावत कबि कोबिद, जिन्हके लोभ, मोह, मद मार न ।
तुलसिदास तजि आस सकल भजु कोसलपति मुनिबधू-उधारन २०६

भजिबे लायक सुखदायक रघुनायक सरिस सरनप्रद दूजो नाहिंन ।
आनंदभवन दुखदवन सोकसमन रमारमन गुन गनत सिराहिं न ॥
आरत अधम कुजाति कुटिल खल पतित सभीत कहूँ जो समाहिं न ।
सुमिरत नाम बिबस हू बारक पावत सो पद जहाँ सुर जाहिं न ॥
जाके पद-कमल लुब्ध मुनि-मधुकर बिरत जे परम सुगतिहु लुभाहिं न

तुलसिदास सठ तेहि न भजसि कस कारुनीक जो अनाथहि दाहिन

राग कल्यान

नाथ सों कौन बिनती कहि सुनावौं ?
बिबिध अनगनित अवलोकि अघ आपने
सरन सनमुख होत सकुचि सिर नावौं ॥
बिरचि हरि-भक्त को बेष बर बाटिका
कपट-छल बिपुल पल्लवन्हि रचि छावौं ।
नाम-लग[1] लाइ, लासा-ललित-बचन कहि
ब्याध ज्यों बिषय-बिहँगनि बझावौं ॥
कुटिल सत कोटि मेरे रोम पर वारिये,
साधुगनती मैं पहिले ही गनावौं ।
परम बर्बर खर्बगर्ब-पर्बत चढ्यो
अग्य सर्बग्य जनमनि जनावौं ॥
साँच कैधौं झूठ मोको कहत कोउ
कोउ राम रावरो हौंहुँ तुम्हरो जनु कहावौं ।
बिरुद की लाज करि दासतुलसिहि, देव !
लेहु अपनाइ अब देहु जनि बावौं ॥२०८॥

नाहिनै नाथ अवलंब मोहिं आन की ।
करम मन बचन पन सत्य, करुनानिधे !
एक गति राम भवदीय पदत्रान की ॥
कोह मद मोह ममतायतन जानि मन,

१ लगि—भा०, बेनी ।

बात नहिं जाति कहि ज्ञान बिज्ञान की ।
काम-संकल्प उर निरखि बहु बासनहिं
आस नहिं एक हू आँक निरबान की ॥
बेद-बोधित करम धरम बिनु, अगम अति
जदपि, जिय लालसा अमरपुर जान की ।
सिद्ध सुर मनुज दनुजादि सेवत कठिन
द्रवैं हठजोग दिये भोग बलि प्रान की ॥
भगति दुर्लभ परम, संभु सुक मुनि मधुप,
प्यास पदकंज-मकरंद-मधु पान की ।
पतित - पावन सुनत नाम बिश्रामकृत
भ्रमत पुनि समुझि चित-ग्रंथि अभिमान की ॥
नरक अधिकार मम घोर संसार-तम-कूपहिं;
कहि भूप ! मोहिं सक्ति आपान की ।
दासतुलसी सोऊ त्रास नहिं गनत मन
सुमिरि गुह गीध गति ग्याति हनुमान की ॥२०६॥
और कहँ ठौर, रघुबंसमनि मेरें ?
पतित-पावन प्रनत-पाल असरन - सरन
बाँकुरे बिरुद बिरुदैत केहि केरें ॥
समुझि जियं दोष अति रोष करि राम के
करत नहिं कान बिनती बदनु फेरें ।
तदपि है निडरु हौं कहौं, करुनासिंधु !
क्योंऽब रहि जात सुनि बात बिनु हेरें ॥

मुख्य रुचि हेतु बसिबे की पुर रावरे,
राम तेहि रुचिहि कामादि गन घेरें।
अगमु अपवर्ग, अरु स्वर्ग सुकृतैक फलु,
नाम-बल क्यों बसौं जमनगर नेरें ?
कतहुँ नहिं ठाउँ कहँ जाउँ, कोसलनाथ !
दीन बितहीन हौं बिकल बिनु डेरें।
दास तुलसिहि बास देहु अब करि कृपा,
बसत गज गीध ब्याधादि जेहि खेरें ॥२१०॥
कबहुँ रघुबंस-मनि सो कृपा करहुगे !
जेहि कृपा ब्याध गज बिप्र खल तरु तरे
तिन्हहिं सम मानि मोहिं नाथ उद्धरहुगे ॥
जोनि बहु जनमि किए करम खल बिबिध बिधि,
अधम आचरन कछु हृदय नहिं धरहुगे।
दीनहित अजित सर्बज्ञ समरथ प्रनतपाल,
चित-मृदुल निज गुननि अनुसरहुगे ॥
मोह मद मान कामादि खल-मंडली,
सकुल निरमूल करि दुसह दुख हरहुगे।
जोग जप ज्ञान बिज्ञान तें अधिक अति,
अमल दृढ़ भगति दै परम सुख भरहुगे ॥
मंदजन - मौलि - मनि, सकल - साधनहीन,
कुटिल-मन, मलिन-जिय जानि जो डरहुगे।
दासतुलसी बेद - बिदित बिरुदावली

बिमल जस नाथ केहि भाँति बिस्तरहुगे ॥२११॥

राग केदारा

रघुपति बिपति-दवन ।
परम कृपाल प्रनत-प्रतिपालक पतित-पवन ॥
क्रूर कुटिल कुलहीन दीन अति मलिन जवन ।
सुमिरत नाम राम पठए सब आपने भवन ॥
गज पिंगला अजामिल से खल गनै धौं कवन ?
तुलसिदास प्रभु केहि न दीन्हि गति जानकी-रवन ॥२१२॥

हरि सम आपदा-हरन ।
नहिं कोउ सहज कृपाल दुसह दुख-सागर तरन ।
गज निज बल अवलोकि कमल गहि गयो जो सरन ।
दीन बचन सुनि चले गरुड़ तजि सुनाभ-धरन ॥
द्रुपदसुता को लग्यो दुसासन नगन करन ।
'हा हरि पाहि !' कहत पूरे पट बिबिध बरन ॥
इहै जानि सुर नर मुनि कोबिद सेवत चरन ।
तुलसिदास प्रभु को न अभय कियो नृग-उद्धरन ॥२१३

राग कल्यान

ऐसी कौन प्रभु की रीति ।
बिरुद हेतु पुनीत परिहरि पाँवरनि पर प्रीति ॥
गई मारन पूतना कुच कालकूट लगाइ ।
मातु की गति दई ताहि कृपालु जादवराइ ॥
काम-मोहित गोपिकन्हि पर कृपा अतुलित कीन्ह ।

जगतपिता बिरंचि जिन्हके चरन की रज लीन्ह ॥
नेम सों सिसुपाल दिन प्रति देत गनि गनि गारि ।
कियो लीन सु आपु में हरि राजसभा मँझारि ॥
ब्याध चित दै चरन मार्‍यो मूढ़मति मृग जानि ।
सो सदेह सुलोक पठयो प्रगट करि निज बानि ॥
कौन तिन्हकी कहै जिन्हके सुकृत अरु अघ दोउ ।
प्रगट पातक-रूप तुलसी सरन राख्यो सोउ ॥२१४॥

श्री रघुबीर की यह बानि ।
नीचहूँ सो करत नेह सुप्रीति मन अनुमानि ॥
परम अधम निषाद पाँवर, कौन ताकी कानि ?
लियो सो उर लाइ सुत ज्यों प्रेम की पहिचानि ॥
गीध कौन दयालु जो बिधि रच्यो हिंसा सानि ?
जनक ज्यों रघुनाथ ता कहँ दियो जल निज पानि ॥
प्रकृति-मलिन कुजाति सबरी सकल अवगुन-खानि ।
खात ताके दिये फल अति रुचि बखानि बखानि ॥
रजनिचर अरु रिपु बिभीषन सरन आयो जानि ।
भरत ज्यों उठि ताहि भेंटत देह-दसा भुलानि ॥
कौन सुभग सुसील बानर जिन्हहिं सुमिरत हानि ।
किए ते सब सखा, पूजे भवन अपने आनि ॥
राम सहज कृपालु कोमल दीनहित दिन दानि ।
भजहि ऐसे प्रभुहि तुलसी कपट कुटिल न ठानि ॥२१५॥

हरि तजि और भजिए काहि ?

नाहिनै कोउ राम सो ममता प्रनत पर जाहि ॥
कनककसिपु बिरंचि को जनु करम मन अरु बात।
सुतहिं दुखवत बिधि न बरज्यो काल कें घर जात ॥
संभु-सेवक जान जग, बहु बार दिए दस सीस।
करत राम-बिरोध सोउ सपनेहु न हटक्यो ईस ॥
और देवन्ह को कहौं कहा स्वारथहि के मीत।
कबहुँ काहु न राखि लियो कोउ सरन गयें सभीत ॥
को न सेवत देत संपति ? लोक हूँ यह रीति।
दास तुलसी दीन पर एक राम ही कें प्रीति ॥२१६॥

जौ पै दूसरो कोउ होइ।
तौ हौं बारहिं बार प्रभु कत दुख सुनावौं रोइ ?
काहि ममता दीन पर, काको पतितपावन नामु ?
पापमूल अजामिलहि केहि दियो अपनो धामु ?
रहे संभु बिरंचि सुरपति लोकपाल अनेक।
सोक-सरि बूड़त करीसहिं दई काहु न टेक ॥
बिपुल भूपति-सदसि महुँ नर-नारि कह्यो 'प्रभु पाहि !'
सकल समरथ रहे काहु न बसन दीन्हों ताहि ॥
एक मुख क्यों कहौं करुना-सिंधु के गुननाथ ?
भगतहित धरि देह काह न कियो कोसलनाथ ॥
आपुसे कहुँ सौंपिए मोहिं जौं पै अतिहि घिनात।
दास तुलसी और बिधि क्यों चरन परहरि जात ? ११७

कबहुँ देखाइहौ हरि चरन ?

समन सकल कलेस कलिमल, सकल-मंगल करन ॥
सरदभव सुंदर तरुनतर अरुन बारिज-बरन।
लच्छि लालित ललित करतल छबि अनूपम धरन ॥
गंग-जनक, अनंग-अरि-प्रिय, कपट बटु बलि-छरन ।
बिप्रतिय, नृग, बधिक के दुख दोष दारुन दरन ॥
सिद्ध-सुर-मुनि-बृंद-बंदित सुखद सब कहुँ सरन ।
सकृत उर आनत जिन्हहिं जन होत तारनतरन ॥
कृपासिंधु सुजान रघुबर प्रनत-आरति-हरन ।
दरस-आस-पियास तुलसीदास चाहत मरन ॥२१८॥

द्वार हौं भोर ही को आजु ।
रटत रिरिहा आरि और न कौर ही को काजु ॥
कलि कराल दुकाल दारुन सब कुभाँति कुसाजु ।
नीच जन, मन ऊँच, जैसी कोढ़ में की खाजु ॥
हहरि हिय मैं सदय बूझ्यो जाइ साधु-समाजु ।
मोहुँ से कहुँ कतहुँ कोउ तिन्ह कह्यो कोसलराजु ॥
दीनता दारिद दलै को कृपा-बारिधि बाजु ।
दानि दसरथराय के तुम बानइत सिरताजु ॥
जनम को भूखो भिखारी हौं गरीबनेवाजु ।
पेट भरि तुलसिहि जेंवाइय भगति-सुधा सुनाजु ॥२१९॥

करिय सँभार, कोसलराय !
और ठौर, न और गति, अवलंब नाम बिहाय ॥
बूझि अपनी आपनो हितु आपु बापु न माय ।

राम राउर नाम गुर सुर स्वामि सखा सहाय ॥
रामराज न चलहि मानस-मलिन के छल-छाय ।
कोपि तेहि कलिकाल कायर मुए घायल घाय ॥
लेत केहरि को बयरु ज्यों भेक हनि गोमाय ।
त्योंहि रामगुलाम जानि निकाम देत कुदाय ॥
अकनि याके कपट करतब अमित अनय अपाय ।
सुखी हरिपुर बसत होत परीछितहिं पछिताय ॥
कृपासिंधु बिलोकिये जन-मन की साँसति साय ।
सरन आयो, देव दीनदयालु ! देखन पाय ॥
निकट बोलि न बरजिये बलि जाउँ हनिय न हाय ।
देखिहैं हनुमान गोमुख-नाहरनि के न्याय ॥
अरुन मुख, भ्रू बिकट, पिंगल नयन रोष कषाय ।
बीर सुमिरि समीर को घटिहै चपल चित चाय ॥
बिनय सुनि बिहँसे अनुज सों बचन के कहि भाय ।
भली कही कह्यो लखन हूँ हँसि, बने सकल बनाय ॥
दई दीनहिं दादि सो सुनि सुजन-सदन बधाय ।
मिटे संकट सोच पोच प्रपंच पाप-निकाय ॥
पेखि प्रीति प्रतीति जन पर अगुन अनघ अमाय ।
दास तुलसी कहत मुनिगन, 'जयति जय उरगाय' ॥२२०॥
प्रभु कृपा को पंथ चितवत दीन हौं दिन राति ।
होइ धौं केहि काल दीनदयालु जानि न जाति ॥
सुगुन, ज्ञान, बिराग, भगति सुसाधननि की पाँति ।

भजे बिकल बिलोकि कलि अघ-अवगुननि की थाति ॥
अति अनीति कुरीति भइ भुइँ तरनि हूँ तें ताति ।
जाउँ कहँ बलि जाउँ ? कहूँ न ठाउँ मति अकुलाति ॥
आपु सहित न आपनो कोउ, बाप ! कठिन कुभाँति ।
स्यामघन सींचिये तुलसी सालि सफल सुखाति ॥२२१॥

बलि जाउँ, और कासों कहौं ?
सदगुन-सिंधु स्वामि सेवक-हितु कहुँ न कृपानिधि सों लहौं ॥
जहँ जहँ लोभ लोल लालचबस निजहित चित चाहनि चहौं ।
तहँ तहँ तरनि तकत उलूक ज्यों भटकि कुतरु-कोटर गहौं ॥
काल सुभाउ करम बिचित्र फलदायक सुनि सिर धुनि रहौं ।
मोकों तो सकल सदा एकहि रस दुसह दाह दारुन दहौं ॥
उचित अनाथ होइ दुखभाजन, भयो नाथ-किंकरु न हौं ।
अब रावरो कहाइ न बूझिये सरनपाल साँसति सहौं ॥
महाराज राजीव - बिलोचन मगन - पाप - संताप हौं ।
तुलसी-प्रभु जब तब जेहि तेहि बिधि राम निबाहे निरबहौं ।२२२।

आपनो कबहुँ करि जानिहौ ।
राम गरीब-निवाज राजमनि बिरुद-लाज उर आनिहौ ॥
सीलसिंधु सुंदर सब लायक समरथ सदगुन-खानि हौ ।
पाल्यो है, पालत पुनि पालहुगे प्रीति-रीति पहिचानिहौ ॥
बेद पुरान कहत, जग जानत, दीनदयालु दिन दानि हौ ।
कहि आवत, बलि जाउँ, मनहुँ मेरी बार बिसारे बानि हौ ॥
आरत दीन अनाथनि के हित मानत लौकिक कानि हौ ।

है परिनाम भलो तुलसी को सरनागत-भय भानिहौ ॥२२३॥

रघुबरहिं कबहुँ मन लागिहै ?

कुपथ, कुचाल, कुमति, कुमनोरथ, कुटिल कपटु कब त्यागिहै ॥
जानत गरल अमिय बिमोहबस, अमिय गनत करि आगि है ।
उलटी रीति प्रीति अपने की तजि प्रभुपद अनुरागिहै ॥
आखरु अरथु मंजु मृदु मोदक राम-पेमु-पाग पागि है ।
ऐसे गुन गाइ रिझाइ स्वामि सों पाइहै जो मुँह माँगिहै ॥
तू यहि बिधि सुख-सयन सोइहै जिय कि जरनि भूरि भागिहै ।
रामप्रसाद दास तुलसी उर रामभगति जोगु जागिहै ॥२२४॥

भरोसो और आइहै उर ताकें ।

कै कहुँ लहै जो रामहिं सो साहिब, कै अपनो बल है जाकें ।
कै कलिकालु करालु न सूझत मोह - मार - मद - छाकें ॥
कै सुनि स्वामि-सुभाउ न रह्यो चित जो हित सब अँग थाकें ।
हौं जानतु भली भाँति अपनपौ, प्रभु सो सुन्यो न साकें ॥
उपल, भील, खग, मृग, रजनीचर भले भए करतब काकें ?
मोको भयो रामनाम सुरतरु सो रामप्रसाद कृपाल कृपा कें ।
तुलसी सुखी निसोचु राज ज्यों बालक माय बबा कें ॥२२५॥

भरोसो जाहि दूसरो सो करो ।

मोको तो राम को नाम कलपतरु कलि कल्यान फरो ॥
करम, उपासन, ज्ञान बेदमत सो सब भाँति खरो ।
मोहिं तो सावन के अंधेहि ज्यों सूझत रंग हरो ॥
चाटत रहौं स्वान पातरि ज्यों कबहुँ न पेट भरो ।

सो हौं सुमिरत नाम सुधारस पेखत परसि धरो ॥
स्वारथ औ परमारथ हू को नहिं कुंजरो नरो।
सुनियत सेतु पयोधि पखाननि करि कपि-कटक तरो ॥
प्रीति प्रतीति जहाँ जाकी तहँ ताको काज सरो।
मेरे तो माय बाप दोउ आखर हौं सिसु-अरनि अरो ॥
संकर साखि जो राखि कहौं कछु तौ जरि जीह गरो।
अपनो भलो राम-नामहिं तें तुलसिहिं समुझि परो ॥२२६॥

नाम राम रावरोई हितु मेरें।
स्वारथ परमारथ साथिन्ह सों भुज उठाइ कहौं टेरें ॥
जननी जनक तज्यो जनमि,करम बिनु बिधिहुँ सृज्यो अवडेरें।
मोहूँ से कोउ कोउ कहत रामहि को सो प्रसंगु केहि केरें ?
फिर्‌यो ललात बिनु नाम उदर लगि दुखउ दुखित मोहि हेरें।
नाम-प्रसाद लहत रसाल-फल अब हौं बबुर बहेरें ॥
साधत साधु लोक परलोकहिं, सुनि गुनि जतन घनेरें।
तुलसी के अवलंब नाम ही को एक गाँठि कोटि फेरें ॥२२७॥

प्रिय न रामनाम तें जेहि रामो।
ताको भलो कठिन कलिकालहुँ आदि मध्य परिनामो ॥
सकुचत समुझि नाम-महिमा मद लोभ मोह कोह कामो।
रामनाम-जप-निरत सुजन पर करत छाँह घोर घामो ॥
नाम प्रभाउ सही जो कहै कोउ सिला सरोरुह जामो।
जो सुनि सुमिरि भाग-भाजन भइ सुकृतसील भील-भामो ॥
बालमीक अजामिल के कछु हुतो न सुभ साधन सामो।

उलटे पलटे नाम-महातम गुंजनि जितो ललामो ॥
राम ते अधिक नाम-करतब जेहि किए नगर-गत गामो ।
भयउ बजाइ दाहिने जो जपि तुलसिदास-से बामो ॥२२८॥

गरैगी जीह जो कहौं और को हौं ।
जानकि-जीवन ! जनम जनम जग ज्यायो तिहारेहि कौर को हौं ॥
तीनि लोक तिहुँ काल न देखत सुहृद रावरे जोर को हौं ।
तुम्हसों कपटु करि कलप कलप कृमि ह्वैहौं नरक घोर को हौं ॥
कहा भयो जो मन मिलि कलिकालहिं कियो भौंतुवा भौंर को हौं ।
तुलसिदास सीतल नित एहि बल बड़े ठेकाने ठौर को हौं २२९

अकारन को हितू और को है ?
बिरुद गरीब-निवाजु कौनु की भौंह जासु जन जोहै ?
छोटे बड़ो चहत सब स्वारथु जो बिरंचि बिरचो है ।
कोल कुटिल कपि भालु पालिबो कवनु कृपालहि सोहै ?
काको नामु अनख आलस कहें अघ अवगुनन्हि बिछोहै ?
को तुलसी से कुसेवक संग्रह्यो, सठ सब दिन साईं द्रोहै २३०

और मेरें को है काहि कहिहौं ?
रंकराज ज्यों मन को मनोरथु केहि सुनाइ सुखु लहिहौं ?
जम-जातना जोनि-संकट सब सहे हैं दुसह अरु सहिहौं ।
मोकों अगम, सुगम तुम्हको प्रभु ! तउ फल चारि न चहिहौं ॥
खेलिबे को खग मृग तरु किंकर ह्वै रावरो राम हौं रहिहौं ।
एहि नातें नरकहुँ सचु पैहौं, या बिनु परमपदहुँ दुख दहिहौं ॥
इतनी जिय लालसा दास के कहत पानही गहिहौं ।

दीजै बचन कि हृदय आनिए तुलसी को पन निरबहिहौं २३१

दीनबंधु दूसरो कहँ पावों ?
को तुम्ह बिनु पर-पीर पाइहै ? केहि दीनता सुनावों ? ॥
प्रभु अकृपाल, कृपाल अलायक जहँ तहँ चितहिं डोलावों ।
इहै समुझि सुनि रहौं मौन ही, कहि भ्रम कहा गवावों ? ॥
गोपद बूड़िबे जोग करम करौं बातनि जलधि थहावों ।
अति लालची काम-किंकरु मन, मुख रावरो कहावों ॥
तुलसी प्रभु जिय की जानत सब, अपनो कछुक जनावों ।
सोइ कीजै जेहि भाँति छाँड़ि छल द्वार परो गुन गावों २३२

मनोरथ मन को एकै भाँति ।
चाहत मुनि-मन-अगम सुकृत-फलु, मनसा अघ न अघाति ॥
करमभूमि कलि जनम कुसंगति मति बिमोह मद माति ।
करत कुजोग कोटि क्यों पैयत परमारथ-पद-साँति ॥
सेइ साधु गुरु, सुनि पुरान स्रुति बूझ्यो रागु बाजी ताँति ।
तुलसी प्रभु सुभाउ सुरतरु को सो ज्यों दरपन मुखकाँति ॥२३३

जनम गयो बादिहिं बर बीति ।
परमारथ पाले न पर्‌यो कछु, अनुदिन अधिक अनीति ॥
खेलत खात लरिकपन गो चलि, जौबन जुवतिन्ह लियो जीति ।
रोग-बियोग-सोक-स्रम-सकुल बड़ि बय बृथा अतीति ॥
राग-रोष-इरषा-बिमोह बस रुची न साधु-समीति ।
कहे न सुने गुनगन रघुबर के, भइ न रामपद-प्रीति ॥
हृदय दहत पछिताय-अनल अब सुनत दुसह भवभीति ।

तुलसी प्रभु तें होइ सोइ[1] कीजै समुझि बिरुद की रीति २३४

ऐसेहि जनम-समूह सिराने।
प्राननाथ रघुनाथ सो प्रभु तजि सेवत चरन बिराने॥
जे जड़ जीव कुटिल कायर खल केवल कलिमल साने।
सूखत बदन प्रसंसत तिन्ह कहुँ, हरि तें अधिक करि माने॥
सुख हित कोटि उपाय निरंतर करत न पाँय पिराने।
सदा मलीन पंथ के जल ज्यों कबहुँ न हृदय थिराने॥
यहु दीनता दूरि करिबे कों अमित जतन उर आने।
तुलसी चित चिंता न मिटै बिनु चिंतामनि पहिचाने॥२३५

जौ पै जिय जानकिनाथ न जाने।
तौ सब करम धरम स्रमदायक, ऐसेइ कहत सयाने॥
जे सुर, सिद्ध, मुनीस, जोगबिद बेद पुरान बखाने।
पूजा लेत देत पलटें सुख हानि-लाभु अनुमाने॥
काको नाम धोखेहूँ सुमिरतु पातक-पुंज सिराने।
बिप्र, बधिक, गज, गीध कोटि खल कौन के पेट समाने॥
मेरु से दोष दूरि करि जन के, रेनु से गुन उर आने।
तुलसिदास तेहि सकल आस तजि भजहि न अजहुँ अयाने २३६

काहे न रसना रामहिं गावहि ?
निसि दिन पर-अपवाद कथा[2] कत रटि रटि राग बढ़ावहि॥
नरमुख सुंदर मंदिर पावन बसि जनि ताहि लजावहि।
ससि समीप रहि त्यागि सुधा कत रबिकर-जल कहँ धावहि ?

---

१ सो कीबी—भा०, बेनी। २ बृथा—ह०, ५१, ७४, १५, ज।

काम - कथा कलि - कैरव - चंदिनि सुनत स्रवन दै भावहिं ।
तिन्हहिं हटकि कहि हरि-कल-कीरति करन-कलंकु नसावहि ॥
जातरूप मति जुगुति रुचिर मनि रचि रचि हार बनावहि ।
सरन - सुखद रबिकुल-सरोज-रबि राम नृपहि पहिरावहि ॥
बाद-बिबाद-स्वाद तजि भजि हरि सरल चरित चितु लावहि ।
तुलसिदास भव तरइ, तिहूँ पुर तू पुनीत जसु पावहि २३७

आपनो हित रावरे सों जो पै सूझै ।
तौ जनु तन पर अछत सीस सुधि क्यों कबंध ज्यों जूझै ॥
निज अवगुन, गुन राम रावरे लखि सुनि मति मनु रूझै ।
रहनि कहनि समुझनि तुलसी की को कृपाल बिनु बूझै ॥२३८

जाको हरि दृढ़ करि अंगु कस्यो ।
सोइ सुसील पुनीत बेदबिद बिद्या-गुनन्हि-भस्यो ॥
उतपति पंडुसुतन्हि की करनी सुनि सतपंथ डस्यो ।
ते त्रैलोक्य-पूज्य, पावन जस सुनि सुनि लोग तस्यो ॥
जो निज धरम बेद-बोधित सो करत न कछु बिसरयो ।
बिनु अवगुन कृकलास कूप-मज्जत कर गहि उधरयो ॥
ब्रह्म-बिसिख ब्रह्मांड-दहन-छम गर्भ न नृपति जरयो ।
अजर अजय कुलिसहुँ नाहिंन बध सो पुनि फेन मरयो ॥
बिप्र अजामिल अरु सुरपति तें कहा जो नहिं बिगरयो ?
उन्हको कियो सहाय बहुत, उर को संताप हरयो ॥
गनिका अरु कदरज तें जग महँ अघ न करत उबरयो ।
तिनको चरित पवित्र जानि हरि निज हृदि-भवन धरयो ॥

केहि आचरन भलो मानै प्रभु सो तो न जानि परयो ।
तुलसिदास रघुनाथ-कृपा को जोवत पंथ खरयो ॥२३९॥

सोइ सुकृती सुचि साँचो जाहि राम तुम्ह रीझे ।
गनिका, गीध, बधिक हरिपुर गये लै करसी प्रयाग कब सीझे ?
कबहुँ न डग्यो निगम-मगु तें पगु नृप जगु जान जिते दुख पाए ।
गज धौं कौन दिच्छित जाके सुमिरत लै सुनाभ बाहन तजि धाए ॥
सुर मुनि बिप्र बिहाय बड़े कुल गोकुल जनम गोपगृह लीन्हों ।
बायों दियो बिभव कुरुपति को, भोजन जाइ बिदुर घर कीन्हों ॥
मानत भलेहि भलो भगतिहि तें, कछुक रीति पारथहिं जनाई ।
तुलसी सहज सनेह राम बस और सबै जल की चिकनाई ।२४०।

तब तुम्ह मोहूँ से सठनि को हठि गति देते ।
कैसेहुँ नाम लेहि कोउ पाँवरु सुनि सादर आगें होइ लेते ॥
पाप-खानि जियं जानि अजामिल जमगन तमकि तये ताको भेते ।
लियो छुड़ाइ, चले कर मींजत, पीसत दाँत गए रिसरेते ॥
गौतम-तिय, गज, गीध, बिटप, कपि हैं नाथहि नीके मालुम तेते[2] ।
जिन्ह जिन्ह[3] काज साधु-समाज तजि कृपासिंधु उठि तब तब गेते ॥
अजहुँ अधिक आदरु यहि द्वारे, पतित पुनीत होत नहिं केते ?
मेरे पासंगहु न पूजिहैं, ह्वै गए, हैं, होने खल जेते ॥
हौं अब लौं करतूति तिहारिय चितवत हुतो न रावरे चेते ।
अब तुलसी पूतरो बाँधिहै सहि न जात मोपै परिहँसै[4] एते ।२४१।

तुम सम दीनबंधु न दीन कोउ मोसम सुनहु नृपति रघुराई !

---

१ भगतनि, २ जेते, ३ तिन्ह तिन्ह, ४ मों सों परिहास—भा०, बेनी ।

मोसम कुटिल-मौलिमनि नहिं जग, तुमसम हरि न हरन ! कुटिलाई ॥
हौं मन बचन कर्म पातक-रत, तुम कृपाल पतितन्हि-गतिदाई ।
हौं अनाथ प्रभु तुम अनाथहित, चित यह सुरति कबहुँ नहिं जाई ॥
हौं आरत, आरति-नासक तुम, कीरति निगम पुराननि गाई ।
हौं सभीत, तुम हरन सकल भय, कारन कौन कृपा बिसराई ॥
तुम्ह सुखधाम राम स्रमभंजन, हौं अति दुखित त्रिबिध स्रम पाई ।
यह जिय जानि दासतुलसी कहँ राखहु सरन समुझि प्रभुताई २४२

इहै जानि चरनन्हि चितु लायो ।
नाहिंन नाथ अकारन को हितु तुम्ह समान पुरान स्रुति गायो ॥
जननि, जनक, सुत, दार, बंधुजन भए बहुत जहँ जहँ हौं जायो ।
सब स्वारथ हित प्रीति कपट चित, काहू नहिं हरिभजन सिखायो ॥
सुर, मुनि, मनुज, दनुज, अहि, किन्नर मैं तनुधरि सिर काहि न नायो
जरत फिरत त्रयताप-पापबस काहु न हरि ! करि कृपा जुड़ायो ॥
जतन अनेक किए सुख-कारन हरिपद-बिमुख सदा दुख पायो ।
अब थाक्यो जलहीन नाव ज्यों देखत बिपतिजाल जग छायो ॥
मो कहुँ नाथ ! बूझिए यह गति सुख-निधान निज पति बिसरायो ।
अब तजि रोष करहु करुना हरि तुलसिदास सरनागत आयो ॥२४३

याहि तें मैं हरि ! ज्ञान गँवायो ।
परिहरि हृदय-कमल-रघुनाथहिं बाहेर फिरत बिकल भयो धायो ॥
ज्यों कुरंग निज अंग रुचिर मद अति मतिहीन मरम नहिं पायो ।
खोजत गिरि, तरु, लता, भूमि, बिल परम सुगंध कहाँ तें आयो ॥
ज्यों सर बिमल बारि परिपूरन ऊपर कछु सिवार तृन छायो ।

जारत हियो ताहि तजि हौं सठ, चाहत यहि विधि तृषा बुझायो ॥
ब्यापति त्रिविध ताप तनु दारुन तापर दुसह दरिद्र सतायो ।
अपनेहिं धाम नाम-सुरतरु तजि विषय-बबूर-बाग मन लायो ॥
तुम्ह सम ज्ञाननिधान, मोहि सम मूढ़ न आन पुराननि गायो ।
तुलसिदास प्रभु यह बिचारि जिय कीजै नाथ उचित मन भायो २४४

मोहि मूढ़ मन बहुत बिगोयो ।
याके लिए सुनहु करुनामय मैं जग जनमि जनमि दुख रोयो ॥
सीतल मधुर पियूष सहज सुख निकटहिं रहत दूरि जनु खोयो ।
बहु भाँतिन स्रम करत मोहबस बृथहिं मंदमति बारि बिलोयो ॥
करम-कीच जिय जानि सानि चित चाहत कुटिल मलहि मल धोयो ।
तृषावंत सुरसरि बिहाय सठ फिरि फिरि बिकल अकास निचोयो ॥
तुलसिदास प्रभु कृपा करहु अब मैं निज दोष कछू नहिं गोयो ।
हासत ही गइ बीति निसा सब, कबहुँ न नाथ! नींद भरि सोयो २४५

लोक बेदहूँ बिदित बात सुनि समुझि
मोह-मोहित बिकल मति थिति न लहति ।
छोटे बड़े, खोटे खरे मोटेऊ दूबरे
राम! रावरे निबाहे सबही की निबहति ॥
होती जो आपने बस रहती एक ही रस
दुनी न हरख सोक साँसति सहति ।
चाहतो जो जोई जोई लहतो सो सोई सोई
केहू भाँति काहू की न लालसा रहति ॥
करम काल सुभाउ गुन दोष जीव-जग-माया

तें सो सभय भौंह चकित चहति ।
ईसनि, दिगीसनि, जोगीसनि, मुनीसनिहूँ
छोड़ति छोड़ाये तें, गहाए तें गहति ॥
सतरंज को सो राज, काठ को सबै समाजु
महाराज बाजी रची प्रथम न हति ।
तुलसी प्रभु के हाथ हारिबो जीतिबो नाथ !
बहु बेष बहु मुख सारदा कहति ॥२४९॥

राम जपु, जीह ! जानि, प्रीति सों प्रतीति मानि,
राम नाम जपे जैहै जिय की जरनि ।
रामनाम सों रहनि, रामनाम की कहनि,
कुटिल-कलिमल - सोक - संकट - हरनि ॥
रामनाम को प्रभाउ पूजियत गनराउ,
कियो न दुराउ कही आपनी करनि ।
भवसागर को सेतु, कासी हूँ सुगति हेतु,
जपत सादर संभु सहित घरनि ॥
बालमीकि ब्याध हे अगाध-अपराध-निधि,
मरा मरा जपे पूजे मुनि अमरनि ।
रोक्यो बिंध्य, सोख्यो सिंधु घटजहूँ नाम-बल,
हार्यो हिय, खारो भयो भूसुर-डरनि ॥
नाम-महिमा अपार सेष सुक बार बार
मति-अनुसार बुध बेद हूँ बरनि ।
नामरति-कामधेनु तुलसी को कामतरु

रामनाम है बिमोह-तिमिर-तरनि ॥२४७॥

पाहि पाहि ! राम पाहि ! रामभद्र रामचंद्र
सुजस श्रवन सुनि आयो हौं सरन ।
दीनबंधु ! दीनता-दरिद्र-दाह-दोष-दुख
दारुन-दुसह-दर-दरप-हरन ॥
जब जब जगजाल-ब्याकुल करम काल
सब खल भूप भए भूतल-भरन ।
तब तब तनु धरि, भूमि-भार दूरि करि
थापे मुनि सुर साधु आस्रम बरन ॥
बेद लोक सब साखी, काहू की रती न राखी,
रावन की बंदि लागे अमर मरन ।
ओक दै बिसोक किए लोकपति लोकनाथ
रामराज भयो धरम चारिहु चरन ॥
सिला, गुह, गीध, कपि, भील, भालु, रातिचर
ख्याल ही कृपाल किये तारन-तरन ।
पील-उद्धरन सीलसिंधु ढील देखियत
तुलसी पै चाहत गलानि ही गरन ॥२४८॥

भली भाँति पहिचाने जाने साहिब जहाँ लौं जग
जूड़े होत थोरे ही थोरे ही गरम ।
प्रीति न प्रबीन, नीतिहीन, रीति के मलीन,
मायाधीन सब किए कालहू करम ॥
दानव दनुज बड़े महामूढ़ मूड़ चढ़े

जीते लोकनाथ नाथबल निभरम।
रीझि रीझि दिए बर खीझि खीझि घाले घर,
आपने निवाजे की न काहू के सरम॥
सेवा-सावधान तू सुजान समरथ साँचो
सद्गुन-धाम राम पावन परम।
सुरुख सुमुख एकरस एकरूप तोहि
बिदित बिसेषि घटघट के मरम॥
तो सो नतपाल न कृपाल, न कँगाल मो-सो,
दया में बसत देव सकल धरम।
राम कामतरु-छाँह चाहै रुचि मन माहँ
तुलसी बिकल बलि कलि कुधरम॥२४९॥
तौ हौं बारबार प्रभुहिं पुकारिकै खिझावतो न
जोपै मोको होतो कहूँ ठाकुर ठहरु।
आलसी अभागे मो-से तैं कृपाल पाले पोसे
राजा मेरे राजाराम, अवध सहरु॥
सेए न दिगीस, न दिनेस, न गनेस गौरी
हितु कै न माने बिधि हरिउ न हरु।
रामनाम ही सों जोग छेम, नेम प्रेम-पन
सुधा सो भरोसो एहु, दूसरो जहरु॥
समाचार साथ के अनाथ-नाथ! कासों कहौं?
नाथ ही के हाथ सब चोरऊ पहरु।
निज काज, सुरकाज, आरत के काज राज!

बूझिए बिलंब कहा करत गहरु ॥
रीति सुनि रावरी प्रतीति प्रीति रावरे सों
डरत हौं देखि कलिकाल को कहरु ।
कहे ही बनैगी, कै कहाए बलि जाउँ, राम !
'तुलसी तू मेरो हारि हिये न हहरु' ॥२५०॥

राम रावरो सुभाउ, गुनसील महिमा प्रभाउ
जान्यो हर हनुमान लखन भरत ।
जिन्हके हिये-सुथल राम-प्रेम-सुरतरु
लसत सरल सुख फूलत फरत ॥
आप माने स्वामी कै सखा सुभाइ पाइ पति
ते सनेह - सावधान रहत, डरत ।
साहिब-सेवक-रीति प्रीति-परमिति नीति
नेम को निबाह एक टेक न टरत ॥
सुक सनकादि प्रहलाद नारदादि कहैं
राम की भगति बड़ी बिरति-निरत ।
जाने बिनु भगति न, जानिबो तिहारे हाथ
समुझि सयाने नाथ ! पगनि परत ॥
छ-मत बिमत, न पुरान मत, एक पथ
नेति नेति नेति नित निगम करत ।
औरनि की कहा चली ? एकै बात भले भली
रामनाम लिए तुलसी हूँ से तरत ॥२५१॥

बाप आपने करत मेरी घनी घटि गई ।

लालची लबार की सुधारिए बारक, बलि,
रावरी भलाई सबही की भली भई ॥
रोगबस तनु, कुमनोरथ मलिन मनु,
पर-अपवाद मिथ्या-वाद बानी हई ।
साधन की ऐसी बिधि, साधन बिना न सिधि,
बिगरी बनावै कृपानिधि की कृपा नई ॥
पतित-पावन, हित आरत अनाथनि को,
निराधार को अधार दीनबंधु दई ।
इन्हमें एकौ न भयो, बूझि न जूझ्यो न जयो,
ताहि तें त्रिताप तयो लुनियत बई ॥
स्वाँग सूधो साधु को, कुचालि कलि तें अधिक,
परलोक - फीकी मति लोकरंग - रई ।
बड़े कुसमाज राज आजुलौं जो पाए दिन
महाराज केहू भाँति नाम-ओट लई ॥
रामनाम को प्रताप जानियत नीके आपु,
मोको गति दूसरी न बिधि निरमई ।
खीझिबे लायक करतब कोटि कोटि कटु,
रीझिबे लायक तुलसी की निलजई ॥२५२॥

राम ! राखिये सरन, राखि आये सब दिन ।
बिदित त्रिलोक तिहुँ काल न दयालु दूजो,
आरत-प्रनत-पाल को है प्रभु बिन ?
लाले पाले पोषे तोषे आलसी अभागी अघी

नाथ पै अनाथनि सों भये न उरिन ।
स्वामी समरथ ऐसो हौं तिहारो जैसो तैसो,
काल-चाल हेरि होति हिय घनी घिन ॥
रीझि खीझि बिहँसि अनख क्यों हूँ एकबार
'तुलसी तू मेरो', बलि, कहियत किन ?
जाहि सूल निरमूल होहि सुख अनुकूल,
महाराज राम रावरी सों तेहि छिन ॥२५३॥

राम रावरो नामु मेरो मातु-पितु है ।
सुजन सनेही गुरु साहबु सखा सुहृद
रामनाम-पेमुपन अबिचल बितु है ॥
सतकोटि चरित अपार दधिनिधि ! मथि
लियो काढ़ि बामदेव नाम-घृतु है ।
नाम को भरोसो बल, चारिहुँ फल को फलु,
सुमिरिए छाँड़ि छलु, भलो क्रतु है ॥
स्वारथ-साधक परमारथ-दायकु नामु
रामनाम सारिखो न और हितु है ।
तुलसी सुभाय कही, साँचियै परैगी सही
सीतानाथ-नाथु चित हूँ को चितु है ॥२५४॥

राम ! रावरो नाम साधु-सुरतरु है ।
सुमिरें त्रिबिध घाम हरत, पूरत काम
सकल-सुकृत-सरसिज को सरु है ॥
लाभहू को लाभ, सुखहू को सुख सरबसु,

पतित-पावन, डरहू को डरु है।
नीचे हू को, ऊँचे हू को, रंक हू को, राय हू को
सुलभ सुखद आपनो-सो घरु है ॥
बेद हू, पुरान हू, पुरारि हू पुकारि कह्यो
नाम-प्रेम चारि फलहू को फरु है।
ऐसे रामनाम सों न प्रीति न प्रतीति मन
मेरे जान जानिबो सोइ नर खरु है ॥
नाम सो न मातु पितु मीत हित बंधु गुरु
साहिब सुधी सुसील-सुधाकरु है।
नाम सों निबाहु नेहु दीन को दयालु देहु
दास तुलसी का, बलि, बड़ो बरु है ॥२५५॥

कहे बिनु रह्यो न परत, कहे राम ! रस न रहत ।
तुम-से सुसाहिब की ओट जन खोटो खरो
काल की करम की कुसाँसति सहत ॥
करत बिचार सार पैयत न कहूँ कछु,
सकल बड़ाई सब कहाँ तें लहत ?
नाथ की महिमा सुनि समुझि, आपनी ओर
हेरि हारि कै हहरि हृदय दहत ॥
सखा न सुसेवक न, सुतिय न, सुप्रभु, आप,
माय बाप तुही साँची तुलसी कहत।
मेरी तो थोरी है, सुधरैगी, बिगरियो,
बलि, राम रावरी सों रही रावरो चहत ॥२५६॥

दीनबंधु दूरि किए दीन को न दूसरी सरन ।
आपको भले हैं सब, आपने को कोऊ कहूँ,
सबको भलो है, राम ! रावरे चरन ॥
पाहन पसु पतंग कोल भील रातिचर
काँच तें कृपानिधान किए सुबरन ।
दंडक - पुहुमि पायँ - परसि पुनीत भई,
उकठे बिटप लागे फूलन फरन ॥
पतित-पावन नाम, बाम हू दाहिनो, देव,
दुनी न दुसह - दुख - दूषन - दरन ।
सीलसिंधु ! तोसों ऊँची नीचियौ कहत सोभा,
तोसों तुही तुलसी की आरतिहरन ॥२५७॥
जानि पहिचानि मैं बिसारे हौं कृपानिधान,
एतो मान ढीठ हौं उलटो देत खोरि हौं ।
करत जतन जासों जोरिबे को जोगीजन
तासों क्योंहूँ जुरी, सो अभागो बैठो तोरि हौं ॥
मोसे दोस-कोस को भुवन-कोस दूसरो न,
आपनी समुझि सूझि आयो टकटोरि हौं ।
गाड़ी के स्वान की नाईं माया मोह की, बड़ाई
छिनहिं तजत, छिन भजत बहोरि हौं ॥
बड़ो साईंद्रोही, न बराबरी मेरी को कोउ,
नाथ की सपथ किए कहत करोरि हौं ।
दूरि कीजै द्वार तें लबार लालची प्रपंची,

सुधा सों सलिल सूकरी ज्यों गहडोरिहौं ॥
राखिए नीके सुधारि, नीचु को डारिए मारि,
दुहूँ ओर की बिचारि अब न निहोरिहौं।
तुलसी कही है साँची रेख बार बार खाँची,
ढील किए नाम-महिमा की नाव बोरिहौं ॥२५८॥
रावरी सुधारी जो बिगारी बिगरैगी मेरी,
कहौं, बलि, बेद की न, लोकु कहा कहैगो।
प्रभु को उदास-भाउ जन को पाप-प्रभाउ
दुहूँ भाँति दीनबंधु! दीन दुख दहैगो!
मैं तो दियो छाती पबि, लियो कलिकाल दबि,
साँसति सहत परबस को न सहैगो?
बाँकी बिरुदावली बनैगी पाछे ही कृपालु!
अंत मेरो हाल हेरि यों न मनु रहैगो ॥
करमी, धरमी, साधु, सेवक, बिरत रत
आपनी भलाई थल कहाँ को न लहैगो?
तेरे मुँह फेरे मोसे कायर कपूत कूर
लटे लटपटेनि को कौन परिगहैगो ॥
काल पाय फिरत दसा दयालु! सब ही की,
तोहिं बिनु मोहिं कबहूँ न कोउ चहैगो।
बचन करम हिये कहौं राम सौंह किए
तुलसी पै नाथ के निबाहे निबहैगो ॥२५९॥
साहिब उदास भए दास खास खीस होत,

मेरी कहा चली ? हौं बजाइ जाइ रह्यो हौं ।
लोक मैं न ठाउँ, परलोक को भरोसो कौन ?
हौं तो बलि जाउँ रामनाम ही ते लह्यो हौं ॥
करम सुभाउ काल काम कोह लोभ मोह
ग्राह, अति गहनि गरीबी गाढ़े गह्यो हौं ।
छोरिबे को महराज, बाँधिबे को कोटि भट,
पाहि ! प्रभु पाहि ! तिहूँ ताप पाप दह्यो हौं ॥
रीझि बूझि सबकी, प्रतीति प्रीति एही द्वार,
दूध को जर्‌यो पियत फूँकि फूकि मह्यो हौं ।
रटत रटत लट्यो, जाति पाँति भाँति घट्यो,
जूठनि को लालची चह्यो न दुह्यो नह्यो हौं ॥
अनत चह्यो न भलो, सुपथ सुचाल चल्यो,
नीके जिय जानि इहाँ भलो अनचह्यो हौं ।
तुलसी समुझि समुझायो मन बारबार
आपने सो नाथ हूँ सों कहि निरबह्यो हौं ॥२६०॥
मेरी न बनै बनाए मेरे कोटि कलप लौं
राम ! रावरे बनाये बनै पलपाउ मैं ।
निपट सयाने हौ कृपानिधान ! कहा कहौं ?
लिये बेर बदलि अमोल-मनि-आउ मैं ॥
मानस मलीन, करतब कलिमल - पीन,
जीह हू न जप्यो नाम, बक्यो आउ बाउ मैं ।
कुपथ कुचाल चल्यो, भयो न भूलि हूँ भलो,

बाल-दसा हूँ न खेल्यो खेलत सुदाउ मैं ।
देखी-देखा दंभ तें, कि संग तें भई भलाई,
प्रगटि जनाई, कियो दुरित दुराउ मैं
राग रोष दोष पोषे, गोगन समेत मन,
इन्हकी भगति कीन्हीं इन्हहीं को भाउ मैं ।
आगिलो पाछिलो, अबहूँ को अनुमान ही तें
बूझियति गति, कछु कीन्हों तो न काउ मैं ॥
जग कहै राम की प्रतीति प्रीति तुलसी हूँ,
झूठे साँचे आश्रय[1] साहिब रघुराउ मैं ॥२६१॥

कह्यो न परत, बिनु कहे न रह्यो परत,
बड़ो सुख कहत बड़े सों, बलि, दीनता ।
प्रभु की बड़ाई बड़ी, आपनी छोटाई छोटी,
प्रभु की पुनीतता आपनी पाप-पीनता ॥
दुहूँ ओर समुझि सकुचि सहमत मन,
सनमुख होत सुनि स्वामी समीचीनता ।
नाथ-गुननाथ गाए हाथ जोरि माथो नाए
नीचऊ निवाजे प्रीति रीति की प्रबीनता ॥
एहि दरबार है गरब तें सरब-हानि,
लाभ जोग छेम को गरीबी मिसकीनता ।
मोटो दसकंध सो न, दूबरो बिभीषन सो,
बूझि परी रावरे की प्रेम-पराधीनता ॥

---

१ आसरो—प्र०, ७४, ५१, १५ ।

इहाँ की सयानप अयानप सहस सम,
सूधो सतिभाय कहें[1] मिटति मलीनता।
गिद्ध सिला सबरी की सुधि सब दिन किए
होइगी न साईं सों सनेह-हित-हीनता ॥
सकल कामना देत नाम तेरो कामतरु,
सुमिरत होत कलिमल - छल - छीनता।
करुनानिधान बरदान तुलसी चहत
सीतापति-भक्ति-सुरसरि-मन[2]-मीनता ॥२६२॥

नाथ नीकें कै जानिबी ठीक जन-जिय की।
रावरो भरोसो नाहुँ कै सुपेमु नेमु लियो
रुचिर रहनि रुचि मति गति तिय की ॥
दुकृत सुकृत बस सबहिं सों संगु पर्‍यो
परखी पराई गति, आपने हूँ किय की।
मेरें भले को गोसायो पोच कों होंहुँ सकल[3]
किए कहौं सौंह साँची सियपिय की ॥
ज्ञानहूँ गिरा के स्वामी बाहेर अंतर-जामी
इहाँ क्यों दुरैगी बात मुख की औ हिय की।
तुलसी तिहारो, तुम्हहीं पै तुलसी के हित
राखि कहि हैं तो है है माखी घिय की ॥२६३॥

मेरो कह्यो सुनि पुनि भावै तोहि करि सो।
चारिहुँ बिलोचनु बिलोकु तू तिलोकु महँ

१ कहे—७४। २ नीर—आधुनिक। ३ कहो हौ हूँ सकल—भा०।

तेरो तिहुँ काल कहु को है हितु हरि सो ॥
नए नए नेह अनुभये देह-गेह बसि
परिखें प्रपंची प्रेम परत उघरि सो ।
सुहृद-समाज दगाबाजिहि को सौदा सूतु
जब जाको काज तब मिलै पाँय परि सो ॥
बिबुध सयाने पहिचाने कैधौं नाहीं नीके
देत एकगुन लेत कोटिगुन भरि सो ।
करम धरम स्रम-फल रघुबर बिनु
राख को सो होम है, ऊसर को सो बरिसो ॥
आदि अंत बीच भलो, भलो करै सबही को
जाको जस लोक बेद रह्यो है बगरि सो ।
सीतापति सारिखो सुसाहिब सील-निधानु
कैसें कल परै सठ बैठो सो बिसरि सो ॥
जीव के जीवन-प्रान, प्रान को परम हित
प्रीतम पुनीत कृत नीच न निदरि सो ।
तुलसी तोकों कृपाल जो कियो कोसलपाल
चित्रकूट को चरित चेति चित करि सो ॥१६४॥
तन सुचि, मन रुचि, मुख कहौं जन हौं सिय-पी को ।
केहि अभाग जानो नहीं जो न होइ नाथ सों नातो नेहु न नीको ॥
जलु चाहत पावकु लहौं, बिष होत अमी को ।
कलि कुचाल संतन्हि कही सोइ सही, मोहिं कछु फहम न तरनि तमी को
जानि अंधु अंजनु कहै बन-बाघिन-घी को ।

सुनि उपचारु बिकार को सुबिचारु करौं जबतब बुधिबल हरै हीको ॥
प्रभु सों कहत सकुचात हौं, परौं जनि फिरि फीको ।
निकट बोलि बलि बरजिये परिहरै ख्याल
अब तुलसिदास जड़ जी को ॥२६५॥
ज्यों ज्यों निकट भयो चहौं कृपाल त्यों त्यों दूरि पर्‌यो हौं ।
तुम्ह चहुँजुग रसएक राम हौंहुँ रावरो जद्यपि अघअवगुनन्हिभर्‌योहौं
बीच पाइ नीच बीच ही नलं छरनि छर्‌यो हौं ।
हौंसुबरन कुबरनकियो, नृपतें भिखारिकरि, सुमतितें कुमति कर्‌योहौं
अगनित गिरि कानन फिर्‌यो, बिनु आगि जर्‌यो हौं ।
चित्रकूट गए मैं लखी कलि की कुचालसब, अब अपडरनि डर्‌योहौं ॥
माथ नाइ नाथ सों कहौं हाथ जोरि खर्‌यो हौं ।
चीन्हों चोर जिय मारिहै तुलसी सो कथा
सुनि, प्रभु सों गुदरि निबर्‌यो हौं ॥२६६॥
पन्नु करि हौं हठि आजु तें राम द्वार पर्‌यो हौं ।
'तूमेरो' यहु बिनुकहेउठिहौं न जनमभरि, प्रभुकी सौंकरि निबर्‌योहौं
दै दै धक्का जमभट थके, टार्‌यो न टर्‌यो हौं ।
उदरदुसहसांसतिसही बहुबार जनमिजग नरकनिदरि निकर्‌योहौं
हौं माचल लै छाँड़िहौं जेहि लागि अर्‌यो हौं ।
तुम दयाल बनिहै दिए बलि, बिलंबु न कीजै जात गलानि गर्‌यो हौं
प्रगट कहत जो सकुचिए, अपराध भर्‌यो हौं ।
तौमनमें अपनाइए तुलसीहिकृपाकरि, कलिबिलोकि हहर्‌योहौं २६७

---

१ छल—ह० प्र०, चर—१५ ।

तुम्ह अपनायो तब जानिहौं जब मन फिरि परिहै ।
जेहि सुभायं बिषयन्हि लग्यो तेहि सहज नाथ सों नेह छाँड़ि छल करिहै
सुत की प्रीति, प्रतीति मीत की नृप ज्यों डर डरि है ।
अपनो सों स्वारथ स्वामीसों चहुँबिधि चातकज्यों एकटकतेंनहिंटरिहै
हरषिहै न अति आदरें, निदरे न जरि मरिहै ।
हानिलाभदुखसुखसबैसमचित हितअनहित कलिकुचाल परिहरिहै ॥
प्रभु-गुन सुनि मन हरषिहै, नीर नयनन्हि ढरिहै ।
तुलसिदास भयो राम को बिस्वास पेम
लखि आनँद उमगि उर भरिहै ॥२६८॥

राम कबहुँ प्रिय लागिहौ जैसें नीर मीन को ।
सुखजीवनज्यों जीवको मनिज्योंफनिको, हितज्यों धनलोभ-लीनकों
ज्यों सुभायं प्रिय लगति नागरी नागर नवीन कों ।
त्यों मेरे मन लालसा करिए करुनाकर पावन प्रेम पीन कों ॥
मनसा को दाता कहै स्रुति प्रभु प्रबीन कों ।
तुलसिदासकोभावतो, बलिजाउँ, दयानिधि दीजैदान दीनकों॥२६९

कबहुँ कृपा करि मोहूँ रघुबीर चितैहो ।
भलोबुरोजनआपनो जिय जानि दयानिधि ! अवगुन अमित बितैहो॥
जनमु जनमु हौं मन जित्यो, अब मोहिं जितैहो ।
हौं सनाथ ह्वैहौं सही,तुम्हहूँ अनाथपति,जौं लघुतहि न भितैहो ॥
बिनय करौं अपभयहुँ तें तुम्ह परम हितै हौ ।
तुलसिदास कासों कहै तुमही सब मेरें प्रभु गुरु मातु पितै हौ ॥२७०॥

जैसो हौं तैसो हौं राम ! रावरो जन जनि परिहरिए ।

कृपासिंधु कोसलधनी सरनागत-पालक, ढरनि आपनी ढरिए ॥
हौं तो बिगरायल और को, बिगरो न बिगरिए ।
तुम्ह सुधारि आए सदा सबकी सब ही बिधि, अब मेरियो सुधरिए ॥
जगु हँसिहै मेरे संग्रहें, कत एहिं डर डरिए ?
कपि केवट कीन्हें सखा जेहिं सील सरल चिततेहि सुभायँ अनुसरिए
अपराधी तौ आपनो तुलसी न बिसरिए ।
टूटियो बाँह गरे परै, फूटेहू बिलोचन पीर होति हित करिए ॥२७१॥
तुम्हु जनि मन मैलो करो लोचन जनि फेरो ।
सुनहु राम ! बिनु रावरे लोकहुँ परलोकहुँ कोउ न कहूँ हितु मेरो ॥
अगुन अलायक आलसी जानि अधम[1] अनेरो ।
स्वारथ के साथिन्ह तज्यो तिजरा कोसो टोटकु, औचट उलटि न हेरो
भगतिहीन, बेद-बाहिरो लखि कलिमल-घेरो ।
देवनिहूँ देव परिहरयो, अन्याउ न तिन्हको हौं अपराधी सब केरो ॥
नाम की ओट लै पेट भरत हौं पै कहावत चेरो ।
जगत-बिदित बात है परी समुझिए धौं अपन, लोक कि बेद बड़ेरो ॥
हैहै जब तब तुम्हहिं तें तुलसी को भलेरो ।
दीन! दिनहूँ दिन बिगरिहै बलिजाउँ, बिलंबु किए अपनाइए सबेरो २७२
तुम्ह तजि हौं कासों कहौं, और को हितु मेरें ?
दीनबंधु सेवक-सखा, आरत अनाथ पर सहज छोहु केहि केरें ?
बहुत पतित भवनिधि तरे बिनु तरि बिनु बेरें ।
कृपा, कोध, सतिभाय हूँ धोखेहुँ, तिरछेहुँ राम तिहारेहिं हेरें ॥

---

१ अधम—बेनी, प्र०, १५, ७१, ह० प्र० ।

जौं चितवनि सौंधी लगै चितइए सबेरें।
तुलसिदास अपनाइए कीजै न ढील अब जीवन-अवधि अति नेरें॥२७३॥

जाउँ कहाँ, ठौर है कहाँ देव! दुखित दीन कों?
को कृपालु स्वामी सारिखो, राखै सरनागत सब अंग बल-बिहीन कों॥
गनिहिं गुनिहिं साहिब चहै सेवा समीचीन कों।
अधन, अगुन, आलसिन्ह को पालिबो फबि आयो रघुनायक नवीन कों॥
मुख कै कहा? कहौं बिदित है जी की प्रभु प्रबीन कों।
तिहूँ काल, तिहुँ लोक में, एक टेक रावरी तुलसी से मन मलीन का॥२७४॥

द्वार द्वार दीनता कही काढ़ि रद परि पाहूँ।
हैं दयालु दुनी दस दिसा दुख-दोष-दलन-
छम कियो न संभाषन काहूँ॥
तनुज[1] तजउ कुटिल-कीट ज्यों तज्यो मातु पिता हूँ।
काहे को रोस दोस काहि धौं मेरे ही अभाग,
मोसों सकुचत सब छुइ छाहूँ॥
दुखित देखि संतन्ह कह्यो सोचै जनि मन माहूँ।
तोसे पसु पाँवर पातकी परिहरे न,
सरन गयें रघुबर ओर-निबाहूँ॥
तुलसी तिहारें[2] भये भयो सुखी प्रीति प्रतीति बिना हूँ।
नाम की महिमा सीलु नाथ को मेरो भलो,
बिलोकि अब तें सकुचाहुँ सिहाहूँ॥२७५॥

---

१ तनु तजेउ—भा०। त्वचा तजत—बेनी, प्र०, ह, १५। २ तिहारो—भा०, बेनी।

कहा न कियो कहाँ न गयो सीस काहि न नायो ?
राम रावरे बिनु भये जन जनमि जनमि
जग दुख दसहू दिसि पायो ॥
आस बिबस खास दास है नीच प्रभुन जनायो ।
हाहा करि दीनता कही द्वार द्वार
बार बार परी न छार मुँह बायो ॥
असन बसनु बिनु बावरो जहँ तहँ उठि धायो ।
महिमा मान प्रिय प्रान तें तजि खोलि खलनि
आगे खिनु खिनु पेट खलायो ॥
नाथ हाथ कछु नाहिं लाग्यो लालच ललचायो ।
साँच कहौं नाच कौन सो जो न
मोहिं लोभ लघु निलज नचायो ॥
स्रवन नयन मन मग लगे सब थलपति तायो ।
मूढ़ मारि हिय हारि कै हित हेरि
हहरि अब चरन सरन तकि आयो ॥
दसरथ के समरथ तुहीं त्रिभुवन जस गायो ।
तुलसी नमत अवलोकिये बलि
बाँह बोल दै बिरदावली बुलायो ॥२७६॥
रामराय बिनु रावरे मेरे को हितु साँचो ।
स्वामी सहित सब सों कहौं सुनि गुनि बिसेषि
कोउ रेख दूसरी खाँचो ॥
देह जीव जोग के सखा मृषा टाँचु न टाँचो ।

क्रियो बिचार सार कदली ज्यों, मनि कनक संग
लघु लसत बीच बिच काँचो ॥
बिनयपत्रिका दीन की बापु आपु ही बाँचो ।
हिये हेरि तुलसी लिखी सो सुभाय सही
करि बहुरि पूँछियहि पाँचो ॥२७७॥
पवन-सुवन रिपुदवन भरत लाल लखन दीन की ।
निज निज अवसर सुधि किए बलि जाउँ
दास आस पूजिहै खास खीन की ॥
राजद्वार भली सब कहैं साधु समीचीन की ।
सुकृत सुजस साहिब कृपा स्वारथ परमारथ
गति भये गति - बिहीन की ॥
समय सँभारि सुधारिबी तुलसी मलीन की ।
प्रीति रीति समुझाइबी नतपाल
कृपालुहिं परमिति पराधीन की ॥२७८॥
मारुति मनरुचि, भरत की लखि लखन कही है ।
कलिकालहुँ नाथ नाम सों प्रतीति प्रीति एक किंकर की निबही है ।
सकल सभा सुनि लै उठी जानी रीति रही है ।
कृपा गरीब निवाज की देखत गरीब को साहसु बाँह गही है ॥
बिहँसि राम कह्यो सत्य है सुधि मैं हू लही है ।
मुदित माथ नावत बनी तुलसी अनाथ की परी रघुनाथ सही है ।
